जन्मपत्रप्रबोधसहिता

मानसागरी

हिन्दीव्याख्यया विभूषिता
अकारादिसूची सहिता च



संशोधक और संवर्धक

वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालयीय सम्मानित

ज्यौतिषाचार्य- पं० श्रीसीताराम झा

ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार

कचौड़ीगली·वाराणसी-१





जन्मपत्रप्रबोधसहिता—

मानसागरी

सपरिशिष्ट-सोदाहरण-'तत्त्वार्थबोधिनी'-

हिन्दीव्याख्यया विभूषिता

अकारादिसूची सहिता च

•

व्याख्याता—

मिथिलादेशस्थ-चौगमानिवासी—ज्यौतिषमार्तण्ड-

ज्यौतिषाचार्य—पं० श्रीरूपनारायण झा

•

संशोधक और संवर्धक—

वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालयीय सम्मानित प्राध्यापक

ज्यौतिषाचार्य—पं० श्रीसीताराम झा

•

प्रकाशक—

श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार

कचौड़ीगली, वाराणसी—१

सं० २०४८]   [मूल्य : ७५) रुपये

प्रकाशक :

श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार

कचौड़ीगली, वाराणसी–१

फोन : ३२२५४३

सन् १९९१, चैत्र पूर्णिमा

मुद्रक—

राजप्रेस

पाटन दरवाजा

(गायघाट), वाराणसी।

पुस्तक-परिचय

मानसागरसंज्ञेन रचिता केनचिद् विदा ।
पद्धतिर्जन्मपत्रीया ख्याता सा 'मानसागरी' ।।
चान्द्राद्यपर-संज्ञानां विभिन्नफलसंयुजाम् ।
तिथिवारादिकालानां फलानि च पृथक्-पृथक् ।।
जातस्य जन्मकालीन-सूर्यादीनां नभःसदाम् ।
तथा तन्वादिभावानां स-सन्धीनां च साधनम् ।।
प्रतिभावगतानां च फलान्यपि नभःसदाम् ।
ग्रह-होरादिवर्गाणां कथनं तत्फलानि च ।।
विविधाश्च दशास्तासां साधनानि फलानि च ।
निवेशितानि सन्त्यस्यां पद्यैः संस्कृतवाङ्मयैः ।।
स्पष्टाऽपि पद्धतिः सैषा शिशूनां सुधियां मुदे ।
सोदाहरणया भाषाव्याख्यया भूषिता मया ।।
श्रीठाकुरप्रसादेन गुप्तोपाख्येन धीमता ।
प्रार्थितोऽहं प्रयच्छामि तस्मै शुद्धहृदेऽधुना ।।
अत्र मुद्रणयन्त्रोत्था मद्दृग्दोषभवाऽथवा ।
या च काचित् त्रुटिर्जाता क्षन्तव्या सा विदा यतः ।।
स्खलनं गच्छतः क्वापि भवत्येव प्रमादतः ।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः ।।

विदुषामनुचरः—रूपनारायण झा

प्राक्कथन

इस जन्मपत्रलेखनपद्धति (मानसागरी) के नाम से ज्ञात होता है कि इसके संग्रहकर्ता का नाम "मानसागर" था, इसलिये वे स्वयं या अन्य लेखकों ने इस पद्धति का "मानसागरी" नामकरण किया, इसकी रचना का काल अनुमानतः विक्रम १६वीं शताब्दी सिद्ध होता है। जब सवर्ण हिन्दूधर्म के विरोधी किसी मुसलमान शासक ने हिन्दु धर्म ग्रन्थों को ढूंढ़-ढूंढ़कर जला दिया और फलित ज्यौतिष की आर्षपद्धतियों में अनर्थकारक परिवर्तन करके अपने मत का प्रचार कराया, उस समय में बहुत से हिन्दुओं ने प्रलोभन में पड़कर तथा बहुतों ने विवश होकर इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया। उस समय में यहाँ के प्रसिद्ध दैवज्ञ (ज्योतिषी) श्रीपति, नीलकण्ठ आदि ने जन्मपत्र, यात्रा, विवाहादि (अदृष्टफल) कार्यों में भी फलित विभागोक्त आर्षपद्धति को छोड़कर सिद्धान्त ग्रन्थ प्रतिपादित दृष्ट-फलार्थ, 'लग्न साधन विधि' से ही अपने कुतर्क द्वारा लग्नादि द्वादश भावों की साधन पद्धति बनाई। जिसका खण्डन उस समय के ज्यौतिषतत्त्वज्ञ भट्ट कमलाकर आदि विज्ञजनों ने किया।

इस बात को थोड़ा भी ग्रह गोल के ज्ञान रखने वाले सिद्धान्त ज्यौतिष के प्रारम्भिक विद्यार्थी भी जानते और जान सकते हैं कि जन्म, यात्रा, विवाहादि में जो शारीरिक, पारिवारिक या आर्थिक भूत, वर्तमान या भविष्य अदृष्ट फल आर्य ज्यौतिष ग्रन्थों में कहा गया है वह लग्नादि तनु-धन-सहोदर-भ्राता आदि नाम से द्वादश भाव माने गये हैं। जो भूकेन्द्रीय (सार्वजनिक स्थानीय) तुल्य राश्युदय मान से सिद्ध होते हैं। नक्षत्र बिम्बीयराशियों के द्वारा सिद्ध होते हैं। जिनके आकाश में प्रत्यक्ष मेष-वृष आदि सदृश आकार देखने में आते हैं, इसलिये समस्त जातक ग्रन्थों में उन राशियों से रूप-वर्ण आदि वर्णित हैं। जिनका साधन पराशरादि प्रणीत जातक ग्रन्थों में दिखाया गया है।

सिद्धान्त ग्रन्थों में तो क्रान्तिवृत्तीय रेखारूप राशियों के अपने-अपने स्थानीय राश्युदयों से लग्न साधन क्रिया दिखलाई गई है।

यदि सिद्धान्तप्रणेता महर्षियों या आचार्यों का वह लग्न अदृष्ट फलार्थ भी अभिप्रेत रहता तो सिद्धान्त ग्रन्थों में सब भावों की साधन विधि भी लिख

देते। किन्तु ऐसा सूर्यसिद्धान्त एवं करण ग्रन्थों में नहीं है। त्रिस्कन्ध-ज्यौतिष-तत्त्वज्ञ-भट्टकमलाकर ने अपने सिद्धान्त-तत्त्वविवेक में लिखा है।

किन्तु शासन के दमन से वे असफल रहे। उसी समय में इस मानसागरी की रचना हुई। जिसमें संग्रहकर्ता ने यवन-पद्धति के अनुसार ही लग्न आदि भावों की साधन क्रिया दिखाई।

इधर आकर उक्त श्रीपति, नीलकण्ठादि आचार्यों द्वारा प्रतिपादित अनार्ष पद्धति का खण्डन हो गया है। जो "लग्नविवेक" नामक पुस्तक में स्पष्ट सोदाहरण दिखाया गया है।

आजकल अधिकांश जन्मपत्र में फल लिखने वाले इसी (मानसागरी) से जन्मपत्र में फल लिखते हैं। यह अनेक स्थानों से प्रकाशित भी हो चुकी है किन्तु उसमें कुछ त्रुटियों को देखकर हमने इसके प्रत्येक मूल श्लोकों को शुद्ध करके सबका सोदाहरण, सोपपत्ति, भाषार्थ लिख दिया है; तथा इसमें लग्न साधन विधि जन्मपत्र के विरुद्ध होने पर भी उसको नहीं हटाकर तदनुसार ही अर्थ और उदाहरण लिख दिया है। किन्तु वह लग्न केवल दृष्ट फलार्थ ग्रहणादि में त्रिविध लग्नांशुक आदि के ज्ञानार्थ ही उपयुक्त हो सकता है।

अतः हमने अपने पिताजी द्वारा निर्मित "जन्मपत्रप्रबोध" नामक निबन्ध इसके अन्त में रख दिया है, जिसमें आर्षभाव साधन पद्धति दिखाई गई है।

इस मानसागरी टीका को लिखकर हमने काशी के सुप्रसिद्ध प्रकाशक "श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार–कचौड़ीगली" को प्रकाशनार्थ तथा आगे के लिए भी सदा प्रकाशन, मुद्रण, विक्रय आदि अधिकार के साथ समर्पण कर दिया है।

इस ग्रन्थ में प्रमादादि दोष वश जो कुछ त्रुटि रह गई हो, उसे विज्ञजन क्षमा करें।

विनीत–

रूपनारायण झा

अथ मानसागरीस्थ-विषयसूची

□

।। श्रीगणेशाय नमः ।।

मानसागरीपद्धतिः

(जन्मपत्रपद्धतिः)

प्रथमोऽध्यायः [१]

टीकाकारकृत-मङ्गलाचरण–

श्रीदिनेशं गणेशं च श्रियं चैव सरस्वतीम् ।
नत्वा व्याख्यायते हिन्दी-भाषया मानसागरी ।।

जन्मपत्र के आरम्भ में लिखने का मङ्गल श्लोक—

स्वस्तिश्रीसौख्यधात्री सुतजयजननी तुष्टि-पुष्टिप्रदात्री
माङ्गल्योत्साहकर्त्री गतभवसदसत्कर्मणां व्यञ्जयित्री ।
नानासम्पद्विधात्री धन-कुल-यशसामायुषां वर्द्धयित्री
दुष्टाऽऽपद्विघ्नहर्त्री गुण-गण-वसतिर्लिख्यते जन्मपत्री ।।१।।

कल्याण, सम्पत्ति और सुख को देनेवाली, सन्तान और विजयदात्री, सन्तोष और पुण्यदायिनी, मंगल और उत्साह को बढ़ाने वाली, पूर्व और अग्रिम जन्मकृत कर्मफल को बतानेवाली, विविध सम्पत्ति, धन, कुल और यश को बढ़ानेवाली, दुष्टापत्ति और विघ्न को हटानेवाली और गुणगणों का भण्डाररूप जन्मपत्रिका को लिखता हूँ ।। १ ।।

जैनधर्मावलम्बियों के जन्मपत्र में लिखने का मङ्गल श्लोक—

श्री-आदिनाथप्रमुखा जिनेशाः श्रीपुण्डरीकप्रमुखा गणेशाः ।
सूर्यादिखेटर्क्षयुताश्च भावाः शिवाय सन्तु प्रकटप्रभावाः ।।२।।

'श्रीआदिनाथ' आदिक जिनेश और 'पुण्डरीक' आदि गणेश, सूर्य आदि नवग्रह और राशि, नक्षत्र सहित द्वादश भाव प्रत्यक्षरूप से कल्याण कारक होवें ।। २ ।।

सनातनधर्मावलम्बियों की कुण्डली में लिखने का श्लोक—

दशावतारो भुवनैकमल्लो गोपाङ्गना-सेवित-पादपद्मः ।
श्रीकृष्णचन्द्रः पुरुषोत्तमोऽयं ददातु मे सर्वसमीहितानि ।।३।।

दस अवतार वाले, समस्त विश्व में विजयी वीर, गोपीजनों से पूजित चरणकमलवाले भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र सब अभीष्ट की पूर्ति करें ॥ ३ ॥

श्रीमानस्मानवतु भगवान् पार्श्वनाथः श्रियं वः
श्रेयो लक्ष्म्या क्षितिपतिगणैः सादरं स्तूयमानः ।
भर्तुर्यस्य स्मरणकरणात्तेऽपि सर्वे विवस्वन्-
मुख्याः खेटा ददतु कुशलं सर्वदा देहभाजाम् ॥४॥

जो लक्ष्मीजी तथा समस्त राजाओं से आदरपूर्वक सेवित हैं ऐसे भगवान् पार्श्वनाथ हम लोगों की रक्षा करें और आप सबों के अभीष्ट कल्याण करें तथा जिन स्वामी पार्श्वनाथजी के स्मरण से ही सब सूर्यादि ग्रह भी विद्यमान हैं वे सूर्य आदि ग्रह प्राणियों का कल्याण करें ॥ ४ ॥

सूर्यः शौर्यमथेन्दुरुच्चपदवीं सन्मङ्गलं मङ्गलः
सद्बुद्धिं च बुधो गुरुश्च गुरुतां शुक्रः सुखं शं शनिः ।
राहुर्बाहुबलं करोतु विपुलं केतुः कुलस्योन्नतिं
नित्यं प्रीतिकरा भवन्तु भवतां सर्वे प्रसन्ना ग्रहाः ॥५॥

सूर्य शौर्य, चन्द्रमा उच्च पदवी, मंगल कल्याण, बुध सुमति, गुरु गौरव, शुक्र सुख, शनि कुशल, राहु भुजबल, केतु कुलोन्नति करते हुए ये सब ग्रह सदा प्रसन्नरूप होकर प्रीतिकारक होवें ॥ ५ ॥

कल्याणं कमलासनः स भगवान् विष्णुः सजिष्णुः स्वयं
प्रालेयाद्रिसुतापतिः सतनयो ज्ञानं च निर्विघ्नताम् ।
चन्द्र–ज्ञा–स्फुजिदर्क–भौम–धिषण–च्छायासुतैरन्वितं
ज्योतिश्चक्रमिदं सदैव भवतामायुश्चिरं यच्छतु ॥६॥

भगवान् ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, अपने प्रिय पुत्र गणेशजी के सहित श्री शिवजी, सदैव आपको कल्याण, ज्ञान और निर्विघ्नता प्रदान करें। तथा चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य, मंगल, गुरु और शनि सहित सब राशि और नक्षत्र-मण्डल आपकी आयु की वृद्धि करें ॥ ६ ॥

सूर्यो यच्छतु भूपतां द्विजपतिः प्रीतिं परां तन्वतां
माङ्गल्यं विदधातु भूमितनयो बुद्धिं विधत्तां बुधः ।
गौरं गौरवमातनोतु च गुरुः शुक्रः सशुक्रार्थदः
सौरिर्वैरिविनाशनं वितनुते रोगक्षयं सैंहिकः ॥७॥

सूर्य पृथ्वीपतित्व, चन्द्रमा उत्तम प्रेम, मंगल मांगल्य, बुध सुबुद्धि, बृहस्पति शुद्ध गौरव, शुक्र वीर्य (बल) और धन, शनि शत्रुओं का नाश और राहु-केतु जातक के रोगों का नाश करें ॥ ७ ॥

श्रीमान्पङ्कजिनीपतिः कुमुदिनीप्राणेश्वरो भूमिभूः
शाशाङ्किः सुर-राजवन्दितपदो दैत्येन्द्रमन्त्री शनिः ।
स्वर्भानुः शिखिनां गणो गणपतिर्ब्रह्मेश-लक्ष्मीश्वरा-
स्तं रक्षन्तु सदैव यस्य विमला पत्री त्वियं लिख्यते ॥८॥

कमलिनीपति (सूर्य), कुमुदिनीप्रिय (चन्द्रमा), भूमिपुत्र (मंगल), शशाङ्कसुत (बुध), देवेन्द्रपूज्यचरण (बृहस्पति), दैत्येन्द्रपूज्य (शुक्र), शनि, स्वर्भानु (राहु), केतु-गण, गणेश, ब्रह्मा, रुद्र और श्रीविष्णु भगवान् (इस) जातक की रक्षा करें, जिसकी यह जन्मपत्रिका लिखी जाती है ॥८॥

कृतं मया नोदकयन्त्रसाधनं न भेक्षणं चापि न शङ्कुधारणम् ।
परोपदेशात्समयाववोधकं विलिख्यते जन्मफलं नराणाम् ॥९॥

मैंने जलयन्त्र (घड़ीबोधक यन्त्र) के द्वारा अथवा नक्षत्रों को देखकर अथवा शंकु की छाया से जन्मकाल का ज्ञान नहीं किया, दूसरों के बताये हुए समय के आधार पर मैं जातक के जन्म फल को लिखता हूँ ॥ ९ ॥

ललाटपट्टे लिखिता विधात्रा षष्ठीदिने याऽक्षरमालिका च ।
तां जन्मपत्री प्रकटीं विधत्ते दीपो यथा वस्तु घनान्धकारे ॥१०॥

जन्म से छठी के दिन जातक के ललाट में विधाता जो कर्मफलों की अक्षरमाला लिख देते हैं उस (अक्षरमाला) को जन्मपत्री प्रकट कर देती है, जैसे अन्धकार में पड़ी हुई वस्तुओं को दीपक प्रकट कर देता है ॥ १० ॥

यावन्मेरुर्धरापीठे यावच्चन्द्र – दिवाकरौ ।
तावन्नन्दतु बालोऽयं यदीया जन्मपत्रिका ॥११॥

जब तक पृथ्वी पर सुमेरु, आकाश में सूर्य और चन्द्रमा हैं तब तक यह बालक आनन्द से रहे, जिसका यह जन्मपत्र है ॥ ११ ॥

यस्य नास्ति किल जन्मपत्रिका या शुभाऽशुभफलप्रदर्शिनी ।
अन्धकं भवति तस्य जीवितं दीपहीनमिव मन्दिरं निशि ॥१२॥

जिस मनुष्य के शुभाशुभ फलको बतलाने वाली जन्मपत्री नहीं है उसका जीवन अन्धकारमय होता है, जैसे बिना दीप का घर ॥ १२ ॥

वंशो विस्तारतां यातु कीर्तिर्यातु दिगन्तरे ।
आयुर्विपुलतां यातु यदीया जन्मपत्रिका ॥१३॥

जिसकी यह जन्मपत्री है, उसके वंश की वृद्धि हो, कीर्ति देशान्तर तक व्याप्त हो और आयुर्दाय दीर्घ हो ॥ १३ ॥

यं ब्रह्म वेदान्तविदो वदन्ति परं प्रधानं पुरुषं तथाऽन्ये ।
विश्वोद्गतेः कारणमीश्वरं वा तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय ॥१४॥

जिनको वेदान्ती गण ब्रह्म कहते हैं, अन्य (सांख्यकर्ता) परम प्रधान तथा विश्वोत्पत्ति के कारण ईश्वर कहते हैं, उन विघ्नविनाशक भगवान् को नमस्कार करता हूँ ॥ १४ ॥

आदित्याद्या ग्रहाः सर्वे स-नक्षत्राः स-राशयः ।
सर्वान्कामान्प्रयच्छन्तु यदीया जन्मपत्रिका ॥१५॥

सब नक्षत्र और राशि-मण्डल सहित सूर्यादि सकल ग्रहमण्डल जातक की सब कामना पूर्ण करें, जिसकी यह जन्मपत्रिका है ॥ १५ ॥

जननी जन्मसौख्यानां वर्धनी कुलसम्पदाम् ।
पदवी पूर्वपुण्यानां लिख्यते जन्मपत्रिका ॥१६॥

जन्म सुखको देनेवाली, कुल सम्पत्ति को बढ़ाने वाली, पूर्व पुण्यफल को दर्शानेवाली जन्मपत्री को लिखता हूँ ॥ १६ ॥

एकदन्तो महाबुद्धिः सर्वज्ञो गणनायकः ।
सर्वसिद्धिकरश्चास्तु गौरीपुत्रो विनायकः ॥१७॥

सर्व-शास्त्रादि के मर्मज्ञ, बुद्धिमान्, गणों के नायक, गौरीपुत्र, एकदन्त, विनायक, सब सिद्धि को करने वाले हों ॥ १७ ॥

ब्रह्मा करोतु दीर्घायुर्विष्णुः कुर्याच्च सम्पदम् ।
हरो रक्षतु गात्राणि यदीया जन्मपत्रिका ॥१८॥

ब्रह्मा दीर्घायु, विष्णु सम्पत्ति, महादेव उसके शरीर की रक्षा करें, जिसकी यह जन्मपत्रिका है ॥ १८ ॥

गणाधिपो ग्रहाश्चैव गोत्रजा मातरस्तथा ।
सर्वे कल्याणमिच्छन्तु यदीया जन्मपत्रिका ॥१९॥

गणाधिप, सूर्यादि ग्रह, गोत्रज, षोडशमातर सब उसका कल्याण करें जिसकी यह जन्मपत्री है ॥ १९ ॥

कल्याणानि दिवामणिः सुललितां कान्ति कलानां निधि-
र्लक्ष्मीं क्ष्मातनयो बुधश्च बुधतां जीवश्चिरं जीविताम्।
साम्राज्यं भृगुजोऽर्कजो विजयतां राहुर्बलोत्कर्षतां
केतुर्यच्छतु तस्य वाञ्छितमियं पत्री यदीयोत्तमा ॥२०॥

सूर्य कल्याण, चन्द्रमा सुन्दर कान्ति, मंगल लक्ष्मी (सम्पत्ति), बुध पाण्डित्य, जीव (गुरु) चिरजीविता, शुक्र साम्राज्य, शनि विजय, राहु बलकी वृद्धि और केतु उसकी अभीष्ट सिद्धि करें, जिसकी यह जन्मपत्री है ॥ २० ॥

श्रीजन्मपत्री शुभदीपकेन व्यक्तं भवेद्भाविफलं समग्रम्।
क्षपाप्रदीपेन यथा गृहस्थं घटादिजातं प्रकटत्वमेति ॥२१॥

जन्मपत्र रूप दीपक से समस्त भावी फल प्रकट होता है, जैसे रात्रि में दीप के द्वारा घर की सब वस्तुएँ दृश्य होती हैं ॥ २१ ॥

ये कुर्वन्ति शुभाऽशुभानि जगतां यच्छन्ति ये सम्पदो
ये पूजा-बलिदान-होम-विधिभिर्निघ्नन्ति विघ्नानि च।
ये संयोग-वियोग-जीवितकृताः सर्वेश्वराः खेचरा-
स्ते तिग्मांशुपुरोगमा ग्रहगणाः शान्ति प्रयच्छन्तु वः ॥२२॥

जो (सूर्यादि ग्रह) संसार के सब शुभ या अशुभ फल तथा सब सम्पत्ति को देने वाले हैं, जो पूजा, बलि, होम, जपादि से सब विघ्नों को नष्ट करते हैं, जो समस्त जगत् के जीवों के संयोग-वियोग कारक हैं ऐसे सूर्य आदि ग्रह जन्मपत्र वाले को सुख-शान्ति प्रदान करें ॥ २२ ॥

येनोत्पाट्य समूलमन्दरगिरिश्छत्रीकृतो गोकुले
राहुर्येन महाबली सुररिपुः कायार्द्धशेषीकृतः।
कृत्वा त्रीणि पदानि येन वसुधा बद्धो बलिर्लीलया
स त्वां पातु युगे युगे युगपतिस्त्रैलोक्यनाथो हरिः ॥२३॥

जिन भगवान् ने गोकुल में पर्वत को जड़ से उखाड़ कर छत्रवत् धारण किया, महाबलवान् राहु को अर्धशरीर बनाया, तीन पैर त्रिभुवन को बना कर जिन्होंने बलिको बाँधा ऐसे त्रिलोकीनाथ भगवान् आप (जन्मपत्र वाले) की रक्षा करें ॥ २३ ॥

पूषा पुष्टिं दिशतु सततं सन्ततिं शीतरोचि-
र्भौमो भाग्यं सितकरसुतः शान्तिमाङ्गल्यवित्तम् ।
जीवो राज्यं चिरसुभगतां भार्गवो भूमिमार्की
राहुः सौख्यं शिखिन इति ते कीर्तिमभ्रंलिहां च ॥२४॥

सूर्य पुष्टि, चन्द्रमा सन्तति, भौम भाग्य, शशाङ्कसुत (बुध) शान्ति, गुरु राज्य, शुक्र सौभाग्य, शनि पृथ्वी, राहु सौख्य और केतु दिगन्तव्यापिनी कीर्ति प्रदान करें ॥ २४ ॥

ग्रह-प्रशंसा

ग्रहा राज्यं प्रयच्छन्ति ग्रहा राज्यं हरन्ति च ।
ग्रहैर्व्याप्तमिदं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥२५॥

ग्रह ही राज्य देने वाले और ग्रह ही राज्य हरने वाले होते हैं। ग्रहों से ही सचराचर त्रैलोक्य व्याप्त है ॥ २५ ॥

उमा गौरी शिवा दुर्गा भद्रा भगवती तथा ।
कुलदेव्यथ चामुण्डा रक्षन्तु बालकं सदा ॥२६॥

उमा, गौरी, शिवा, दुर्गा, भद्रा, भगवती, कुलदेवी, चामुण्डा ये सब बालक (जन्म-पत्रवाले) की रक्षा करें ॥ २६ ॥

अविरलमदजलनिवहं भ्रमरकुलानीकसेवितकपोलम् ।
अभिमतफलदातारं कामेशं गणपतिं वन्दे ॥२७॥

निरन्तर मदजल स्राव के हेतु भ्रमर समूह से शोभित कपोल हैं जिनका ऐसे सब अभीष्ट कामनाओं को देने वाले गणेशजी को नमस्कार करता हूँ ॥ २७ ॥

मुसलमानों के जन्मपत्र के आरम्भ में लिखने के मंगल श्लोक—

यः पश्चिमाभिमुखसंस्थितविद्यमानो ह्यव्यक्तमूर्तिपरिवर्तितविश्वभोगः ।
दुर्लक्ष्यविक्रमगतिः कृतकर्मलक्ष्यो राज्यश्रियं दिशतु वो रहमाण एषः ॥

जो पश्चिमाभिमुख होकर उपासना करने वालों के प्रत्यक्षदर्शी हैं, अपनी अव्यक्त मूर्ति (निराकार रूप) से ही समस्त विश्व को परिवर्तित कर रहे हैं, जिनका पराक्रम और गति अज्ञेय है और कृतकर्मों से ही लक्ष्य हैं ऐसे रहमाण (खुदा) राज्यलक्ष्मी को दें ॥ २८ ॥

इस प्रकार जन्मपत्र में इन श्लोकों में-से २, ४, यथारुचि लिखना । फिर उसके आगे संवत्सर, अयन, ऋतु, मासादि लिखने की रीति नीचे दिखलाते हैं—

लेखन पद्धति—

अथ श्रीमन्नृपतिविक्रमार्कराज्यादमुकसंवत्सरेऽमुकशाकेऽमुकायनेऽमुकगोलगते श्रीसूर्येऽमुकऋतावमुकमासेऽमुकपक्षेऽमुकतिथावमुकवासरे घटीपलामुकनक्षत्रे घटीपलामुकयोगे घटीपलाऽमुककरणेऽत्र दिने सूर्योदयाद्दिनगतघटीपलाऽमुकराशिस्थिते श्रीसूर्येऽमुकराशिस्थिते चन्द्रेऽमुकराशिस्थिते भौमे बुधे गुरौ शुक्रे शनौ राहौ केतौ वाऽमुकराशिनवांशेऽमुकलग्नाधिपतावमुकराश्यधिपतौ एवं पुण्यतिथौ पञ्चाङ्गशुद्धौ शुभग्रहनिरीक्षितकल्याणवत्यां वेलायां तात्कालिकाऽमुकलग्नोदये सङ्क्रान्तिगतांशा अयनांशा मिश्रप्रमाणघटीपल-दिनार्द्धप्रमाणघटीपलनिशार्द्धप्रमाणघटीपल—दिनप्रमाणघटीपल- रात्रिप्रमाण-घटीपलसम्मीलनेऽहोरात्रप्रमाणघटीपलरविभोग्यालङ्कोदयाद्गतघटीपलानि उन्नतघटीपलनतघटीपलानि सूर्यपुरुषाकारनक्षत्राऽमुकस्थाने पतितं तत्र कैलाशगिरिशिखरे उमामहेश्वरसंवादे विंशोत्तरीदशाप्रमाणेनादावमुकदशामध्येऽष्टोत्तरीमतेनाऽमुकग्रहदशायां जन्माऽमुकसन्ध्यायां, अमुकयामकेषु, अमुकवंशोद्भवगङ्गानीरपवित्रोपमाऽमुकान्वयेऽमुकगोत्रेऽमुकपुत्रोऽमुकगृहे भार्याऽमुकनाम्नी पुत्ररत्नमजीजनत् । अत्र होराशास्त्रप्रमाणेनाऽमुकनक्षत्रेऽमुकचरणेऽमुकाक्षरेऽमुकस्वरेऽमुकयोनावमुकनाड्याममुकगणेऽमुकवर्णेऽमुकवर्गेऽमुकयुञ्जायां तस्य चिरञ्जीविनोऽमुकनाम प्रतिष्ठितम्, स च देव-द्विजप्रसादाद्दीर्घायुर्भवतु ।

इस पद्धति को मंगल श्लोक लिखने के बाद लिखना । अमुक शब्द के स्थान में जो संवत्सर, अयन, ऋतु, मास आदि हो उसका नाम लिखना चाहिये ।

जन्मकुण्डलीस्थ विषयक्रम—

संवत्सरफलाऽयनफल—गोलफल—ऋतुफल-मासफल – पक्षफल-तिथिफल—वारफल-दिनजातफल- रात्रिजातफल-योगफल - करणफल-

गणफल-योनिफल-वारायुर्लग्नफलांशफलानामग्रे चन्द्रकुण्डलिकाचक्रं चन्द्रकुण्डलीफलम्, चन्द्रतत्फलं, राश्यायुर्भावसाधनार्थं सूर्यादिकमध्यम-सूर्यादिकस्पष्टसूर्यादिक–तात्कालिकभावचक्रविधिफलं, सूर्यादीनां भावविश्वोपकभावतत्फलं द्वादशभवने नवग्रहाणां द्वादशभवननिरीक्षणविधिः, द्वादशभवने नवग्रहाणां फलं, द्वादशभवने द्वादशेशफलम्, द्वादशभवने द्वादशलग्नफलं, द्वादशलग्नानां स्वामिफलं, षड्वर्गमैत्रीचक्रं, षड्वर्गकुण्डलीचक्रं, पञ्चमहापुरुषयोगफलं, सुनफाऽनफादुरधराकेमद्रुमवोसिवेस्युभयचरीयोगफलराधयोगद्वादशायुस्सगति-नवग्रहचक्रं, नवग्रहफलं, दीप्तस्थादिनवप्रकारग्रहफलम् । अरिष्टभङ्ग-राजयोगाः, गजचक्रम् । अश्वचक्रम् । शतपदचक्रम् । सूर्यकालानल-चन्द्रकालानल-यमदंष्ट्रात्रिनाडीयन्त्र-सर्वतोभद्रचक्रम् । चन्द्रावस्था-चक्रं, रश्मिचक्रं, रश्मिफलं, चतुर्विधबलाष्टवर्गफलं, सर्वाष्टकवर्ग-चक्रम् । मैत्रीचक्रं, महादशाफलं, विंशोत्तर्यष्टोत्तरीयोगिनीदशासन्ध्या-पाचकचक्रदशान्तर्दशाचक्रमन्तर्दशाफलमुपदशाचक्रमुपदशाफलम् ।

जन्मपत्र लिखने वाले पण्डित को चाहिये कि—यजमान (जन्मपत्र बनवाने वाले) के इच्छानुसार छोटा या बड़ा जैसा जन्मपत्र बनाना हो उसके अनुसार इन विषयोंमें से आवश्यक फलों को लिखे ।

यदि छोटा जन्मपत्र बनाना हो तो––संवत्सर आदि प्रशस्ति लिखकर जन्मलग्न-कुण्डली, चन्द्रकुण्डली, स्पष्ट ग्रह, ससन्धिद्वादश भाव लिखकर यथायोग्य आगे वर्णित संवत्सर-आदि के फल, ग्रहों के भाव फल लिखना चाहिये ।

यदि उससे अधिक (मध्यम श्रेणी का) जन्मपत्र लिखना हो तो स्पष्ट ग्रह, ससन्धि द्वादश भाव, जन्मकुण्डली, चन्द्रकुण्डली, चलित भावकुण्डली, होरादि षड्वर्ग चक्र, महादशा (विंशोत्तरी-अष्टोत्तरी) लिखकर–पञ्चाङ्ग फल, ग्रहों के भाव फल, दशाफल यथा योग लिखना ।

यदि लम्बा जन्मपत्र बनाना हो तो—इससे अतिरिक्त योगिनी दशा, अन्तर दशा, प्रत्यन्तर दशा आदि लिखकर इस पुस्तक के सब फलों को लिखना ।

संवत्सर से शाकानयन—

विक्रमादित्यवर्षेभ्यः पञ्चत्रिंशोत्तरं शतम् ।
पातयित्वा भवेच्छाकं मानं तस्माच्च ते स्मृताः ॥१॥

विक्रम संवत्सर में १३५ घटाने से (शालिवाहन) शाक वर्ष का मान होता है और शाक संख्या में १३५ जोड़ने से संवत्सर संख्या होती है।

उदाहरण—जैसे संख्या २००७ में शकवर्ष जानना है तो सं० २००७ में १३५ घटाने से शेष १८७२ यह शाक संख्या हुई।

तथा शाक संख्या १८७२ में १३५ जोड़ने से २००७ यह बिक्रम संवत्सर संख्या हुई।

विशेष—इतना ध्यान रखना चाहिये कि—चैत्र शु० १ से विक्रम संवत् का आरंभ होता है। और मेष की संक्रान्ति काल से शाके का आरम्भ होता है। इसलिये चैत्र शुदि १ प्रतिपदा से मेष संक्रान्ति के बीच में संवत् से शाके जानना हो तो संवत् में १३६ घटाने से शाके होता है। फिर मेष संक्रान्ति के आगे १३५ घटाना चाहिये।

(कृत–त्रेता–द्वापर–कलि–युगमान भास्कर)

"खखाभ्र-दन्त-सागरै-र्युगाग्नियुग्मभूगुणैः ।
क्रमेण सूर्यवत्सरैः कृतादयो युगाङ्घ्रयः ॥"

४३२००० को क्रम से ४, ३, २ और १ से गुणा करने से क्रम से कृतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग के वर्ष प्रमाण होते हैं।

जैसे, १७२८०००– कृतयुग। १२९६०००—त्रेता। ८६४०००—द्वापर। ४३२०००—कलियुग। इन चारों युगों का योग (४३२०००० इतने वर्ष) एक महायुग कहलाता है ॥ १ ॥

युगानयन—

द्वात्रिंशच्च सहस्राणि कलौ लक्षचतुष्टयम् ।
वेदा(४)–ऽग्नि(३)–नेत्रै(२)–र्गुण्यं हि कृतं त्रेता च द्वापरम् ॥२॥

४३२००० कलियुग का वर्ष प्रमाण है, इसको ४ से गुणा करने से कृतयुग, ३ से गुणा करने से त्रेता और २ से गुणा करने पर द्वापर का वर्ष मान होता है ॥ २ ॥

तदनन्तरं करणगताधिकमास-क्षयमास-क्षयसंवत्सराधिकसंवत्सराहर्गणाद्या यस्मिन् मते वास्तवा जायन्ते तस्मिन् ग्रन्थे विलोक्य लेख्याः ॥ ३ ॥

इसके अनन्तर करणग्रन्थ द्वारा साधित अधिमास, क्षयमास, अधिकवर्ष, क्षयवर्ष, अहर्गण आदि जिस पक्ष से वास्तव (दृग्-गणितैक्य) होते हों, उस ग्रन्थ के आधार पर उसे समझाकर लिखना चाहिये ॥ ३ ॥

अथ कलियुग जातफल—

पापात्मा दुःखसंयुक्तो धनहीनोऽयशा नरः ।
दुष्टबुद्धिर्दुराचारो जायते च कलौ युगे ॥ ४ ॥

कलियुग में जन्म होने से पाप, दुःख, दरिद्रता, अयश, दुर्बुद्धि और दुराचारों से युक्त होता है ॥ ४ ॥

टिप्पणी—इसको जन्मपत्र में नहीं लिखना चाहिए ।

प्रभव आदि संवत्सरों के नाम—

प्रभवो विभवः शुक्लः प्रमोदोऽथ प्रजापतिः ।
अङ्गिराः श्रीमुखो भावो युवा धाता तथैव च ॥ १ ॥
ईश्वरो बहुधान्यश्च प्रमाथी विक्रमो वृषः ।
चित्रभानुः सुभानुश्च तारणः पार्थिवो व्ययः ॥ २ ॥
सर्वजित् सर्वधारी च विरोधी विकृतिः खरः ।
नन्दनो विजयश्चैव जयो मन्मथ-दुर्मुखौ ॥ ३ ॥
हेमलम्बो विलम्बश्च विकारी शार्वरी प्लवः ।
शुभकृच्छोभनः क्रोधी विश्वावसु-पराभवौ ॥ ४ ॥
प्लवङ्गः कीलकः सौम्यः साधारणो विरोधकृत् ।
परिधावी प्रमादी च आनन्दो राक्षसो नलः ॥ ५ ॥
पिङ्गलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थी रौद्र-दुर्मती ।
दुन्दुभी रुधिरोद्गारी रक्ताक्षः क्रोधनः क्षयः ॥ ६ ॥

१ प्रभव, २ विभव, ३ शुक्ल, ४ प्रमोद, ५ प्रजापति, ६ अङ्गिरा, ७ श्रीमुख, ८ भाव, ९ युवा, १० धाता, ११ ईश्वर, १२ बहुधान्य, १३ प्रमाथी, १४ विक्रम, १५ वृष, १६ चित्रभानु, १७ सुभानु, १८ तारण, १९ पार्थिव, २० व्यय, २१ सर्वजित्, २२ सर्वधारी, २३ विरोधी, २४ विकृति, २५ खर, २६ नन्दन, २७ विजय, २८ जय, २९ मन्मथ, ३० दुर्मुख, ३१ हेमलम्ब, ३२ विलम्ब, ३३ विकारी, ३४ शार्वरी, ३५ प्लव, ३६ शुभकृत्, ३७ शोभन, ३८ क्रोधी, ३९ विभावसु, ४० पराभव, ४१ प्लवङ्ग, ४२ कीलक, ४३ सौम्य, ४४ साधारण, ४५ विरोधकृत्, ४६ परिधावी, ४७ प्रमादी, ४८ आनन्द, ४९ राक्षस, ५० नल, ५१ पिङ्गल, ५२ कालयुक्त, ५३ सिद्धार्थी, ५४ रौद्र, ५५ दुर्मति, ५६ दुन्दुभी, ५७ रुधिरोद्गारी, ५८ रक्ताक्ष, ५९ क्रोधन, ६० क्षय ॥ १-६ ॥

इन संवत्सरों में १ से २० तक ब्रह्मविंशतिका। २१ से ४० तक विष्णुविंशतिका, और ४१ से ६० तक रुद्रविंशतिका है।

६० ही संवत्सर क्यों होते हैं? इसकी युक्ति "कालपञ्चाङ्गविवेक" में देखिये।

विशेष—मध्यम बृहस्पति के एक-एक राशि भोग एक-एक संवत्सर होते हैं।

प्रभवादि संवत्सर के आरम्भ में मध्यम बृहस्पति का कुम्भराशि में प्रवेश हुआ था, इसलिए प्रभवादि संवत्सर संख्या में १२ के भाग देने से १ आदि शेष में कुम्भ आदि राशि समझनी चाहिये।

उदाहरण—जैसे शोभन संवत्सर मध्यम गुरु की कौन राशि है? यह जानना है तो शोभन संवत्सर संख्या (३७) में १२ के भाग देने से शेष १ बचा, इसलिए कुम्भ राशि हुई।

शुद्ध संवत्सर—जिस संवत्सर में स्पष्ट गुरु की मार्ग गति से एक राशि में संचार हो वह शुद्ध संवत्सर कहलाता है।

अधिक संवत्सर—जिस संवत्सर में मार्ग गति से स्पष्ट गुरु की (अग्रिम) राशि में संचार नहीं हो वह अधिक संवत्सर कहलाता है।

क्षय (लुप्त) संवत्सर—जिसमें स्पष्ट गुरु की मार्ग गति से २ राशि में संचार हो वह लुप्त संवत्सर कहलाता है।

संवत्सर जानने का प्रकार—

"सृष्टयादौ विजयो नाम शकादौ प्रभवस्ततः।
सृष्टयादेर्विजयाद्यास्ते शकाच्च प्रभवादयः॥"

सृष्टयादि में विजय नामक संवत्सर था, इसलिए सृष्टयादि से बृहस्पति की मध्यम राशि जानकर विजयादि संवत्सर समझना तथा शकादि में प्रभव नामक संवत्सर था इसलिये शकाब्द पर से प्रभवादि संवत्सर जानना चाहिये।

यथा सृष्टयादि से संवत्सर ज्ञान—

"द्वादशघ्ना गुरोर्याता भगणा वर्तमानकैः।
राशिभिः सहिताः शुद्धाः षष्टया स्युर्विजयादयः॥"

सृष्टयादि से अहर्गण या वर्षगण द्वारा आनीत मध्यम गुरु भगण संख्या को १२ से गुणाकर उसमें वर्तमान मध्यम गुरु राशि संख्या जोड़कर ६० का भाग देकर एक आदि शेष में विजय आदि संवत्सर जानना चाहिये॥१-६॥

अब—शकाब्द के आधार पर—वर्तमान संवत्सर के नाम तथा शकारम्भ (मेष संक्रान्ति काल) में उसके भुक्त और भोग्य काल जानने के लिये—

संवत्सरानयन—

शकेन्द्रकालः पृथगाकृतिघ्नः २२ शशाङ्कनन्दाश्वियुगैः ४२९१ समेतः।
शराद्रिवस्विन्दु १८७५ हृतः सलब्धः षष्टयाप्तशेषे प्रभवादयोऽब्दाः॥७॥

वर्तमान शाक-संख्या को २ जगह रखकर द्वितीयस्थानस्थित संख्या को २२ से गुणा कर गुणनफल में ४२९१ जोड़कर उसमें १८७५ से भाग देकर लब्ध वर्षादि को प्रथम स्थान स्थित शाक-संख्या में जोड़कर ६० के भाग देने से १ आदि शेष में प्रभव आदि गणना से संवत्सर समझना ॥ ७ ॥

विशेष—यहाँ १८५७ से भाग देने पर लब्धि-पूर्ण (गत) संवत्सर और शेष को १२ आदि से गुणाकर मासादि अपूर्ण (वर्तमान) संवत्सर का भुक्त समझा जाता है। उसको संवत्सर के सावन दिन संख्या में घटाने से संवत्सर के (मेष संक्रान्ति से आगे) भोग्य काल होता है।

उदाहरण—शाके १८७० को २२ से गुणा करने से ·११४० इसमें ४२९१ जोड़ने से ४५४३१ इसमें १८७५ के भाग देने से लब्धि २४ वर्ष, शेष ४३१ को १२ से गुणाकर ७१७२ इसमें १८७५ के भाग से लब्धि २ मास, फिर शेष ४२२ को ३० से गुणाकर ४२६६० इसमें १८७५ के भाग से लब्धि २२ दिन, शेष १४१० को ६० से गुणाकर ८४६०० इस १८७५ के भाग से लब्धि घटी ४५, पुनः शेष २२५ को ६० से गुणाकर १८७५ के भाग देकर लब्धि ७ पल हुए। इस प्रकार लब्ध वर्षादि २४=२।२२।४५।७ को शाके सं० १८७० में जोड़ने से वर्षादि १८९४।२।२२।४ इसमें (वर्ष संख्या में) ६० के भाग देकर शेष वर्षादि ३४।२।२२।४५।७ प्रभव आदि गणना से ३४वाँ शार्वरी नाम संवत्सर पूर्ण (गत) और वर्तमान ३५ वाँ प्लव नाम संवत्सर का भुक्त मासादि १।३।९।७ अर्थात् मेष संक्रान्ति काल से पूर्व इतने मासादि भुक्त हुए। इसको १ संवत्सर के मासाबि में घटाने से मेष संक्रान्ति से आगे वर्तमान (अपूर्ण) संवत्सर का भोग्य मान होता है।

विशेष—संवत्सर में सावन मान से करण ग्रन्थानुसार ३६० दिन अर्थात् १२ मास होते हैं। जो स्वल्पान्तर होने के कारण व्यवहार में लिये जाते हैं। परञ्च सिद्धान्त ग्रन्थानुसार १ संवत्सर में दिनादि ३६१।२।४।४५ सूक्ष्ममान (अर्थात्) मासादि १२।१।२।४।४५ सूक्ष्ममान होता है, इसलिये लुप्त संवत्सरादि की संभावना में सूक्ष्ममान में ही भुक्त मासादि को घटाकर भोग्य मासादि समझना।

जैसे—उपर्युक्त गत मासादि २।२२।४५।७ को स्थूलमान १२ मास में घटाने से स्थूल भोग्य मासादि ९।७।१४।५३।

तथा सूक्ष्ममान में घटाने से सूक्ष्म भोग्य मासादि ९।८।१६।५७।४५ हुआ।

इसकी उपपत्ति (युक्ति) यह है कि सिद्धान्तग्रन्थानुसार वास्तव मध्यम गति से १ बार्हस्पत्य संवत्सर में ३६१।२।४।४५ सावन दिनादि मान होता है तथा १ सौर वर्ष में सावन दिनादि ३६५।१५।३०।२२।३० होते हैं। तथा शाकमान सौर-वर्ष होता है। इसलिये अनुपात से इष्ट शकाब्द में सावन दिन संख्या=शाक × (३६५।१५।३०।२२।३०) फिर यदि ३६१।२।४।४५ दिनादि में १ संवत्सर हो तो

शाक सम्बन्धी दिनादि में क्या ? इस अनुपात से शाक सम्बन्धी बार्हस्पत्य संवत्सर =

$$\text{शाके}\ \frac{(३६५।१५।३०।२२।३०)}{३६१।२।४।४५}$$

$$\text{शाके} + \text{शा}\ \frac{(४।१३।२५।३७।३०)}{३६१।२।४।४५}$$

$$\text{शाके} + \text{शा}\ \frac{(४।१३।२५।३७।३०) \times २२}{(३६१।२।४।४५) \times २२} = \frac{\text{शाके} + \text{शा}\ (३६१।२।४।४५) \times २२}{(४।१३।२५।३७।३०) \times २२}$$

$$= \text{शाके} + \frac{\text{शाके} + २२}{१८७५}$$ इसमें शाकारम्भ से पूर्व गत प्रभवादि संवत्सर

(वर्षादि २।३।१३।५२।२०) जोड़ने से प्रभवादि संवत्सर $= \text{शाके} + \frac{\text{शाके} \times २२}{१८७५}$

$+ (२।३।१३।५२।२०) = \text{शाके} + \frac{\text{शाके}\ २२ + ४२९१}{१८७५}$ यह उपपन्न होता है ॥७॥

संवत्सर के नाम जानने का सरल दूसरा प्रकार–

शाकं रामाक्षि (२३) संयुक्तं कृत्वा षष्टया विभाजयेत् ।
शेषात् संवत्सरो ज्ञेयो प्रभवाद्यो बुधैः सदा ॥ ८ ॥

शाक-संख्या में २३ जोड़कर ६० के भाग देने से शेष तुल्य प्रभवादि संख्या समझनी चाहिये ॥ ८ ॥

विशेष—वास्तव में २३ जोड़कर ६० के भाग से गत संवत्सर मान आता है इसलिये वर्तमान संवत्सर जानने के लिये शाके में २४ जोड़ना चाहिये ।

जैसे—पूर्व उदाहरण में शाके १८७० में २३ जोडने से १८९३ इसमें ६० के भाग से शेष ३३ बचे, जो पूर्व सूक्ष्मगणित से गत संवत्सर आया है । इसलिए यहाँ वास्तव पाठ—"शाके वेदाक्षिसंयुक्तं" ऐसा समझना चाहिए ॥८॥

प्रभवादि-संवत्सरों के फल—

जातिस्वकुलधर्मात्मा विद्यावांश्च महाबलः ।
क्रूरश्च कृतविद्यश्च जायते प्रभवेऽब्दके ॥ १ ॥

प्रभव संवत्सर में जन्म लेनेवाला अपनी जाति और कुलधर्म का पालक, विद्वान्, महाबली, क्रूरबुद्धि और कृतविद्य होता है ॥ १ ॥

स्त्रीस्वभावश्च चपलस्तस्करः सधनस्तथा ।
परोपकारी पुरुषो जायते विभवाऽब्दके ॥ २ ॥

विभव संवत्सरोत्पन्न मनुष्य-स्त्री के सदृश स्वभाववाला, चञ्चल, चोर किन्तु सधन और परोपकारी होता है ॥ २ ॥

शुद्धः शान्तः सुशीलश्च परदाराभिपूजितः ।
परोपकारकर्मा च निर्धनः शुक्लवर्षजः ॥ ३ ॥

शुक्ल संवत्सर में जन्म हो तो शुद्ध, शान्तहृदय, सुशील, पर-स्त्रियों से पूजित, परोपकारी और निर्धन होता है ॥ ३ ॥

क्वचिल्लक्ष्मीः क्वचिद्भार्या बन्धुमित्राऽरिविग्रहः ।
राजपूज्यः प्रधानश्च प्रमोदाऽब्दभवो नरः ॥ ४ ॥

प्रमोद संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य—कभी सम्पत्ति और कभी स्त्री की प्राप्ति से सुखी, कभी अपने बन्धु और मित्र तथा शत्रु से कलह करता है तथा राजा से पूजित या राजमन्त्री होता है ॥ ४ ॥

प्रजापालनसन्तुष्टो दाता भोक्ता बहुप्रजः ।
विदेशेषु समाख्यातो प्रजापतिसमुद्भवः ॥ ५ ॥

प्रजापति वर्ष में जिसका जन्म हो वह प्रजा का पालन कर सन्तुष्ट होता है । दाता, भोगी, बहुत सन्तानवाला तथा विदेशों में विख्यात होता है ॥५॥

क्रियाद्याचारसम्पन्नो धर्मशास्त्रागमार्थवित् ।
अतिथिमित्रभक्तोऽयमङ्गिरो वत्सरोद्भवः ॥ ६ ॥

अङ्गिरा नाम संवत्सर में जन्म लेनेवाला सत्क्रिया और आचार से युक्त, धर्म-शास्त्र और आगम जानने वाला, अतिथि और मित्रों का भक्त होता है ॥ ६ ॥

धनवान् देवभक्तश्च धातुवादविचक्षणः ।
पाखण्डकृतकर्मा च श्रीमुखे तु भवेन्नरः ॥ ७ ॥

श्रीमुख संवत्सरोत्पन्न पुरुष धनवान्, देवताओं का भक्त, धातुवाद में पण्डित और पाखण्ड कर्मों में निपुण होता है ॥ ७ ॥

भावनां कुरुते नित्यं सर्वकार्येषु मानवः ।
मत्स्य-मांसप्रियश्चैव यो जातो भाववत्सरे ॥ ८ ॥

भाव संवत्सर में जन्म लेनेवाला सब कार्योंकी भावना करनेवाला, मत्स्य और मांस-भोजन का प्रिय होता है ॥ ८ ॥

भार्याऽऽर्तो जलभीतश्च आधि-व्याधिप्रपीडितः ।
सर्वदा प्रीतिसंयुक्तो युवसंवत्सरे फलम् ॥ ९ ॥

युव संवत्सरोत्पन्न मनुष्य पत्नी के लिए दुःखी, जलसे डरनेवाला, आधि-व्याधि से दुःखी तथापि सदा प्रसन्न रहता है ॥ ९ ॥

धनवाञ्छुभगः साधुर्धर्मात्मा दीनवत्सलः ।
सुशीलः सत्स्वरूपश्च धातरि प्रभवः सदा ॥ १० ॥

धाता संवत्सर में उत्पन्न—धनी, सुन्दर, सज्जन, धर्मात्मा, गरीबों का रक्षक, सुरूपवान् होता है ॥ १० ॥

धनी भोगी तथा कामी पशुपालप्रियो भवेत् ।
अर्थ-धर्मसमायुक्तो ईश्वराब्दभवो नरः ॥ ११ ॥

ईश्वर संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य धनवान्, कामी, पशुओं को पालने वाला तथा अर्थ और धर्म से युक्त होता है ॥ ११ ॥

वेदशास्त्ररतो नित्यं कलागान्धर्वगायनः ।
नाऽतिगर्वी सुरापश्च जायते बहुधान्यके ॥ १२ ॥

बहुधान्य संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य वेद-शास्त्र का ज्ञाता, कला और संगीत जाननेवाला, गर्वहीन और मद्यपायी होता है ॥ १२ ॥

परदाराभिलापी च परद्रव्यरतो नरः ।
व्यसनी द्यूतविच्चैव प्रमाथिनि भवेन्नरः ॥ १३ ॥

प्रमाथी संवत्सर में जन्म हो तो वह मनुष्य परस्त्रीगामी, परधनहर्ता, व्यसनी और जुआड़ी होता है ॥ १३ ॥

सन्तुष्टो व्यसनेऽसक्तः स-प्रतापो जितेन्द्रियः ।
शूरश्च कृतविद्यश्च विक्रमे जायते नरः ॥ १४ ॥

विक्रम संवत्सरोत्पन्न मनुष्य व्यसन से रहित, प्रतापी, जितेन्द्रिय, वीर, कृतविद्य होता है ॥ १४ ॥

स्थूलोदरः स्थूलपदाऽल्पपाणिः कुलाभिमानी कुलपोषकश्च ।
धर्माऽर्थयुक्तो बहुवित्तहारी वृषे प्रजातश्च भवेन्मनुष्यः ॥१५॥

वृषसंवत्सर में जिसका जन्म होता है वह—स्थूल पेट और स्थूल पैर तथा छोटे हाथवाला, कुलाभिमानी, कुल का पोषक, धर्म और धन से युक्त और बहुत सम्पत्ति उपार्जन करने वाला होता है ॥ १५ ॥

तेजस्वी चाऽतिगर्वी च हितकर्मा कृतस्थितिः ।
देवपूजाप्रियो नित्यं चित्रभानौ भवेन्नरः ॥ १६ ॥

चित्रभानु संवत्सर में जन्म लेनेवाला—तेजस्वी, गर्वी, स्वहितसाधक, स्थिर, देवताओं का पुजारी होता है ॥ १६ ॥

करोति शुभकार्याणि मित्राऽमित्रफलं लभेत् ।
सर्वसङ्ग्रहकर्ता च सुभानौ जायते नरः ॥ १७ ॥

सुभानु संवत्सर में जन्म लेनेवाला सब शुभ कार्य को करनेवाला, मित्र और शत्रु दोनों से लाभ करनेवाला तथा सब वस्तुओं का संग्रह करने वाला होता है ॥ १७ ॥

सर्वलोकप्रियो नित्यं सर्वधर्मरतः सदा ।
राजपूजाप्तवित्तश्च तारणे जायते नरः ॥ १८ ॥

तारण संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य सबका प्रिय, सब धर्म को माननेवाला तथा राजा से आदर सहित धन पानेवाला होता है ॥ १८ ॥

शिवब्रह्मविकर्मा च शुभसौख्यप्रदायकः ।
भव्ययुक्तश्च धर्मात्मा पार्थिवे जायते नरः ॥ १९ ॥

पार्थिव संवत्सर में उत्पन्न पुरुष शिव और ब्रह्माके समान कार्य को करने और मिटाने में समर्थ, दूसरों को सुख देने वाला, कल्याण से युक्त और धर्मात्मा होता है ॥ १९ ॥

दाता भोक्ता प्रधानत्वं जनकर्मणि सौख्यभाक् ।
बहुधा मित्रलाभश्च जायते व्ययवत्सरे ॥ २० ॥

व्यय संवत्सर में उत्पन्न पुरुष दानी, भोगी, सार्वजनिक कार्य में प्रधान, सुखी, अनेक मित्रवाला होता है ॥ २० ॥

जित्वा च सकलाँल्लोकान् विष्णुधर्मपरायणः ।
करोति पुण्यकर्माणि सर्वजित् सम्भवो नरः ॥ २१ ॥

सर्वजित् संवत्सर में उत्पन्न पुरुष सब शत्रुओं को जीतकर विष्णुभक्त होकर पुण्य कार्यों को करने वाला होता है ॥ २१ ॥

पितृ-मातृप्रियो नित्यं गुरुभक्तो धनान्वितः ।
शूरः शान्तः प्रतापी च सर्वधारिभवो नरः ॥ २२ ॥

सर्वधारी संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य माता-पिता का प्रिय, गुरु का भक्त, शूर, शान्त हृदय, प्रतापी होता है ॥ २२ ॥

विरोधिवत्सरोद्भूतो मत्स्य-मांसकृतादरः ।
धर्मबुद्धिरतो नित्यं प्रशस्तो लोकपूजितः ॥ २३ ॥

विरोधी संवत्सर में जन्म लेनेवाला—मत्स्य, मांसप्रिय, धर्मबुद्धि, प्रशस्तचित्त और लोक में मान्य होता है ॥ २३ ॥

चित्रवेत्ता च नृत्यज्ञो गान्धर्वो भिन्नसंशयः ।
दाता मानी तथा भोगी विकृतौ जायते नरः ॥ २४ ॥

विकृति संवत्सर में उत्पन्न—चित्रकार, नृत्य का ज्ञाता, संगीत जानने वाला, संशयरहित, दानी, मानी और भोगी होता है ॥ २४ ॥

परहिंसापरो मैत्र्यां परद्रव्यरतो भवेत् ।
कुटुम्बभारकोत्साही जायते खरवत्सरे ॥ २५ ॥

खर संवत्सर में जन्म होने से हिंसक और लोगों से मैत्री द्वारा धन लेनेवाला, कुटुम्बों का पोषण करनेवाला और उत्साही होता है ॥ २५ ॥

सर्वदा प्रीतिसंयुक्तो गृहे कल्याणकारकः ।
राजमान्योऽपि पुरुषो नन्दने जायते नरः ॥ २६ ॥

नन्दन संवत्सर में जन्म होने से—सर्वदा प्रसन्न, घर का कल्याणकारक और राजा का मान्य होता है ॥ २६ ॥

सुदेहायु-र्यशःसौख्य-सर्वकर्म-फलान्वितः ।
विजयी शत्रुवर्गेषु विजये वत्सरे जनः ॥ २७ ॥

विजय संवत्सर में जन्म लेनेवाला—सुन्दर देह, दीर्घायु, यश, सुख तथा सब कार्य में लाभ, युद्ध में शत्रुओं को जीतनेवाला होता है ॥ २७ ॥

जेता युद्धे कलत्राणि मित्राऽमित्रफलं लभेत् ।
व्यापारकर्मसंयुक्तो जयवत्सरसम्भवः ॥ २८ ॥

जय संवत्सर में उत्पन्न नर युद्ध में शत्रु को जीतने वाला, सुन्दर स्त्री तथा शत्रु और मित्र दोनों से लाभ करने वाला और व्यापार में कुशल होता है ॥ २८ ॥

अतिकामी त्वतिबुद्धिस्तृष्णावान् बहुधनान्वितः पुरुषः ।
अतिनिष्ठुरोऽतिभोगी त्वतिबलयुक्तोऽपि मन्मथे जातः ॥ २९ ॥

मन्मथ संवत्सर में उत्पन्न पुरुष अत्यन्त कामी, अत्यन्त बुद्धिमान्, तृष्णा से युक्त, धनवान्, अति निष्ठुर, परम भोगी और अत्यन्त बलवान् होता है ॥ २९ ॥

शुचिः शान्तः सुदक्षश्च सर्वत्र गुणपूजितः ।
परोपकारी वादी च दुर्मुखे दुर्मुखीप्रियः ॥ ३० ॥

दुर्मुख संवत्सर में—पवित्र, शान्त हृदय, कार्यों में दक्ष, गुणों से सब स्थान में पूजित, परोपकारी होता हुआ भी वादी और दुर्मुखी (कटुभाषिणी) स्त्री का पति होता है ॥ ३० ॥

मणि-मुक्तादि-सद्रत्नैरष्टधातुभिरन्वितः ।
अदाता कृपणः पूज्यो हेमलम्बे नरो भवेत् ॥ ३१ ॥

हेमलम्ब वर्ष में उत्पन्न मनुष्य मणि, मोती आदि रत्न और अष्ट-धातुओं से संयुक्त होता हुआ भी कृपण होता है किन्तु लोक में मान्य होता है ॥ ३१ ॥

अलसः सततं जातो व्याधिदुःखसमन्वितः ।
कुटुम्बधारको वाऽपि विलम्बे जायते नरः ॥ ३२ ॥

विलम्ब संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य आलसी, रोगी, दुःखी और बहुत परिवार वाला होता है ॥ ३२ ॥

रक्तवैकारयुक्तश्च रक्ताक्षः पित्तसम्भवः ।
वनप्रियो धनैर्हीनो विकारिणि भवेन्नरः ॥ ३३ ॥

विकारी संवत्सर में—शोणितविकार से युक्त, लाल नेत्र, पित्त प्रकृति, वनविहारप्रिय और धनहीन होता है ॥ ३३ ॥

वेदशास्त्रप्रियो देव-ब्राह्मणे शुचिभक्तिमान् ।
शर्करारसभोगी च शार्वरी जायते नरः ॥ ३४ ॥

शार्वरी संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य वेद, शास्त्र जानने वाला, देवता और ब्राह्मण में श्रद्धा रखने वाला, मिष्ठान्न भोजी होता है ॥ ३४ ॥

सुनिद्रो बहुभोगी च व्यवसायी यशोऽन्वितः ।
पूजितः सर्वलोकानां प्लवसंवत्सरे भवेत् ॥ ३५ ॥

प्लव संवत्सर में—निद्राप्रिय, सुखभोगी, व्यवसायी, यशस्वी, सब लोक में मान्य होता है ॥ ३५ ॥

कर्मवान् सुयशाः प्रोक्तो धर्मशीलस्तपस्करः ।
प्रजापालः सुनिष्णातः शुभसंवत्सरे नरः ॥ ३६ ॥

शुभ संवत्सर में जन्म लेने वाला—कार्य दक्ष, यशस्वी, धर्मशील, तपस्वी, प्रजापालक और निपुण होता है ॥ ३६ ॥

सुमनाः शान्तचित्तश्च शूरो दाता ह्यनेकधा ।
नातिवृद्धो न पूर्णत्वं शोभनं फलमश्नुते ॥ ३७ ॥

शोभन संवत्सर में जन्म लेनेवाला—मनस्वी, शान्तचित्त, शूर, दाता, अत्यन्त वृद्ध नहीं होता और फलों की पूर्णता नहीं पाता है ॥ ३७ ॥

अतिक्रोधमतिः शूरो विज्ञानौषधिसंग्रही ।
परापवादी सर्वत्र क्रोधिसंवत्सरे भवेत् ॥ ३८ ॥

क्रोधी संवत्सर में जन्म लेनेवाला—महाक्रोधी, शूर, विज्ञानी, औषधि संग्रह करनेवाला, दूसरों का अपवाद करनेवाला होता है ॥ ३८ ॥

छत्रदण्डपताकादि-चामरादिविभूषितः ।
प्रधानपुरुषो जातो विश्वावसुसमाह्वये ॥ ३९ ॥

विश्वावसु नामक संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य छत्र, दण्ड, ध्वज, चामर आदि राजचिह्न से शोभित तथा प्रधान (राजमन्त्री आदि) होता है ॥३९॥

भयार्त्तः शीतभीतश्च कातरो जायते नरः ।
अधर्मी परघाती च पराभवभवो मतः ॥ ४० ॥

पराभव वर्ष में—शीत से डरनेवाला, कायर, अधर्मी और दूसरों का घात करनेवाला होता है ॥ ४० ॥

रौद्रस्तस्करकर्मा च क्षितिपालो नरेश्वरः ।
योगाभ्यासरतो नित्यं प्लवङ्गे जायते नरः ॥ ४१ ॥

प्लवङ्ग संवत्सर में जन्म लेनेवाला—भयानक चोरी करने वाला, बहुत जमीन वाला, जननायक तथा योगाभ्यासी होता है ॥ ४१ ॥

चित्रकर्त्ता समानश्च सुखी स्याद् ब्राह्मणप्रियः ।
पितृमातृषु भक्तश्च जायते कीलके नरः ॥ ४२ ॥

कीलक संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य चित्रकार, मानी, ब्राह्मणों का प्रिय, माता-पिता का भक्त होता है ॥ ४२ ॥

शुचिः शीलः समो दक्षः स-प्रतापो जितेन्द्रियः ।
अतिव्याकुलभक्तश्च सौम्ये सौम्यफलो भवेत् ॥ ४३ ॥

सौम्य संवत्सर में जन्म लेनेवाला—पवित्र, सुशील, समदृष्टि, प्रतापी, जितेन्द्रिय, अत्यन्त व्याकुल, जनों का सेवक तथा अन्य शुभफलों से युक्त होता है ॥ ४३ ॥

व्यवसायी चाऽल्पतुष्टो धर्मकर्मरतः सदा ।
सिद्धागमस्तथैवात्र फलं साधारणे मतम् ॥ ४४ ॥

साधारण संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य व्यवसायी, थोड़ेमें सन्तुष्ट, धर्म और अपने कर्तव्य में तत्पर, मन्त्रशास्त्रज्ञ होता है, तथा और फल वर्ष समान (साधारण) ही होते हैं ॥ ४४ ॥

विरोधकृति यो जातो विरोधी बान्धवैः सह ।
क्षणं सौम्यः क्षणं हीनो दुर्वारो जायते नरः ॥ ४५ ॥

विरोधकृत् संवत्सर में जन्म होने से–मनुष्य अपने बन्धुओं का विरोधी, क्षण में ही सौम्य (प्रसन्न), क्षण में ही खिन्न और अवारा होता है ॥ ४५ ॥

स्वल्पबुद्धिः क्रियास्वल्पो देशे भ्रमति मानवः ।
देवतीर्थप्रियो नित्यं परिधाविनि जायते ॥ ४६ ॥

परिधावी संवत्सर में जन्म लेनेवाला --अल्प बुद्धि, क्रिया में न्यून, विदेशों में घूमनेवाला, देव और तीर्थ का भक्त होता है ॥ ४६ ॥

शर्वभक्तिप्रियो नित्यं गन्धमाल्यानुलेपनैः ।
शौचक्रियानुरक्तश्च प्रमादिप्रभवो नरः ॥ ४७ ॥

प्रमादी संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य गन्ध-माला, चन्दनादि से शर्व (शिवजी) का पूजन करनेवाला, पवित्रकर्म में अनुरक्त होता है ॥ ४७ ॥

सर्वदानन्दसंयुक्तः सर्वदाऽतिथिपूजकः ।
स्वजनार्थागमो नित्यमानन्दे जायते नरः ॥ ४८ ॥

आनन्द संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य सब प्रकार के आनन्द से युक्त, अतिथि का सत्कार करनेवाला, स्वजन और धन लाभ से पूर्ण होता है ॥ ४८ ॥

मत्स्यमांसप्रियो नित्यं नित्यं लुब्धकवृत्तिमान् ।
सुराहारी वृथा पापी जायते राक्षसे नरः ॥ ४९ ॥

राक्षस संवत्सर में उत्पन्न होनेवाला—मत्स्यमांस प्रिय, हिंसाकर्म में प्रवृत्त, मद्यपायी और व्यर्थ पाप करनेवाला होता है ॥ ४९ ॥

बहुपुत्रोऽनन्तमित्रो द्रव्यलोभी कलिप्रियः ।
हानिं शोकं तथा दुःखं नले जातो लभेन्नरः ॥ ५० ॥

नल संवत् में उत्पन्न मनुष्य बहुत पुत्र और बहुत मित्रवाला, धन का लोभी, झगड़ा में प्रेम रखनेवाला तथा हानि, शोक और दुःख पानेवाला होता है ॥ ५० ॥

पित्तप्रकोपसर्वात्मा नानाव्याधिरनेकधा ।
वाहनैश्च समायुक्तः पिङ्गले जायते नरः ॥ ५१ ॥

पिङ्गल वर्ष में जन्म होने से मनुष्य सर्वाङ्ग में पित्त प्रकोप से अनेक रोग से युक्त तथा अनेक प्रकार की सवारी रखनेवाला होता है ॥ ५१ ॥

कृषिवाणिज्यकर्ता च तैलभाण्डादि-सङ्ग्रही।
क्रय-विक्रयकर्ता च कालयुक्ते भवेन्नरः ॥ ५२ ॥

कालयुक्त संवत्सर में जन्म लेनेवाला मनुष्य कृषि और वाणिज्य में निपुण, तैल और बर्तनों का संग्रह करनेवाला तथा क्रय-विक्रय करनेवाला होता है ॥ ५२ ॥

वेदशास्त्रप्रभावज्ञः शुद्धचित्तश्च कोमलः।
सुकुमारो नृपैः पूज्यः कविः सिद्धार्थिजो नरः ॥ ५३ ॥

सिद्धार्थी संवत् में उत्पन्न मनुष्य वेद और शास्त्रों के तत्त्व को जाननेवाला, शुद्ध हृदय, मृदु स्वभाव, सुकुमार शरीर, राजाओं से आदर पानेवाला और कवि होता है ॥ ५३ ॥

तस्करश्चपलो धृष्टः परद्रव्यरतः सदा।
निन्द्यानि सर्वकर्माणि कुरुते रुद्रसम्भवः ॥ ५४ ॥

रुद्र संवत्सर में जन्म लेनेवाला मनुष्य चोर, चञ्चल, ढीठ, परधन का लोभ करनेवाला और निन्दनीय कर्मों को करनेवाला होता है ॥ ५४ ॥

पापबुद्धिरतो नित्यं पापात्मा पापसंश्रितः।
[1]वधकर्मसमायुक्तो दुर्मतौ जायते नरः ॥ ५५ ॥

दुर्मति संवत् में जन्म लेनेवाला मनुष्य पापबुद्धि, पाप आचरण, पापियों की संगति तथा सर्वदा वधकर्म (हिंसा) में तत्पर होता है ॥ ५५ ॥

गीतवाद्यानि शिल्पानि मन्त्रमौषधिमेव च।
ज्ञात्वा सर्वगुणोपेतो नरो दुन्दुभिसम्भवः ॥ ५६ ॥

दुन्दुभी संवत्सर में जन्म होने से मनुष्य संगीत, बाजा, शिल्प, मन्त्र, औषधि को जाननेवाला और सब गुणों से युक्त होता है ॥ ५६ ॥

वातशोणितरोगार्तः कफमारुतसंयुतः।
कौटसाक्ष्यरतश्चैव रुधिरोद्गारिसम्भवः ॥ ५७ ॥

रुधिरोद्गारी संवत्सर में जन्म लेनेवाला—वायु और शोणित विकार-जन्य, रोग से पीड़ित, कफ और वात प्रकृतिवाला, मिथ्या गवाही देनेवाला होता है ॥ ५७ ॥

---

१. किसी पुस्तक में "बौद्धकर्म" (अहिंसा) में रत—ऐसा पाठ असङ्गत है।

देशत्यागो धनभ्रंशो हानिः सर्वत्र जायते ।
धृताऽविवाहिता भार्या रक्ताक्षे यो नरो भवेत् ॥ ५८ ॥

रक्ताक्ष संवत्सर में जो जन्म लेता है—उसको देश का त्याग, धन का नाश, सब कार्य में हानि और विना विवाही, रखेली स्त्री होती है ॥ ५८ ॥

क्रोधी क्रोधसमुत्पादी सिंहतुल्यपराक्रमः ।
ब्राह्मणः परजीवी च क्रोधसंवत्सरे नरः ॥ ५९ ॥

क्रोधन संवत्सर में उत्पन्न मनुष्य स्वयं क्रोधी, दूसरों को भी क्रोध उत्पन्न करनेवाला, सिंह समान पराक्रमी, ब्राह्मण (वेदज्ञाता), दूसरों से जीविका पानेवाला होता है ॥ ५९ ॥

कुटुम्बकलहो नित्यं मद्य-वेश्यारतो नरः ।
धर्माऽधर्मविचारो नो जायते क्षयवत्सरे ॥ ६० ॥

क्षय संवत्सर में जिसका जन्म होता है वह-अपने जनों से कलह करनेवाला, मदिरा और वेश्या में प्रेम रखनेवाला तथा धर्म-अधर्म का विचार नहीं करनेवाला होता है ॥ ६० ॥

अधिक संवत्सर फल—

अधिके वत्सरे जातो धनधान्यसुखान्वितः ।
मतिमान् राजपूज्यश्च पुत्रपौत्रादिसंयुतः ॥

अधिक संवत्सर में जो जन्म लेता है, वह धन-धान्य और सुख से युक्त, बुद्धिमान्, राजमान्य और पुत्र-पौत्रादि से युक्त होता है ।

लुप्त संवत्सर जातफल—

लुप्तसंवत्सरे जातो दीनो हीनमतिस्तथा ।
क्रोधी क्षीणशरीरश्च परद्वेषरतः सदा ॥

लुप्त वर्ष में उत्पन्न पुरुष दरिद्र, निर्बुद्धि, क्रोधी, कृश देह और परद्वेषी होता है ।

॥ इति जन्मसंवत्सरफलम् ॥

—:०:—

पञ्चसंवत्सरात्मक युगका आनयन—

युगं भवेद् वत्सरपञ्चकेन युगानि च द्वादश वर्षषष्ट्याम् ।

इन ६० संवत्सरों में ५-५ संवत्सरों के एक-एक युग होते हैं, जो १२ होते हैं ।

द्वादशयुगफलम्—

मद्यमांसप्रियो नित्यं परदाररतः सदा।
कविः शिल्परतः प्राज्ञो जायते प्रथमे युगे ॥ १ ॥

पञ्च संवत्सरात्मक प्रथम युग में जन्म लेनेवाला मदिरा और मांस खाने वाला, परस्त्रीगामी, कवि, शिल्पकार और पण्डित होता है ॥ १ ॥

वाणिज्यव्यवहारी च धर्मिष्ठः सत्यसङ्गतः।
द्रव्यं लुभ्यत्यपापात्मा युगे जातो द्वितीयके ॥ २ ॥

द्वितीय युग में जन्म हो तो व्यापार में चतुर, धर्मशील, सत्यवक्ता, निष्पाप बुद्धि (अर्थात् नीतिमार्ग) से धन का लोभी होता है ॥ २ ॥

विशेष—प्राचीन पुस्तकों में (१) यहाँ 'द्रव्यं लुभ्यति पापात्मा' ऐसा प्रामादिक पाठ है। क्योंकि एक ही व्यक्ति को धर्मिष्ठ और पापात्मा कहना असङ्गत है ॥ २ ॥

भोक्ता दाता कृतप्रज्ञो देव-ब्राह्मणपूजकः।
तेजस्वी धनयुक्तश्च तृतीये फलमश्नुते ॥ ३ ॥

तृतीय युग में जन्म लेनेवाला—भोगी, दाता, ज्ञानी, तेजस्वी और धनी होता है ॥ ३ ॥

वाटिका-क्षेत्रलोभी स्यादोषधीप्रियमानवः।
धातुवादेऽर्थनाशी च जायते च चतुर्युगे ॥ ४ ॥

चतुर्थयुग में जन्म होने से बगीचा और खेत का लोभी, ओषधि (गुल्म-लतादि) का प्रिय तथा धातुवाद में धन को नाश करने वाला होता है ॥ ४ ॥

पुत्रोत्पत्तिः सदा भोक्ता धनवांश्च जितेन्द्रियः।
पितृ-मातृप्रियश्चैव जायते पञ्चमे युगे ॥ ५ ॥

पञ्चमयुग में जन्म होने से अधिक पुत्रवान्, भोगी, धनवान्, जितेन्द्रिय और माता-पिता का भक्त होता है ॥ ५ ॥

सर्वशत्रुश्च नीचश्च सर्वदा महिषीप्रियः।
पट्टघातो भयार्त्तश्च युगे षष्ठे च जायते ॥ ६ ॥

छठे युग में उत्पन्न मनुष्य सबका शत्रु, नीच, सदा महिषी (भैंस) को पानेवाला, पत्थर से आघात पानेवाला और भयभीत होता है ॥ ६ ॥

वि०—'महिषी' राजाकी पटरानी और भैंस कहलाती है, इसलिये

यहाँ दूसरा अर्थ ही सङ्गत है। अथवा विवाहिता स्त्री भी महिषी कहलाती है ॥ ६ ॥

बहुमित्रप्रियश्चैव व्यापारे कुटिला गतिः ।
शीघ्रगामी तथा कामी जायते सप्तमे युगे ॥ ७ ॥

७ वें युग में जन्म हो तो वह मनुष्य बहुत मित्रों से प्रेम करनेवाला, व्यापार में कुटिल बुद्धि, शीघ्रगामी और कामातुर होता है ॥ ७ ॥

पापकर्ता च सन्तुष्टो व्याधिदुःखान्वितस्तथा ।
कर्ता च परहिंसाया जायते त्वष्टमे युगे ॥ ८ ॥

८ वें युग में उत्पन्न मनुष्य पापी होता हुआ भी सन्तोषी, रोगों से दुःखी और पर-हिंसक होता है ॥ ८ ॥

वापी-कूप-तडागादि-देवदीक्षाऽतिथिप्रियः ।
भूपतिर्वृत्रहातुल्यो जायते नवमे युगे ॥ ९ ॥

नवमें युग में जन्म लेनेवाला—बावली, कूप, तालाब, देवता, मन्त्र और अतिथियों में प्रेम रखनेवाला राजा होता है ॥ ९ ॥

राजाधिराजमन्त्री च स्थानप्राप्तिमहासुखः ।
सुवेषरूपो दाता च जायते दशमे युगे ॥१०॥

दशवें युग में जन्म लेनेवाला—महाराज का मन्त्री, स्थान लाभ से सुखी, सुन्दर रूप और दानी होता है ॥ १० ॥

बुद्धिमांश्च सुशीलश्च स्थापकश्चाऽसुरद्विषाम् ।
सङ्ग्रामे च भवेच्छूरो जात एकादशे युगे ॥११॥

११ वें युग में जन्म हो तो वह मनुष्य बुद्धिमान्, सुशील, देवता की प्रतिष्ठा करनेवाला और रण में वीर होता है ॥ ११ ॥

तेजस्वी च प्रसन्नात्मा नरमध्ये महाजनः ।
कृषिवाणिज्यकर्ता च जायते द्वादशे युगे ॥१२॥

बारहवें युग में उत्पन्न मनुष्य तेजस्वी, प्रसन्नचित्त, जनों में श्रेष्ठ, कृषिवाणिज्य करनेवाला होता है ॥ १२ ॥

अयन जानने का प्रकार—

मकरादिरसराशिस्थे सूर्ये स्यादुत्तरायणम् ।
कर्कादिषट्कगे सूर्ये दक्षिणायनमुच्यते ॥ १ ॥

मकर से मिथुन तक (६ राशि में) सूर्य हो तो उत्तरायण और कर्क से धनु तक (६ राशि में) हो तो याम्यायन कहलाता है ।। १ ।।

अन्य प्रकार से अयन कथन–

शिशिरपूर्वमृतुत्रयमुत्तरं ह्ययनमाहुरहश्च तदामरम् ।
भवति दक्षिणमन्यदृतुत्रयं निगदिता रजनी मरुतां च सा ।। २ ।।

शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म इन ३ ऋतुओं को सौम्यायन कहते हैं, जो देवता का दिन कहलाता है। वर्षा, शरत्, हेमन्त इन ३ ऋतुओंको याम्यायन कहते हैं, जो देवता की रात्रि होती है ।। २ ।।

अयनजात फल—

सौम्यायने नरो जातः सर्वशास्त्रविशारदः ।
धर्माऽर्थकामशीलश्च गुणवांश्च सुरूपवान् ।। ३ ।।

सौम्यायन में उत्पन्न मनुष्य सब शास्त्र का ज्ञाता, धर्म, अर्थ और काम से युक्त, गुणवान् और रूपवान् होता है ।। ३ ।।

याम्यायने नरो जातः कूटसाक्षी सदाऽनृतः ।
अधर्मी चाऽथ रोगी च बहुव्याधिः सदा भवेत् ।। ४ ।।

याम्यायन में जन्म लेनेवाला—झूठ प्रपञ्च करनेवाला, सदा मिथ्या बोलनेवाला, अधर्मी और रोगी होता है ।। ४ ।।

गोल ज्ञान–

मेषादिषट्कगे सूर्ये उत्तरो गोल उच्यते ।
तुलादिषट्कगे सूर्ये याम्यगोलः स उच्यते ।। १ ।।

मेषादि ६ राशि में सूर्य हो तो सौम्य (उत्तर) गोल और तुलादि ६ राशि में दक्षिण (याम्य) गोल कहलाता है ।। १ ।।

सौम्यगोले समुत्पन्नो धनवान् विद्ययाऽन्वितः ।
पुत्रपौत्रादियुक्तश्च राजमान्यो नरो भवेत् ।। २ ।।

सौम्य (उत्तर) गोल में जन्म लेनेवाला—धनी, विद्वान्, पुत्र-पौत्रादि से युक्त और राजमान्य होता है ।। २ ।।

याम्यगोले च यो जातः सदा स सुखवर्जितः ।
कूटसाक्षी दुराचारो हीनाङ्गश्चाऽपि निर्धनः ।। ३ ।।

दक्षिण गोल में—जिसका जन्म होता है वह सुखहीन, मिथ्यावादी, दुराचारी, अङ्गहीन और निर्धन होता है ।। ३ ।।

ऋतुज्ञान--

मृगादिराशिद्वयभानुभोगात्षट्कं ऋतुनां शिशिरो वसन्तः ।
ग्रीष्मश्च वर्षाश्च शरच्च तद्वद्धेमन्तनामा कथितोऽत्र षष्ठः ॥ १ ॥

मकर से दो-दो राशियों में सूर्य के रहने से क्रम से–शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद् और हेमन्त ऋतु होते हैं ॥ १ ॥

ऋतुजात फल--

रूप-यौवनसम्पन्नो दीर्घसूत्री महोत्कटः ।
साधुचित्तः कामुकश्च शिशिरे जायते नरः ॥ २ ॥

शिशिर ऋतु में जन्म होने से मनुष्य सुन्दर स्वरूप, स्वस्थ, विलम्ब से कार्य करनेवाला, अति उत्कट, साधुहृदय और कामी होता है ॥ २ ॥

महोद्यमी मनस्वी च तेजस्वी बहुकार्यकृत् ।
नानादेशरसाभिज्ञो वसन्ते जायते नरः ॥ ३ ॥

वसन्त में जन्म हो तो—बड़ा उद्योगी, मनस्वी, तेजस्वी, बहुत कार्य करनेवाला, अनेक देश में घूमनेवाला और सब रसों को जाननेवाला होता है ॥ ३ ॥

बह्वारम्भो जितक्रोधो क्षुधालुः कामुको नरः ।
दीर्घः शठो बुद्धिमांश्च ग्रीष्मे जातः सदाऽशुचिः ॥ ४ ॥

ग्रीष्ममें जन्म हो तो वह मनुष्य बहुत कार्यों को आरम्भ करनेवाला, क्रोधहीन, क्षुधातुर, कामी, लम्बा कद, शठ, बुद्धिमान् और अपवित्र होता है ॥ ४ ॥

गुणवान् भोगयुक्तश्च राजपूज्यो जितेन्द्रियः ।
कुशलोऽर्थानुवादी च वर्षाकाले भवेन्नरः ॥ ५ ॥

वर्षाऋतु में जन्म हो तो—गुणी, भोगी, राजमान्य, जितेन्द्रिय, चतुर और अपने प्रयोजन की बात करनेवाला होता है ॥ ५ ॥

वाणिज्यकृषिवृत्तिश्च धन-धान्य-समृद्धिमान् ।
तेजस्वी बहुमान्यश्च शरज्जातो भवेन्नरः ॥ ६ ॥

शरद् ऋतु में जन्म होने से—व्यापार और खेती करनेवाला, धन-धान्य से युक्त, तेजस्वी और लोक में माननीय होता है ॥ ६ ॥

बहुव्याधिहीनतेजास्त्रासयुक्तः प्रणिष्ठुरः ।
ह्रस्वपीनगलो लोभी हेमन्ते जायते नरः ॥ ७ ॥

हेमन्त ऋतु में उत्पन्न मनुष्य रोगी, तेजहीन, भयभीत, निष्ठुर, छोटी और मोटी गर्दन वाला और लोभी होता है ॥ ७ ॥

मासजन्म फल—

चैत्रे च हृष्टिसंयुक्तः साहङ्कारः शुभाकरः ।
रक्तेक्षणः सरोषश्च स्त्रीलोलः स भवेत् सदा ॥ १ ॥

चैत्र में जन्म लेनेवाला—सदा हर्षयुक्त, अहङ्कारी, सुन्दरस्वरूप, लाल नेत्रवाला, रोषयुक्त और स्त्री में आसक्त होता है ॥ १ ॥

भोगी धनी सुचित्तश्च सक्रोधश्च सुलोचनः ।
सुरूपो वल्लभः स्त्रीणां माधवे जायते नरः ॥ २ ॥

वैशाख में जन्म होने से मनुष्य भोगी, धनवान्, प्रसन्नचित्त, क्रोधी, सुन्दर नेत्र, सुन्दर रूपवाला और स्त्रियों का प्रिय होता है ॥ २ ॥

परदेशरतश्चैव शुभचित्तो धनान्वितः ।
दीर्घायुश्च सुबुद्धिश्च ज्येष्ठे मासे नरो भवेत् ॥ ३ ॥

ज्येष्ठ में जन्म होने से परदेशी, पवित्रहृदय, धनवान्, दीर्घायु और सुबुद्धि वाला होता है ॥ ३ ॥

पुत्रपौत्रान्वितो धर्मी वित्तनाशेन पीडितः ।
सुवर्णश्चाऽल्पसुखितो ह्याषाढे च भवेन्नरः ॥ ४ ॥

आषाढ़ में जन्म लेनेवाला—पुत्र-पौत्रादि सन्तानसे युक्त, धर्मात्मा, धन-हानि से पीड़ा पानेवाला, सुन्दरवर्ण और अल्प सुखवाला होता है ॥ ४ ॥

सुखे दुःखे तथा हानौ लाभे च समचित्तकः ।
स्थूलदेहः सुरूपश्च श्रावणे जायते नरः ॥ ५ ॥

श्रावण में जन्म होने से मनुष्य—सुख-दुःख, हानि और लाभ में सम-बुद्धि, मोटा देह और सुन्दर रूप वाला होता है ॥ ५ ॥

नित्यप्रमोदी जल्पाकः पुत्रयुक्तः सुखी भवेत् ।
मृदुभाषी सुशीलश्च भाद्रजातो भवेन्नरः ॥ ६ ॥

भाद्र में उत्पन्न—नित्य हर्ष से युक्त, बकवादी, पुत्रवान्, सुखी, कोमल वचन भाषी और सुशील होता है ॥ ६ ॥

सुरूपश्च सुखैर्युक्तः काव्यकर्ता परः शुचिः ।
गुणवान् धनवान् कामी ह्याश्विने जायते नरः ॥ ७ ॥

आश्विन में जन्म हो तो—सुन्दर रूप और सुख से युक्त, कवि, परम पवित्र, गुणी और कामी होता है ॥ ७ ॥

सुधनी कामुकाबुद्धिर्दुरात्मा क्रय-विक्रयी ।
पापीयान् दुष्टचित्तश्च कार्तिके जायते नरः ॥ ८ ॥

कार्तिक में जो जन्म लेता है वह—धनवान्, कामी, बुद्धिहीन, दुष्ट, क्रय-विक्रय करनेवाला, दुष्ट हृदय वाला होता है ॥ ८ ॥

मृदुभाषी धनी धर्मी बहुमित्रः पराक्रमी ।
परोपकारी जातश्च मार्गशीर्षे भवेन्नरः ॥ ९ ॥

मार्गशीर्ष में जन्म हो तो वह मनुष्य—प्रियवक्ता, धनी, धर्मात्मा, बहुत मित्रवाला, पराक्रमी और परोपकारी होता है ॥ ९ ॥

शूर उग्रप्रतापी च पितृदेवपराङ्मुखः ।
ऐश्वर्यजन्मकारी च पौषे मासे नरो भवेत् ॥१०॥

पौषमास में जन्म हो तो वह मनुष्य वीर, बड़ा प्रतापी, देवता और पितरको नहीं माननेवाला और ऐश्वर्य उपार्जन करनेवाला होता है ॥ १० ॥

मतिमान् धनवांश्चैव शूरो निष्ठुरभाषकः ।
कामुकश्च रणे धीरो माघे जातो भवेन्नरः ॥११॥

माघ मास में जिसका जन्म होता है वह—बुद्धिमान्, धनवान्, वीर, कठोर शब्द वक्ता, कामी और रणधीर होता है ॥ ११ ॥

शुक्लः परोपकारी च धनविद्यासुखान्वितः ।
विदेशे भ्रमते नित्यं फाल्गुने जायते नरः ॥१२॥

फाल्गुन में जन्म लेने से—गौरवर्ण, परोपकारी, धन, विद्या और सुख से युक्त और विदेश में भ्रमण करनेवाला होता है ॥ १२ ॥

मलमास जन्मफल-

विषयहीनमतिः सुचरित्रयुग् विविधतीर्थकरश्च निरामयः ।
सकलवल्लभ आत्महितङ्करः खलु मलिम्लुचमासभवो नरः ॥१३॥

मलमास में जन्म लेनेवाला-विषयों से रहित, सच्चरित्र, अनेक तीर्थ करनेवाला, नीरोग, सबका प्रिय और आत्महितैषी होता है ॥ १३ ॥

क्षयमास जन्मफल-

क्षयमासे नरो जातः बुद्धिविद्याविवर्जितः ।
धन-धान्यसुखैर्हीनो नानाव्याधिसमन्वितः ॥१४॥

क्षयमास में जन्म हो तो वह मनुष्य बुद्धि-विद्या, धन-धान्य और सुख से हीन तथा अनेक व्याधि से युक्त होता है ॥ १४ ॥

पक्षफल—

पूर्णचन्द्रनिभः श्रीमान् सोद्यमो बहुशास्त्रवित् ।
कुशलो ज्ञानसम्पन्नः शुक्लपक्षे भवेन्नरः ॥ १ ॥

शुक्लपक्ष में जन्म लेने वाला--पूर्णचन्द्र समान शोभायमान, धनवान्, उद्योगी, अनेक शास्त्रों का ज्ञाता, कार्यकुशल और ज्ञानी होता है ॥ १ ॥

निष्ठुरो दुर्मुखश्चैव स्त्रीद्वेषी मतिहीनकः ।
परप्रेक्षो जनैर्युक्तः कृष्णपक्षे प्रजायते ॥ २ ॥

कृष्णपक्ष में जन्म हो तो–निष्ठुर, कुबचन भाषी, स्त्री का द्वेषी, बुद्धिहीन, दूसरों की महायता से जीने वाला और अधिक परिवार वाला होता है ॥२॥

जन्मतिथिफल—

क्रूरसङ्गो धनैर्हीनः कुलसन्तापकारकः ।
व्यसनासक्तचित्तश्च प्रतिपत्तिथिजो नरः ॥ १ ॥

प्रतिपदा में जिसका जन्म होता है वह–दुर्जनों के संग रहनेवाला, धनहीन, कुल में कलङ्की तथा सदा व्यसन में आसक्त रहता है ॥ १ ॥

परदाररतो नित्यं सत्यशौचविवर्जितः ।
तस्करः स्नेहहीनश्च द्वितीयासम्भवो नरः ॥ २ ॥

द्वितीया में उत्पन्न मनुष्य, परस्त्रीगामी, सत्य और शौच से रहित, चोर और स्नेह हीन होता है ॥ २ ॥

अचेतनोऽतिविकलो निर्द्रव्यः पुरुषः सदा ।
परद्वेषरतो नित्यं तृतीयायां भवेन्नरः ॥ ३ ॥

तृतीया में जन्म लेनेवाला–चेष्टाहीन, विकल, धनहीन और दूसरों से द्वेप रखनेवाला होता है ॥ ३ ॥

महाभोगी च दाता च मित्रस्नेही विचक्षणः ।
धनसन्तानयुक्तश्च चतुर्थ्यां यदि जायते ॥ ४ ॥

चतुर्थी में जन्म लेने से मनुष्य भोगी, दाता, मित्रों से प्रेम करने वाला, पण्डित, धन और सन्तान से युक्त होता है ॥ ४ ॥

व्यवहारी गुणग्राही पितृमात्रोश्च रक्षकः ।
दाता भोक्ता तनुप्रीतः पञ्चमीसम्भवो नरः ॥ ५ ॥

पञ्चमी में उत्पन्न मनुष्य, व्यवहार ज्ञाता, गुणग्राही, माता-पिता का भक्त, दानी, भोगी, अल्प प्रेम करने वाला होता है ॥ ५ ॥

नानादेशाभिगामी च सदा कलहकारकः ।
नित्यं जठररोगी च षष्ठ्यां जातो भवेन्नरः ॥ ६ ॥

षष्ठी में जन्म होने से-देश-विदेश में भ्रमण करनेवाला, झगड़ालू और उदर रोग से पीड़ित होता है ॥ ६ ॥

अल्पतोषी च तेजस्वी सौभाग्यगुणसंयुतः ।
पुत्रवान् धनसम्पन्नः सप्तम्यां जायते नरः ॥ ७ ॥

सप्तमी में उत्पन्न मनुष्य, अल्प में ही सन्तुष्ट, तेजस्वी, सौभाग्य और गुणों से युक्त, सन्तान और धन से सम्पन्न होता है ॥ ७ ॥

धर्मिष्ठः सत्यवादी च दाता भोक्ता च वत्सलः ।
गुणज्ञः सर्वकार्यज्ञो ह्यष्टमीसम्भवो नरः ॥ ८ ॥

अष्टमी में जन्म लेनेवाला—धर्मात्मा, सत्यवक्ता, दाता, भोगी, दयावान्, गुणज्ञ और सब कार्य में कुशल होता है ॥ ८ ॥

देवताराधकः पुत्री धन-स्त्रीसक्तमानसः ।
शास्त्राभ्यासरतो नित्यं नवम्यां जायते यदि ॥ ९ ॥

नवमी में जन्म लेनेवाला-देवों का भक्त, पुत्रवान्, धनी, स्त्री में आसक्त और शास्त्राभ्यासी होता है ॥ ९ ॥

दशम्यां धर्मपापज्ञो देशसेवी च याजकः ।
तेजस्वी सौख्यसंयुक्तो जायते मानवः सदा ॥ १० ॥

दशमी में जन्म लेनेवाला-धर्म-अधर्म का ज्ञाता, देशभक्त, यज्ञ करानेवाला, तेजस्वी और सुखी होता है ॥ १० ॥

अल्पतोषी नरेन्द्रस्य गेहगामी शुचिर्भवेत् ।
धनी पुत्री भवेद्धीमानेकादश्यां तिथौ नरः ॥ ११ ॥

एकादशी में जन्म लेनेवाला-स्वल्प में सन्तुष्ट, राजा से मान्य, पवित्र, धनवान्, पुत्रवान् और बुद्धिमान् होता है ॥ ११ ॥

चपलश्चपलज्ञानी सदा क्षीणवपुः स्मृतः ।
देशभ्रमणशीलश्च द्वादशीजातको भवेत् ॥ १२ ॥

द्वादशी में जन्म लेनेवाला-चञ्चल, अस्थिरबुद्धि, कृशशरीर, परदेश भ्रमण करनेवाला होता है ॥ १२ ॥

महासिद्धो महाप्राज्ञः शास्त्राभ्यासी जितेन्द्रियः।
परकार्यरतो नित्यं त्रयोदश्यां सदा भवेत् ॥ १३ ॥

त्रयोदशी में उत्पन्न—महासिद्धपुरुष, बड़ा पण्डित, शास्त्राभ्यासी, जितेन्द्रिय, परोपकारी होता है ॥ १३ ॥

धनाढ्यो धर्मशीलश्च शूरः सद्वाक्यपालकः।
राजमान्यो यशस्वी च चतुर्दश्यां यदा भवेत् ॥ १४ ॥

चतुर्दशी में जन्म लेनेवाला धनवान्, धर्मातमा, वीर, वचन को पालनेवाला, राजमान्य और यशस्वी होता है ॥ १४ ॥

श्रीमांश्च मतिमांश्चाऽपि महाभोजनलालसः।
उद्योगी परदारेषु ह्यासक्तः पूर्णिमाभवः ॥ १५ ॥

पूर्णिमा में उत्पन्न मनुष्य, सम्पत्तिमान्, मतिमान्, भोजनप्रिय, उद्योगी और परस्त्री में आसक्त रहनेवाला होता है ॥ १५ ॥

स्थिरारम्भः परद्वेषी वक्रो मूर्खः पराक्रमी।
गूढमन्त्रश्च स-ज्ञानोऽप्यमावास्याभवो नरः ॥ १६ ॥

अमावास्या में जन्म लेनेवाला--दीर्घसूत्री, परद्वेषी, कुटिल, मूर्ख, पराक्रमी, गुप्तविचार रखनेवाला और ज्ञानी होता है ॥ १६ ॥

तिथिक्षय और तिथिमल में जन्मफल–

तिथिक्षये मले वाऽपि येषां जन्म भवेन्नृणाम्।
गुणधर्मविहीनास्ते कुटिलाः परवञ्चकाः ॥ १७ ॥

तिथिक्षय या तिथिमल में जन्म होने से--गुणहीन, धनहीन, कुटिल और परवञ्चक होता है ॥ १७ ॥

विशेष-जिस तिथि में सूर्योदय नहीं होता है वह क्षयतिथि तथा जिस तिथि में २ सूर्योदय होता है उनमें अग्रिम उदय सहित तिथिमल कहलाती है ॥ १७ ॥

तिथियों की नन्दादिसंज्ञा--

नन्दा भद्रा जया रिक्ता पूर्णा च तिथयः क्रमात्।
वारत्रयं समावर्त्य तिथयः प्रतिपन्मुखाः ॥ १ ॥

प्रतिपदा से क्रम से--नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा इस प्रकार ३ आवृत्ति करके तिथियों की संज्ञा समझनी चाहिए ॥ १ ॥

नन्दादिनामभेद से विशेषफल–

नन्दातिथौ नरो जातो महामानी च कोविदः ।
देवताभक्तिनिष्ठश्च ज्ञानी च प्रियवत्सलः ॥ २ ॥

नन्दा (१, ६, ११) में जन्म हो तो मानी, पण्डित, देवताओं का भक्त, ज्ञानी और अपने कुटुम्बियों में स्नेह रखनेवाला होता है ॥ २ ॥

भद्रातिथौ बन्धुमान्यो राजसेवी धनान्वितः ।
संसारभयभीतश्च परमार्थमतिर्नरः ॥ ३ ॥

भद्रा (२, ७, १२) तिथि में जन्म लेनेवाला–बन्धुओं में मान्य, राजा के आश्रित, धनवान्, भव-बन्धन से डरनेवाला और परोपकारी होता है ॥ ३ ॥

जयातिथौ राजपूज्यः पुत्रपौत्रादिसंयुतः ।
शूरः शान्तश्च दीर्घायुर्मनोविज्ञश्च जायते ॥ ४ ॥

जया (३, ८, १३) में जन्म लेने वाला राजमान्य, पुत्र-पौत्रादि से युक्त, वीर, शान्त, चिरजीवी और मनस्वी होता है ॥ ४ ॥

रिक्तातिथौ वितर्कज्ञः प्रमादी गुरुनिन्दकः ।
शास्त्रज्ञो मदहन्ता च कामुकश्च नरो भवेत् ॥ ५ ॥

रिक्ता (४, ९, १४) में जन्म हो तो–तर्क करनेवाला, प्रमादयुक्त, गुरुनिन्दक, शास्त्राभ्यासी, दूसरे के मद को हटानेवाला और कामी होता है ॥ ५ ॥

पूर्णातिथौ धनैः पूर्णो वेदशास्त्रार्थतत्त्ववित् ।
सत्यवादी शुद्धचेता विज्ञो भवति मानवः ॥ ६ ॥

पूर्णा (५, १०, १५) में जन्म लेनेवाला—धन से पूर्ण, वेद और शास्त्रों को जाननेवाला, सत्यवक्ता, शुद्धचित्त और बहुविषयज्ञ होता है ॥ ६ ॥

रव्यादिवार जन्मफल–

पित्ताधिकोऽतिचतुरस्तेजस्वी समरप्रियः ।
दाता तथा महोत्साही सूर्यवारे भवेन्नरः ॥ १ ॥

रविवार में जन्म लेनेवाला–पित्तप्रकृति, परमचतुर, तेजस्वी, युद्धप्रिय, दानी और महा उत्साही होता है ॥ १ ॥

मतिमान् प्रियवाक्शान्तो नरेन्द्राश्रयजीविकः ।
समदुःखसुखः श्रीमान् सोमवारे भवेत्पुमान् ॥ २ ॥

सोमवार में जन्म हो तो—बुद्धिमान्, प्रियवक्ता, शान्त, राजा का आश्रित, सुख-दुःख को समान माननेवाला और धनी होता है ॥ २ ॥

वक्रबुद्धिर्धराजीवी रणोत्साही महाबली।
सेनानीस्तन्त्रपालो वा धरापुत्रदिनोद्भवः ॥ ३ ॥

मंगलवार में जन्म हो तो––मनुष्य कुटिल बुद्धि, पृथ्वी से जीविका करनेवाला, युद्धप्रिय, महाबली, सेनापति या जनपालक होता है ॥ ३ ॥

लिपिलेखनजीवी स्यात् प्रियवाक्पण्डितः सुधीः।
रूपसम्पत्तिसंयुक्तो बुधवासरसम्भवः ॥ ४ ॥

बुधवार में जन्म होने से––लेख से आजीविका करनेवाला, प्रियवक्ता, पण्डित, बुद्धिमान्, सौन्दर्य और सम्पत्ति से युक्त होता है ॥ ४ ॥

धनविद्यागुणोपेतो विवेकी जनपूजकः।
आचार्यः सचिवो वा स्याद् गुरुवासरसम्भवः ॥ ५ ॥

गुरुवार में जन्म होने से—धनवान्, विवेकी, लोक में मान्य, अध्यापक या राजमन्त्री होता है ॥ ५ ॥

चलचित्तः सुरद्वेषी धनक्रीडारतः सदा।
बुद्धिमान् सुभगो वाग्मी भृगुवारे भवेन्नरः ॥ ६ ॥

शुक्रवार में जन्म होने से–चञ्चलचित्त, देवों का निन्दक, धनोपार्जन और क्रीड़ा में अनुरक्त, बुद्धिमान्, सुन्दर और वक्ता होता है ॥ ६ ॥

स्थिरजः स्थिरगीः क्रूरो दुष्टचित्तः पराक्रमी।
अधोदृङ् नखलः केशी वृद्धनारीरतः सदा ॥ ७ ॥

स्थिर (शनिवार) में जन्म हो तो–स्थिर वचनवाला, क्रूर, दुष्ट स्वभाव, पराक्रमी, नीचदृष्टि, विकृत नखवाला, अधिक केशवाला और वृद्धा स्त्री में प्रेम रखनेवाला होता है ॥ ७ ॥

दिवा-रात्रिजन्मफल–

सद्धर्मयुक्तो बहुपुत्रभोगी प्रियान्वितः कामनिपीडिताङ्गः।
वस्त्रानुयुक्तो मतिमान् सुरूपो भवेन्मनुष्यश्च दिवाप्रसूतः ॥१॥

दिन में जन्म हो तो—धर्मज्ञ, बहुत पुत्रवाला, भोगी, अधिक मित्रवाला, कामातुर, वस्त्रादि से पूर्ण, बुद्धिमान् और सुन्दर स्वरूपवाला होता है ॥ १ ॥

मन्दवाग् बहुकामार्तः क्षयरोगी मलीमसः।
क्रूरात्मा छन्नपापश्च निशि जातो भवेन्नरः ॥ २ ॥

रात्रि में जन्मवाला–थोड़ा बोलनेवाला, अधिक कामी, मलिन, क्षयरोगी, कुटिलहृदय और गुप्त पाप करनेवाला होता है ॥ २ ॥

जन्मनक्षत्रफल–

सुरूपः सुभगो दक्षः स्थूलकायो महाधनी ।
अश्विनीसम्भवो लोके जायते जनवल्लभः ॥ १ ॥

अश्विनी नक्षत्र में उत्पन्न मनुष्य--सुन्दर, भाग्यवान्, कार्य में कुशल, स्थूलशरीर, धनवान् और लोकप्रिय होता है ॥ १ ॥

अरोगः सत्यवादी च सत्प्रणश्च दृढव्रतः ।
भरण्यां जायते लोकः सुसुखी धनवानपि ॥ २ ॥

भरणी में जन्म लेनेवाला--नीरोग, सत्यवक्ता, उत्तम विचारवाला, दृढप्रतिज्ञ, सुखी और धनी होता है ॥ २ ॥

कृपणः पापकर्मा च क्षुधालुर्नित्यपीडितः ।
अकर्म कुरुते नित्यं कृत्तिकासम्भवो नरः ॥ ३ ॥

कृत्तिका में उत्पन्न मनुष्य--कृपण, पापी, क्षुधा से पीड़ित, दुःखी और असत्कर्म करनेवाला होता है ॥ ३ ॥

धनी कृतज्ञो मेधावी नृपमान्यः प्रियंवदः ।
सत्यवादी सुरूपश्च रोहिण्यां जायते नरः ॥ ४ ॥

रोहिणी में जन्म होने से--धनवान्, कृतज्ञ, मेधावी, राजमान्य, प्रियवक्ता, सत्यवादी और सुन्दर होता है ॥ ४ ॥

चपलश्चतुरो धीरः कूटकर्मस्वकर्मकृत् ।
अहङ्कारी परद्वेषी मृगे भवति मानवः ॥ ५ ॥

मृगशिरा में जन्म हो तो--वह मनुष्य चञ्चल, चतुर, धैर्यवान्, नकली वस्तु बनानेवाला, स्वार्थी, अहङ्कारी और परद्वेषी होता है ॥ ५ ॥

कृतघ्नः गर्वितो हीनो नरः पापरतः शठः ।
आर्द्रानक्षत्रसम्भूतो धनधान्य-विवर्जितः ॥ ६ ॥

आर्द्रा में जन्म लेनेवाला--कृतघ्न, अहङ्कारी, पापबुद्धि, शठ और धनधान्य से हीन होता है ॥ ६ ॥

शान्तः सुखी च सम्भोगी सुभगो जनवल्लभः ।
पुत्रमित्रादिभिर्युक्तो जायते च पुनर्वसौ ॥ ७ ॥

पुनर्वसु में जन्म होने से--शान्त, सुखी, भोगी, सुन्दर, लोकप्रिय, पुत्र और मित्रादि से युक्त होता है ॥ ७ ॥

देव-धर्म-धनैर्युक्तः पुत्रयुक्तो विचक्षणः।
पुष्ये च जायते लोकः शान्तात्मा सुभगः सुखी ॥ ८ ॥

पुष्य में जन्म लेनेवाला--देव और धर्म को माननेवाला, धनवान्, पुत्रयुक्त, पण्डित, शान्त, सुन्दर और सुखी होता है ॥ ८ ॥

सर्वभक्षी कृतान्तश्च कृतघ्नो वञ्चकः खलः।
आश्लेषायां नरो जातः कृतकर्मा हि जायते ॥ ९ ॥

आश्लेषा में जन्म हो तो--वह मनुष्य सब पदार्थों को खानेवाला, क्रूर-स्वभाव, कृतघ्न, धूर्त दुष्ट और अपने कार्य को करनेवाला होता है ॥ ९ ॥

बहुभृत्यो धनी भोगी पितृभक्तो महोद्यमी।
चमूनाथो राजसेवी मघायां जायते नरः ॥ १० ॥

मघा में जन्म हो तो-वह मनुष्य बहुत नौकर रखनेवाला, धनी, भोगी, पिता का भक्त, उद्योगी, सेनापति एवं राजा का आश्रित होता है ॥ १० ॥

विद्या-गो-धनसंयुक्तो गम्भीरः प्रमदाप्रियः।
पूर्वाफाल्गुनिकाजातः सुखी पण्डितपूजितः ॥ ११ ॥

पूर्वाफाल्गुनी में जन्म हो तो--विद्या, गाय-भैंस आदि धनों से युक्त, गम्भीर, स्त्रियों का प्रिय, सुखी और विद्वज्जनों से पूजित होता है ॥ ११ ॥

दान्तः शूरो मृदुर्वक्ता धनुर्वेदार्थपण्डितः।
उत्तराफाल्गुनीजातो महायोद्धा जनप्रियः ॥ १२ ॥

उत्तराफाल्गुनी में जन्म होने से--जितेन्द्रिय, शूरवीर, कोमल, वक्ता, शस्त्रविद्या में निपुण, महायोद्धा और लोकप्रिय होता है ॥ १२ ॥

असत्यवचनो धृष्टः सुरापी बन्धुवर्जितः।
हस्ते जातो नरश्चौरो जायते पारदारिकः ॥ १३ ॥

हस्त में जन्म होने से--मिथ्याभाषी, ढीठ, मद्यपायी, बन्धुहीन, चोर और परस्त्रीगामी होता है ॥ १३ ॥

पुत्रदारयुतस्तुष्टो धन-धान्य-समन्वितः।
देव-ब्राह्मणभक्तश्च चित्रायां जायते नरः ॥ १४ ॥

चित्रा में जन्म लेनेवाला--पुत्र-स्त्री से युक्त, सन्तोषी, धनवान्, देवता और ब्राह्मणों का भक्त होता है ॥ १४ ॥

विदग्धो धार्मिकश्चैव कृपणः प्रियवल्लभः।
सुशीलो देवभक्तश्च स्वातौ जातो भवेन्नरः ॥ १५ ॥

स्वाती में जन्म हो तो--चतुर, धर्मात्मा, कृपण, लोकप्रिय, सुशील और देवता का भक्त होता है ॥ १५ ॥

अतिलुब्धोऽतिमानी च निष्ठुरः कलहप्रियः ।
विशाखायां नरो जातो वेश्याजनरतो भवेत् ॥ १६ ॥

विशाखा में जन्म हो तो--बड़ा लोभी, महाअभिमानी, निठुर, झगड़ालू तथा वेश्यागामी होता है ॥ १६ ॥

पुरुषार्थी प्रवासी च बन्धुकार्ये सदोद्यमी ।
अनुराधाभवो लोकः सदा हृष्टश्च जायते ॥ १७ ॥

अनुराधा में जन्म लेनेवाला--पुरुषार्थ साधन के लिये विदेश जानेवाला, बन्धुओं का कार्य करनेवाला और प्रसन्न रहता है ॥ १७ ॥

बहुमित्रः प्रधानश्च कविर्दानी विचक्षणः ।
ज्येष्ठाजातो धर्मरतो जायते शूद्रपूजितः ॥ १८ ॥

ज्येष्ठा में जन्म हो तो--बहुत मित्रवाला, प्रधान, कवि, दानी, पण्डित, धर्मात्मा और शूद्रजनों से पूजित होता है ॥ १८ ॥

सुखेन युक्तो धनवाहनाढ्यो हिंस्रो बलाढ्यः स्थिरकर्मकर्ता ।
प्रतापितारातिजनो मनुष्यो मूले कृती स्याज्जननं प्रपन्नः ॥१९॥

मूल में जन्म हो तो--वह सुखी, धन-वाहन से युक्त, हिंसक, बलवान्, स्थिर कार्य करनेवाला, शत्रुओंको जीतनेवाला और पण्डित होता है ॥१९॥

दृष्टमात्रोपकारी च भाग्यवांश्च जनप्रियः ।
पूर्वाषाढाभवो नूनं सकलार्थविचक्षणः ॥ २० ॥

पूर्वाषाढ़ में जन्म हो तो--वह शरण में आये हुए का उपकार करनेवाला, भाग्यवान्, लोकप्रिय एवं सब कार्यों में चतुर होता है ॥ २० ॥

बहुमित्रो महाकायो जायते विजयी सुखी ।
उत्तराषाढसम्भूतः शूरश्च विनयी भवेत् ॥ २१ ॥

उत्तराषाढ़ में जन्म होने से--बहुत मित्रवान्, हृष्ट-पुष्ट और लम्बे शरीरवाला, विजयी, सुखी, वीर एवं विनययुक्त होता है ॥ २१ ॥

उत्तराषाढ़ा का चतुर्थ चरण और श्रवण के आदि की ४ घटी अभिजित् कहलाता है--

अतिसुललितकान्तिः सम्मतः सज्जनानां
ननु भवति विनीतश्चारुकीर्तिः सुरूपः ।

द्विजवर-सुरभक्ति-र्व्यक्तवाङ् मानवः स्या-
दभिजिति यदि सूतिर्भूपतिः स स्ववंशे ॥ २२ ॥

अभिजित् में जन्म लेनेवाला--सुन्दर-स्वरूप, साधुओं का प्रिय, विनीत, यशस्वी, विप्र और देवता का भक्त, स्पष्टवक्ता और अपने कुल में श्रेष्ठ होता है ॥ २२ ॥

कृतज्ञः सुभगो दाता गुणैः सर्वैश्च संयुतः ।
श्रीमान् बहुलसन्तानः श्रवणे जायते नरः ॥ २३ ॥

श्रवण में जन्म लेनेवाला--कृतज्ञ, सुन्दर, दाता, सब गुणोंसे युक्त, लक्ष्मीवान्, बहुत सन्तान से युक्त होता है ॥ २३ ॥

गीतप्रियो बन्धुमान्यो हेमरत्नरलङ्कृतः ।
जातो नरो धनिष्ठायां शतैकस्य पतिर्भवेत् ॥ २४ ॥

धनिष्ठा में जन्म लेनेवाला--संगीतप्रिय, बन्धुओं से मान्य, सुवर्ण एवं रत्नों से युक्त तथा सैकड़ों व्यक्ति का पालक होता है ॥ २४ ॥

कृपणो धनपूर्णः स्यात्परदारोपसेवकः ।
जातः शतभिषायां च विदेशे कामुको भवेत् ॥ २५ ॥

शतभिषा में जन्म लेनेवाला--कृपण, धनवान्, परस्त्रीगामी, विदेश में रहने की कामना करनेवाला होता है ॥ २५ ॥

वक्ता सुखी प्रजायुक्तो बहुनिद्रो निरर्थकः ।
पूर्वाभाद्रपदायां च जातो भवति मानवः ॥ २६ ॥

पूर्वाभाद्रपदा में जन्म हो तो--वक्ता, सुखी, सन्तान से युक्त, बहुत निद्रावाला और व्यर्थ समय को बितानेवाला होता है ॥ २६ ॥

गौरः ससत्त्वो धर्मज्ञः शत्रुघाती परामरः ।
उत्तराभाद्रसम्भूतो नरः साहसिको भवेत् ॥ २७ ॥

उत्तराभाद्रपदा में जन्म हो तो--गौरवर्ण, वलवान्, धर्मात्मा, शत्रु को जीतने वाला और साहस से मानो दूसरा देव ही हो ॥ २७ ॥

सम्पूर्णाङ्गः शुचिर्दक्षः साधुः शूरो विचक्षणः ।
रेवतीसम्भवो लोके धनधान्यैरलङ्कृतः ॥ २८ ॥

रेवती में जन्म हो तो--सब अंगों से पूर्ण, पवित्र, कार्य में निपुण, साधु, वीर, पण्डित और धन-धान्य से युक्त होता है ॥ २८ ॥

विष्कम्भ आदि योगजन्मफल–

विष्कम्भजातो मनुजो रूपवान् भाग्यवान् भवेत् ।
नानाऽलङ्कारसम्पूर्णो महाबुद्धिर्विशारदः ॥ १ ॥

विष्कम्भयोग में जिसका जन्म होता है--वह सुन्दररूप, भाग्यवान्, नाना प्रकार के आभूषणों से युक्त, बुद्धिमान् और पण्डित होता है ॥ १ ॥

प्रीतियोगे समुत्पन्नो योषितां वल्लभो भवेत् ।
तत्त्वज्ञश्च महोत्साही स्वार्थे नित्यकृतोद्यमः ॥ २ ॥

प्रीतियोग में जन्म लेनेवाला--स्त्रियों का प्रिय, तत्त्वों का ज्ञाता, महा-उत्साही एवं अपने प्रयोजन सिद्धि के लिये सदा उद्योगशील रहता है ॥२॥

आयुष्मन्नामयोगे च जातो मानी धनी कविः ।
दीर्घायुः सत्त्वसम्पन्नो युद्धे चाप्यपराजितः ॥ ३ ॥

आयुष्मान् योगमें जन्म लेनेवाला--मानी, धनवान्, कवि, दीर्घायु, बलवान् और युद्ध में विजयी होता है ॥ ३ ॥

सौभाग्ये च समुत्पन्नो राजमन्त्री स जायते ।
निपुणः सर्वकार्येषु वनितानां च वल्लभः ॥ ४ ॥

सौभाग्य योग में जन्म लेनेवाला--राजा का मन्त्री, सब कार्य में दक्ष और स्त्रियों का प्रिय होता है ॥ ४ ॥

शोभने शोभनो बालो बहुपुत्रकलत्रवान् ।
आतुरः सर्वकार्येषु युद्धभूमौ सदोत्सुकः ॥ ५ ॥

शोभनयोग में जन्म हो तो--वह बालक बहुत सुन्दर, पुत्र-स्त्री आदिसे युक्त, सब कार्य में तत्पर और रणमें सदा उत्सुक होता है ॥ ५ ॥

अतिगण्डे च यो जातो मातृहन्ता भवेच्च सः ।
गण्डान्तेषु च जातस्तु कुलहन्ता प्रकीर्तितः ॥ ६ ॥

अतिगण्ड योगोत्पन्न मनुष्य–मातृहन्ता होता है तथा तीनों प्रकार के (तिथि-नक्षत्र-लग्नके) गण्डान्त में उत्पन्न कुल का नाशक होता है ॥ ६ ॥

सुकर्म-नामयोगे तु सुकर्मा जायते नरः ।
सर्वैः प्रीतः सुशीलश्च रागी भोगी गुणाधिकः ॥ ७ ॥

सुकर्मयोग में उत्पन्न मनुष्य--सत्कर्म करनेवाला, सबका प्रिय, सुशील, स्नेही, भोगी और अधिक गुणवान् होता है ॥ ७ ॥

धृतिमान् धृतियोगे च कीर्ति-पुष्टि-धनान्वितः।
भाग्यवान् सुखसम्पन्नो विद्यावान् गुणवान् भवेद् ॥ ८ ॥

धृतियोग में उत्पन्न मनुष्य--धैर्यवान्, यश, पुष्टि और धन से युक्त, भाग्यवान्, सुखी, विद्यावान् और गुणी होता है ॥ ८ ॥

शूले शूलव्यथायुक्तो धार्मिकः शास्त्रपारगः।
विद्यार्थकुशलो यज्वा जायते मनुजः सदा ॥ ९ ॥

शूलयोग में उत्पन्न मनुष्य-शूलरोग से पीड़ित, धर्मात्मा, शास्त्रवेत्ता, विद्या एवं धन उपार्जन में कुशल और यज्ञकर्ता होता है ॥ ९ ॥

गण्डे गण्डव्यथायुक्तो बहुक्लेशो महाशिरः।
ह्रस्वकायो महाशूरो बहुरोगी दृढव्रतः ॥ १० ॥

गण्ड योग में उत्पन्न-गण्डरोग से युक्त, बहुत क्लेशवाला, उभड़ी हुई नसोंवाला, नाटे कदका, वीर, रोगी और दृढप्रतिज्ञ होता है ॥ १० ॥

वृद्धियोगे सुरूपश्च बहुपुत्रकलत्रवान्।
धनवानपि भोक्ता च सत्त्वावानपि जायते ॥ ११ ॥

वृद्धि योगोत्पन्न--सुन्दर, स्त्री-पुत्रादि से युक्त, धनी, भोगी और बलवान् होता है ॥ ११ ॥

ध्रुवयोगे च दीर्घायुः धनवान् प्रियदर्शनः।
स्थिरकर्माऽतिशक्तश्च ध्रुवबुद्धिश्च जायते ॥ १२ ॥

ध्रुवयोगोत्पन्न मनुष्य--दीर्घायु, धनी, सबका प्रिय, स्थिर कार्य करने वाला, स्थिरबुद्धि और अति बलवान् होता है ॥ १२ ॥

व्याघातयोगजातश्च सर्वज्ञः सर्वपूजितः।
सर्वकर्मकरो लोके विख्यातः सर्वकर्मसु ॥ १३ ॥

व्याघात योग में जन्म हो तो--सर्वज्ञ, सबों का मान्य, सब कार्य करनेवाला और लोक में विख्यात होता है ॥ १३ ॥

हर्षणे जायते लोके महाभाग्यो नृपप्रियः।
धृष्टः सदा धनैर्युक्तो विद्याशास्त्रविशारदः ॥ १४ ॥

हर्षण योग में जन्म होने से--बड़ा भाग्यशाली, राजमान्य, ढीठ, धनवान्, विद्या और शास्त्र में निपुण होता है ॥ १४ ॥

वज्रयोगे वज्रमुष्टिः सर्वविद्याऽस्त्रपारगः।
धनधान्यसमायुक्तस्तत्त्वज्ञो बहुविक्रमः ॥ १५ ॥

वज्र योगोत्पन्न--वज्र के समान मुष्टि (मुट्ठी) वाला, सब विद्या और अस्त्रों में निपुण, धन-धान्य से युक्त और पराक्रमी होता है ॥ १५ ॥

सिद्धियोगे समुत्पन्नः सर्वसिद्धियुतो भवेत् ।
दाता भोक्ता सुखी कान्तः शोकी रोगी च मानवः ॥ १६ ॥

सिद्धि योग में जन्म होने से मनुष्य--सब कार्य में सिद्धि पानेवाला, दानी, भोगी, सुखी, सुन्दर किन्तु रोग और शोक से युक्त होता है ॥ १६ ॥

व्यतीपाते नरो जातो महाकष्टेन जीवति ।
जीवेत्सद्भाग्ययोगेन स भवेदुत्तमो नरः ॥ १७ ॥

व्यतीपात में उत्पन्न मनुष्य--कष्ट से जीनेवाला और यदि जीवित रह जाय तो यश और सुख से युक्त उत्तम पुरुष होता है ॥ १७ ॥

वरीयान्नामयोगे च बलिष्ठो जायते नरः ।
शिल्पशास्त्रकथाभिज्ञो गीत-नृत्यादिकोविदः ॥ १८ ॥

वरीयान् योग में उत्पन्न पुरुष--बलवान्, शिल्पशास्त्र को जाननेवाला, कथाकार एवं संगीत और नृत्य विद्या में निपुण होता है ॥ १८ ॥

परिघे च नरो जातः स्वकुलोन्नतिकारकः ।
शास्त्रज्ञः सुकविर्वाग्मी दाता भोक्ता प्रियंवदः ॥ १९ ॥

परिघयोगोत्पन्न मनुष्य--अपने कुल को उन्नत करनेवाला, शास्त्र-ज्ञाता, कवि, वक्ता, दाता, भोगी और प्रियवक्ता होता है ॥ १९ ॥

शिवयोगे नरो जातः सर्वकल्याणभाजनः ।
महादेवसमो लोके सदा बुद्धियुतो भवेत् ॥ २० ॥

शिव योगोत्पन्न--सब कल्याण (मङ्गल) से युक्त, लोक में महादेव के समान मानी और अत्यन्त बुद्धिमान् होता है ॥ २० ॥

सिद्धयोगे सिद्धिदाता मन्त्रसिद्धिप्रवर्तकः ।
दिव्यनारीसमेतश्च सर्वसम्पद्युतो भवेत् ॥ २१ ॥

सिद्ध योगोत्पन्न मनुष्य--दूसरों को सिद्धि देनेवाला, मन्त्रशास्त्र का प्रवर्तक, सुन्दरी स्त्री से युक्त तथा सर्व सम्पत्ति युक्त होता है ॥ २१ ॥

साध्ये मानसिका सिद्धिर्यशोऽशेषसुखागमः ।
दीर्घसूत्री प्रसिद्धश्च जायते सर्वसम्मतः ॥ २२ ॥

साध्य योगोत्पन्न मनुष्य--मानसिक सिद्धि पानेवाला, यश और सब सुखों से युक्त, दीर्घसूत्री, लोक में प्रसिद्ध एवं सबका प्रिय होता है ॥ २२ ॥

शुभे शुभाननैर्युक्तो धनवानपि जायते ।
विज्ञानज्ञानसम्पन्नो दाता ब्राह्मणपूजकः ॥ २३ ॥

शुभ योग में जन्म होने से--सुन्दर मुखवाला, धनवान्, ज्ञान-विज्ञान से युक्त, दानी और ब्राह्मणों का आदर करनेवाला होता है ॥ २३ ॥

शुक्ले सर्वकलायुक्तः सर्वार्थज्ञानवान् भवेत् ।
कविः प्रतापी शूरश्च धनी सर्वजनप्रियः ॥ २४ ॥

शुक्ल योग में उत्पन्न मनुष्य--सब कलाओं में निपुण, सब अर्थोको जाननेवाला, कवि, प्रतापी, वीर, धनी और सबका प्रिय होता है ॥ २४ ॥

ब्रह्मयोगे महाविद्वान् वेदशास्त्रपरायणः ।
ब्रह्मज्ञानरतो नित्यं सर्वकार्येषु कोविदः ॥ २५ ॥

ब्रह्म योग में उत्पन्न मनुष्य--बड़ा विद्वान्, वेद-शास्त्रों में पारङ्गत, ब्रह्मज्ञानी और सब कार्य में निपुण होता है ॥ २५ ॥

ऐन्द्रे भूपकुले जातो राजा भवति निश्चयः ।
अल्पायुस्तु सुखी भोगी गुणवानपि जायते ॥ २६ ॥

ऐन्द्र योग में उत्पन्न मनुष्य--राजकुल का हो तो राजा (अर्थात् अन्य कुल में धनी), अल्पायु, सुखी, भोगी और गुणी होता है ॥ २६ ॥

वैधृतौ जायते यस्तु नित्योत्साहो बुभुक्षितः ।
कुर्वाणोऽपि जनैः प्रीतिं प्रयात्यप्रियतां नरः ॥ २७ ॥

वैधृति योग में जिसका जन्म हो वह--उत्साही, क्षुधालु, लोगों की भलाई करने पर भी सबका अप्रिय होता है ॥ २७ ॥

तिथियों में करण जानने का प्रकार--

कृष्णपक्षे तिथिर्द्विघ्नी मुनिभिर्भागमाहरेत् ।
शेषाङ्केन बवाद्यं च तिथ्यादौ करणं विदुः ॥ १ ॥

कृष्ण पक्ष की तिथि-संख्या को २ से गुणा कर, ७ से भाग देने से १ आदि शेष बचने से तिथि के पूर्वार्ध में बवादि चर करण समझना तथा अग्रिम करण उत्तरार्ध में समझना चाहिये ॥ १ ॥

तिथिर्द्विघ्नी द्विकोना च शुक्लपक्षे सदा बुधैः ।
शेषाङ्के सप्तभिर्भागस्तिथ्यादौ करणं मतम् ॥ २ ॥

शुक्ल पक्ष की तिथि-संख्या को २ से गुणा कर, उसमें २ घटा कर ७

का भाग देने से शेषाङ्क से तिथि के पूर्वार्ध में ववादि करण समझना और उसका अग्रिम तिथि के उत्तरार्ध में समझना चाहिये ॥ २ ॥

शुक्ल पक्ष में करण- कृष्ण पक्ष में करण-

तिथि	पूर्वार्ध	उत्तरार्ध	तिथि	पूर्वार्ध	उत्तरार्ध
१	किंस्तुघ्न	बव	१	बालव	कौलव
२	बालव	कौलव	२	तैतिल	गर
३	तैतिल	गर	३	वणिज	विष्टि
४	वणिज	विष्टि	४	बव	बालव
५	बव	बालव	५	कौलव	तैतिल
६	कौलव	तैतिल	६	गर	वणिज
७	गर	वणिज	७	विष्टि	बव
८	विष्टि	बव	८	बालव	कौलव
९	बालव	कौलव	९	तैतिल	गर
१०	तैतिल	गर	१०	वणिज	विष्टि
११	वणिज	विष्टि	११	बव	बालव
१२	बव	बालव	१२	कौलव	तैतिल
१३	कौलव	तैतिल	१३	गर	वणिज
१४	गर	वणिज	१४	विष्टि	शकुनि
१५	विष्टि	बव	१५	चतुष्पद	नाग

उदाहरण—कृष्ण पक्ष में १० मी को करण जानना है तो—तिथिसंख्या १० को २ से गुणा करने से २० हुआ, इसमें ७ के भाग से शेष ६ (छह) को बवादि गणना करने से वणिज करण तिथि के पूर्वार्ध में और विष्टि उत्तरार्ध में हुआ।

एवं शुक्लपक्ष में १० मी में करण जानना है तो-तिथि १० को २ से गुणा करने से २० हुआ, इसमें २ घटाने से १८ होने पर ७ के भाग देने से शेष ४ या पूर्वार्ध में और ५ वाँ गर करण उत्तरार्ध में हुआ ॥२॥

जन्म करणफल-

ववाख्ये करणे जातो मानी धर्मरतः सदा ।
शुभमङ्गलकर्मा च स्थिरकर्मा च जायते ॥ १ ॥

बव करण में जन्म हो तो मनुष्य मानी, धर्मात्मा, शुभ और स्थिर कार्यों को करनेवाला होता है ॥ १ ॥

वालवाख्ये नरो जातस्तीर्थदेवाधिसेवकः।
विद्यार्थसौख्यसम्पन्नो राजमान्यश्च जायते ॥ २ ॥

बालव करण में जन्म हो तो वह मनुष्य तीर्थ और देवता का भक्त होता है। विद्या, अर्थ और सुख से सम्पन्न और राजमान्य होता है ॥ २ ॥

कौलवाख्ये तु जातस्य प्रीतिः सर्वजनैः सह।
सङ्गतिर्मित्रवर्गैश्च मानवांश्च प्रजायते ॥ ३ ॥

कौलव करण में जन्म लेनेवाला–सबसे प्रीति और मित्रगणों से सङ्ग करने वाला तथा स्वाभिमानी होता है ॥ ३ ॥

तैतिले करणे जातः सौभाग्यधनसंयुतः।
स्नेही सर्वजनैः सार्द्धं विचित्राणि गृहाणि च ॥ ४ ॥

तैतिल करण में जन्म हो तो सौभाग्य धन से युक्त, सब से स्नेह करने वाला और अनेक प्रकार के मकान वाला होता है ॥ ४ ॥

गराख्ये कृषिकर्मा च गृहकार्यपरायणः।
यद्वस्तु वाञ्छितं तच्च लभते च महोद्यमैः ॥ ५ ॥

गर करण में जन्म लेनेवाला–कृषि (खेती) करने वाला, घर के कार्यों में तत्पर, जो-जो वस्तु चाहता है वह उद्योग द्वारा प्राप्त कर लेता है ॥ ५ ॥

वाणिजे करणे जातो वाणिज्येनैव जीवति।
वाञ्छितं लभते लोके देशान्तरगमाऽऽगमैः ॥ ६ ॥

वणिज करण में उत्पन्न मनुष्य–वाणिज्य कर्म से आजीविका करने वाला, देशान्तर आने-जाने से अभीष्ट वस्तु का लाभ करता है ॥ ६ ॥

अशुभारम्भशीलश्च परदाररतः सदा।
कुशलो विषकार्येषु विष्ट्याख्यकरणोद्भवः ॥ ७ ॥

विष्टि करण में उत्पन्न मनुष्य–अनुचित कर्म करनेवाला, परस्त्रीगामी, विष सम्बन्धी कार्य में प्रवीण (विषवैद्य) होता है ॥ ७ ॥

शकुनौ करणे जातः पौष्टिकादिक्रियाकृतिः।
औषधादिषु दक्षश्च भिषग्वृत्तिश्च जायते ॥ ८ ॥

शकुनि में उत्पन्न–पौष्टिक कार्य (विवादों का निपटारा कराने में दक्ष, शान्ति-पौष्टिक अनुष्ठान) में कुशल, औषध निर्माण में प्रवीण, वैद्यवृत्ति से जीविका करनेवाला होता है ॥ ८ ॥

करणे च चतुष्पादे देव-द्विजरतः सदा ।
गोकर्मा गोप्रभुर्लोके चतुष्पदचिकित्सकः ॥ ९ ॥

चतुष्पद में जन्म होने से मनुष्य–देव और ब्राह्मणों का भक्त, गायों का सेवक-पालक तथा पशुओं का चिकित्सक (वैद्य) होता है ॥ ९ ॥

नागे च करणे जातो धीवरप्रीतिकारकः ।
कुरुते दारुणं कर्म दुर्भगो लोललोचनः ॥ १० ॥

नाग करण में जन्म लेनेवाला–मल्लाहों का शुभचिन्तक, प्रेमी, कठिन कार्य को करनेवाला, दुर्भाग्य युक्त और चञ्चल नेत्रवान् होता है ॥ १० ॥

किंस्तुघ्नकरणे जातः शुभकर्मरतो नरः ।
तुष्टिं पुष्टिं च माङ्गल्यं सिद्धिं च लभते सदा ॥ ११ ॥

किंस्तुघ्न करण में जन्म हो तो–शुभ कार्य में तत्पर होकर तुष्टि, पुष्टि, मङ्गल और अभीष्ट सिद्धि को प्राप्त कर लेता है ॥ ११ ॥

गण ज्ञान–

अश्विनीमृगरेवत्यो हस्तः पुष्यः पुनर्वसुः ।
अनुराधा श्रुतिः स्वातिः कथ्यते देवतागणः ॥ १ ॥

अश्विनी, मृगशिरा, रेवती, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण और स्वाती ये ९ नक्षत्र देवगण हैं ॥ १ ॥

तिस्रः पूर्वाश्चोत्तराश्च तिस्रोऽप्यार्द्रा च रोहिणी ।
भरणी च मनुष्याख्यो गणश्च कथितो बुधैः ॥ २ ॥

तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, आर्द्रा, रोहिणी और भरणी ये ९ नक्षत्र मनुष्यगण हैं ॥ २ ॥

कृत्तिका च मघाऽऽश्लेषा विशाखा शततारकाः ।
चित्रा ज्येष्ठा धनिष्ठा च मूलं रक्षोगणः स्मृतः ॥ ३ ॥

कृत्तिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शततारा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल ये राक्षस गण हैं ॥ ३ ॥

गणफल–

सुन्दरो दानशीलश्च मतिमान् सरलः सदा ।
अल्पभोगी महाप्राज्ञो नरो देवगणे भवेत् ॥ १ ॥

देवगण में उत्पन्न पुरुष–दानी, बुद्धिमान्, सरल हृदय, अल्पाहारी, विद्वानों में श्रेष्ठ होता है ॥ १ ॥

मानी धनी विशालाक्षो लक्ष्यवेधी धनुर्धरः ।
गौरः पौरजनग्राही जायते मानवे गणे ।। २ ।।

मनुष्य गण में उत्पन्न पुरुष—मानी, धनवान्, विशालनेत्र वाला, धनुर्विद्याका जानकार, ठीक निशानाको वेध करने वाला, गौरवर्ण, नगरवासियों को वश में रखने वाला होता है ।। २ ।।

उन्मादी भीषणाकारः सर्वदा कलहप्रियः ।
पुरुषो दुस्सहं ब्रूते प्रमेही राक्षसे गणे ।। ३ ।।

राक्षसगण में उत्पन्न बालक—उन्माद युक्त, भयंकर स्वरूप, झगड़ालू, प्रमेह रोग से पीड़ित और कटुवचन बोलने वाला होता है ।। ३ ।।

योनिज्ञान–

अश्विनी वारुणश्चाश्वो रेवती भरणी गजः ।
पुष्यश्च कृत्तिका छागो नागश्च रोहिणी मृगः ।। १ ।।
आर्द्रा मूलमपि श्वा च मूषको भगभं मघा ।
मार्जारोऽदितिराश्लेषाऽहिर्बुध्न्यार्यम्णे च गौः स्मृता ।। २ ।।
महिषौ स्वातिहस्तौ च मृगो ज्येष्ठाऽनुराधिका ।
व्याघ्रश्चित्रा विशाखा च जलं श्रोतश्च मर्कटौ ।। ३ ।।
सिंहो वस्वजपाद्धे च वैश्वं च नकुलोऽभिजित् ।
योनयः कथिता भानां तत्र वैरं मिथस्त्यजेत् ।। ४ ।।

अश्विनी और शततारा अश्वयोनि; रेवती, भरणी गज; पुष्य, कृत्तिका छाग; रोहिणी, मृगशिरा सर्प; आर्द्रा, मूल श्वान; मघा, पूर्वाफाल्गुनी मूस, पुनर्वसु, आश्लेषा मार्जार; उत्तराभाद्र, उत्तराफाल्गुनी गौ; स्वाती, हस्त महिष; ज्येष्ठा, अनुराधा मृग; चित्रा, विशाखा व्याघ्र और पूर्वाषाढ़, श्रवण बानर; धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपदा सिंह; उत्तराषाढ़, अभिजित्, नकुल इन नक्षत्रों की योनि संज्ञा है। परस्पर शत्रुता वाली योनियों का त्याग कर देना चाहिये ।। १-४ ।।

अश्वयोनिफल—

स्वच्छन्दः सद्गुणः शूरस्तेजस्वी घर्घरस्वरः ।
स्वामिभक्तस्तुरङ्गस्य योनौ जातो भवेन्नरः ।। १ ।।

अश्व योनि में उत्पन्न मनुष्य—स्वतन्त्र, सद्गुण, वीर, प्रतापी, घर्घर स्वर वाला और अपने मालिक का भक्त होता है ।। १ ।।

गजयोनिफल-

राजमान्यो वली भोगी भूपस्थानविभूषणः ।
आत्मोत्साही नरो जातो गजयोनौ न संशयः ॥ २ ॥

गज योनि में जन्म लेने वाला--राजा का प्रिय, वलवान्, भोगी, राजस्थान को शोभित करने वाला, उत्साही होता है ॥ २ ॥

गो योनिफल-

स्त्रीणां प्रियः सदोत्साही वहुवाक्यविशारदः ।
स्वल्पायुश्च नरो जाते गोयोनौ नात्र संशयः ॥ ३ ॥

गो योनि में उत्पन्न मनुष्य—स्त्रियों का प्रिय, सर्वदा उत्साहयुक्त, बोलने में चतुर, अल्पायु होता है ॥ ३ ॥

सर्प योनिफल-

दीर्घरोषो महाक्रूरः कृतघ्नश्च भवेन्नरः ।
चपलो रसनालोलः सर्पयोनौ च संशयः ॥ ४ ॥

सर्प योनि में जन्म लेनेवाला—महाक्रोधी, महाक्रूर, उपकार नहीं मानने वाला, चञ्चल, जीभ का लोलुप होता है ॥ ४ ॥

श्व (कुक्कुर) योनिफल-

सोद्यमः सुमहोत्साही शूरः स्वज्ञातिविग्रही ।
मातृपित्रोः सदा भक्तः श्वयोनौ जायते नरः ॥ ५ ॥

श्वान योनि में जन्म लेनेवाला--उद्योगी, उत्साही, शूर, अपने बन्धुओं से लड़ने वाला, माता-पिता का भक्त होता है ॥ ५ ॥

मार्जार योनिफल-

शूरः स्वकार्ये दक्षश्च मिष्टान्नपानभक्षकः ।
निर्भयो दुःस्वभावश्च नरो मार्जारयोनिजः ॥ ६ ॥

मार्जार योनि में जन्म लेनेवाला--वीर, अपने कार्य में समर्थ, मिष्टान्नपान भोजी, निर्भय और दुष्टस्वभाव वाला होता है ॥ ६ ॥

छाग (मेष) योनिफल-

महोत्साही महायोद्धा विक्रमी विभवेश्वरः ।
नित्यं परोपकारी च मेषयोनौ भवेन्नरः ॥ ७ ॥

मेषयोनि में जन्म लेनेवाला—बड़ा उत्साही, महायोद्धा, पराक्रमी, ऐश्वर्यवान् और परोपकारी होता है ॥ ७ ॥

मूषक योनिफल–

बुद्धिमान् वित्तसम्पूर्णः स्वकार्यकरणोद्यतः ।
अप्रमत्तोऽप्यविश्वासी नरो मूषकयोनिजः ॥ ८ ॥

मूषकयोनि में जन्म लेनेवाला--बुद्धिमान्, धनवान्, अपने कार्य में तत्पर, सदा सावधान तथा सभी पर विश्वास नहीं करता है ॥ ८ ॥

सिंह योनिफल–

धर्मात्मा च सदाचारः सत्क्रिया सद्गुणान्वितः ।
कुटुम्बस्य समुद्धर्ता सिंहयोनिभवो नरः ॥ ९ ॥

सिंहयोनि में उत्पन्न मनुष्य—धर्मात्मा, सदाचारी, सद्गुणों से युक्त, कुटुम्बियों का पोषक होता है ॥ ९ ॥

महिष योनिफल

संग्रामे विजयी योद्धा सकामस्तु बहुप्रजः ।
वाताधिको मन्दमति-र्नरो महिषयोनिजः ॥ १० ॥

महिषयोनि में उत्पन्न--संग्राम में जयी, योद्धा, कामी, बहुत सन्तान-वाला, वातरोगी और मन्द बुद्धि होता है ॥ १० ॥

व्याघ्र योनिफल–

स्वच्छन्दोऽर्थरतो ग्राही दीक्षावान् दक्षतायुतः ।
आत्मस्तुतिपरो नित्यं व्याघ्रयोनिभवो नरः ॥ ११ ॥

व्याघ्रयोनि में उत्पन्न मनुष्य--स्वतन्त्र, धनोपार्जन में तत्पर, दीक्षित, कार्यदक्ष, अपनी प्रशंसा करनेवाला होता है ॥ ११ ॥

मृग योनिफल–

स्वतन्त्रः शान्तसद्वृत्तिः सत्यवाक् स्वजनप्रियः ।
धर्मात्मा रणभीरुश्च मृगयोनिभवो नरः ॥ १२ ॥

मृगयोनि में उत्पन्न मनुष्य–स्वतन्त्र, शान्तचित्त, सद्व्यवहारी, सत्य-वक्ता, बन्धुप्रिय, धर्मात्मा और लड़ाई से डरनेवाला होता है ॥ १२ ॥

वानर योनिफल--

चपलो मिष्टभोगी च धनलुब्धः कलिप्रियः ।
सकामः सत्प्रजः शूरो नरो वानरयोनिजः ॥ १३ ॥

वानर योनि में जन्म लेनेवाला–चञ्चल स्वभाव, मिष्ठान्नभोक्ता, धन का लोभी, झगड़ालू, कामी, सन्तानयुक्त और शूर-वीर होता है ॥ १३ ॥

नकुल योनिफल-

परोपकरणे दक्षो धनाढ्यश्च विचक्षणः ।
पितृ-मातृप्रियो नित्यं नरो नकुलयोनिजः ।। १४ ।।

नकुलयोनि में उत्पन्न मनुष्य--परोपकारी, कार्य में कुशल, धनवान्, पण्डित, माता-पिता का भक्त होता है ।। १४ ।।

वारायुर्ज्ञान-

त्रिपदः प्रथमे मासे द्वात्रिंशे च त्रयोदशे ।
षष्ठेऽपि च रवौ वारे जातो जीवति षष्टिकम् ।। १ ।।

रविवार में जन्म लेनेवाले को प्रथम मास, २३ वें, १३ वें और छठे वर्ष में कष्ट उपस्थित होता है । उसके वाद वह ६० वर्ष जीवित रहता है ।।१।।

एकादशेऽष्टमे मासे चन्द्रे पीडा च षोडशे ।
सप्तविंशतिवर्षे च वेदनागाब्दके मृतिः ।। २ ।।

सोमवार में जन्म हो तो ८ वें ११ वें मास में और १६ वें में पीड़ा तथा २७ वें वर्ष में एवं ८४ वर्ष तक पूर्ण आयु होती है ।। २ ।।

द्वात्रिंशे च द्वितीये च वर्षे पीडा च मङ्गले ।
चतुःसप्ततिवर्षाणि सदा रोगी स जीवति ।। ३ ।।

मंगलवार में जन्म हो तो दूसरे और २२ वें वर्ष में विशेष कष्ट तथा सदा रोगी रहकर ७४ वर्ष जीवित रहता है ।। ३ ।।

बुधवारेऽष्टमे मासे पीडा वर्षे तथाऽष्टमे ।
पूर्णो चतुष्पष्टिवर्षे ततो मृत्युमवाप्नुयात् ।। ४ ।।

बुधवार में जन्म हो तो ८ वें मास और ८ वें वर्ष में कष्ट होता है । उसके बाद ६४ वर्ष के बाद में मृत्यु होती है ।। ४ ।।

गुरौ च सप्तमे मासे षोडशेऽब्दे त्रयोदशे ।
पीडा ततश्चतुर्युक्ताऽशीतिवर्षाणि जीवति ।। ५ ।।

गुरुवार में जन्म होने से ७ वें मास, १६ और १३ वर्ष में कष्ट होता है । बाद ८४ वर्ष तक जीता है ।। ५ ।।

शुक्रवारे प्रजा तस्य देहो रोगविवर्जितः ।
षष्टिवर्षे च सम्पूर्णे मृत्युं प्राप्नोति मानवः ।। ६ ।।

शुक्रवार में जन्म हो तो उसको कभी रोगभय नहीं होता है । वह ६० वर्ष की अवस्था में मृत्यु पाता है ।। ६ ।।

शनौ च प्रथमे मासे पीडाब्दे च त्रयोदशे।
दृढदेहस्ततो जातः शतवर्षाणि जीवति ॥ ७ ॥

शनिवार में जन्म हो तो प्रथम मास और १३वें वर्ष में कष्ट होता है। उसके बाद १०० वर्ष जीता है ॥ ७ ॥

जन्मलग्नफल–

मेषलग्ने समुत्पन्नश्चण्डो मानी धनी शुभः।
क्रोधी स्वजनहन्ता च विक्रमी परवत्सलः ॥ १ ॥

मेष लग्न में उत्पन्न होने से तीक्ष्णस्वभाव, मानी, धनवान्, सदाचारी, क्रोधी, स्वजनद्वेषी, पराक्रमी और दूसरों का स्नेही होता है ॥ १ ॥

वृषलग्नोद्भवो विप्रगुरुभक्तः प्रियंवदः।
गुणी कृती धनी लोभी शूरः सर्वजनप्रियः ॥ २ ॥

वृष लग्न में जन्म लेने से ब्राह्मण और गुरुजनों का भक्त, प्रियवक्ता, गुणी, पण्डित, धनी, लोभी, योद्धा और सबका प्रिय होता है ॥ २ ॥

मिथुनोदयसञ्जातो मानी स्वजनवल्लभः।
त्यागी भोगी धनी कामी दीर्घसूत्रोऽरिमर्दकः ॥ ३ ॥

मिथुन लग्नोत्पन्न–मानी, अपने जनों का प्रिय, त्यागी, भोगी, धनी, कामी, दीर्घसूत्री और शत्रुओं को जीतने वाला होता है ॥ ३ ॥

कर्कलग्ने समुत्पन्नो धर्मी भोगी जनप्रियः।
मिष्टान्नपानभोक्ता च सौभाग्यधनसंयुतः ॥ ४ ॥

कर्क लग्न में जन्म लेने वाला––धर्मात्मा, भोगी, सबका प्रिय, मधुर अन्नपान का भोगी, सुन्दर और धनवान् होता है ॥ ४ ॥

सिंहलग्ने समुत्पन्नो भोगी शत्रुविमर्दकः।
स्वल्पोदरोऽल्पपुत्रश्च सोत्साही रणविक्रमी ॥ ५ ॥

सिंह लग्न में उत्पन्न पुरुष––भोगी, शत्रुको जीतने वाला, स्वल्प उदर वाला, थोड़े पुत्र वाला, उत्साही और रण में पराक्रमी होता है ॥ ५ ॥

कन्यालग्ने भवेज्जातो नानाशास्त्रविशारदः।
सौभाग्यगुणसम्पन्नः सुरूपः सुरतप्रियः ॥ ६ ॥

कन्या लग्न में जन्म लेनेवाला––अनेक शास्त्र में निपुण, सौभाग्य और गुणों से सम्पन्न, सुरूप तथा सुरतप्रिय होता है ॥ ६ ॥

तुलालग्नोदये जातः सुधीः सत्कर्मजीविकः ।
विद्वान् सर्वकलाभिज्ञो धनाढ्यो जनपूजितः ॥ ७ ॥

तुला लग्न में उत्पन्न पुरुष—बुद्धिमान्, अच्छे कर्म से जीविका करने वाला, पण्डित, सब कलाओं में निपुण और लोकमान्य होता है ॥ ७ ॥

वृश्चिकोदयसञ्जातः शौर्यवान् धनवान् सुधीः ।
कुलमध्ये प्रधानश्च विवेकी सर्वपोषकः ॥ ८ ॥

वृश्चिक लग्न में जन्म लेनेवाला—शूर, धनी, ज्ञानी, कुल में श्रेष्ठ, विवेकी और परिवार का पोषक होता है ॥ ८ ॥

धनुर्लग्नसमुत्पन्नो नीतिमान् धनवान् सुधीः ।
लोके मान्यः कुले श्रेष्ठः पुत्रपौत्रादिसंयुतः ॥ ९ ॥

धनु लग्न में उत्पन्न मनुष्य—नीतिज्ञ, धनी, बुद्धिमान्, लोक में पूज्य, कुल में श्रेष्ठ, पुत्र-पौत्रादि से युक्त होता है ॥ ९ ॥

मकरोदयसञ्जातो नीचकर्मा बहुप्रजः ।
लुब्धोऽलसो व्ययी चैव स्वकार्ये च कृतोद्यमः ॥ १० ॥

मकर लग्नोत्पन्न–नीच कर्म में रत, बहुत सन्तान वाला, लोभी, आलसी, किन्तु बहुत खर्च करने वाला, परन्तु अपने कार्य में उद्यत रहता है ॥१०॥

कुम्भलग्ने नरो जातः स्थिरचित्तोऽतिसौहृदः ।
परदाररतो नित्यं मृदुकायो महासुखी ॥ ११ ॥

कुम्भ लग्न में जन्म लेनेवाला पुरुष—स्थिर बुद्धि, अत्यन्त सहृदय, परस्त्री में रत, कोमल देह और परम सुखी होता है ॥ ११ ॥

मीनलग्ने समुत्पन्नो रत्नकाञ्चनपूरितः ।
अल्पकामः कृशश्चैव भवेद् दीर्घविचिन्तकः ॥ १२ ॥

मीन लग्न में उत्पन्न—रत्न-सुवर्ण से पूर्ण, अल्पकामी, कृश शरीर और अधिक सोच-विचार कर कार्य करने वाला होता है ॥ १२ ॥

नवमांशफल–

प्रत्येक राशिका नवम अंश नवमांश कहलाता है, अतः प्रतिराशि में ९ नवमांश होते हैं। अब सभी लग्न में नवमांश के फल को कहते हैं—

पिशुनश्चपलो दुष्टः पापकर्मा निराकृतिः ।
परेषां व्यसने सक्तः प्रथमांशे प्रजायते ॥ १ ॥

लग्न के प्रथम नवमांश में जन्म हो तो चुगलखोर, चञ्चल, दुष्ट स्वभाव, पापी, कुरूप, दूसरों को कष्ट देने वाला होता है ॥१॥

उत्पन्नधनभोक्ता च सङ्ग्रामे निगतस्पृहः।
गान्धर्वप्रमदासक्तो द्वितीयांशे प्रजायते ॥ २ ॥

लग्न के द्वितीय नवमांश में उत्पन्न पुरुष–उपस्थित धन का भोगी, लड़ाई-झगड़े से विमुख, संगीत और स्त्रियों का प्रेमी होता है ॥२॥

धर्मिष्ठः सन्ततव्याधिः सर्वसारज्ञ एव च।
सर्वप्रियो देवभक्तस्तृतीयांशे च जायते ॥ ३ ॥

लग्न के तृतीय नवमांश में उत्पन्न–धर्मात्मा, सदा रोगी, सब विषय का तत्त्वज्ञ, सबका प्रिय और देवता का भक्त होता है ॥ ३ ॥

चतुर्थांशे समुत्पन्नो दीक्षितो गुरुभक्तिमान्।
यद्यद् भूमिगतं वस्तु तत्सर्वं लभते हि सः ॥ ४ ॥

लग्न के चतुर्थ नवमांश में जन्म लेने वाला—दीक्षा प्राप्त कर गुरु का भक्त होता है और भूमिगत (गड़े हुए) धन को प्राप्त करता है ॥ ४ ॥

सर्वलक्षणसम्पन्नो राजा भवति विश्रुतः।
दीर्घायुर्बहुपुत्रश्च पञ्चमांशे प्रजायते ॥ ५ ॥

लग्न के पञ्चम नवमांश में जन्म लेने वाला—सब लक्षणों से युक्त, विख्यात राजा, दीर्घायु और बहुत पुत्र वाला होता है ॥ ५ ॥

स्त्रीनिर्जितः शुभैर्हीनो बहुमानी नपुंसकः।
अर्थध्वंसी प्रमादी च षष्ठांशे जायते जनः ॥ ६ ॥

षष्ठ नवमांश में उत्पन्न—स्त्री से पराजित, पापी, अभिमानी, नपुंसक, धन का व्यर्थ खर्च करने वाला और प्रमाद युक्त होता है ॥ ६ ॥

विक्रान्तो मतिमान् शूरः संग्रामेष्वपराजितः।
महोत्साही च सन्तोषी जायते सप्तमांशके ॥ ७ ॥

सप्तम नवमांश में उत्पन्न—पराक्रमी, बुद्धिमान्, शूर, रण में विजयी, बड़ा उत्साही और सन्तोषी होता है ॥ ७ ॥

कृतघ्नो मत्सरी क्रूरः क्लेशभागी बहुप्रजः।
फलकालपरित्यागी जायते चाऽष्टमांशके ॥ ८ ॥

अष्टम नवमांश में उत्पन्न मनुष्य–कृतघ्न, दूसरों से द्वेष रखनेवाला,

क्लेश भागी, बहुत सन्तान वाला और फल के समय को त्याग करने वाला होता है ॥ ८ ॥

क्रियासु कुशलो दक्षः सप्रतापी जितेन्द्रियः ।
भृत्यैश्च संयुतो नित्यं जायते नवमांशके ॥ ९ ॥

नवम नवमांश में उत्पन्न मनुष्य--कार्यों में कुशल, सामर्थ्यवान्, प्रतापी, जितेन्द्रिय और नौकरों से युक्त होता है ॥ ९ ॥

चन्द्रकुण्डली विचार-

देहो लग्नं वर्गषट्कोडुकानि प्राणश्चन्द्रो धातवोऽन्ये ग्रहेन्द्राः ।
प्राणे नष्टे देहधात्वङ्गनाशो यस्मात्तस्माच्चन्द्रवीर्यः प्रधानम् ॥ १ ॥

लग्न, षड्वर्ग और नक्षत्र ये देह हैं और चन्द्रमा प्राण हैं। जिस प्रकार प्राण नष्ट होने से देह नष्ट हो जाता है, अतएव शुभाशुभ फल में चन्द्रबल को ही प्रधान माना गया है ॥ १ ॥

सूर्य आत्मा मनश्चन्द्रस्तदात्मा जीवयोगवान् ।
लग्नांशाद् द्वादशांशाद् वा ग्रहाणां फलमादिशेत् ॥ २ ॥

सूर्य आत्मा और चन्द्रमा मन है, अतः आत्मा का जीव से संयोग होता है। इस कारण लग्न के नवमांश अथवा द्वादशांश से ग्रहों का शुभाशुभ फल कहना चाहिए ॥ २ ॥

और भी--

चन्द्रः सर्वत्र बीजाभो लग्नञ्च कुसुमप्रभम् ।
फलेन सदृशोंऽशश्च भावः स्वादुरसः स्मृतः ॥ ३ ॥

जन्तुओं के शुभाशुभ रूपी वृक्ष का चन्द्रमा बीजरूप, लग्न पुष्परूप, अंश फलरूप और भाव उसके स्वादुरस रूप होते हैं ॥ ३ ॥

चन्द्र राशिफल-

लोलनेत्रः सदा रोगी धर्मार्थकृतनिश्चयः ।
पृथुजङ्घः कृतघ्नश्च निष्पापो राजपूजितः ॥ ४ ॥
कामिनीहृदयानन्दो दाता भीतो जलादपि ।
चण्डकर्मा मृदुश्चान्ते मेषराशौ भवेन्नरः ॥ ५ ॥

मेषराशि में जन्म हो तो चञ्चल नेत्र, नित्य रोगी, धर्म और धनोपार्जन करने वाला, स्थूल जङ्घा वाला, कृतघ्न, पापहीन, राजकीय सम्मान से

सम्मानित, स्त्रीजन वल्लभ, दाता, जल से डरने वाला, प्रचण्ड कर्म करके फिर नम्र होने वाला होता है ॥ ४-५ ॥

भोगी दाता शुचिर्दक्षो महासत्त्वो महामतिः ।
धनी विलासी तेजस्वी सुमित्रश्च वृषे भवेत् ॥ ६ ॥

वृषराशि में जन्म हो तो भोगी, दाता, पवित्र, चतुर, महाबलवान्, बुद्धिमान्, धनी, विलासी, तेजस्वी और सुन्दर मित्रवाला होता है ॥ ६ ॥

मृदुवाक्यो लोलदृष्टिर्दयालुर्मैथुनप्रियः ।
गान्धर्ववित् कासरोगी कीर्तिभागी धनी गुणी ॥ ७ ॥
गौरो दीर्घः पटुर्वक्ता मेधावी च दृढव्रतः ।
समर्थो न्यायवादी च जायते मिथुने जनः ॥ ८ ॥

मिथुन राशि में जन्म होने से प्रियवक्ता, चञ्चल नेत्र, दयावान्, मैथुन-प्रिय, संगीत जानने वाला, यशस्वी, धनवान्, गुणवान्, गौरवर्ण, लम्बी देह, बोलने में चतुर, मेधावी, निश्चित संकल्प वाला, समर्थ और नीतिवादी होता है ॥ ७-८ ॥

कार्यकारी धनी शूरो धर्मिष्ठो गुरुवत्सलः ।
शिरोरोगी महाबुद्धिः कृशाङ्गः कृत्यवित्तमः ॥ ९ ॥
प्रवासशीलः कोपाढ्योऽबलो दुःखी सुमित्रकः ।
अनासक्तो गृहे वक्रः कर्कराशौ भवेन्नरः ॥ १० ॥

जन्म समय में कर्कराशि हो तो कार्यों में पटु, धनी, शूर, धर्मात्मा, गुरुभक्त, मस्तक रोग से युक्त, महाबुद्धिमान्, दुबला देह, कार्यों को जानने वाला, विदेशवासी, धनवान्, अल्पबल वाला, दुःखी, सुन्दर मित्र वाला, घर में अनासक्त और कुटिल होता है ॥ ९-१० ॥

क्षमायुक्तः क्रियासक्तो मद्य-मांसरतः सदा ।
देशभ्रमणशीलश्च शीतभीतः सुमित्रकः ॥ ११ ॥
विनयी शीघ्रकोपी च जननी-पितृवत्सलः ।
व्यसनी प्रकटो लोके सिंहराशौ भवेन्नरः ॥ १२ ॥

सिंह राशि में जन्म लेनेवाला--क्षमाशील, कार्य में तत्पर, मद्य-मांस प्रिय, देश में भ्रमणशील, शीत से डरने वाला, सुन्दर मित्रवाला, नम्र, शीघ्र क्रोध करने वाला, माता-पिता का भक्त, व्यसनी और लोक में विख्यात होता है ॥ ११-१२ ॥

विलासी सुजनाह्लादी सुभगो धर्मपूरितः ।
दाता दक्षः कविर्वृद्धो वेदशास्त्रपरायणः ॥ १३ ॥
सर्वलोकप्रियो नाट्यगान्धर्वव्यसने रतः ।
प्रवासशीलः स्त्रीदुःखी कन्याराशौ प्रजायते ॥ १४ ॥

कन्या राशि में जन्म होने से—विलासी, साधुओं का भक्त, सुन्दर, धर्मात्मा, दाता, चतुर, कवि, वृद्धावस्था को प्राप्त करने वाला, वेद-शास्त्र को जानने वाला, सब जनों का प्रिय, नाटक और सङ्गीत में रत, प्रवासी और स्त्री से दुःखी होता है ॥ १३-१४ ॥

अस्थानरोषणो दुःखी मृदुभाषी कृपान्वितः ।
चलाक्षश्चललक्ष्मीको गृहमध्येऽतिविक्रमः ॥ १५ ॥
वाणिज्यदक्षो देवानां पूजको मित्रवत्सलः ।
प्रवासी सुहृदामिष्टस्तुलाजातो भवेन्नरः ॥ १६ ॥

तुला राशि में जन्म हो तो—अकारण, असमय में रोष करने वाला, दुःखी, कोमलवचन, दयालु, चञ्चल नेत्र, चलधन, घर में वीरता दिखाने वाला, वाणिज्य में चतुर, देवता का भक्त, मित्रों में प्रेम रखनेवाला, परदेशवासी और बन्धुओं का प्रिय होता है ॥ १५-१६ ॥

बाल्यप्रवासी क्रूरात्मा शूरः पिङ्गललोचनः ।
परदाररतो मानी निष्ठुरः स्वजने भवेत् ॥ १७ ॥
साहसप्राप्तलक्ष्मीको जनन्यामपि दुष्टधीः ।
धूर्तश्चौरकलादक्षो वृश्चिके जायते नरः ॥ १८ ॥

वृश्चिक राशि में जन्म लेनेवाला—बाल्यावस्था से ही विदेश में रहने वाला, क्रूरहृदय, शूर, पिङ्गलवर्ण नेत्रवाला, परस्त्रीगामी, अपने जनों में निठुर, उद्योग से धन पाने वाला, माता के प्रति भी दुष्ट बुद्धि, धूर्त, चौर-कर्म में निपुण होता है ॥ १७-१८ ॥

शूरः सत्यधिया युक्तः सात्त्विको जननन्दनः ।
शिल्पविज्ञानसम्पन्नो धनाढ्यो दिव्यभार्यकः ॥ १९ ॥
मानी चरित्रसम्पन्नो ललितप्रियभाषकः ।
तेजस्वी स्थूलदेहश्च धनुराशिभवो नरः ॥ २० ॥

धनु राशि में जन्म हो तो—वह शूर, सद्बुद्धि, सात्त्विक, लोकप्रिय,

शिल्प विद्या में निपुण, धनवान्, सुन्दरी स्त्री का पति, मानी, सच्चरित्र, मृदु और प्रियभाषी, तेजस्वी एवं स्थूलशरीर होता है ॥ १९-२० ॥

कुले हीनो वशे स्त्रीणां पण्डितः परिवादकः ।
निन्दको ललनाग्राह्यः पुत्राढ्यो मातृवत्सलः ॥ २१ ॥
धनी त्यागी सुभृत्यश्च दयालुर्बहुबान्धवः ।
परिचिन्तितसौख्यश्च मकरे जायते नरः ॥ २२ ॥

मकर राशि में उत्पन्न—अपने कुल में हीन, स्त्रियों के वश में रहने वाला, पण्डितों से विवाद करने वाला और निन्दक होता है, स्त्रियों का प्रिय, पुत्रवान्, माता का प्रिय, धनवान्, त्यागी, सुन्दर नौकर वाला, दयालु, बहुत वन्धु वाला एवं दूसरों से सुख पाने वाला होता है ॥ २१-२२ ॥

दाताऽलसः कृतज्ञश्च गजवाजिधनेश्वरः ।
शुभदृष्टिः सदा सौम्यो धनविद्याकृतोद्यमः ॥ २३ ॥
पुण्यात्मा स्नेहयुक्तश्च स्वोपार्जितधनान्वितः ।
शालूरकुक्षिर्निर्भीतः कुम्भराशौ प्रजायते ॥ २४ ॥

कुम्भ राशि में जन्म हो तो वह—दाता, आलसी, कृतज्ञ, हाथी-घोड़े आदि धन संयुक्त, सुन्दर दृष्टि, सौम्यमूर्ति, धन और विद्या में उद्योगवान्, मेढक के समान पेटवाला और निर्भय होता है ॥ २३-२४ ॥

गम्भीरचेष्टितः शूरः पटुवाक्यो नरोत्तमः ।
कोपनः कृपणो ज्ञानी गुणपूज्यः कुलप्रियः ॥ २५ ॥
सुरसेवी शीघ्रगामी गान्धर्वकुशलः शुभः ।
मीनराशौ समुत्पन्नो मानवो बन्धुवत्सलः ॥ २६ ॥

मीन राशि में जन्म लेनेवाला—गम्भीर चेष्टा रखने वाला, शूर, बोलने में चतुर, क्रोधी, कृपण, ज्ञानी, गुणों से पूज्य, कुल में प्रिय, देवाराधक, तेज चलने वाला, संगीतज्ञ, सौम्यमूर्ति और वन्धुओं का प्रिय होता है ॥ २५-२६॥

चन्द्रकुण्डली भावफल—

चन्द्रमा से १२ भावगत रवि फल-

चन्द्रेण सहितः सूर्यो जन्मकाले यदा भवेत् ।
विदेशगामी भोगी च कलहे कृतवासनः ॥ १ ॥

जिसके जन्म काल में चन्द्रमा के साथ सूर्य हो वह परदेशवासी, सुख-भोगी और कलहप्रिय होता है ॥ १ ॥

चन्द्राद् द्वितीयभे भानुर्जन्मकाले यदा भवेत् ।
बहुभृत्यो यशस्वी च राजपूज्यो भवेन्नरः ॥ २ ॥

चन्द्रमा से द्वितीय भाव में सूर्य हो तो जातक (जन्म लेने वाला), बहुत नौकर रखने वाला, यशस्वी और राजमान्य होता है ॥ २ ॥

चन्द्रात् तृतीयस्थानेऽर्को जन्मकाले यदा भवेत् ।
स्वर्णार्थी च शुचिश्चैव राजतुल्यो भवेन्नरः ॥ ३ ॥

जन्म समय चन्द्रमा से तृतीय भाव में सूर्य हो तो सुवर्ण रखने वाला, अत्यन्त पवित्र हृदय और राजा के तुल्य होता है ॥ ३ ॥

चन्द्राच्चतुर्थगः सूर्यो जन्मकाले यदा भवेत् ।
मातृहन्ता भवेद्वाऽसौ मातृभक्तिविवर्जितः ॥ ४ ॥

जन्मकाल में चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान में सूर्य हो तो वह माता का विनाशक होता है अथवा माता का अभक्त होता है ॥ ४ ॥

चन्द्रात् पञ्चमभे सूर्यो यस्य जन्मनि संस्थितः ।
सुताभिश्चासुखी चैव बहुपुत्रो भवेन्नरः ॥ ५ ॥

जन्म समय चन्द्रमा से पञ्चम भाव में सूर्य हो तो वह कन्याओं से दुःखी, अधिक पुत्रवाला होता है ॥ ५ ॥

चन्द्रात् षष्ठगः सूर्यो जन्मकाले यदा भवेत् ।
शत्रूणां विजयी शूरः क्षात्रकर्मरतः सदा ॥ ६ ॥

चन्द्रमा से षष्ठ भाव में सूर्य हो तो जन्म लेनेवाला शत्रुओं को जीतने वाला, वीर और क्षत्रियोचित कर्म करने वाला होता है ॥ ६ ॥

चन्द्रात् सप्तमगः सूर्यो जन्मकाले यदा भवेत् ।
सुस्त्रीकः शुभशीलश्च राजमान्यो महातपाः ॥ ७ ॥

जन्म समय में चन्द्रमा से सप्तम स्थान में सूर्य हो तो उसकी स्त्री सुशीला, सुरूपा होती है, वह स्वयं भी सुशील और राजमान्य होता है ॥ ७ ॥

चन्द्रादष्टमगः सूर्यो जन्मकाले यदा भवेत् ।
सर्वदा क्लेशयुक्तोऽसौ बहुरोगैश्च पीडितः ॥ ८ ॥

चन्द्रमा से अष्टम घर में सूर्य बैठा हो तो वह मनुष्य सदा क्लेश करने वाला, अत्यन्त रोग से पीड़ित होता है ॥ ८ ॥

चन्द्रान्नवमभे सूर्यो जन्मकाले यदा भवेत् ।
धर्मात्मा सत्यवादी च बन्धुक्लेशी सदा भवेत् ॥ ९ ॥

चन्द्रमा से नवमस्थान में सूर्य हो तो जातक धर्मात्मा, सत्यवक्ता और बन्धु को क्लेश देने वाला होता है ॥ ९ ॥

चन्द्राद् दशमभे सूर्यो जन्मकाले यदा भवेत् ।
तस्य द्वारेषु तिष्ठन्ति धनिनो नात्र संशयः ॥ १० ॥

यदि चन्द्रमा से १०वें स्थान में सूर्य हो तो उस मनुष्य के द्वारपर धनी (व्यापारी) लोग सदा उपस्थित रहते हैं ॥ १० ॥

चन्द्रादेकादशे सूर्यो जन्मकाले यदा भवेत् ।
राजगर्व्यतिवेत्ता च प्रसिद्धः कुलनायकः ॥ ११ ॥

चन्द्रमा से ११वें भाव में सूर्य हो तो राजगौरव रखने वाला, वहुत विषय का ज्ञाता, लोक में ख्यात और कुल में श्रेष्ठ होता है ॥ ११ ॥

चन्द्राद् द्वादशभे सूर्यो जन्मकाले यदा भवेत् ।
एकनेत्रोऽल्पचक्षुर्वा तदा जातो भवेन्नरः ॥ १२ ॥

यदि चन्द्रमा से १२वें भाव में सूर्य हो तो जन्म लेनेवाला मनुष्य, काणा अथवा तेजहीन दृष्टि वाला होता है ॥ १२ ॥

चन्द्रमा से १२ भावगत भौम फल–

चन्द्रेण सहितो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
रक्ताक्षी रुधिरस्रावी रक्तवर्णो भवेन्नरः ॥ १ ॥

चन्द्रमा के साथ मङ्गल हो तो लाल नेत्र, रक्तस्राव (अर्श) रोग से युक्त और रक्तवर्ण होता है ॥ १ ॥

चन्द्राद् द्वितीयभे भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
धराधीशो भवेज्जातः कृषिकर्ता न संशयः ॥ २ ॥

चन्द्रमा से द्वितीय भाव में मङ्गल हो तो उस मनुष्य का लड़का भूमि का मालिक और खेती करने वाला होता है ॥ २ ॥

चन्द्रात् तृतीयभे भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
चतुर्भ्रातृसमायुक्तः सुशीलः सर्वदा सुखी ॥ ३ ॥

यदि चन्द्रमा से तृतीय भाव में मङ्गल हो तो ४ भाई से युक्त, सुशील और सुखी जीवन होता है ॥ ३ ॥

चन्द्राच्चतुर्थभे भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
सुखभङ्गो दरिद्रः स्यात्पुंसः स्त्री म्रियते ध्रुवम् ॥ ४ ॥

चन्द्र से चतुर्थ भाव में मङ्गल हो तो—सुखहीन, दरिद्र और उसके सामने ही उसकी स्त्री का मरण होता है ॥ ४ ॥

चन्द्रात्पञ्चमभे भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
पुत्रहीनो नरः स्त्रीणां लग्ने पतति निश्चितम् ॥ ५ ॥

चन्द्रमा से पञ्चम भावमें मङ्गल हो तो वह पुरुष पुत्रहीन होता है और यदि स्त्री के लग्न से ऐसा योग हो तो निश्चय सन्तानहीन होता है ॥ ५ ॥

चन्द्राच्च षष्ठभे भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
अधर्मे विमुखो वीरो रक्तरोगेण पीडितः ॥ ६ ॥

चन्द्र से षष्ठ स्थान में मङ्गल हो तो अधर्म को हटाने वाला और रक्तरोग से पीड़ित रहता है ॥ ६ ॥

चन्द्रात्सप्तमभे भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
कुशीला स्त्री भवेत्तस्य सदा चाऽप्रियवादिनी ॥ ७ ॥

सप्तम भाव में चन्द्र से मङ्गल हो तो उस मनुष्य की स्त्री दुःशीला और अप्रियवादिनी होती है ॥ ७ ॥

चन्द्रादष्टमभे भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
जीवहन्ता महापापी शीलसत्यविवर्जितः ॥ ८ ॥

चन्द्र से अष्टम भाव में मङ्गल हो तो जीवघाती (व्याधा), पापी, शीलहीन और सत्य से रहित होता है ॥ ८ ॥

चन्द्रान्नवमभे भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
लक्ष्मीवांश्च भवेत्पुत्रैर्वृद्धकाले न संशयः ॥ ९ ॥

चन्द्रमा से नवम भाव में मङ्गल हो तो लक्ष्मीवान् (सम्पत्तिशाली) तथा वृद्धावस्था में पुत्रों के द्वारा सुखी होता है ॥ ९ ॥

चन्द्राद् दशमभे भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
तस्य द्वारेषु तिष्ठन्ति गजाऽश्वाद्या न संशयः ॥ १० ॥

यदि चन्द्र से दशम भाव में मङ्गल हो तो उसके द्वारपर हाथी-घोड़े आदि वाहन रहते हैं, इसमें सन्देह नहीं ॥ १० ॥

चन्द्रादेकादशे भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
राजद्वारे प्रसिद्धः स्याद्यशोरूपसमन्वितः ॥ ११ ॥

चन्द्र से एकादश भाव में मङ्गल हो तो वह मनुष्य राजदरबार में प्रधान होता है और यश तथा रूप से युक्त होता है ॥ ११ ॥

चन्द्राद् द्वादशभे भौमो जन्मकाले यदा भवेत्।
मातुश्चाऽसुखकारी च सदा कष्टप्रदायकः ॥ १२ ॥

चन्द्रमा से द्वादशमें मङ्गल हो तो वह माता का अभक्त और सदा सबको कष्ट देनेवाला होता है ॥ १२ ॥

चन्द्रमा से १२ भावगत बुध फल—

चन्द्रेण सहितः सौम्यः सुखरूपसमन्वितः।
मृषाभाषी परद्वेषी भवेद् बन्धुजनप्रियः ॥ १ ॥

जन्मकाल में चन्द्रमा के साथ बुध हो तो सुख और रूप से युक्त, झूठ भाषण करनेवाला, दूसरों से द्वेष करने वाला किन्तु अपने कुटुम्बीजनों का प्रिय होता है ॥ १ ॥

चन्द्राद् द्वितीयभे सौम्ये धनधान्यसमाकुलः।
गृहबन्धुजनप्राप्तिः शीतरोगैर्विनश्यति ॥ २ ॥

चन्द्र से द्वितीय स्थानमें बुध हो तो जातक धन-धान्यादिसे युक्त, गृह और बन्धुजनों की प्राप्ति तथा शीत रोग से उसकी मृत्यु होती है ॥ २ ॥

चन्द्रात् सहजभे सौम्यः कुरुते चाऽर्थसम्पदः।
राज्यलाभो भवेत्तस्य महतां सङ्गमो ध्रुवम् ॥ ३ ॥

चन्द्र से तृतीय भाव में बुध हो तो धन-सम्पत्ति और राज्य का लाभ तथा महाजनों का सङ्ग होता है ॥ ३ ॥

चन्द्राच्चतुर्थभे सौम्यः सर्वदा सुखकारकः।
मातृपक्षे महालाभः सुखं जीवति मानवः ॥ ४ ॥

चन्द्र से चतुर्थ स्थान में बुध हो तो सदा (अपने दशान्तर्दशा में) सुखदायक, मातृकुल से विशेष लाभ और सुखपूर्वक जीवन बितानेवाला होता है ॥ ४ ॥

चन्द्रात्पञ्चमभे सौम्ये बुद्धिमांश्च विचक्षणः।
रूपवांश्च महाकामी कुवाक्यं धारयेन्नरः ॥ ५ ॥

चन्द्रमा से ५ वें स्थान में बुध हो तो जातक बुद्धिमान्, विलक्षण सूझ-बूझ वाला, सुन्दर, कामी और कटुवाक्य बोलनेवाला होता है ॥ ५ ॥

चन्द्रात्षष्ठगते सौम्ये कृपणः कातरो भवेत्।
विवादे च महाभीरू रोमशो दीर्घलोचनः ॥ ६ ॥

चन्द्र से षष्ठ स्थान में बुध हो तो कृपण, कातर, विवाद से डरनेवाला, अधिक रोम वाला और दीर्घनेत्री होता है ॥ ६ ॥

चन्द्रात्सप्तमभे सौम्ये स्त्रीणां च वशगो नरः ।
धनाढ्यः कृपणश्चैव दीर्घायुश्च भवेन्नरः ॥ ७ ॥

चन्द्र से सप्तम स्थान में बुध हो तो वह मनुष्य स्त्री के वश, कृपण, धनवान् और दीर्घायु होता है ॥ ७ ॥

चन्द्रादष्टमभे सौम्ये देहे शीतभयं भवेत् ।
राजमध्ये प्रसिद्धश्च शत्रूणां च भयङ्करः ॥ ८ ॥

चन्द्र से अष्टम स्थान में बुध हो तो वह मनुष्य शीत प्रकृति, राजाओं में विख्यात और शत्रुओं के लिये भयकारक होता है ॥ ८ ॥

चन्द्राद् धर्मगतः सौम्यः स्वधर्मस्य विरोधकः ।
अन्यधर्मरतो नृणां विरोधी दारुणो भवेत् ॥ ९ ॥

चन्द्र से नवम स्थान में बुधके होने से जातक अपने धर्म का विरोधी, अन्य धर्म को माननेवाला एवं बहुतों का विरोध करनेवाला होता है ॥९॥

चन्द्राद् दशमगे सौम्ये राजयोगी नरः सदा ।
कर्कराशौ यदा चन्द्रः कुटुम्बे नायको भवेत् ॥ १० ॥

चन्द्र से दशम स्थान में बुध हो तो उस मनुष्य को राजयोग होता है। यदि कर्कराशिमें चन्द्रमा हो तो अपने कुल में श्रेष्ठ होता है ॥ १० ॥

चन्द्राल्लाभगते सौम्ये लाभकारी पदे पदे ।
पत्नीपाणिग्रहादूर्ध्वं तस्य भाग्योदयो भवेत् ॥ ११ ॥

चन्द्रमा से ११ वें में बुध हो तो प्रत्येक कार्य में लाभप्रद होता है तथा उस मनुष्य का भाग्योदय विवाहोपरान्त होता है ॥ ११ ॥

चन्द्राद् द्वादशगे सौम्ये मानवः कृपणो भवेत् ।
तत्सुतस्य जयो नास्ति लभते च पराजयम् ॥ १२ ॥

चन्द्र से द्वादश स्थान में बुध हो तो वह मनुष्य कृपण होता है तथा उसकी सन्तान को भी विजय नहीं होती तथा सर्वत्र पराजय होती है ॥१२॥

चन्द्रमा से १२ भावों में गुरु फल-

चन्द्रेण सहिते जीवे दीर्घजीवी भवेन्नरः ।
व्याधिना रहितः शूरो निर्धनो न कदाचन ॥ १ ॥

जन्मकाल में चन्द्रमा के साथ गुरु हो तो वह दीर्घ जीवन वाला, रोग रहित, वीर तथा सदा धन से पूर्ण होता है ॥ १ ॥

चन्द्राद् द्वितीयभे जीवे राजमान्यः शतायुषः ।
अत्युग्रश्च प्रतापी च धर्मिष्ठः पापवर्जितः ॥ २ ॥

चन्द्र से दूसरे स्थान में गुरु हो तो राजाओं का मान्य, दीर्घायु, उग्र, महाप्रतापी, धर्मात्मा और पाप से रहित होता है ॥ २ ॥

चन्द्रात्तृतीयभे जीवे नराणां वल्लभो भवेत् ।
धनवृद्धिः पितुर्गेहे वर्षे सप्तदशे तथा ॥ ३ ॥

चन्द्र से तृतीय स्थान में गुरु हो तो वह पुरुषों का प्रिय होता है, उसके १७वें वर्ष में पिता की अत्यन्त आर्थिक वृद्धि होती है ॥ ३ ॥

चन्द्राच्चतुर्थभे जीवे नरः सुखविवर्जितः ।
मातृपक्षे महाकष्टो परेषां गृहकर्मकृत् ॥ ४ ॥

चन्द्र से चतुर्थ स्थान में गुरु हो तो सुख से हीन, माता के पक्ष में कष्ट एवं दूसरों का कार्य करने वाला होता है ॥ ४ ॥

चन्द्रात्पञ्चमभे जीवे दिव्यदृष्टिर्भवेन्नरः ।
तेजस्वी पुत्रवांश्चैव महोग्रश्च महाधनी ॥ ५ ॥

चन्द्र से पञ्चम स्थान में यदि गुरु हो तो दिव्य दृष्टिवाला और तेजस्वी होता है। अधिक पुत्रवाला तथा उग्र स्वभाव और महाधनी होता है ॥ ५ ॥

चन्द्राच्च षष्ठगे जीवे उदासी गृहवर्जितः ।
आयुर्बहु भवेत्पुंसां भिक्षावृत्त्या व्यवस्थितः ॥ ६ ॥

चन्द्रमा से षष्ठ स्थान में गुरु हो तो उदासीन, गृहहीन तथा दीर्घायु होने पर भी भिक्षा आदि नीच कर्म द्वारा जीवन-यापन करने वाला होता है ॥६॥

चन्द्रात्सप्तमभे जीवे बहुजीवी व्ययं विना ।
स्थूलदेही क्लीबपाण्डुर्गृहमध्ये च नायकः ॥ ७ ॥

चन्द्र से सप्तम भाव में गुरु हो तो दीर्घजीवी, मितव्ययी, स्थूल शरीर वाला, नपुंसक, पाण्डु रोगी और घर में मुखिया होता है ॥ ७ ॥

चन्द्राद‌ष्टमभे जीवे देहरोगी सदा नरः ।
सुतातोऽपि महाक्लेशी सुखं स्वप्ने न दृश्यते ॥ ८ ॥

चन्द्र से अष्टम स्थान में गुरु हो तो शरीर से रोगी, विचारवान्, पिता के होने पर भी वह क्लेशभागी तथा स्वप्न में भी सुखी नहीं होता है ॥८॥

चन्द्रान्नवमभे जीवे धर्मिष्ठो धनपूरितः ।
सुमार्गे सुगतश्चैव देवगुर्वोश्च सेवकः ॥ ९ ॥

चन्द्र से नवम स्थान में गुरु हो तो धर्मात्मा, धनवान्, सुमार्गगामी, देव और गुरुजनों का सेवक होता है ॥ ९ ॥

चन्द्राद् दशमभे जीवो जन्मकाले यदा भवेत् ।
पुत्र-दारपरित्यागी तपस्वी च भवेन्नरः ॥ १० ॥

चन्द्र से दशम स्थान में गुरु हो तो वह मनुष्य स्त्री-पुत्रको छोड़कर तपस्या करने वाला होता है ॥ १० ॥

चन्द्रादेकादशे जीवो जन्मकाले यदा भवेत् ।
वाहनादिसुखेनाढ्यो राजतुल्यो भवेन्नरः ॥ ११ ॥

चन्द्र से एकादश स्थान में गुरु हो तो वह घोड़ेकी सवारी करनेवाला, राजा के समान सुख भोगने वाला होता है ॥ ११ ॥

चन्द्राद् द्वादशभे जीवो जन्मकाले यदा भवेत् ।
स्वकुटुम्बविरोधी च सुखं शत्रोर्दिशेद् गृहे ॥ १२ ॥

चन्द्रमा से द्वादश स्थान में गुरु हो तो वह अपने कुटुम्बियों से विरोध करके शत्रुओं को सुख देनेवाला होता है ॥ १२ ॥

चन्द्रमा से १२ भावगत शुक्र फल

चन्द्रेण सहितः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत् ।
जले मृत्युर्भवेत्तस्य सन्निपातो हि हिंसया ॥ १ ॥

जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा से प्रथम स्थान (साथ) में शुक्र हो, तो उसकी मृत्यु जल या सन्निपात तथा हिंसा से होती है ॥ १ ॥

चन्द्राद् द्वितीयभे शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत् ।
महाधनी महाज्ञानी राजतुल्यो न संशयः ॥ २ ॥

चन्द्र से द्वितीय स्थान में शुक्र हो तो अत्यन्त धनी, महाज्ञानी और राजा के समान होता है, इसमें सन्देह नहीं ॥ २ ॥

चन्द्रात्सहजभे शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत् ।
धर्मिष्ठो बुद्धिमांश्चैव म्लेच्छतो लाभदायकः ॥ ३ ॥

चन्द्र से तृतीय स्थान में शुक्र हो तो वह धर्मात्मा, बुद्धिमान् तथा म्लेच्छ जातियों से धनलाभ करने वाला होता है ॥ ३ ॥

चन्द्राच्चतुर्थगः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
कफाधिको महाक्षामो वार्द्धक्ये धनपूरितः ॥ ४ ॥

चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान में शुक्र हो तो जातक कफ प्रकृति, दुर्बल देह तथा वृद्धावस्था में धन से पूर्ण होता है ॥ ४ ॥

चन्द्रात्पञ्चमगः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
बहुकन्याप्रजावान् स धनाढ्योऽप्ययशोऽन्वितः ॥ ५ ॥

चन्द्र से पञ्चम स्थान में शुक्र हो तो बहुत कन्या वाला, धनवान् होने पर भी लोक में अपयश पाने वाला होता है ॥ ५ ॥

चन्द्रात् षष्ठगृहे शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
दुर्व्ययी भयकारी च सङ्ग्रामे च पराजितः ॥ ६ ॥

चन्द्र से षष्ठ स्थान में शुक्र हो तो निन्दित कार्य में खर्च करने वाला और भयङ्कर तथा युद्ध में पराजित होता है ॥ ६ ॥

चन्द्रात् सप्तमभे शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
प्रसिद्धो हि महायोद्धा दाता भोक्ता महाधनी ॥ ७ ॥

चन्द्र से सप्तम स्थान में शुक्र हो तो वह मनुष्य लोक में प्रसिद्ध, महायोद्धा, दानी, भोगी और अधिक धनवान् होता है ॥ ७ ॥

चन्द्रादष्टमभे शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
पुरुषार्थविहीनोऽसौ शङ्कितश्च पदे पदे ॥ ८ ॥

चन्द्र से अष्टम स्थान में शुक्र हो तो वह मनुष्य, पुरुषार्थ हीन और पद-पद में शङ्का करने वाला होता है ॥ ८ ॥

चन्द्राद्धर्मगतः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
बहुभ्राता तथा मित्रभगिनीबहुलो भवेत् ॥ ९ ॥

चन्द्र से नवम स्थान में शुक्र हो तो बहुत भाई, बहुत मित्र और बहुत बहिन वाला होता है ॥ ९ ॥

चन्द्राद् दशमभे शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
मातापित्रोः सुखप्राप्तिर्जीवितं तु बृहद्भवेत् ॥ १० ॥

चन्द्र से दशम स्थान में शुक्र हो तो उस मनुष्य को माता और पिता से सुख तथा दीर्घआयु होता है ॥ १० ॥

चन्द्रादेकादशे शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
बह्वायुश्च भवेत् तस्य रिपुरोगविवर्जितः ॥ ११ ॥

चन्द्र से एकादश स्थान में शुक्र हो तो वह मनुष्य दीर्घायु और शत्रु तथा रोग से वर्जित होता है ॥ ११ ॥

चन्द्रात् द्वादशभे शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत् ।
परदाररतो नित्यं लम्पटो ज्ञानहीनकः ॥ १२ ॥

यदि चन्द्रमा से द्वादश स्थान में शुक्र हो तो वह मनुष्य परस्त्रीगामी, लम्पट और ज्ञानहीन होता है ॥ १२ ॥

चन्द्रमा से १२ भावगत शनि फल–

चन्द्रेण सहितो मन्दो जन्मकाले यदा भवेत् ।
रोगयुक्तोऽर्थहीनश्च बन्धुहीनोऽथवा भवेत् ॥ १ ॥

जिसके जन्म के समय में चन्द्रमा से प्रथम स्थान (साथ) में शनि हो तो जातक रोगयुक्त, धनहीन अथवा बन्धुहीन होता है ॥ १ ॥

चन्द्राद् द्वितीयभे मन्दो जन्मकाले यदा भवेत् ।
मातुश्च कष्टकारी च अजाक्षीरेण जीवति ॥ २ ॥

यदि चन्द्र से द्वितीय स्थान में शनि हो तो उसकी माता को कष्ट होता है, और वह बकरी के दूध से पाला जाता है ॥ २ ॥

चन्द्रात्सहजगो मन्दो जन्मकाले यदा भवेत् ।
बहुकन्या भवेत्तस्य उत्पद्य म्रियते ध्रुवम् ॥ ३ ॥

यदि चन्द्र से तृतीय स्थान में शनि हो तो उस मनुष्य को अधिक कन्या होकर मर जाती हैं ॥ ३ ॥

चन्द्राच्चतुर्थगो मन्दो जन्मकाले यदा भवेत् ।
महापौरुषकारी च शत्रुहन्ता न संशयः ॥ ४ ॥

चन्द्र से चतुर्थ स्थान में शनि हो तो वह महापुरुषार्थी और शत्रुओं को जीतने वाला होता है ॥ ४ ॥

चन्द्रात्पञ्चमगो मन्दो जन्मकाले यदा भवेत् ।
नारी श्यामलवर्णाऽस्य तथा च प्रियवादिनी ॥ ५ ॥

चन्द्र से पञ्चम स्थान में शनि हो तो उस मनुष्य की स्त्री श्याम वर्ण और प्रियवादिनी होती है ॥ ५ ॥

चन्द्रात् षष्ठगृहे मन्दो जन्मकाले यदा भवेत् ।
महाक्लेशी च कष्टी च आयुर्हीनो भवेन्नरः ॥ ६ ॥

चन्द्र से षष्ठ स्थान में शनि हो तो वह क्लेशभागी, कष्टयुक्त और अल्पायु होता है ॥ ६ ॥

चन्द्रात् सप्तमराशिस्थो यदा स्याद् रविनन्दनः।
महाधर्मी च दाता च बहुस्त्रीणां करग्रहः ॥ ७ ॥

चन्द्र से सप्तम स्थान में शनि हो तो धर्म करने वाला, दाता और बहुत स्त्री से विवाह करने वाला होता है ॥ ७ ॥

चन्द्रादष्टमगो मन्दो जन्मकाले यदा भवेत्।
पितुश्च कष्टकारी च बहुदाने शुभं भवेत् ॥ ८ ॥

चन्द्र से अष्टम स्थान में शनि हो तो पिता को कष्ट देनेवाला होता है और बहुत दान करने से उसका कल्याण होता है ॥ ८ ॥

चन्द्रान्नवमो मन्दो जन्मकाले यदा भवेत्।
तदा तस्य दशाकाले धर्महानिः प्रजायते ॥ ९ ॥

चन्द्रमा से नवम स्थान में शनि हो तो शनि की दशा-अन्तर्दशा आदि आने पर उस मनुष्य के धर्म की हानि होती है ॥ ९ ॥

चन्द्राद् दशमगो मन्दो जन्मकाले भवेद्यदि।
नृपतुल्यो भवेद् देही कृपणो धनपूरितः ॥ १० ॥

चन्द्र से दशम स्थान में शनि हो तो राजा के तुल्य धनवान् होकर भी कृपण होता है ॥ १० ॥

चन्द्रादेकादशे मन्दो जन्मकाले भवेद्यदि।
तदा पशुधनैर्युक्तो दीर्घायुश्च सुखी नरः ॥ ११ ॥

चन्द्र से एकादश स्थान में शनि हो तो जातक पशु-धन से युक्त, दीर्घायु और सुखी रहने वाला होता है ॥ ११ ॥

चन्द्राद् द्वादशभे मन्दो जन्मकाले यदा भवेत्।
निर्धनो भिक्षुकश्चैव धर्मेणाऽपि विवर्जितः ॥ १२ ॥

चन्द्रमा से द्वादश स्थान में शनि हो तो धनहीन, भीख माँगकर खाने वाला और पापी होता है ॥ १२ ॥

चन्द्रमा से १२ भावगत राहु फल—

प्रथमे दशमे धर्मे चन्द्राद्यदि भवेत्तमः।
बाल्यकाले सुखी स स्याद् वृद्धकाले महाधनी ॥ १ ॥

चन्द्रमा से प्रथम, दशम और नवम स्थान में राहु हो तो बाल्य और यौवन अवस्था में सुखी तथा वृद्धावस्था में पूर्ण धनी होता है ॥ १ ॥

तृतीयैकादशे षष्ठे राहुश्चन्द्राद् भवेद् यदि ।
स राजा राजमन्त्री वा धनधान्यसमाकुलः ॥ २ ॥

यदि चन्द्रमा से ३, ६ या ११ वें स्थान में राहु हो तो राजा या राजमन्त्री तथा धन-धान्य से परिपूर्ण होता है ॥ २ ॥

चतुर्थे सप्तमे राहुश्चन्द्रतो यदि जायते ।
माता पिता तथा नारी तस्य कष्टेन संयुता ॥ ३ ॥

चन्द्रमा से ४ या ७ में राहु हो तो माता, पिता एवं पत्नी को कष्ट होता है ॥ ३ ॥

धने व्ययेऽष्टमे स्थाने चन्द्राद्राहुः यदा भवेत् ।
धनमानवसंयुक्तः सुखं स्वप्ने न दृश्यते ॥ ४ ॥

चन्द्रमा से २, ८, १२ में राहु हो तो धन और जन से युक्त होकर भी मनुष्य कभी सुख नहीं कर पाता ॥ ४ ॥

पञ्चमे च यदा राहुश्चन्द्राज्जलजसम्भवम् ।
निधनं चापि संसिद्धमापदश्च पदे पदे ॥ ५ ॥

चन्द्रमा से पञ्चम स्थान में राहु हो तो जल से मरने का भय और पद-पद में आपत्ति होती है ॥ ५ ॥

विशेष—राहु और केतु दोनों तमोग्रह हैं, अतः दोनों के फल समान ही समझना चाहिए। जैमिनि आदि के मत से भी दोनों का एक समान ही फल कहा है। क्योंकि दोनों एक ही से दो हुए हैं।

चन्द्रकृत निर्याण विचार-

अश्विनी-भरणी-कृत्तिकापादे मेषराशिः । भौमक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम्—प्रथमे पादे राज्यवान् १, द्वितीये धनवान् २, तृतीये विद्यावान् ३, चतुर्थे देवगुरुभक्तः ४, पञ्चमे चौरः ५, षष्ठे कालभाषाहीनः ६, सप्तमे योगीन्द्रः ७, अष्टमे निर्धनः ८, नवमे शुभलक्षणः ९ । मासे १ कष्टम्, १, १२ वर्षयोः जलघातोऽल्पमृत्युश्च । घातः वर्षे १८, अङ्गरोगः वर्षे ६४, चौरलोहपीडा वर्षे ५० उपघातश्च । यदा शुभग्रहं निरीक्षते तदा जीवति, वर्ष ७५, मास २,

घटी १५, पल १५ पर्यन्तं कार्तिकमासे, चतुर्थ्यां तिथौ, मङ्गलवारे, भरणीनक्षत्रे देहं त्यजति ॥ १ ॥

इसके आगे अब चन्द्रकृत निर्याण विचार लिखते हैं। प्रत्येक राशि में ९ चरण (या ९ नवमांश) होते हैं। उन चरणों के अनुसार पृथक्-पृथक् फल तथा राशि के अनुसार आयुर्दाय कहा है। तथा मेषराश्यायुर्दाय–

अश्विनी के ४ चरण, भरणी के ४ चरण और कृत्तिका का १ चरण इस प्रकार ९ चरण का मेष राशि मङ्गल का गृह है। मेष राशि के प्रथम चरण में जन्म हो तो राजा, द्वितीय में धनी, तृतीय में विद्वान्, चतुर्थ में गुरु भक्त, पञ्चम में चोर, षष्ठ में कालभाषाहीन, सप्तम में योगीन्द्र, अष्टम में निर्धन, नवम में शुभ लक्षण से युक्त होता है।

मेषराशिमें जन्म लेनेवालेको प्रथममास में कष्ट, १, १३ वर्षमें मरणतुल्य कष्ट, जलमें डूबने का भय, १८ वर्षमें आघात, ६४ वर्ष में रोग भय, ५० वर्ष में चोर, लोहसे पीड़ा और उपघात। यदि चन्द्रमा पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो वह ७५ वर्ष, २ मास, १५ घटी, १५ पल जीता है। कार्तिक मास, चतुर्थी तिथि, मङ्गलवार और भरणी नक्षत्र में देह त्यागता है ॥ १ ॥

वृषराशिविचार–

कृत्तिकायास्त्रयः पादा रोहिणी-मृगशिरोऽर्द्धं वृषराशिः। शुक्रक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम्—प्रथमे यशस्वी १, सुतवान् २, शूरः ३, शुभलक्षणः ४, विद्यावान् ५, सौभाग्यवान् ६, कुलमण्डनः ७, धन-धान्यसमर्थः ८, परदारचोरः ९। वर्षेषु—३, ६, ८, ३३, ४६, ५२, ६३ एषु अग्नि-लोह-साण्ड-सर्पकष्ट-देवदोषघाता एते अल्पमृत्यवो यदा व्यतिक्रामन्ति, तदा वर्षे ८५, मासे ६, दिने ७, माघमासे, शुक्लपक्षे, तिथौ ९, शुक्रदिने, रोहिणीनक्षत्रे, अर्धरात्रे देहं त्यजति ॥ २ ॥

कृत्तिका के ३, रोहिणी के ४ और मृगशिरा के २ चरण मिलकर वृष राशि होती है। वह शुक्र का गृह है। उसके प्रथम चरण में जन्म हो तो यशस्वी, २ में पुत्रवान्, ३ में वीर, ४ में शुभ लक्षण वाला, ५ में विद्वान्, ६ में सौभाग्यवान्, ७ में कुलभूषण, ८ में धन-धान्योपार्जक, ९ वें चरण में जन्म हो तो परस्त्रीगामी होता है।

वृष राशि वाले को ३।६।८।३३।४६।५२।६३ वर्ष में अग्नि, लोह, साँड़, सर्प, रोग–देवता के कोप से घात भय होता है। इन सब से बचनेपर तो

८५ वर्ष, ६ मास, ७ दिन तक जी सकेगा। तथा माघ मास, शुक्लपक्ष, ९ तिथि, शुक्रवार और रोहिणी नक्षत्र एवं अर्धरात्रि समय में मरण होता है॥ २॥

निथुनराशिविचार–

मृगशिरोऽर्द्धं आर्द्रा—पुनर्वसुपादत्रयं मिथुनराशिः। बुधक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम्—प्रथमे भाग्यवान् १, निर्धनः २, कुत्सितभाषी ३, धनेश्वरः ४, भाग्यवान् ५, धनधान्यभोगी ६, चौरः ७, महात्मसिद्धः ८, देवगुरुमाननीकः ९। कष्टमासाः ६, वर्षे ६ अङ्गरोगः, वर्षे १० चक्षुष्पीडा, ११, १८ वर्षयोः घातः, २४, ५३, ६३ वर्षेषु अल्पमृत्युः। यदा शुभग्रहनिरीक्षितो भवति तदा जीवति, वर्षे ८५, पौषमासे, कृष्णपक्षे, अष्टमीतिथौ, दिने बुधवारे, हस्तनक्षत्रे, प्रथमप्रहरे देहं त्यजति॥ ३॥

मृगशिरा के २, आर्द्रा के ४, पुनर्वसु के ३ चरण मिलकर मिथुन राशि होती है। वह बुधका गृह है। उसके प्रथम पाद में जन्म हो तो भाग्यवान्, २ में निर्धन, ३ में कटुभाषी, ४ में धनवान्, ५ में भाग्यवान्, ६ में धन-धान्य भोगी, ७ में चोर, ८ में महात्मा, ९ में देव और गुरुका भक्त होता है।

६ मास में कष्ट, ६ वर्ष में रोग, १० वर्ष में नेत्रपीडा, ११, १८ वर्ष में आघात, २४, ५३, ६३ वर्ष में मरणतुल्य कष्ट, यदि शुभग्रह की दृष्टि चन्द्रमापर हो तो ८५ वर्ष तक जीता है। पौष मास, कृष्णपक्ष, ८ तिथि, बुधवार, हस्त नक्षत्र और प्रथम पहर में देह का त्याग होता है॥ ३॥

कर्कराशिविचार–

पुनर्वसुपादमेकं पुष्य-आश्लेषान्तं कर्कराशिः। चन्द्रक्षेत्रे प्रथमे धनवान् १, महीपतिः २, मुनीश्वरः ३, विद्यावान् ४, धर्मवान् ५, चौरः ६, निर्धनः ७, देशपतिः ८, कुलमण्डनः ९। अल्पमृत्युदिनम्—११, कष्ट-मासम् ९, वर्षे १ रोगः, वर्षे ७ जलघातः, वर्षे ९ अङ्ग-रोगः, वर्षे १२ जलवातः, वर्षे १६ अङ्गरोगः, वर्षे २० लोहघातः, वर्षयोः २७, ३५ अल्पमृत्युदोषः। वर्षे ४५ देवदोषः, वर्षयोः ५५, ६१ अल्पमृत्युः, राजकष्टम्, असाध्यरोगः, अग्नि-सर्प-जल-वृष-व्याघ्र-घाताः। यदा शुभग्रहनिरीक्षितस्तदा वर्षे ७०, मासे ५, दिने ३,

फाल्गुनमासे, शुक्लपक्षे, ४ तिथौ, प्रहरे गोधूलिकवेलायां देहं त्यजति ॥ ४ ॥

पुनर्वसु के १ चरण, पुष्य के ४ और आश्लेषा के ४ चरण मिलकर कर्क राशि होती है । चन्द्रमा का गृह है । कर्क के १ चरण में धनी, २ में राजा, ३ में मुनियों में श्रेष्ठ, ४ में विद्यावान्, ५ में धर्मात्मा, ६ में चोर, ७ में निर्धन, ८ में देश में पूज्य, ९ में कुलभूषण होता है ।

कर्क राशि वालों को–जन्म से ११ वें दिन में मृत्युभय, ९ वें मास में कष्ट, १ वर्ष में रोग, ७ में जलाघात, ९ में शरीर रोग, १२ में जलाघात, १६ में अङ्गरोग, २० में लोहघात, २७, ३५ में अल्पमृत्यु, ४५ में देवदोष, ५५, ६१ में अल्पमृत्यु, राजदण्ड, कठिन रोग, अग्नि, सर्प, जल, बैल, बाघ आदि से आघात । चन्द्रमा पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो ७० वर्ष, ५ मास, ३ दिन तक जीता है । फाल्गुन शुक्ल, ४ तिथि, गोधूलि समय में देह त्याग करता है ॥ ४ ॥

सिंहराशिविचार--

मघा च पूर्वाफाल्गुनी-उत्तराफाल्गुनीपादे सिंहराशिः । सूर्यक्षेत्रे जन्मतः प्रथमे राजमान्यः १, धनेश्वरः २, तीर्थवासी ३, पुत्रवान् ४, स्वपक्षहीनः ५, मातापितृतारकः ६, राजमान्यः ७, धनधान्य-समर्थः ८, निर्धनः ९ । चोरिमासः ८, तथा वर्षे १ कष्टम्, १०, १५, वर्षयोरङ्गरोगः, २५, ४५ वर्षयोः देवदोषसन्निपातश्च, १५, ६१ वर्षयोः घातः । शुभनिरीक्षितश्चेत्—अल्पमृत्युर्यदा व्यतिक्रामति तदा जीवति, वर्षे ६५, श्रावणमासे, शुक्लपक्षे, १० तिथौ, ज्येष्ठानक्षत्रे, रविवारे, प्रथमप्रहरे देहं त्यजति ॥ ५ ॥

मघा के ४, पूर्वा फा० के ४, उत्तरा फा० के १ चरण मिलकर सिंहराशि होती है । वह सूर्य का गृह है । सिंह के १ चरण में जन्म हो तो राजमान्य, २ में धनवान्, ३ में तीर्थवासी, ४ में पुत्रवान्, ५ में स्वपक्षजनहीन, ६ में माता-पिता का भक्त, ७ में राजमान्य, ८ में धनी, ९ में निर्धन होता है ।

८ मास में चोरभय, १ वर्ष में कष्ट, १०, १५ में रोग, २४, २५ में देवदोष, सन्निपातभय, ५१, ६१ में आघात । शुभग्रह से दृष्ट चन्द्रमा हो तो अल्पमृत्यु को अतिक्रमण कर ६५ वर्ष पर्यन्त जीता है । श्रावण मास, शुक्ल-पक्ष, १० तिथि, ज्येष्ठा नक्षत्र, रविवार, प्रथम प्रहर में मरण होता है ॥५॥

कन्याराशिविचार--

उत्तरायास्त्रयः पादा हस्तः चित्राऽर्द्धं कन्याराशिः। बुधक्षेत्रे जन्मतः प्रथमे निर्धनः १, पुत्रहीनः २, शत्रुमारकः ३, धनवान् ४, भोगी ५, पुत्रवान् ६, राजमान्यः ७, सर्वसमर्थः ८, पराक्रमी, माता-पितृ-गुरुभक्तश्च ९, मासे ३, वर्षे ३ अङ्गरोगः, १, १३ वर्षयोः चक्षुष्पीडा जलघातश्च, वर्षे २६ अङ्गरोगो देवपीडा च, वर्षे ३३ लोहघातः, वर्षे ४३ अङ्गरोगः एतानि वर्षाणि अल्पमृत्युः। यदा शुभग्रह-निरीक्षितो भवति तदा जीवति। वर्षे ८४, भाद्रपदमासे, शुक्लपक्षे, ९ तिथौ, बुधवारे, मूलनक्षत्रे, गोधूलिकवेलायां देहं त्यजति ॥ ६ ॥

उत्तरा फाल्गुनी के ३ चरण, हस्त के ४, २ चरण चित्रा के मिलकर कन्या राशि होती है। बुध के क्षेत्र में होने से उसके प्रथम चरण में धनहीन, २ में पुत्रहीन, ३ में शत्रुहन्ता, ४ में धनवान्, ५ में भोगी, ६ में पुत्रवान्, ७ में राजमान्य, ८ में सर्वकार्यकुशल, ९ में पराक्रमी और माता-पिता-गुरु का भक्त होता है।

३ मास, ३ वर्ष में रोगभय, १, १३ वर्ष में नेत्रपीड़ा, जल मज्जन, २६ वर्ष में शरीर रोग, ३३ वर्ष में लोहघात, ४३ वर्ष में अङ्गरोग ये अल्पमृत्यु के वर्ष हैं। यदि चन्द्रमा पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो ८४ वर्ष जीता है। भाद्र शुक्ल ९, बुध, मूल नक्षत्र में, गोधूलि के समय में शरीर त्याग करता है ॥६॥

तुलाराशिविचार-

चित्राऽर्द्धं स्वाती-विशाखापादत्रयं तुलाराशिः। शुक्रक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम्—प्रथमे धनभोगी १, धनेश्वरः २, निर्धनः ३, भार्याहीनः ४, ज्ञातकर्मा ५, परदारचौरः ६, मातापितृतारकः ७, राजमान्यः ८, भाग्यवान् ९। मासे ४ कष्टम्, मासे १६ अङ्गरोगः, वर्षे ४ कष्टम्, वर्षे १६ जलघातः, १२, ३३ वर्षयो-रङ्गरोगः, ४१ वर्षेऽङ्गवृद्धिः, वर्षे ५१ देवदोषः, वर्षे ६१ अल्पमृत्युः। यदा शुभग्रहनिरिक्षितो भवति तदा जीवति। वर्षे ८५, वैशाखमासे, शुक्लपक्षे, तिथौ १३, शुक्रवारे, चित्रानक्षत्रे, मध्याह्नवेलायां देहं त्यजति ॥ ७ ॥

चित्रा के २ चरण, स्वाती के ४, विशाखा के ३ चरण मिलकर तुला-राशि होती है। शुक्र का घर है। प्रथम चरण में जन्म हो तो धन भोगने वाला, २ में धनेश्वर, ३ में निर्धन, ४ में गूँगा, ५ में कर्मज्ञ, ६ में परस्त्रीगामी, ७ में माता-पिता का भक्त, ८ में राजमान्य, ९ में भाग्यवान् होता है।

४, १६ मासों में कष्ट रोग। ४, १६ वर्ष में जलाघात। २१, ३३ वर्ष में शरीर में रोगभय। ४१ में अङ्गवृद्धि। ५१ में देवदोष, ६१ में अल्प-मृत्यु। यदि चन्द्रमा पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो अल्पमृत्यु से बचकर ८५ वर्ष जीता है। वैशाख शुक्ल पक्ष, १३ तिथि, शुक्रवार, चित्रा नक्षत्र, मध्याह्न समय में देह त्याग करता है॥ ७॥

वृश्चिकराशिविचार--

विशाखापादमेकमनुराधाज्येष्ठान्तं वृश्चिकराशिः। भौमक्षेत्रे ज०। प्रथमे धनेश्वरः १, यशवान् २, आगमवान् ३, महान्तिकः ४, कुलमण्डनः ५, धनधान्यसमर्थः ६, विद्यावान् ७, राजमान्यः ८, यशस्वी ९। मासे २ कष्टम्, वर्षे ७ अङ्गरोगः, वर्षे ८ जलघातः, वर्षे ११ वृक्षघातः, वर्षयोः ३२, ३५ अङ्गरोगो लोहघातश्च, वर्षे ४५ अङ्गरोगः, वर्षे ६३ अल्पमृत्युः। यदा शुभग्रहनिरीक्षितस्तदा जीवति। वर्षे ७५, मासे २, दिने ७, ज्येष्ठमासे, कृष्णपक्षे, तिथौ ११, मंगलवारे, रेवतीनक्षत्रे, प्रथमप्रहरे देहं त्यजति॥ ८॥

विशाखा का १ चरण, अनुराधा के ४, ज्येष्ठा के ४ चरण मिलकर वृश्चिक राशि होती है। भौम का घर है। १ चरण में धनवान्, २ में यशस्वी, ३ में आगम ज्ञाता, ४ में महान्तिक, ५ में कुलमण्डन, ६ में धन-धान्योपार्जक, ७ में विद्यावान्, ८ में राजमान्य, ९ में यशस्वी होता है।

२ मास में कष्ट, ७ वर्ष में रोग, ८ वर्ष में जलाघात, ११ में वृक्षाघात, ३२, ३५ में रोग, लोहघात, ४५ में अङ्गरोग, ६३ में अल्पमृत्यु। यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो--७५ वर्ष, २ मास, ७ दिन जीता है। ज्येष्ठ कृष्ण ११, मंगल, रेवती नक्षत्र के प्रथम प्रहर में देह त्याग करता है॥ ८॥

धनुराशिविचार--

मूलं च पूर्वाषाढा—उत्तराषाढापादे धनुराशिः। गुरुक्षेत्रे ज०। प्रथमे ज्ञानवान् १, निर्धनः २, नीचकर्मकारकः ३, राजमान्यः ४, क्रोधी ५, पुत्रवान् ६, कामलम्पटः ७, धनेश्वरः ८, रुधिरविकारी

९। मासे ५, वर्षे ३ कष्टम्, वर्षे ९ अङ्गरोगः, वर्षे ११ चक्षुष्पीडा वर्षे १६ जलघातः, २४, ३६ वर्षयोः-अङ्गरोगः, वर्षे ४७, ५७, ६७ सर्पजलघातः, अल्पमृत्युः। यदा शुभग्रहनिरीक्षितस्तदा जीवति। वर्षे ८५, आषाढमासे, शुक्लपक्षे, तिथौ १, गुरुवारे, पुष्य-नक्षत्रे, गोधूलिवेलायां देहं त्यजति ॥ ९ ॥

मूल के ४ चरण, पू० षा० के ४, उ० षा० के १ चरण मिलकर धनुराशि, गुरु का गृह है। धनु के १ चरण में जन्म होतो ज्ञानी, २ में निर्धन, ३ में नीच कर्म कर्त्ता, ४ में राजमान्य, ५ में क्रोधी, ६ में पुत्रवान्, ७ में कामी, ८ में धनवान्, ९ में रक्तविकार युक्त होता है।

धनु राशि में जन्म लेनेवाले को ५ मास, ३ वर्ष, ६ वर्ष में कष्ट, रोगभय, ११ में नेत्रपीड़ा, १६ में जलाघात, २४, ३६ में अङ्गरोग एवं ४७, ५७, ६७ वर्ष में सर्प, जलभय से अल्पमृत्यु। यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो ८५ वर्ष तक जीता है। आषाढ़ शुक्ल, तिथि १, गुरुवार, पुष्यनक्षत्र, गोधूलि समय में शरीर त्याग करता है ॥ ९ ॥

मकरराशिविचार—

उत्तरायास्त्रयः पादाः श्रवणर्धनिष्ठाऽर्द्धं मकरराशिः। शनिक्षेत्रे ज०। प्रथमे अङ्गहीनः १, गुरुभक्तः २, परदाररतः ३, शुभलक्षणः ४, देवांशः ५, पुत्रवान् ६, उत्तमः ७, महीपतिः ८, उभयपक्षतारकः, धनेश्वरश्च ९। मासे ३ कष्टम्, मासे १ देवदोषपीडा, वर्षे ३ अङ्गरोगः, वर्षे ५, ७ देवदोषः, वर्षे १० अङ्गरोगः, अग्निपीडा च, वर्षे ३२ लोहघातः, वर्षे ३३ कष्टम्, वर्षे ४३ तथा ५१ अल्पमृत्युः। यदा शुभग्रहनिरीक्षितो भवति तदा जीवति, वर्षे ६१, कार्तिके मासे देवदोषः। अनन्तरम्—अल्पमृत्युर्यदा व्यतिक्रामति तदा जीवति, वर्षे ८१, कार्तिकशुक्लपक्षे, तिथौ ५, शुक्रवारे, श्रवणनक्षत्रे देहं त्यजति ॥ १० ॥

उ० षा० के ३, श्रवण के ४, धनिष्ठा के २ चरण मिलकर मकरराशि, शनि का गृह है। मकर के १ चरण में अङ्गहीन, २ में गुरुभक्त, ३ में परस्त्रीगामी, ४ में शुभलक्षण, ५ में देवांश, ६ में पुत्रवान्, ७ में उत्तम, ८ में पृथ्वीपति, ९ में उभयकुलतारक और धनी होता है।

कष्ट समय--१, ३ मास, ३, ५, ७, १०, ३२, ३३, ४३, ५१ वर्ष। यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो ६१ वर्ष में देवदोष से अल्पमृत्यु हो सकती है। उसके बाद ८१ वर्ष जीता है। कार्तिक शुक्ल ५, शुक्र, श्रवण नक्षत्र में देहत्याग करता है ॥ १० ॥

कुम्भराशिविचार–

धनिष्ठाऽर्द्धं शततारकाः पूर्वाभाद्रपदात्रयं कुम्भराशिः। शनिक्षेत्रे ज०। प्रथमे मध्यमः १, श्रीमान् २, कष्टी, भाषाहीनश्च ३, पुत्रवान् ४, राजमान्यः ५, पापकर्महीनः ६, योगीन्द्रः ७, अङ्गहीनः ८, शुभलक्षणः ९। तथा दिनकष्टम्—दिने ७, वर्षयोः १८, ३२ अल्पमृत्युः। शुभग्रहनिरीक्षितो भवति तदा जीवति, वर्षे ६१, माघमासे, शुक्लपक्षे, तिथौ २, गुरुवासरे, उत्तराभाद्रपदानक्षत्रे मृत्युर्भवति ॥ ११ ॥

धनिष्ठा के २ चरण, शतभिषा के ४, पू० भा० के ३ चरण मिलकर कुम्भ राशि, शनि का घर है। कुम्भ के १ चरण में मध्यम, २ में श्रीमान्, ३ में कष्टी, गूँगा, ४ में पुत्रवान्, ५ में राजमान्य, ६ में धर्मात्मा, ७ में योगीन्द्र, ८ में अङ्गहीन, ९ में शुभ लक्षण होता है।

कष्ट समय--७ दिन, १८, ३२ वें वर्ष में अल्पमृत्यु। यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो ६१ वर्ष जीता है। माघ शुक्ल २, बृहस्पतिवार, उत्तरा भाद्रपदा नक्षत्र में देह त्याग करता है ॥ ११ ॥

मीनराशिविचार--

पूर्वाभाद्रपदमेकम्—उत्तराभाद्रपदरेवत्यन्तं मीनराशिः। जीवक्षेत्रे ज०। प्रथमे धनवान् १, कालहीनः २, लम्पटः ३, धनवान् ४, चौरः ५, कपटी ६, निर्धनः ७, भाग्यवान् ८, नवमेऽक्लेशः ९। वर्षयोः १८, ३३ कष्टम्। शुभग्रहनिरीक्षितस्तदा जीवति, वर्षे ६१, माघमासे, शुक्लपक्षे, तिथौ १२, गुरुवारे, पुनर्वसु-नक्षत्रे, प्रातःकाले देहं त्यजति ॥ १२ ॥

पू० भा० का चतुर्थ चरण, उ० भा० के ४, रेवती के ४ चरण मिलकर मीन राशि, गुरु का गृह है। मीन के १ चरण में जन्म हो तो धनवान्, २ में कालज्ञानहीन, ३ में लम्पट, ४ में धनवान्, ५ में चोर, ६ में कपटी, ७ में निर्धन, ८ में भाग्यवान्, ९ में क्लेशहीन होता है।

कष्टसमय—१८, ३३ वर्ष। चन्द्रराशि पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो ६१ वर्ष जीता है। माघ शुक्ल १२, गुरुवार, पुनर्वसु नक्षत्र, प्रातः समय में देह त्याग करता है ॥ १२ ॥

राशिध्रुवाङ्का-

प्रकारान्तर से राशि ध्रुवाङ्कवश आयुर्दाय--

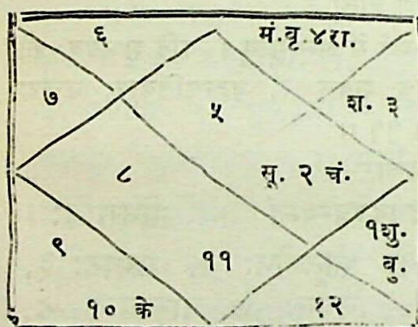
दिक् (१०), काल (६), नख (२०), बाणे (५), भ (८), दृङ् (२), नखाः (२०), समयो (६), दिशः (१०)। मनवो (१४), राम (३), वेदा (४) श्च मेषाद्यष्टोत्तरं शतम् ॥ १ ॥

जन्मपत्र्यां यत्र स्थाने ग्रहो भवति तत्र तेषां लग्नानां ध्रुवाङ्काः सम्मेल्य तदेवाऽऽयुर्ज्ञेयम् ॥ १ ॥

१०, ६, २०, ५, ८, २, २०, ६, १०, १४, ३, ४ ये क्रम से मेषादि राशियों के ध्रुवाङ्क हैं। रव्यादि ग्रह जिस राशि में हों उन सब ध्रुवाङ्कों को जोड़ने से जातक का आयुर्दाय होता है ॥ १ ॥

इति श्रीमानसागरीजन्मपत्रपद्धतौ पञ्चाङ्गफलानयनं नाम प्रथमोऽध्यायः।

उदाहरण



रवि का ध्रुवाङ्क ६, चं. का ६, मं. का ५, बुध का १०, गुरु का ५, शुक्र का १० और शनि का २० इन सातों का योग = ६२ वर्ष आयु हुई। इनमें राहु केतु के ध्रुवाङ्क (५+१४=१९) जोड़ने से ८१ वर्ष आयु होती है।

ज्ञातव्य--इस प्रकार जो आयुर्दाय कहे गये हैं, ये मध्यम मान से समझना चाहिए। वास्तव में भिन्न-भिन्न आचार्यों ने अपने-अपने मन से जो भिन्न-भिन्न आयुर्दाय कहे हैं वह ग्रहों के दशा विभाग हैं। परञ्च बहुत से तत्त्वानभिज्ञजन समझ लिये हैं कि जातक इतने ही दिन तक जी सकता है। इसका विशेष विवरण जातक स्कन्ध, आयुर्दायाध्याय में देखिये ॥ १ ॥

श्रीमानसागरी में जन्मपत्रपद्धति से पञ्चाङ्ग फलकथन नामक प्रथमोऽध्याय समाप्त।

अथ द्वितीयोऽध्यायः [२]

स्पष्ट ग्रह प्रशंसा—

स्पष्टैर्ग्रहैर्विना किञ्चिद्ये निगदन्ति कुबुद्धयः ।
ते दशान्तर्दशादीनां फले यान्त्युपहास्यताम् ॥ १ ॥

तात्कालिक स्पष्टग्रहों के विना जो कोई दशा-अन्तर्दशा आदि का फलादेश करता है, वह उपहासास्पद होता है ॥ १ ॥

गत कलिवर्षानयन—

वेदवारिधिखाग्न्यङ्कै (३०४४)र्युते विक्रमवत्सरे ।
भवेदयनवल्ली सा तस्या गतकलिस्तथा ॥ २ ॥

विक्रम संवत् की संख्या में ३०४४ जोड़ने से अयनवल्ली या कलियुग के गत वर्ष होते हैं ॥ २ ॥

उदाहरण—जैसे संवत् २०३३ में गत कलिवर्ष जानना है, तो संवत् में ३०४४ जोड़ने से ५०७७ गत कलि वर्ष हुए ।

चरखण्ड नियम—

मेषादिगे सायनभागसूर्ये दिनार्द्धजाभा पलभा भवेत्सा ।
त्रिष्ठा हताः स्युर्दशभिर्भुजङ्गैर्दिग्भिश्चराद्धानि गुणोद्धृतान्त्या ॥३॥

सायनसूर्य की मेष संक्रान्ति (जिस दिन, दिन और रात तुल्य हो) उस दिन मध्याह्नकाल में १२ अङ्गुल शङ्कु की छाया अङ्गुलादि पलभा कहलाती है । उसको ३ स्थान में रखकर प्रथम स्थान में १० से, द्वितीय को ८ से गुणा करे, तृतीयस्थान में १० से गुणा कर ३ का भाग देने से क्रम से तीन चरखण्ड होते हैं । जिनसे चरपल साधन होता है ॥ ३ ॥

उदारण—जैसे काशी की पलभा अङ्गुलादि ५।४५ को १० से गुणा करने से पलात्मक प्रथम चरखण्ड=५७ स्वल्पान्तर से, द्वितीयस्थान को आठ से गुणा करने से द्वितीय चरखण्ड=४६ । तृतीयस्थान को दश से गुणाकर ३ के भाग देने से तृतीय चरखण्ड=१९ । क्रम से ५७।४६।१९ ये काशी के चरखण्ड से हुए ।

दूसरा उदाहरण—मध्य मिथिला की अङ्गुलात्मक पलभा=६ । इसपर से उक्त विधि से प्रथम चरखण्ड=६ × १०=६० । द्वितीय चरखण्ड=६ × ८=४८ । तृतीय चरखण्ड=६ × $१\frac{१}{३}$=२० एवं अन्य देश के भी चरखण्ड साधन करना ॥ ३ ॥

चरपल ज्ञानार्थ भुजकोटि बनाने का प्रकार–

त्र्यूनं भुजः स्यात्त्र्यधिकेन हीनं भार्धं च भार्द्धादधिकं विभार्द्धम् ।
नवाधिकेनोनितमर्कभं च, भवेच्च कोटिस्त्रिगृहं भुजोनम् ॥४॥

स्पष्टग्रह के राश्यादि यदि ३ राशि से कम हों तो वही भुज कहलाता है। ३ से अधिक ६ राशि के भीतर हों तो उसको ६ राशि में घटाने से शेष भुज होता है। ६ से अधिक ९ के भीतर हो तो उसमें ६ राशि घटाकर शेष भुज कहलाता है। ९ से अधिक हो तो उसको १२ राशि में घटाकर शेष भुज कहलाता है।

उदाहरण—जैसे सायन सूर्य राश्यादि २।१०।१२।१५ है। ३ राशि से अल्प होने के कारण वही भुज हुआ। यदि सायन सूर्य ४।१५।२०।२५ है तो इसको ६ राशि में घटाने से १।१४।३९।३५ यह भुज हुआ। यदि सायन सूर्य ७।१२।१५। २० है तो इसमें ६ राशि घटाकर शेष १।१२।१५।२० भुज हुआ। यदि सायन सूर्य १०।२०।२२।३० है तो इसको १२ राशि में घटाने से शेष १।९।३७।३० यह भुज हुआ। इसी क्रम से सर्वत्र जानना। फिर भुजपर से आगे कहे हुए श्लोक ६ के अनुसार चरपल बनाकर दिनमान आदि जानना। भुजको ६ राशि में घटाने से शेष कोटि होती है। जैसे, भुज १। १२। २५। २० है तो इसको ३ राशि में घटाने से १। १७। ३४। ४० यह कोटि हुई। कोटिपर से ग्रह की स्पष्ट-गति आदि बनायी जाती है॥ ४॥

इष्ट समय में अयनांश साधन (१)

अथ शराब्धियुगै रहितः शको, व्यपहृतः खरसैरयनांशकाः ।
मधुसितादिकमासगणं प्रति, शरपलैः सहितं कुरु सर्वदा ॥५–१॥

जब अयनांश बनाना हो तो उस शाके की संख्या में ४४५ घटाकर शेष में ६० के भाग देने से लब्ध अयनांश और शेष उसकी कला होती है। तथा चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से जितने मास बीते हों उतने को ५ से गुणाकर जो हो उतनी विकला आदि जोड़ने से तात्कालिक अयनांश होते हैं॥ ५-१॥

वि०—यही प्रकार ग्रहलाघव में भी है। परन्च उसमें (शाके में) ४४४ घटाया जाता है।

उदाहरण—शाके १८६६ ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्या को अयनांश बनाना है, तो शाके में ४४५ घटाने से शेष १४२१ इसमें ६० के भाग देने से अंश और कला २३। ४१ इसमें चैत्र शुक्लादि गतमास २ को ५ से गुणा करने से १० विकला और जोड़ने से तात्कालिक अयनांश २३।४१।१० हुए।

सौरमत से अयनांश साधन का प्रकार—(२)

एकद्विवेदोनशकस्त्रिनिघ्नो भक्तो द्विशत्याऽयनभागकाः स्युः ।
अंशीकृतोऽर्कस्त्रिगुणो नखाप्तस्तावन्मिताभिर्विकलाभिराढ्याः ।।५-२।।

शाके में ४२१ घटा कर शेष को ३ से गुणा कर २०० के भाग देने से लब्धि अयनांश होते हैं। फिर तात्कालिक सूर्य को अंशात्मक बनाकर उसे ३ से गुणा कर २० से भाग देने से लब्धि तुल्य विकला और जोड़ देने से तात्कालिक अयनांश होते हैं ।। ५-२ ।।

टिप्पणी—प्रथम प्रकार से द्वितीय प्रकार प्रत्यक्ष के आसन्न है, अतः लोग इसी को ग्रहण करते हैं।

उदाहरण—शाके १८६६ में ४२१ घटाने से १४४५ इसको ३ से गुणा करने से ४३३५ इसमें २०० के भाग देने से लब्ध अंशादि २१।४०।३० इसमें अंशात्मक सूर्य ३७ को ३ से गुणा कर २० के भाग देने से लब्धि ६ तुल्य विकला जोड़ने से तात्कालिक अयनांश २१।४०।३६ हुए।

इन दोनों प्रकारों में लगभग २ अंश का अन्तर होता है। आजकल यूरोपीय वेधालय द्वारा प्रत्यक्ष अयनांश लगभग २३ है।

चरपल–मिश्रमान और दिनमान साधन–

स्पष्टार्कोऽयनभागयुक्तभुजवद् भुक्तर्क्षतस्तच्चरम् ।
धृत्वा भोज्यचरघ्नबाहुलवतः खाग्न्यु (३०) द्धृतैस्तैर्युतः ।।
मेषात् खं शरवारिधी (४५) ऋणमथो कुर्यात्तुलादौ स्फुटम् ।
तन्मिश्रं द्विगुणं द्युमानमुदितं रात्रेऽस्तु षष्ट्य (६०) न्तरम् ।।६।।

तात्कालिक स्पष्ट सूर्य में अयनांश जोड़कर भुज बनाना, भुज में राशि-संख्या तुल्य चरखण्ड को जोड़कर एक स्थान में रखना, तथा भुज के अंशों को अग्रिम चरखण्ड से गुणा कर ३० के भाग देने से जो लब्धि हो उसको पृथक् रखे हुए चरखण्ड के योग में जोड़ देने से इष्ट चरपल होते हैं। उसको यदि सायन सूर्य मेषादि ६ राशि में हो तो ४५ घटी में जोड़ना, यदि तुलादि ६ राशि में हो तो चरपल को ४५ घड़ी में घटाना हो तो वह मिश्रमान होता है।

मिश्रमान को २ से गुणाकर ६० से शेषित कर दिनमान होता है। दिनमान को ६० घड़ी में घटाने से रात्रिमान होता है ।। ६ ।।

उदाहरण—सायन सूर्य १।७।५९।५१ इसका भुज हुआ १।७।५९।५१ क्योंकि भुज में १ राशि है अतः काशी के प्रथम चरखण्ड ५७ को अलग रखा और भुज में अंश ७ है इसको अग्रिम चरखण्ड ४६ से गुणा करने से ३२२ इसमें ३० का भाग देकर

लब्धि (पल-विपल १०।४४) स्वल्पान्तर से ११ पल को पृथक् रखे हुए चरखण्ड ५७ में जोड़ने से ६८ चरपल हुए। इसको घटचादि बनाने पर १।८ हुआ। इसको सायन सूर्य के मेषादि में होने के कारण ४५ घटी में जोड़ने से ४६।८ यह मिश्रमान हुआ।

मिश्रमान को दूना करने से ९२।१६ इसको ६० से शेषित करने से ३२।१६ दिनमान हुआ। दिनमान को ६० घटी में घटाने से २७।४४ यह रात्रिमान हुआ।

काशी के चरखण्ड ग्रहण करने के कारण यह काशी का दिनमान और रात्रिमान हुआ। जिस स्थान का दिनमान बनाना हो तो वहीं का चरखण्ड ग्रहण करना चाहिये।

समस्त मानसागरी पुस्तकों में दिनमान बनाने का एक और असंस्कृत (संस्कृत व्याकरण से अशुद्ध) पद्य है। यथा--

अयनादिकवासररामहता गगनानलबाणशशाङ्कयुताः।
परिभाजितशून्यरसैर्घटिका मकरादिदिनं कर्कादिनिशा ॥ ७ ॥

इसका भावार्थ यह है कि–अयन (मकर संक्रान्ति और कर्क संक्रान्ति) से जितने दिन आगे दिनमान बनाना हो–उस दिन संख्या को ३ से गुणा कर जो गुणनफल हो उसको १५३० में जोड़कर फिर उसमें ६० का भाग देकर लब्ध घटीपल मकरादि में सूर्य हो तो दिनमान और कर्कादि में सूर्य हो तो रात्रिमान समझना ॥ ७ ॥

इस प्रकार से उसी स्थान का दिनमान होगा जहाँ परमाल्प दिनमान घटचादि २५।३० अर्थात् पलात्मक १५३० होता हो। ऐसे स्थान वे ही हैं जहाँ पलभा ६।२५ से ६।३० के भीतर हो। तथा अयन दिन भी सायन संक्रान्ति से ग्रहण करना चाहिए।

उदाहरण--पूर्वोक्त ज्येष्ठ अमावस्या को काशी का दिनमान बनाना है तो–इस रीति से अयन दिन जानने के लिये स्पष्ट सूर्य वृष के ७ अंश भोग कर चुका है अतः मकरादि (उत्तर) अयन है, अतः मकर से मेष तक राशि-संख्या ४ को ३० से गुणाकर ७ अंश जोड़ने से १२७ अयन दिन हुए। इसको ३ से गुणा करने से ३८१ इसको १५३० में जोड़ने से १९११ इसमें ६० के भाग देने से घटीपल ३१।५१ दिनमान हुआ।

पूर्व (वास्तव) रीति से ३२।१६ दिनमान होता है, इस प्रकार से २५ पल कम हुआ। इसलिये—पूर्व रीति से ही वास्तव में दिनमान बनाना चाहिये ॥ ७ ॥

सौर--अहर्गणद्वारा साधिक ग्रह मिश्रमान कालिक होता है। यदि पञ्चाङ्ग में प्रतिदिन मिश्रमान कालिक ग्रह बने हों तो उसपर घटचादि चालन द्वारा उसी दिन इष्टकालिक ग्रह बनाने का प्रकार—(असंस्कृत पद्य)। यथा—

मिश्रेष्टान्तरगुणितायुक्तैर्दिवसे निशादले प्रथमे।
रात्र्यर्धाग्रेष्टान्तरहतापरेत्विष्टमिश्रयोगेन ॥ ८ ॥

यदि दिन में या रात्रि के पूर्वार्ध में इष्टकाल हो तो–इष्टकाल और मिश्रमान के अन्तर (घटी-पल) से ग्रह की गति को गुणाकर ६० से भाग देकर कलादि फल को मिश्रमानकालिक ग्रह में घटाने से और रात्रि के उत्तरार्ध में इष्टकाल हो तो मिश्रमान इष्टकाल के अन्तर से गति को गुणाकर ६० के भाग से कलादि फल मिश्रमानकालिक ग्रह में जोड़ने से इष्टकालिक ग्रह होता है ।

परञ्च इस श्लोक के शब्दों से ऐसा अर्थ स्पष्ट नहीं निकलता है । इससे मालूम होता है कि यह पद्य किसी अनभिज्ञ ने प्रक्षिप्त कर दिया है । क्योंकि–इष्टकालिक ग्रह बनाने का प्रकार आगे ९वें श्लोक में ग्रन्थ-संग्रहकर्ता पुनरुक्ति क्यों करते ? । इसलिए ७ वाँ और ८ वाँ श्लोक प्रक्षिप्त और असंस्कृत समझ कर इससे क्रिया नहीं करनी चाहिए ॥ ८ ॥

तात्कालिक स्पष्टग्रह साधन का वास्तव प्रकार–

गतैष्यदिवसाद्येन　　गतिर्निघ्नी　　खषड्हृता ।
लब्धमंशादिकं शोध्यं योज्यं स्पष्टो भवेद् ग्रहः ॥ ९ ॥

(पञ्चाङ्ग में जिस काल के ग्रह बने रहते हैं वह पंक्तिकाल कहलाता है । यदि पंक्ति से पहले इष्टकाल हो तो दोनों का अन्तर गत और यदि पंक्ति से आगे इष्ट हो तो दोनों का अन्तर एष्य कहलाता है) इस प्रकार गत या एष्य दिनादि जो हों उससे पंक्तिस्थ ग्रह की कलादि गति को गुणा कर गुणनफल में ६० के भाग देने से लब्धि अंशादि को––पंक्तिस्थ ग्रह में क्रम से घटाने या जोड़ने (गत में घटाने, एष्य में जोड़ने) से तात्कालिक स्पष्टग्रह हो जाता है ॥ ९ ॥

विशेष–

[व्यस्तं हि चालनं वक्रे राहौ केतौ च सर्वदा ॥]

वक्रगति ग्रह में विपरीत चालन होता है । इसलिए राहु और केतु में सदा विपरीत (गत में धन, एष्य में ऋण) होता है ।

उदाहरण—संवत् २००१ ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष अमावस्या उपरि प्रतिपदा सोमवार सूर्योदय से घट्यादि १९।५५।३० इष्ट काल में नेहरा ग्राम निवासी बाबू श्री पशुपति चौधरी के प्रथम पुत्र का जन्म हुआ । इस समय में सूर्यादि स्पष्ट ग्रहों का साधन करना है, तो उससे पीछे ज्ये० कृ० १४ रवि को और आगे ज्येष्ठ शुक्ल ६ रवि को पंक्ति (पञ्चाङ्ग में साधित) ग्रह हैं । इन दोनों पंक्तियों में पीछे की पंक्ति इष्टकाल के समीप है । अतः पृष्ठ पंक्ति के दिनादि १।४६।४६।३८ को इष्टकाल के दिनादि २।१९।५५।३० में घटाने से दिनादि ०।३३।८।५२ एष्य (धन) चालन हुआ । यहाँ स्वल्पान्तर से क्रिया लाघवार्थ ५२ विपल के स्थान में १ पल ग्रहण करने से दिनादि ०।३३।९ एष्य (धन) चालन हुआ ।

पृष्ठ पंक्ति ज्ये. कृ. १४ रवि
मिश्रमान ४६।४६।३८

सू.	सो	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	रा.
१		३	०	३	०	२	३
७		५	१३	२६	२८	४	९
२८		३६	२७	२८	५८	४	३९
६		५५	२६	५८	८	३३	३१
५७		३५	५३	७	७३	७	३
२८		३२	५८	२८	५९	०	११

इष्टकाल

ज्ये. कृ. ३०

सोम. १९।

५५।३०

अग्रपंक्ति ज्ये. शु. ६ रवि
मिश्रमान ४६।५१।५४

सू.	सो.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	रा
१		३	०	३	१	२	३
१४		९	२१	२७	७	४	९
९		४१	१६	१६	३५	५६	१[illegible]
४७		३८	१६	४७	१३	१	७
५७		३६	७९	७	७३	७	३
१७		१६	११	२८	२४	२	११

अव पंक्तिस्थ सूर्य की कलादि गति ५७।२८ को एष्य दिनादि (धन चालन) ०।३३।९ से गोमूत्रिका गुणन विधि से गुणा करने से—

(०।३३।९) ×५७″=०″।१८८१″।५१३

(०।३३।९) ×२८″=०।९२४।२५२

योग करने से गुणनफल=०″।११८८१″।१४३७।२५२

इसको ६० से सवर्णन करने (भाग चढ़ाने) पर गुणनफलादि=३१′। ४५″।१।१२ प्रति विकला ३० से अल्प होने के कारण छोड़ देने से गुणनफल कलादि ३१′४५″ फल में ६० के भाग देकर अंशादि में ०।३१′।४५″ इसको पंक्तिस्थ सूर्य १।७।२८।६ के अंशादि में (धन चालन होने के कारण) जोड़ने से तात्कालिक स्पष्ट सूर्य राश्यादि १।७।५९।५१ हुआ।

इसी प्रकार मङ्गलादि ग्रह की गति को चालन से गुणा कर ६० के भाग से अंशादि फल को पंक्तिस्थ ग्रह में जोड़ने से तात्कालिक स्पष्ट मंगलादि ग्रह होंगे। इस पंक्ति में मङ्गलादि ग्रह मार्गी हैं, अतः सब में धन किया जायेगा। राहु में गुणनफल को घटा कर तात्कालिक होगा।

यथा तात्कालिक स्पष्ट ग्रह चक्र—

सू.	सो.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	रा.	के.
१	१	३	४	३	०	२	३	९
७	८	५	१३	२६	२८	४	९	९
५९	४५	५६	५७	३०	३९	२०	३६	३६
५१	३५	३३	१५	५	०	२५	२७	२७
५७	८१६	३५	५३	७	७३	७	२	३
२८	४७	३२	३८	२८	५८	०	११	११

राहु में ६ राशि जोड़ने अथवा घटाने से केतु होता है।

पृष्ठ पंक्ति के ग्रह से अग्रिम पंक्ति में ग्रह अल्प हो तो वक्र गति समझना चाहिए।

विशेष—अधिक गति होने के कारण चन्द्रमा चालन से नहीं बनाया जाता है। वह भयात और भभोग द्वारा तात्कालिक स्पष्ट होता है। इसलिए प्रसंगवश भयात भभोग जानने का सरल प्रकार—

"नक्षत्रारम्भतः स्वेष्टकालं यावद् गतं हि यत् ।
घट्यादिकं भयातं तद् भस्य भोगो भभोगकः ॥"

पञ्चाङ्ग में देखना—नक्षत्र के आरम्भ काल से अपने इष्टकाल तक जितना घट्यादिकाल बीता हो वह भयात और नक्षत्र के आरम्भ से उस नक्षत्र के अन्त तक जितना काल हो वह भभोग कहा जाता है—

भयात-भभोग द्वारा चन्द्र स्पष्टीकरण–

खषड्घ्नं भयातं भभोगोद्धृतं तत्
खतर्कघ्नधिष्ण्येषु युक्तं द्विनिघ्नम् ।
नवाप्तं शशी भागपूर्वस्तु भुक्तिः
खखाभ्राष्टवेदा भभोगेन भक्ताः ॥ १० ॥

भयात को ६० से गुणाकर उसमें भभोग से भाग देने पर जो लब्धि (घट्यादि) हो उसको ६० से गुणित—अश्विन्यादि गत नक्षत्र संख्या में जोड़कर, उसे २ से गुणाकर ९ के भाग देने से लब्ध अंशादि स्पष्ट चन्द्रमा होता है । और ४८०० में भभोग के भाग देने से लब्धि कलादि चन्द्रस्पष्ट गति होती है ॥ १० ॥

उदाहरण—यथा कृत्तिका का घटचादि=भयात ५३ । १८, अभोग ५८।४६ है । इस घटचादि भयात, भभोग को पलात्मक वनाकर गुणा और भाग क्रिया से लाघव होता है । अतः—पलात्मक भयात ३१९८ को ६० से गुणा करने से १९१८८० हुआ, इसमें पलात्मक भभोग ३५२६ के भाग देने से, लब्धि घटी आदि ५४ । २ । ५७ को ६० से गुणित गत नक्षत्र (भरणी) संख्या २=(१२०) में जोड़ने से १७४ । २५ । ७ इसको २ से गुणा करने से ३४८ । ५० । १४ इसमें ९ का भाग देने से लब्धि अंशादि ३८ । ४५ । ३५ चन्द्रमा हुआ, इसको राश्यादि बनाने से १ । ८ । ४५ । ३५ यह तात्कालिक स्पष्ट चन्द्रमा हुआ ।

गति के लिये—भभोग के पलात्मक होने के कारण ४८००० को ६० से गुणाकर २८८०००० इसमें पलात्मक भभोग ३५२६ के भाग देने से लब्धि कलादि ८१६ । ४७ यह चन्द्रमा की स्पष्टगति हुई ॥ १० ॥

इस प्रकार स्पष्ट ग्रह बनाकर द्वादशभाव ससन्धि साधन करना चाहिए ।

श्रीपति-पद्धत्यनुसार ससन्धि भाव साधन–

नत्वा तां गुरुदेवतां त्रिसमयज्ञानोद्गतेः कारणं
तत्पादाम्बुरुहप्रकाशविकसद्वोधो बुधः श्रीपतिः ।

शिष्यप्रार्थनया विचार्य सकलान् होरागमार्थान्मुहु-
र्वक्ष्ये जातककर्मपद्धतिमहं होराविदां प्रीतये ॥ १ ॥

उन त्रिकाल की गति को जानने वाले गुरुदेव को प्रणाम कर उन्हीं के चरण-कमल के प्रकाश से बोध की प्राप्ति करके मैं श्रीपति दैवज्ञ—अपने अनेक शिष्यों द्वारा प्रार्थित होने पर समस्त होराशास्त्रीय ग्रन्थों के अर्थ को विचारकर ज्योतिष प्रेमियों के प्रसन्नार्थ "जातककर्मपद्धति" को कहता हूँ ॥ १ ॥

ज्ञेयोऽत्र प्रथमं हि जन्मसमयः तुर्यादि यन्त्रैः स्फुटम्
तत्कालप्रभवा विलग्नसहिताः कार्यस्ततश्च ग्रहाः ।
सिद्धान्तोक्तपरिस्फुटोपकरणैः स्वैर्वासकृत्कर्मणां
भावाः खेटदृशो बलानि च ततस्तेषां विचिन्त्यानि षट् ॥२॥

जन्मपत्र बनाने से पूर्व सूक्ष्म तुरीय, यन्त्र, शङ्कुच्छाया, ताम्री घटीयन्त्रादि द्वारा स्पष्ट समय को जानकर—तात्कालिक सूर्यादि स्पष्ट ग्रह लग्नादि ससन्धि द्वादशभाव सिद्धान्त ग्रन्थ या करण द्वारा असकृत् क्रिया से साधन करे। तथा ग्रहों की दृष्टि और षड्बलों का साधन करना चाहिए ॥ २ ॥

वदन्ति भावैक्यदलं हि सन्धिं तत्र स्थितः स्यादबलो ग्रहेन्द्रः ।
ऊने तु सन्धेर्गतभावजातमागामिजं चाऽप्यधिके करोति ॥ ३ ॥

समीपस्थ दो-दो भावों के योग के आधार को सन्धि कहते हैं। सन्धि के तुल्य ग्रह हो तो निर्बल (फल देने से असमर्थ) होता है। सन्धि के अंश से अल्प (पीछे) ग्रह हो तो पूर्व भाव और अधिक (आगे) हो तो अग्रिम भावस्थ समझा जाता है और उसी भाव का फल भी होता है ॥ ३ ॥

भावांशतुल्यं खलु वर्तमानो भावो हि सम्पूर्णफलं विधत्ते ।
भावोनके चाऽप्यधिके च खेटे त्रैराशिकेनाऽत्र फलं प्रकल्प्यम् ॥ ४ ॥

भाव के अंश के तुल्य ग्रह हो तो उस भाव का पूर्ण फल होता है। उससे न्यून या अधिक अंश में हो तो त्रैराशिक से फल का ज्ञान करना चाहिए। जो आगे विंशोपक नाम से कहे गये हैं (श्लोक २५) देखिए ॥४॥

भावप्रवृत्तौ हि फलप्रवृत्तिः पूर्णं फलं भावसमांशकेषु ।
ह्रासः क्रमाद्भावविरामकाले फलस्य नाशः कथितो मुनीन्द्रैः ॥ ५ ॥

भाव के आरम्भ में फलकी प्रवृत्ति होती है। भाव के अंश में तुल्य होने पर पूर्ण भावफल होता है। फिर क्रम से फल का ह्रास होता हुआ विराम सन्धि में फल का अभाव हो जाता है ॥ ५ ॥

भावों का प्रयोजन—

जन्मप्रयाणे व्रतबन्ध-चौल-नृपाभिषेकादि-करग्रहेषु ।
एवं हि भावाः परिकल्पनीयास्तैरेव योगोत्थफलानि यस्मात् ॥ ६ ॥

जन्म समय, यात्रा समय, उपनयन, चूडाकरण, राज्याभिषेक, विवाह आदि समय में स्पष्ट ससन्धिभावों का साधन करना चाहिये और इसी प्रकार योगज फल की कल्पना करनी चाहिये ॥ ६ ॥

लङ्कोदय कथन और स्वदेशोदय साधन—

लङ्कोदया नागतुरङ्गदस्रा गोऽङ्काश्विनो रामरदा त्रिनाड्यः ।
क्रमोत्क्रमस्थैश्चरखण्डकैः स्वैः क्रमोत्क्रमस्थाश्च विहीनयुक्ताः ॥ ७ ॥

२७८, २९९, ३२३ ये क्रम और उत्क्रम से मेषादि ६ राशियों का पलात्मक लङ्कोदय है। इसमें अपने स्थान के ३ चरखण्डों को क्रम से घटाने और उत्क्रम से जोड़ने से अपने-अपने देश-स्थान के मेषादि ६ राशियों के उदयमान होते हैं ॥ ७ ॥

उदाहरण—काशी के चरखण्ड ५७ । ४६ । १९ एवं मिथिला के चरखण्ड ६० । ४८ । २० पर उक्तरीति से उदयमान साधन—

		लङ्कोदय-चरखण्ड-काश्युदय	लङ्कोदय-चरखण्ड-मिथिलोदय
मेष.	मीन.	२७८ – ५७=२२१	२७८ – ६०=२१८
वृष.	कुम्भ.	२९९ – ४६=२५३	२९९ – ४८=२५१
मिथुन.	मक.	३२३ – १९=३०४	३२३ – २०=३०३
कर्क.	धनु.	३२३ + १९=३४२	३२३ + २०=३४३
सिंह.	वृश्चि.	२९९ + ४६=३४५	२९९ + ४८=३४७
कन्या.	तुला.	२७८ + ५७=३३५	२७८ + ६०=३३८

इसी प्रकार अन्य स्थानों के भी उदयमान जानना चाहिये।

मिथिला राश्युदयमान जानने का पद्य—

अष्टेन्दुपक्षाः (२१८) शशिबाणपक्षा (२५१)
गुणाभ्ररामा (३०३) गुणवेदरामा (३४३)
शैलाब्धिरामा (३४७) वसुरामरामाः (३३८)
क्रमोत्क्रमान्मेष–तुलादि–मानम् ॥ ८ ॥

अर्थ ऊपर लिखित स्पष्ट है ॥ ८ ॥

अभ्यासार्थ काशी के उदयमान का पद्य—

"कुदस्रदस्रा गुणबाणदस्रा वेदाब्धरामा भुजवेदरामाः ।
बाणाब्धिरामा शररामरामाः क्रमोत्क्रमान्मेषतुलादिमानम् ॥ ९ ॥

अर्थ ऊपर निर्दिष्ट है ॥ ९ ॥

लग्नसाधन-

तात्कालार्कः सायनः स्वोदयघ्नाः भोग्यांशाः खत्र्युद्धृता भोग्यकालः ।
एवं यातांशैर्भवेद्यातकालो भोग्यः शोध्योऽभीष्टनाडीपलेभ्यः ॥१०॥
तदनु जहीहि गृहोदयांश्च शेषं गगनगुणघ्नमशुद्धहृल्लवाद्यम् ।
सहितभजादिगृहैरशुद्धपूर्वैर्भवति विलग्नमदोऽयनांशहीनम् ॥११॥

तात्कालिक स्पष्ट सूर्य में अयनांश जोड़कर उसके भोग्य अंशों को (जिस राशि में सायन सूर्य हो) उस राशि के स्वोदयमान से गुणा करके ३० के भाग देने से लब्धि पलादि भोग्यकाल होता है। एवं सायन सूर्य के भुक्तांश को स्वोदय से गुणाकर ३० के भाग देने पर लब्धि भुक्तकाल होता है। (लग्न साधन में)-इष्टकाल को पलात्मक बनाकर उसमें भोग्यपल को घटाना, शेष में-सायन सूर्य की अग्रिम राशियों के स्वोदयमान क्रम से घटाना चाहिए। (जितने राशियों के उदयमान घट जायें वे शुद्ध संज्ञक और जितने राशि का उदयमान नहीं घटे वह अशुद्ध संज्ञक कहलाता है)। फिर शेष पल को ३० से गुणा कर अशुद्ध राशि के स्वोदयमान से भाग देने से लब्धि अंशादि-को मेषादि शुद्ध राशि संख्या में जोड़कर फिर उसमें अयनांश घटाने से शेष राश्यादि स्पष्टलग्न समझना चाहिये ॥ १०–११ ॥

उदाहरण—इष्टकाल १९।५५।३०, स्पष्ट सूर्य १।७।५९।५१, अयनांश २१।४०। ३६ स्पष्ट सूर्य में अयनांश जोड़से से सायन सूर्य १।२९।४०।२७ इसके भोग्य अंशादि ०।१९।३३ को सायन सूर्यनिष्ठ (वृष) राशि के मिथिलोदय २५१ से गुणा करने से ०।४७६९।८२८३ को ६० से सवर्णित करने से ८१।४७।३ इसमें ३० के भाग देने से लब्धि भोग्य पलादि २।४३।३४ इसको इष्टघटी पलात्मक ११९५।३० में घटाने से शेष ११९०।४६।२६ इसमें अग्रिम राशि (मिथुन, कर्क) और सिंह के स्वोदयमान (३०३ + ३४३ + ३४७=९९३) घटाने से शेष १९९।४६।२६ को ३० से गुणा करने से ५९९३।१३ इसमें अशुद्ध राशि (कन्या) के उदय ३३८ के भाग देने से लब्धि अंशादि १७।४३।५३ इसमें शुद्ध मेषादि राशि संख्या ५ जोड़ने से ५।१७।४३।५३ इसमें अयनांश २१।४०।३६ को घटाने से स्पष्ट लग्न ४।२६।३।१७ हुआ ॥१०–११॥

भोग्य से अल्प इष्टकाल में विशेषता—

भोग्याल्पकालात्खत्रिघ्नात्स्वोदयाप्तलवादियुक् ।
रविरेव भवेल्लग्नं सषड्भार्कोन्निशातनुः ॥ १२ ॥

यदि उक्तरीति से साधित भोग्यकाल से इष्टकाल अल्प हो (अर्थात् इष्टकाल में भोग्यकाल नहीं घटे) तो उस पलात्मक इष्टकाल को ही ३० से गुणा कर सायन सूर्य राशि के स्वोदयमान के भाग देने से जो अंशादि लब्धि प्राप्त हो उसको तात्कालिक स्पष्ट सूर्य में जोड़ने से स्पष्टलग्न होता है। यदि रात्रिगत इष्टघटी हो या रात्रिका नतकाल हो तो सूर्य में ६ राशि जोड़कर लग्न और दशम लग्न बनाना चाहिये ॥ १२ ॥

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य १।२३।३।५४ अयनांश २१।४०।३६ सायन सूर्य २।१४। ४४।३० इष्टकाल १।१५ घटचादि है, तो यहाँ सायन सूर्य के भोग्यांश १५।१५।३० इसको सायन सूर्य राशि (मिथुन) के स्वोदयमान ३०३ से गुणाकर सवर्णित करने से ४६२३।१६।३० इसमें ३० के भाग देने से लब्धि भोग्यकाल पलादि १५४।६।१७ यह पूर्वोक्त विधि से पलात्मक इष्टकाल ७५ नहीं घट सकता है। (अर्थात् भोग्य से इष्टकाल अल्प है) अतः यहाँ इष्टपल ७५ को ३० से गुणा करने से २२५० हुआ, इसमें सायन सूर्य राशि (मिथुन) के स्वोदयमान ३०३ के भाग देने से लब्धि अंशादि ७।२५।३२ को स्पष्ट सूर्य १।२३।३।५४ में जोड़ने से राश्यादि २।०।२९।२६ स्पष्ट लग्न हुआ ॥ १२ ॥

नतकाल जानने का सरल प्रकार—

मध्याह्नात् पूर्वतः पश्चात् कालौ पूर्व--परौ नतौ ।
रात्रिमध्यात् तथा ज्ञेयौ रात्रौ पूर्वपरौ नतौ ॥ १३ ॥

दिन में मध्याह्न होने में जितना काल बाकी हो वह दिवा पूर्वनत। तथा मध्याह्न से आगे जितना काल बीता हो वह दिवा परनत समझना। एवं रात्रि में मध्यरात्रि होने में जितना बाकी हो वह रात्रि पूर्वनत और मध्यरात्रि से आगे जितना काल बीता हो वह रात्रि परनत समझना ॥१३॥

उदाहरण—दिनार्ध १६।४८ इष्ट १९।५५।३० यहाँ दिनार्ध से इष्ट आगे है अतः इष्ट में दिनार्ध घटाने से मध्याह्न से बीता हुआ काल घटचादि ३।७।३० यह दिवा परनत हुआ। यदि इष्ट दिनार्ध से कम होता तो दिनार्ध में इष्ट घटाकर पूर्वनत होता। इसी प्रकार रात्र्यर्ध और रात्रिगत इष्ट घटीपल से रात्रि के पूर्व और परनत समझना चाहिये ॥ १३ ॥

दिनार्ध और नत जानने का 'करण कुतूहलस्थ' भास्कर का प्रकार—

चरपलयुतहीना नाडिकाः पञ्चचन्द्रा
द्युदलमथ निशार्धं याम्यगोले विलोमम् ।

द्युदलगतघटीनामन्तरं तन्नतं स्या-
न्नतरहितदिनार्धश्चोन्नतं जायतेऽत्र ॥ १४ ॥

उत्तर गोल में सायन सूर्य हो तो १५ घटी में चरपल जोड़ने से दिनार्ध और घटाने से रात्र्यर्ध होता है। दक्षिण गोल में विपरीत १५ घटी में चरपल घटाने से दिनार्ध और जोड़ने से रात्र्यर्ध का अन्तर रात्रि में नत होता है ॥ १४ ॥

दशम लग्न का साधन प्रकार-

ततो लङ्कोदयैर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात् ।
पूर्वपश्चान्नतादन्यत् प्राग्वत् तद्दशमं भवेत् ॥ १५ ॥

लग्न साधन के बाद पूर्वनतकाल हो तो—लङ्कोदय द्वारा सायन सूर्य के भुक्तांश से, यदि पश्चिम नत हो तो सायन सूर्य के भोग्यांश से, पूर्वोक्त प्रकार से नत घटी को इष्टकाल मानकर, लग्न बनाने से दशम लग्न होता है ॥ १५ ॥

उदाहरण—दिवा परनत घटयादि ३।७।३० सायन सूर्य १।२९।४०।२७ पर नत है। अतः सायन सूर्य के भोग्यांश ०।१९।३३ को वृष के लङ्कोदय २९९ से गुणा करने से ९७।२५।२७ इसमें ३० के भाग देने से भोग्यपलादि ३।१४।५१ इसको पलात्मक नतकाल १८७।३०।० में घटाने से शेष १८४।१५।९ इसमें अग्रिम (मिथुन) का लङ्कोदय नहीं घटता है, अतः मिथुन अशुद्ध हुआ। शेष पल १८४।१५।९ को ३० से गुणा करने से ५५२७।३४।३० इसमें अशुद्ध (मिथुन) के लङ्कोदय ३२३ के भाग देने से लब्धि अंशादि १७।६।४३ इसमें शुद्ध राशि संख्या २ जोड़ने से २।१७।६।४३ इसमें अयनांश २१।४०।३६ घटाने से १।२५।२६।१० यह दशम लग्न हुआ ॥ १५ ॥

लग्न में विशेष-

सूर्योदये सदा ज्ञेयं रविरेव विलग्नकम् ।
अस्तकाले तथा ज्ञेयं सषड्भरविणा समम् ॥ १६ ॥

सूर्योदय समय में सदा स्पष्ट सूर्य के तुल्य लग्न समझना। तथा सूर्यास्त समय में सूर्य में ६ राशि जोड़ने से लग्न होता है ॥ १६ ॥

दशम लग्न में विशेष-

मध्याह्ने चाऽर्धरात्रे वा स्वेष्टकालो यदा भवेत् ।
तदा तात्कालिकः सूर्यो भवेल्लग्नं खतुर्यकम् ॥ १७ ॥

यदि मध्याह्न का इष्टकाल हो तो स्पष्ट सूर्य ही दशम लग्न होता है। यदि मध्यरात्रिक इष्टकाल हो तो स्पष्ट सूर्य चतुर्थ लग्न समझना ॥ १७ ॥

ससन्धि द्वितीयादि भावसाधन ·

सपड्भे लग्नखे जायातुर्यौ भावावुदाहृतौ ।
लग्नं चतुर्थात्संशोध्य शेषं षड्भिर्विभाजितम् ॥ १८ ॥

राश्यादि योजयेल्लग्ने सन्धिः स्याल्लग्नवित्तयोः ।
सन्धिः षडंशसंयुक्तो धनभावो भवेत्स्फुटः ॥ १९ ॥

धनभावः षडंशाढ्यः सन्धिर्धनतृतीययोः ।
षडंशसंयुतः सन्धिस्तृतीयो भाव उच्यते ॥ २० ॥

षडंशाढ्यस्तृतीयः स्यात्सन्धिर्भ्रातृचतुर्थयोः ।
तृतीयसन्धिरेकाढ्यस्तुर्यः सन्धिर्भवेदिह ॥ २१ ॥

द्व्याढ्यस्तृतीयभावोऽपि पुत्रभावो भवेत् स्फुटः ।
त्र्याढ्यो द्वितीयसन्धिः स्यात्सन्धिः पञ्चमभावजः ॥ २२ ॥

धनभावो वेदयुतो रिपुभावः प्रजायते ।
लग्नसन्धिः पञ्चयुतः सन्धिः स्याद्रिपुभावजः ॥ २३ ॥

लग्नाद्याः सन्धिसहिता भावाः षड्राशिसंयुताः ।
सप्तमाद्या भवन्तीह भावाः सर्वे स-सन्धयः ॥ २४ ॥

लग्न में ६ राशि जोड़ने से सप्तम भाव, दशमलग्न में ६ राशि जोड़ने से चतुर्थ भाव होता है। चतुर्थ भाव में लग्न को घटाकर शेष राश्यादि के षष्ठांश को लग्न में जोड़ने से प्रथम और द्वितीय भाव की सन्धि होती है। उसमें फिर उक्त षष्ठांश को जोड़ने से द्वितीयभाव होता है। उसमें षष्ठांश जोड़ने से द्वितीय और तृतीय भाव की सन्धि होती है। उसमें पुनः षष्ठांश को जोड़ने से तृतीय भाव होता है। तृतीय भाव में षष्ठांश को जोड़ने से तृतीय-चतुर्थ की सन्धि होती है। इसमें १ राशि जोड़ने से चतुर्थ और पञ्चम की सन्धि होती है। तृतीय भाव में २ राशि जोड़ने से पञ्चम भाव होता है। द्वितीय की विरामसन्धि में ३ राशि जोड़ने से पञ्चम भाव की विराम सन्धि होती है। द्वितीय भाव में ४ राशि जोड़ने से षष्ठभाव होता है। लग्न की सन्धि में ५ राशि जोड़ने से षष्ठ भाव की सन्धि होती है। एवं सन्धि सहित लग्नादि ६ भाव बनाकर, उनमें ६, ६ राशि जोड़ने से क्रम से सन्धि सहित सप्तम आदि भाव होते हैं ॥ १८–२४ ॥

उदाहरण—लग्न ४।२६।३।१७ में ६ राशि जोड़ने से १०।२६।३।१७ यह सप्तम भाव हुआ। और दशमभाव १।२५।२६।११ में ६ राशि जोड़ने से ७।२५।२६।११ यह चतुर्थ भाव हुआ। चतुर्थ भाव में लग्न को घटाकर २।२९।२२।५४

इसका षष्ठांश ०।१४।५३।४९ को लग्न में जोड़ने से २।१०।५७।६ यह प्रथम और द्वितीय भाव की सन्धि हुई। अर्थात् प्रथम भाव की विराम सन्धि और द्वितीय भाव की आरम्भ सन्धि हुई। इसी षष्ठांश ०।१४।५३।४९ को जोड़ने से आगे के सन्धि सहित ३ भाव होते हैं ॥ १८–२४ ॥

ससन्धि लग्नादि भाव में ६,६ राशि जोड़ने से सप्तमादि भाव होते हैं।

स्पष्ट द्वादशभाव

लग्न	४।२६।३।१७	स.	भाव=१०।२६।३।१७
षष्ठांश.	०।१४।५३।४९	स.	सन्धि -११।१०।५६।६
ल.	सन्धि=५।१०।५७।६	अ.	भाव=११।२५।५०।५५
द्वि.	भाव=५।२५।५०।५५	अ.	सन्धि ०।१०।४४।४४
द्वि.	सन्धि=६।१०।४४।४४	नव.	भाव=०।२५।३८।३३
तृ.	भाव=६।२५।३८।३३	नव.	सन्धि १।१०।३२।२२
तृ.	सन्धि-७।१०।३२।२२	द.	भाव १।२५।२६।११
च.	भाव=०।२५।२६।११	द.	सन्धि २।१०।३२।२२
च.	सन्धि=८।१०।३२।२२	ए.	भाव २।२५।३८।३३
प.	भाव=८।२५।३८।३३	ए.	सन्धि=३।१०।४४।४४
प.	सन्धि=९।१०।४४।४४	द्वा.	भाव=३।२५।५०।५५
प.	भाव=९।२५।५०।५५	द्वा.	सन्धि=४।१०।५७।६
प.	सन्धि=१०।५०।५७।६		

भाव में ग्रहों का विंशोपक फल–

सन्धिखेटान्तरं कार्यं यच्छेषं नखसङ्गुणम् ।
भावसन्ध्यन्तरेणाप्तं फलं विंशोपकाः स्मृताः ॥ २५ ॥

जिस भाव और सन्धि के बीच में ग्रह हो उस सन्धि और ग्रह के अन्तर को २० से गुणाकर गुणनफल में उसी भाव और सन्धि के अन्तर से भाग देने पर लब्धि उस भाव में ग्रह का विंशोपक फल होगा। अर्थात् भाव का पूर्ण फल २० माना गया है। अतः १४ से ऊपर २० तक पूर्ण फल। और ८ से १४ तक मध्य फल तथा ७ से अल्प हो तो हीनफल समझना चाहिये ॥२५॥

उदाहरण—सूर्य १।७।५९।५१ यह नवम भाव और उसके विराम सन्धि के बीच में है, अतः नवमभाव की विरामसन्धि १।१०।३२।२२ में सूर्य को घटाने से ०।२।३२।३१ को एकजातीय (विकलात्मक) बनाकर ९१५१ को २० से गुणा करने से १८३०२० इसमें नवम भाव ०।२५।३८।३३ और सन्धि १।१०।३३।२२ के अन्तर ०।१४।५३।४९ के एक जातीय ५३६२९ के भाग देने से लब्धि विंशोपक फल ३ हुआ। अर्थात् सूर्य नवम भाव का फल २० में ३ मात्र देगा ॥ २५ ॥

ग्रहभावफलाध्यायः

द्वादशभाव से विचारणीय–

यो भावः स्वामिसौम्याभ्यां युक्तो दृष्टोऽयमेधते।
पापैश्चेदन्यथा ज्ञेयो जन्मतः पृच्छतोऽपि च ॥ १ ॥

जिस भाव पर अपने स्वामी या शुभग्रह का योग या दृष्टि हो उस भाव की वृद्धि तथा जिस पर पाप या स्वामी के शत्रु की दृष्टि हो तो उसकी हानि होती है। यह जन्मकाल और प्रश्नकालादि में सर्वत्र विचारना चाहिये ॥ १ ॥

रूपं तथा वर्णविनिर्णयश्च चिह्नानि जातिर्वयसः प्रमाणम्।
सुखानि दुःखान्यपि साहसं च लग्ने विलोक्यं खलु सर्वमेतत् ॥ २ ॥

रूप, वर्ण, चिह्न, जाति, आयु का प्रमाण, सुख, दुःख साहस ये तनुभाव से देखना चाहिये ॥ २ ॥

स्वर्णादिधातु-क्रय-विक्रयश्च रत्नानि कोषोऽपि च सङ्ग्रहश्च।
एतत्समस्तं परिचिन्तनीयं धनाभिधाने भवने सुधीभिः ॥ ३ ॥

सोना, चाँदी आदि धातु, क्रय, विक्रय, रत्न, भण्डार, द्रव्यादि संग्रह इनका विचार धनभाव से करणीय है ॥ ३ ॥

सहोदराणामथ किङ्कराणां पराक्रमाणामुपजीविनां च।
विचारणा जातकशास्त्रविद्भिस्तृतीयभावे नियमेन कार्या ॥ ४ ॥

सहोदर, नौकर, पराक्रम एवं अनुजीवी आदि इन सब का विचार तृतीय भाव से करना चाहिये ॥ ४ ॥

सुहृद्-गृह-ग्राम-चतुष्पदो वा क्षेत्राद्यमालोकनकं चतुर्थे।
दृष्टे शुभानां शुभयोगतो वा भवेत्प्रवृद्धिर्नियमेन तेषाम् ॥ ५ ॥

मित्र, मकान, गाँव, पशुधन, खेती और अमालोकनक प्रभृति का विचार चतुर्थ भाव से करे। शुभ ग्रहों के योग व दृष्टि से इन सब की वृद्धि निश्चित होती है ॥ ५ ॥

बुद्धिप्रबन्धात्मजमन्त्रविद्या-विनेयगर्भस्थिति-नीतिसंस्थाः।
सुताभिधाने भवने नराणां होरागमज्ञैः परिचिन्तनीयम् ॥ ६ ॥

बुद्धि के प्रबन्ध, सन्तान, नीति, मन्त्राराधन, न्याय, गर्भ-स्थिति इन सब का विचार पञ्चम भाव से करना चाहिये ॥ ६ ॥

वैरिव्रातं क्रूरकर्मामयानां चिन्ता शङ्का मातुलानां विचारः ।
होरापारावारपारंप्रयातैरेतत्सर्वं शत्रुभावे विचिन्त्यम् ॥ ७ ॥

शत्रु समूह, फोड़ा-फुन्सी, कुकर्म, रोग की स्थिति, मामा की चिन्ता, शङ्का इन सब का विचार षष्ठभाव से करना चाहिये ॥ ७ ॥

रणाङ्गणं चापि वणिक्क्रिया च जायाविचारो गमनप्रमाणम् ।
शास्त्रप्रवीणेन विचारणीयं कलत्रभावे किल सर्वमेतत् ॥ ८ ॥

संग्राम, वाणिज्य, स्त्री, विवाह, यात्रा इन सब का विचार सप्तम भाव से करना चाहिए ॥ ८ ॥

नद्युत्तारात्पन्थवैषम्यदुर्गं शस्त्रं चायुः सङ्कटञ्चेति सर्वम् ।
रन्ध्रस्थाने सर्वथा कल्पनीयं प्राचीनानामाज्ञया जातकज्ञैः ॥ ९ ॥

नदी से पार होना एवं समुद्री मार्ग और मार्गों की विषमता, शस्त्राघात, आयुर्दाय, विशेष संकटादि रोग का विचार इस अष्टम भाव से करना चाहिये ॥ ९ ॥

धर्मक्रियायां हि मनःप्रवृत्तिर्भाग्योपपत्तिं विमलं च शीलम् ।
तीर्थप्रयाणं प्रणयः पुराणैः पुण्यालये सर्वमिदं प्रदिष्टम् ॥१०॥

धर्म में प्रवृत्ति, भाग्योदय, सुशीलता, तीर्थ यात्रा, दान-तप, विनय इन सब का विचार नवमभाव से करना चाहिये ॥ १० ॥

व्यापार-मुद्रा-नृपमान-राज्यं प्रयोजनं चापि पितुस्तथैव ।
महत्फलाप्तिः खलु सर्वमेतद्राज्याभिधाने भवने विचार्यम् ॥११॥

व्यापार, मुद्रा, राजा से आदर, राज्य सम्बन्धी प्रयोजन, पिता के सुख-दुःख का विचार, विशेष कर्मों की सफलता, उच्च पद प्राप्ति-योग इन सब का विचार दशम भाव से करे ॥ ११ ॥

गजाश्वहेमाम्बरछत्रजातमान्दोलिकाः मङ्गलमङ्गलानि ।
लाभः किलैषामखिलं विचार्यमेतत्तु लाभस्य गृहे गृहज्ञैः ॥१२॥

हाथी, घोड़ा, सुवर्ण, वस्त्र, छत्र, पालकी, समस्त माङ्गलिक कार्य एवं सब प्रकार के लाभ इन सब का विचार एकादश भाव से करे ॥ १२ ॥

हानिर्दानं व्ययश्चापि दण्डो निर्बन्ध एव च ।
सर्वमेतद् व्ययस्थाने चिन्तनीयं प्रयत्नतः ॥ १३ ॥

हानि, दान, खर्च, दण्ड, बन्धन इन सबों का विचार व्यय भाव से करना चाहिये ॥ १३ ॥

मूर्त्यादयः पदार्थो ज्ञायन्ते येन जन्तूनाम्।
तदिदमधुना प्रवक्ष्ये भावाध्यायं विशेषेण ॥ १४ ॥

शरीर, धन, भाई—आदि सब पदार्थों की हानि और लाभ जिससे समझा जाता है, उन ग्रह-भाव फलों को मैं कहता हूँ ॥ १४ ॥

द्वादशभावस्थ सूर्य के फल—

सवितरि तनुसंस्थे शैशवे व्याधियुक्तो
नयनगदसुदुःखी नीचसेवानुरक्तः।
न भवति गृहमेधी दैवयुक्तो मनुष्यो
भ्रमति विकलमूर्तिः पुत्रपौत्रैर्विहीनः ॥ १ ॥

सूर्य तनुभाव में हो तो—वह जातक बाल्यावस्था में रोगी, नेत्र रोग से दुःखी, नीच का सेवक, गृह सुख से हीन, प्रारब्धवादी, विकल शरीर और सन्तानहीन होता है ॥ १ ॥

धनगतदिननाथे पुत्रदारैर्विहीनः
कृशतनुरतिदीनो रक्तनेत्रः कुकेशः।
भवति च धनयुक्तो लोहताम्रेण सत्यं
न भवति गहमेधी मानवो दुःखभागी ॥ २ ॥

द्वितीय भाव में सूर्य हो तो स्त्री और सन्तान से हीन, कृश शरीर, दीन, लाल नेत्र वाला, खराब केश वाला, लोहा और ताँवा के व्यापार से धनी, गृह से हीन और दुःखी होता है ॥ २ ॥

सहजभवनसंस्थे भास्करे भ्रातृनाशः
प्रियजनहितकारी पुत्रदाराभियुक्तः।
भवति च धनयुक्तो धैर्ययुक्तः सहिष्णु-
र्विपुलधनविहारी नागरीप्रीतिकारी ॥ ३ ॥

तृतीय भाव में सूर्य हो तो सहोदरहीन, अपने मित्रों का हितकारी, स्त्री, पुत्रादि से युक्त, धनी, धैर्यवान्, क्षमाशील और स्त्रियोंका प्रिय होता है ॥३॥

विविधजनविहारी बन्धुसंस्थो दिनेशो
भवति च मृदुचेता गीतवाद्यानुरक्तः।
समरशिरसि युद्धे नास्ति भङ्गः कदाचित्
प्रचुरधनकलत्री पार्थिवानां प्रियश्च ॥ ४ ॥

चतुर्थ भाव में सूर्य हो तो सब प्रकार के लोगों में मिलनेवाला, कोमल हृदय, संगीतज्ञ, रण में विजयी, धन और स्त्री सुख सहित सदा राजा का प्रिय होता है ॥ ४ ॥

तनयगतदिनेशे शैशवे दुःखभागी
न भवति धनभागी यौवने व्याधियुक्तः ।
जनयति सुतमेकं चान्यगेहश्च शूर-
श्चपलमतिविलासी क्रूरकर्मा कुचेताः ॥ ५ ॥

पञ्चम भाव में सूर्य हो तो बाल्यावस्था में दुःखी, युवावस्था में अधनी, रोग से युक्त, एक पुत्र वाला, परघरवासी, क्रूर, चंचल, नीच कर्म करने वाला तथा दुष्ट हृदय वाला होता है ॥ ५ ॥

अरिगृहगतभानौ योगशीलो मतिस्थो
निजजनहितकारी ज्ञातिवर्गप्रमोदी ।
कृशतनुगृहमेधी चारुमूर्तिविलासी
भवति च रिपुजेता कर्मपूज्यो दृढाङ्गः ॥ ६ ॥

षष्ठभाव में रवि हो तो योगी, सुबुद्धि, अपने परिजनों का पोषक, ज्ञानियों में श्रेष्ठ, कृशदेह, गृह सुख से युक्त, उत्तम रूप, विलासी, शत्रु को जीतने वाला, सत्कर्म से लोक में पूज्य और दृढ़ देह वाला होता है ॥ ६ ॥

युवतिभवनसंस्थे भास्करे स्त्रीविलासी
न भवति सुखभागी चञ्चलः पापशीलः ।
उदरसमशरीरो नातिदीर्घो न ह्रस्वो
कपिलनयनरूपः पिङ्गकेशः कुमूर्तिः ॥ ७ ॥

सप्तम भाव में सूर्य हो तो स्त्री के साथ विलास करने वाला, किन्तु अन्य सुख से रहित, चंचल, पापी, समदेह (न लम्बा न छोटा), कपिल वर्ण नेत्र, पिङ्गलवर्ण केशवाला और कुरूप होता है ॥ ७ ॥

निधनगतदिनेशे चञ्चलस्त्यागशील:
किल बुधगणसेवी सर्वदा रोगयुक्तः ।
वितथबहुलभाषी भाग्यहीनो विशीलो
रतिविहितकुचैलो नीचसेवी प्रवासी ॥ ८ ॥

जन्म लग्न में सूर्य अष्टमभावमें हो तो चञ्चल, त्यागी, विद्वान् का आदर करने वाला, सदा रोग से पीड़ित, व्यर्थ अधिक बोलने वाला, भाग्यहीन, शीलरहित, कुवस्त्रधारी, नीचका सेवक और परदेशवासी होता है ॥ ८ ॥

ग्रहगतदिननाथे सत्यवादी सुकेशी
कुलजनहितकारी देवविप्रानुरक्तः ।
प्रथमवयसि रोगी यौवने स्थैर्ययुक्तो
बहुतरधनयुक्तो दीर्घजीवी सुमूर्तिः ॥ ९ ॥

नवम भाव में रवि हो तो वह मनुष्य—सत्य वक्ता, सुन्दर केश वाला, अपने परिजनों का हित करने वाला, देव और ब्राह्मणों का भक्त, बाल्यावस्था में रोगी, युवावस्था में स्थिरता से युक्त, धनवान्, दीर्घायु और सुरूप होता है ॥ ९ ॥

दशमभवनसंस्थे तीव्रभानौ मनुष्यो
गुणगणसुखभागी दानशीलोऽभिमानी ।
मृदुलघुशुचियुक्तो नृत्यगीतानुरागी
नरपतिरतिपूज्यः शेषकाले च रोगी ॥ १० ॥

दशम भाव में सूर्य हो तो गुण-गणों से युक्त, दानी, अभिमानी, कोमल हृदय, नाटे कद का, पवित्रता प्रिय, नृत्य और गीत में प्रेम रखने वाला, राजा का मान्य और अन्तिम वयस में रोगी होता है ॥ १० ॥

बहुतरधनभागी चायसंस्थे दिनेशे
नरपतिगृहसेवी भोगहीनो गुणज्ञः ।
कृशतनुधनयुक्तः कामिनीचित्तहारी
भवति चपलमूर्तिर्जातिवर्गप्रमोदी ॥ ११ ॥

एकादश भाव में रवि हो तो—बहुत धनवान्, राजा का सेवक, भोग-हीन, गुणग्राही, कृशदेह, धनयुक्त, स्त्रियों का प्रिय, चञ्चल और अपनी जातियों में प्रेम रखने वाला होता है ॥ ११ ॥

जडमतिरतिकामी चाऽन्ययोषिद्विलासी
विहगगणविघाती दुष्टचेताः कुमूर्तिः ।
नरपतिधनयुक्तो द्वादशस्थे दिनेशे
कथकजनविरोधी जङ्घरोगी कृशाङ्गः ॥ १२ ॥

द्वादश भाव में सूर्य हो तो—मन्द बुद्धि, कामी, परस्त्रीगामी, पक्षियों को मारने वाला, दुष्ट हृदय वाला, कुरूप, राजा के आश्रयसे धन पानेवाला एवं कथावाचकों का विरोधी और जाँघ में रोग वाला होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ चन्द्रमा के फल—

तनुगतकुमुदेशे वित्तपूर्णः सुखी स्याद्-
बहुतरधनभोगी वीर्ययुक्तः सुदेही ।
भवति च यदि नीचश्चन्द्रमाः पापगो वा
जडमतिरतिदीनः स्यात्तदा वित्तहीनः ॥ १ ॥

जन्म समय में लग्न (प्रथम) भाव में चन्द्रमा हो तो वह मनुष्य बहुत धनों का भोगी, बलवान्, सुन्दर देह वाला होता है। किन्तु यदि चन्द्रमा अपने नीच (वृश्चिक) का या पाप से युक्त हो तो निर्बुद्धि, दुःखी और धनहीन बनता है ॥ १ ॥

धनगतहरिणाङ्के त्यागशीलो मतिज्ञो
निधिरिव धनपूर्णो चञ्चलात्मा सुदुष्टः ।
जनयति बहुसौख्यं कीर्तिशाली सहिष्णु-
र्युवतिजनविलासी चन्द्रतुल्यस्वरूपः ॥ २ ॥

द्वितीय भाव में चन्द्रमा हो तो दानी, बुद्धिमान्, धनों से परिपूर्ण, चञ्चल, दुष्ट स्वभाव, दुःखी, यशस्वी, क्षमाशील, स्त्रियों से विलास करने वाला और चन्द्र समान सुन्दर होता है ॥ २ ॥

शशिनि सहजसंस्थे पापगेहे च नित्यं
न भवति बहुभाषी भ्रातृहर्ताऽरिमूर्तिः ।
भवति च सुखभोगी सौम्यगे रात्रिनाथे
सकलधननिधानं शास्त्रकाव्यप्रमोदी ॥ ३ ॥

तृतीय भाव में चन्द्रमा यदि पापग्रह की राशि में हो तो न बहुत बोलने वाला और भाइयों से शत्रुता करने वाला होता है। परन्तु शुभग्रह की राशि में होकर तृतीय भाव में गया हो तो—सुखी, सब धनों से युक्त, काव्यशास्त्र का ज्ञाता होता है ॥ ३ ॥

बहुतरवसुपूर्णो रात्रिनाथे चतुर्थे
प्रियजनहितकारी योषितां प्रीतिकारी ।
सततमिह स रोगी मांसमत्स्यादिभोगी
गजतुरगसमेतः क्रीडते हर्म्यपृष्ठे ॥ ४ ॥

चन्द्रमा चतुर्थ भाव में हो तो बहुत धनों से युक्त, अपने परिजनों का हित करने वाला, स्त्रियों को प्रसन्न करने वाला, सर्वदा रोग से युक्त, मत्स्य-मांस का भोगी, हाथी-घोड़ा आदि सवारी रखने वाला और प्रासाद (भवन) में रहने वाला होता है ॥ ४ ॥

तनयगतशशाङ्को विम्बपूर्णः सुखी स्याद्-
बहुतरसुतयुक्तो वश्यनारीसमेतः ।
यदि भवति शशाङ्कः क्षीणकायोऽरिगेहे
युवतिसुखसमूहैः पुत्रपौत्रैर्विहीनः ॥ ५ ॥

यदि पूर्ण चन्द्रमा पञ्चम भाव में हो तो समस्त सुख और पतिव्रता स्त्री से युक्त होता है। यदि क्षीण चन्द्र पञ्चम भाव में हो तो स्त्री-पुत्र-पौत्रादि और सुख से हीन होता है ॥ ५ ॥

रिपुगृहगशशाङ्कः क्षीणकायो यदि स्यान्-
न भवति बहुभोगी व्याधिदुःखस्य दाता ।
यदि गृहमथ तुङ्गः पूर्णदेहः शशाङ्को
बहुतरसुखदाता स्यात्तदा मानवानाम् ॥ ६ ॥

षष्ठभाव में क्षीण चन्द्रमा हो तो जातक सुख भोगने वाला, नहीं होता, किन्तु रोग से पीड़ित रहता है। यदि षष्ठ भाव अपना घर या उच्च हो या पूर्ण-बिम्ब चन्द्रमा हो तो वह मनुष्य बहुत सुखी होता है ॥ ६ ॥

विपुलवपुषि चन्द्रे सप्तमस्थे मनुष्यो
रुचिरयुवतिनाथः काञ्चनाढ्यः सुदेही ।
शशिनि कृशशरीरे पापगे पापदृष्टे
न भवति सुखभागी रोगिपत्नीपतिः स्यात् ॥ ७ ॥

सप्तम भाव में यदि पूर्ण चन्द्रमा हो तो वह मनुष्य सुन्दरी स्त्री का पति, सुवर्णादि धन से युक्त, सुन्दर शरीर वाला होता है। यदि चन्द्रमा क्षीण हो तथा पाप राशि में पापसे दृष्ट हो तो सुख से हीन और रोगिणी स्त्री का पति होता है ॥ ७ ॥

निधनभवनसंस्थे शीतरश्मौ नराणां
निधनमचिरकाले पापगेहे ददाति ।
निजभृगुगुरुगेही सौम्यगेही च पूर्णो
जनयति बहुदुःखं श्वासकासादिरोगैः ॥ ८ ॥

यदि चन्द्रमा अष्टम भाव में पाप राशि में हो तो शीघ्र मरण कारक है। यदि स्वगृह या शुक्र या बुध या गुरु की राशि में हो तो श्वास-कासादि रोग से दुःखी होता है ।। ८ ।।

नवमभवनसंस्थे शीतरश्मौ प्रपूर्णे
बहुतरसुखभुक्त्या कामिनीप्रीतिकारी।
न भवति धनभागी क्षीणगे नीचगे वा
विमलपथविरोधी निर्गुणो मूढचेताः ।। ९ ।।

नवम भाव में पूर्ण चन्द्रमा हो तो सब सुखों से युक्त, स्त्री का प्रिय होता है। यदि चन्द्रमा क्षीण हो या नीचका हो तो धनहीन, धर्मविरुद्ध, निर्गुण और मूर्ख होता है ।। ९ ।।

बहुतरसुखभागी कर्मसंस्थे हिमांशौ
विविधधननिधानं पुत्रदारादिपूर्णः।
रिपुकुटिलगृहस्थे कासरोगा कृशाङ्गः
पितृयुवतिधनाढ्यः कर्महीनो मनुष्यः ।। १० ।।

दशमभाव में चन्द्रमा हो तो—सब सुख का भागी, सब सम्पत्ति से पूर्ण होता है। यदि शत्रु या पापग्रह की राशि में हो तो कासरोग से पीड़ित, दुर्बल देह, माता से धन पाने वाला और स्वयं कर्महीन होता है ।। १० ।।

बहुतरधनभोगी चायसंस्थे शशाङ्के
प्रचुरसुखसमेतो दारभृत्यादियुक्तः।
शशिनि कृशशरीरे नीचपापारिगेहे
न भवति सुखभागी व्याधितो मूढचेताः ।। ११ ।।

एकादश भाव में चन्द्रमा हो तो बहुत धन तथा सब सुख से युक्त और स्त्री, नौकर से सुख पाता है। यदि चन्द्रमा क्षीण हो, शत्रु या नीच राशि का हो तो सुखहीन और रोग से व्याकुल होता है ।। ११ ।।

व्ययनिलयनिवेशे रात्रिनाथे कृशाङ्गः
सततहिमसरोगी क्रोधनो निर्धनश्च।
निजबुधगुरुगेहे दान्तिकस्त्यागशीलः
कृशतनुसुखभोगी नीचसङ्गी सदैव ।। १२ ।।

द्वादश भाव में चन्द्रमा हो तो दुर्बल, कफरोग से पीड़ित, क्रोधी और निर्धन होता है। यदि कर्क, मिथुन, कन्या, धनु या मीन में हो तो कर्मनिष्ठ, दानी, कृशशरीर, सुखभोगी किन्तु नीचका सेवक होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ मंगल फल–

उदरदशनरोगी शैशवे लग्नभौमे
पिशुनमतिकृशाङ्गः पापकृत्कृष्णरूपः ।
भवति चपलचित्तो नीचसेवी कुचैली
सकलसुखविहीनः सर्वदा पापशीलः ॥ १ ॥

लग्न में मंगल हो तो बाल्यावस्था में पेट और दाँत में रोग वाला, चुगलखोर, कृशदेह, पापी, कृष्णवर्ण, चञ्चल, नीच का सेवक, मलिन वस्त्रवाला, सब सुख से हीन होता है ॥ १ ॥

धनगतपृथिवीजे धातुवादी प्रवासी
ऋणधनकृतचित्तो द्यूतकर्ता सहिष्णुः ।
कृषिकरणसमर्थो विक्रमे लग्नचित्तः
कृशतनुसुखभागी मानवः सर्वदैव ॥ २ ॥

द्वितीयभाव में मङ्गल हो तो धातुवादी, विदेश में रहनेवाला, ऋण करने में प्रवृत्त, जुआड़ी, क्षमाशील, खेती करने में पटु, पराक्रमी, कृशदेह एवं सुखी होता है ॥ २ ॥

सहजभवनसंस्थे भूमिजे भ्रातृहर्ता
कृशतनुसुखभागी तुङ्गभौमे विलासी ।
जनधनसुखहीनो नीचशत्रूग्रगेहे
वसति सकलपूर्णे मन्दिरे कुत्सिते च ॥ ३ ॥

तृतीय भाव में मङ्गल हो तो सहोदरहीन, कृशदेह और सुखभागी होता है। मङ्गल उच्च (मकर) का हो तो विलास करनेवाला और नीच या शत्रु-गृह का हो तो जन-धन और सुख से हीन, सब पदार्थ रहते हुए भी कुत्सित घर में रहनेवाला होता है ॥ ३ ॥

जडमतिरतिदीनो बन्धुसंस्थे च भौमे
न भवति कुलभार्ये बन्धुदैन्येन दुःखी ।

भ्रमति सकलदेशे नीचसेवानुरक्तः
परवशपरयोषित् लुब्धचित्तः सदैव ॥ ४ ॥

चतुर्थ भाव में मङ्गल हो तो बुद्धिहीन, दीन, नीच कुलोत्पन्न, बन्धुओं से रहित, विदेशों में घूमनेवाला, नीच का सेवक, दूसरों के आधीन और परस्त्री से प्रेम करनेवाला होता है ॥ ४ ॥

तनयभवनसंस्थे भूमिपुत्रे मनुष्यो
भवति तनयहीनः पापशीलोऽतिदुःखी ।
यदि निजगृहतुङ्गे वर्तते भूमिपुत्रः
कृशमलयुतगात्रं पुत्रमेकं ददाति ॥ ५ ॥

पञ्चम भाव में मङ्गल हो तो सन्तानहीन, पापी, दुःखी होता है। यदि अपने घर या उच्च का हो तो दुर्बल और कुरूप एक पुत्र होता है ॥ ५ ॥

रिपुगृहगतभौमे सङ्गरे मृत्युभागी
सुतधनपरिपूर्णस्तुङ्गगे सौख्यभागी ।
रिपुगणपरिदृष्टे नीचगे क्षोणिपुत्रे
भवति विकलमूर्तिः कुत्सितः क्रूरकर्मा ॥ ६ ॥

षष्ठभाव में मङ्गल हो तो लड़ाई में उसकी मृत्यु होती है। उच्च का हो तो धन-पुत्रादि से युक्त सुखी होता है। यदि नीच राशिस्थ हो या अपने शत्रु से दृष्ट हो तो वह रोगयुक्त और निन्द्य कर्म करनेवाला होता है ॥ ६ ॥

मुनिगृहगतभौमे नीचसंस्थेऽरिगेहे
युवतिमरणदुःखं जायते मानवानाम् ।
मकरगृहनिजस्थे नाऽन्यपत्नीश्च धत्ते
चपलमतिविशालां दुष्टचित्तां विरूपाम् ॥ ७ ॥

सप्तमभाव में मङ्गल यदि नीच या शत्रु राशिका हो तो स्त्री के मरणसे दुःखी होता है। यदि मकर या मेष, वृश्चिक में हो तो वह ना (पुरुष) चञ्चला, स्थूलशरीर और दुष्ट स्वभाव वाली कुरूपा आदि पर-स्त्रियों से प्रेम करने वाला होता है ॥ ७ ॥

प्रलयभवनसंस्थे मङ्गले क्षीणनीचे
व्रजति निधनभावं नीरमध्ये मनुष्यः ।

[1]धनुनिकटचरेऽजे सर्वदा चैव भोगी
करपदगखुनीलो मृत्युलोकं प्रयाति ॥ ८ ॥

यदि अष्टमभाव में नीच या शत्रु राशिका (बलहीन) मङ्गल हो तो वह मनुष्य जलमें डूबकर मरता है। यदि धनुके निकट (वृश्चिक या मकर में अथवा मेषमें मङ्गल) हो तो वह मनुष्य नीलरंग के हाथ-पैरवाला होता है तथा सब प्रकार के सुख भोगकर मृत्यु को प्राप्त करता है ॥ ८ ॥

नवमभवनसंस्थे क्षोणिपुत्रेऽतिरोगी
नयनकरशरीरैः पिङ्गलः सर्वदैव ।
बहुजनपरिपूर्णो भाग्यहीनः कुचैलो
विकृतिजनसुवेषः शीलविद्यानुरक्तः ॥ ९ ॥

नवम भाव में मङ्गल हो तो रोगी, पिङ्गलवर्ण आँख, हाथ और देह-वाला, बहुत, परिवार वाला किन्तु भाग्यहीन, कुवस्त्रधारी, पुण्यहीन, समान रूप, शीलवान् और विद्यानुरागी होता है ॥ ९ ॥

दशमगतमहीजे दान्तिकः कोशहीनो
निजकुलजयकारी कामिनीचित्तहारी ।
जरठसमशरीरो भूमिजीव्योपकोपी
द्विजगुरुजनभक्तो नाऽतिदीर्घो न ह्रस्वः ॥ १० ॥

दशम भाव में मङ्गल हो तो जातक जितेन्द्रिय, कोश (खजाने) से हीन, अपने कुलमें श्रेष्ठ, स्त्रियों का प्रिय, जरठ (दृढ़) और समान शरीर वाला, खेती करनेवाला, क्रोधी, ब्राह्मण और गुरु का भक्त, न अधिक लम्बा और न अधिक छोटा होता है ॥ १० ॥

सुरजनहितकारी चायसंस्थे च भौमे
नृप इव गृहमेधी पीडितः कोपपूर्णः ।
भवति च यदि तुङ्गे लोकसौभाग्ययुक्तो
धनकिरणनियुक्तः पुण्यकामार्थलोभी ॥ ११ ॥

एकादश भाव में मङ्गल हो तो देवों का भक्त, राजा के समान पुत्रादि सन्तान से युक्त किन्तु पीड़ासहित, क्रोधी होता है। यदि उच्च (मकर) का भौम हो तो लोक में भाग्यशाली, धनी, तेजस्वी, पुण्यवान् और धनका लोभी होता है ॥ ११ ॥

---

१. यहाँ धनुशब्द उकारान्त है । "धनुषा च धनुर्विदुः" द्विरूपकोश ।

परधनहरणे सर्वदा चञ्चलाक्ष-
श्चपलमतिविहारी हास्ययुक्तः प्रचण्डः ।
भवति च सुखभागी द्वादशस्थे च भौमे
परयुवतिविलासो साक्षिकः कर्मपूरः ॥ १२ ॥

द्वादश भाव में मङ्गल हो तो दूसरे के धनका लोभी, चञ्चल नेत्र, चञ्चल बुद्धि, हास्यप्रिय, उग्र स्वभाव, सुखी, परस्त्रीगामी, गवाही देनेवाला और कार्य को पूरा करनेवाला होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ बुध फल—

तनुगतशशिपुत्रो कान्तिमांश्चाऽतिहृष्टो
विमलमतिविशालः पण्डितस्त्यागशीलः ।
मितमृदुशुचिभोगी सत्यवादी विलासी
बहुतरसुखभागी सर्वकालप्रवासी ॥ १ ॥

लग्न में बुध हो तो सुन्दर रूप, हृदय दुष्ट किन्तु सुबुद्धि, पण्डित, दानी, स्वल्प, कोमल और पवित्र भोजन करनेवाला, सत्यवक्ता, विलासप्रिय, अत्यन्त सुखी, सदा परदेश में रहनेवाला होता है ॥ १ ॥

भवति च पितृभक्तः सुस्थिरः पापभीरु-
र्मृदुतनुखररोमा दीर्घकेशोऽतिगौरः ।
धनगतशशिसूनौ सत्यवादी विहारी
बहुतरवसुभागी सर्वकालप्रवासी ॥ २ ॥

द्वितीयभाव में बुध हो तो पिता का भक्त, स्थिर, पापसे डरनेवाला, अति गौरवर्ण, सत्यवादी, विहारप्रिय, अतिसुखी और परदेशवासी होता है ॥ २ ॥

साहसी निजजनैः परियुक्तश्चित्तशुद्धिरहितो हतसौख्यः ।
मानवः कुशलतेप्सितकर्ता शीतभानुतनयेऽनुजसंस्थे ॥ ३ ॥

तृतीय भाव में बुध हो तो मनुष्य—साहसी, परिवारों से युक्त, अशुद्ध हृदय वाला, सुखहीन, किन्तु कुशलता पूर्वक अपने अभीष्ट को सिद्ध करने वाला होता है ॥ ३ ॥

बहुतरधनपूर्णो भ्रातृहर्ता च पापे
बहुतरबहुपत्नी पूर्णगेहे स्वतुङ्गे ।

तरलमतिरलज्जः क्षीणजङ्घः कृशाङ्गः
शिशुवयसि च रोगी बन्धुसंस्थे कुमारे ॥ ४ ॥

चतुर्थभाव में पापी बुध हो तो बहुत धनों से युक्त, बन्धुहीन होता है। यदि अपने उच्च या गृह में हो तो बहुत स्त्रीवाला, चञ्चल बुद्धि, निर्लज्ज, कृश जाँघवाला, दुर्बलदेह और बाल्यावस्था में रोगी होता है ॥ ४ ॥

तनयमन्दिरगे शशिनन्दने सुतकलत्रयुतः सुखभाजनम्।
विकचपङ्कजचारुमुखः सुखी सुरगुरुद्विजभक्तियुतः शुचिः ॥५॥

पञ्चमभाव में बुध हो तो स्त्री-पुत्रों से युक्त, सुखभागी, कमलसदृश सुन्दर मुखवाला, देव, ब्राह्मण और गुरु का भक्त तथा पवित्र हृदय होता है ॥ ५ ॥

अरिनिकेतनवर्तिशशाङ्कजो रिपुकुलाद्भयदो यदि वक्रगः।
यदि च पुण्यगृहे शुभवीक्षितो रिपुकुलं विनिहन्ति शुभप्रदः ॥६॥

षष्ठ भाव में बुध हो तथा वक्र हो तो शत्रुओं से भय होता है। यदि शुभ ग्रह की राशि में शुभग्रह से दृष्ट हो तो शत्रुओं को जीतने वाला और सुखी होता है ॥ ६ ॥

तुरगभावगते हरिणाङ्कजे भवति चञ्चलमध्यनिरीक्षणः।
विपुलवंशभवप्रमदापतिः स च भवेच्छुभगे शशिवंशजे ॥७॥

सप्तम भाव में बुध हो तो चञ्चल और मध्यम दृष्टिवाला, यदि शुभ राशि में हो तो उत्तम कुलोत्पन्न स्त्री का पति होता है ॥ ७ ॥

निधनवेश्मनि सत्ययुतो बुधे शुभगृहेऽतिथिमण्डल एव च।
यदि च पापयुते रिपुगेहगे मदनकाम्यजवेन पतत्यधः ॥८॥

अष्टम भाव में बुध यदि शुभ ग्रह की राशि में हो तो वह मनुष्य सत्य-वक्ता और अतिथि का सत्कार करने वाला होता है। यदि शत्रुगृह या पापग्रह से युक्त हो तो कामदेव के वश होकर पतित होता है ॥ ८ ॥

नवमसौख्यगृहे शशिनन्दने धनकलत्रसुतेन समन्वितः।
भवति पापयुते विपथस्थितः श्रुतिविनिन्दकरः शशिजेऽधमः ॥९॥

नवम भाव में यदि शुभ राशि का बुध हो तो धन, स्त्री और पुत्रों से युक्त होता है। यदि पापग्रह से युत हो तो जातक कुमार्गगामी तथा वेद-शास्त्रों का निन्दक होता है ॥ ९ ॥

गुरुजनस्य हिते निरतो जनो बहुधनो दशमे शशिनन्दने।
निजभुजार्जितवित्ततुरङ्गमो बहुधनैर्नियतो मितभाषणः ॥१०॥

दशम भाव में बुध हो तो गुरुजनों (माता-पिता आदि) का हित करने वाला, बहुत धनी और अपने भुजबल से धन और घोड़े, हाथी आदि सवारी का उपार्जन करने वाला होता है ॥ १० ॥

श्रुतमतिर्निजवंशहितः कृशो बहुधनप्रमदाजनवल्लभः ।
रुचिरनीलवपुः शुभलोचनो भवति चायगते शशिजे नरः ॥११॥

एकादश भाव में बुध हो तो शास्त्र-चिन्तक, अपने कुल का पोषक, दुर्बलदेह, बहुत धन और स्त्रियों से युक्त, सुन्दर श्यामवर्ण एवं सुन्दर नेत्रवाला होता है ॥ ११ ॥

भवति च व्ययगे शशिनन्दने विकलमूर्तिधरो धनवर्जितः ।
परकलत्रधनेऽपि च चित्तवान् व्यसनदूररतः कृतकः सदा ॥१२॥

द्वादशभाव में बुध हो तो विकल शरीर, धनहीन, दूसरे के धन और स्त्री में लोभ करनेवाला, व्यसन से रहित और उपकारी होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ बृहस्पति फल—

विविधवस्त्रविपूर्णकलेवरः कनकरत्नधनः प्रियदर्शनः ।
नृपतिवंशजनस्य च वल्लभो भवति देवगुरौ तनुगे नरः ॥१॥

तनुभाव में गुरु हो तो वह मनुष्य नाना प्रकार के वस्त्र, सुवर्ण, रत्न और धन से पूर्ण, सुन्दर स्वरूप वाला, राजा तथा देव, गुरु का प्रिय होता है ॥ १ ॥

सुरगुरौ धनमन्दिरसंश्रिते प्रमुदितो रुचिरप्रमदापतिः ।
भवति मानधनो बहुमौक्तिकागतवसुर्भविता प्रसवाह्निके ॥२॥

गुरु यदि द्वितीय भाव में हो तो प्रसन्न चित्त, उत्तम स्त्री का पति, मानी तथा मोती के व्यापार से अधिक धन वाला होता है ॥ २ ॥

सहजमन्दिरगे च बृहस्पतौ भवति बन्धुगतार्थसमन्वितः ।
कृपणतामपि गच्छति कुत्सिते धनयुतोऽपि सदा धनहानिमान् ॥३॥

तृतीय भाव में गुरु हो तो वन्धुओं के उपकारार्थ धनोपार्जन करने वाला, किसी अनुचित कार्य में धन नहीं खर्च करता है, परञ्च धन का लाभ और खर्च बराबर करने वाला होता है ॥ ३ ॥

सम्माननानाधनवाहनाद्यैः सञ्जातहर्षः पुरुषः सदैव ।
नृपानुकम्पासमुपात्तसम्पद्दम्भोलिभृन्मन्त्रिणि भूतलस्थे ॥४॥

चतुर्थभाव में बृहस्पति हो तो लोक में मान, धन, वाहन आदि से सम्पन्न, सदा प्रसन्न, राजा के अनुग्रह से धनलाभ करनेवाला और हीरा-जवाहरात वाला होता है ॥ ४ ॥

सुहृदयश्च सुहृज्जनवन्दितः सुरगुरौ सुतगेहगते नरः ।
विपुलशास्त्रमतिः सुखभाजनं भवति सर्वजनप्रियदर्शनः ॥५॥

पञ्चम भाव में गुरु हो तो सहृदय, मित्रों से पूजित, शास्त्रों का ज्ञाता, सुखी और सबका प्रिय और सुरूपवान् होता है ॥ ५ ॥

करिहयैश्च कृशाङ्गतनुर्भवेज्जयति शत्रुकुलं रिपुगे गुरौ ।
रिपुगृहे यदि वक्रगते गुरौ रिपुकुलाद्भयमातनुते विभुः ॥६॥

षष्ठभाव में गुरु हो तो कृश शरीर होता हुआ भी हाथी-घोड़े के द्वारा शत्रुओं को जीतने वाला होता है। यदि गुरु शत्रुगृह में हो या वक्र हो तो शत्रु का भय होता है ॥ ६ ॥

युवतिमन्दिरगे सुरयाजके नयति भूपतितुल्यसुखं जनः ।
अमृतराशिसमानवचाः सुधीर्भवति चारुवपुः प्रियदर्शनः ॥७॥

सप्तम भाव में बृहस्पति हो तो राजा के समान सुखी, प्रिय वक्ता, बुद्धिमान्, सुन्दर शरीर और दर्शनीय पुरुष होता है ॥ ७ ॥

विमलतीर्थकरश्च बृहस्पतौ निधनगे न मनःस्थिरता यदा ।
धनकलत्रविहीनकृशः सदा भवति योगपथे निरतः परम् ॥८॥

यदि अष्टमभाव में गुरु हो तो चञ्चल चित्तवाला, उत्कृष्ट तीर्थ करने वाला, धन और स्त्री से रहित, कृशदेह और योग-क्रिया में तत्पर रहता है ॥ ८ ॥

सुरगुरौ नवमे मनुजोत्तमो भवति भूपतितुल्यधनी शुचिः ।
कृपणबुद्धिरतः कृपणः सुखी बहुधनप्रमदाजनवल्लभः ॥९॥

नवम भाव में बृहस्पति हो तो जनों में श्रेष्ठ, राजातुल्य धनी, पवित्र हृदय, कृपण, सुखी तथा स्त्रियों का प्रिय होता है ॥ ९ ॥

दशममन्दिरगे च बृहस्पतौ तुरगरत्नविभूषितमन्दिरः ।
भवति नीतिगुणैर्बुधसम्मतः परधनाङ्गनवर्जितधार्मिकः ॥१०॥

दशम भाव में बृहस्पति हो तो घोड़े आदि सवारी तथा रत्नादि से पूर्ण घरवाला, नीति और गुण से पण्डितों का मान्य तथा परधन और परस्त्री के लोभ से हीन धर्मात्मा होता है ॥ १० ॥

व्रजति भूमिपतेः समतां धनैर्निजकुलस्य विकारकरः सदा ।
सकलधर्मरतोऽर्थसमन्वितो भवति चायगते सुरयाजके ॥११॥

एकादश भाव में बृहस्पति हो तो धन में राजा के तुल्य, अपने कुलका उपकार करनेवाला, धर्म में रत, धनों से युक्त होता है ॥ ११ ॥

शिशुदशाभवने हृदि रोगवानुचितदानपराङ्मुख एव च ।
कुलधनेन युतः कुलदाम्भिको भवति पापगृहे च बृहस्पतौ ॥१२॥

द्वादश भाव में गुरु हो तो बाल्यावस्था में हृदय रोगी, उचित दान करने में असमर्थ होता है। यदि पापग्रह की राशि में हो तो कुलोचित्त सम्पत्ति वाला एवं कुलाभिमानी (दम्भ में खर्च करनेवाला) दम्भी होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ शुक्र फल–

जनुषि लग्नगते भृगुनन्दने भवति कार्यरतः परपण्डितः ।
विमलशिल्पयुते सदने रतो भवति कौतुकहा विधिचेष्टितः ॥१॥

जन्म समय में प्रथम भाव में शुक्र हो तो जातक कार्य में तत्पर, परम पण्डित, उत्तम शिल्पयुत घर में रहने वाला, किसी भी विषय में कुतूहल नहीं माननेवाला, विधि (प्रारब्ध) को प्रबल मानने वाला होता है ॥ १ ॥

परधनेन धनी धनगे भृगौ भवति योषिति वित्तपरो नरः ।
रजतसीसधनी गुणशैशवः कृशतनुः सुवचा बहुपालकः ॥२॥

द्वितीय भाव में शुक्र हो तो दूसरों के धन से धनवान्, स्त्रियों को धन देनेवाला, चाँदी, सीसा आदि व्यापार से धनवान्, सदा लड़कपन से युक्त, दुर्वल देह, प्रियवक्ता और बहुतों को पालनेवाला होता है ॥ २ ॥

सहजमन्दिरवर्तिनि भार्गवे प्रचुरमोहयुतो भगिनीसुते ।
भवति लोचनरोगसमन्वितो धनयुतः प्रियवाक् च सदम्बरः ॥३॥

तृतीय भाव में शुक्र हो तो वह मनुष्य अपने भागिनेय (भानजा) में प्रेम रखनेवाला, नेत्र रोग वाला, धनवान्, मधुर वक्ता और स्वच्छ वस्त्र धारण करने वाला होता है ॥ ३ ॥

भवति बन्धुगते भृगुजे नरो बहुकलत्रसुतेन समावृतः ।
सुरमते सुषमाढ्यवरे गृहे वसनपानविलाससमावृतः ॥४॥

चतुर्थ भाव में शुक्र हो तो बहुत स्त्री और सन्तान से युक्त, सुषमा (अतिशय शोभा) से युक्त, सुन्दर भवन में रहने वाला और अन्न-पान-वस्त्र आदि के विलासों से सम्पन्न होता है ॥ ४ ॥

तनयमन्दिरगे भृगुनन्दने बहुसुतो वरबुद्धियुतो भवेत् ।
बहुधनो गुणवान् वरनायको भवति चापि विलासवतीप्रियः ॥५॥

पञ्चम भाव में शुक्र हो तो बहुत सन्तान वाला, उत्तम बुद्धिमान्, अति धनवान्, गुणवान्, श्रेष्ठ नेत्र और चतुरा स्त्री का पति होता है ॥ ५ ॥

भवति वै कुशलोऽद्भुतपण्डितो रिपुगृहे भृगुजेऽस्तगते नरः।
जयति वैरिखिलं निजतुङ्गगे भृगुसुते शुभगे किल षष्ठगे ॥ ६ ॥

यदि शत्रु की राशि में या अस्त होकर शुक्र षष्ठभाव में हो तो चतुर तथा अद्भुत (चमत्कार युक्त) पण्डित होता है। शुक्र यदि अपने उच्च या शुभप्रद की राशि में हो तो शत्रुओंको जीतनेवाला होता है। याने इनके मत से षष्ठस्थ शुक्र सर्वदा शुभप्रद होता है ॥ ६ ॥

युवतिमन्दिरगे च सिते नरो बहुसुतेन धनेन समन्वितः।
विमलवंशभवप्रमदापतिर्भवति चारुवपुर्मुदितः सुखी ॥ ७ ॥

सप्तम भाव में शुक्र हो तो बहुत पुत्र और जन वाला, उत्तम कुलोत्पन्न स्त्रीका पति, सुन्दर शरीर, प्रसन्न और सुख युक्त होता है ॥ ७ ॥

निधनसद्मगते भृगुजे जनो विमलधर्मरतो नृपसेवकः।
भवति मांसप्रियः पृथुलोचनो निधनमेति चतुर्थवयस्यपि ॥ ८ ॥

अष्टम भाव में शुक्र हो तो धर्मात्मा, राजाका सेवक, मत्स्य-मांस प्रिय, विशालनेत्र तथा चतुर्थवयस (७५ वर्ष के ऊपर) में मृत्यु पानेवाला होता है ॥ ८ ॥

विमलतीर्थपरोऽच्छतनुः सुखी सुरवरद्विजवर्णरतः शुचिः।
निजभुजार्जितभाग्यमहोत्सवो भवति धर्मगते भृगुजे नरः ॥ ९ ॥

नवमभाव में शुक्र हो तो सुन्दर शरीर, सुखी,- देव-ब्राह्मणोंका भक्त, पवित्रहृदय, अपने भुजबल से धन-सुख उपार्जन करनेवाला होता है ॥ ९ ॥

दशममन्दिरगे भृगुवंशजे बधिरबन्धुयुतः स च भोगवान्।
वनगतोऽपि च राज्यफलं लभेत् समरसुन्दरवेषसमन्वितः ॥१०॥

दशमभाव में शुक्र हो तो उसका भाई बहिरा होता है, वह स्वयं भोगी और जङ्गल में भी राजा के समान सुखी, देवता समान सुन्दर शरीर वाला होता है ॥ १० ॥

आयगभावगते भृगुनन्दनो वरगुणावहितोऽप्यनलव्रतः।
मदनतुल्यवपुः सुखभाजनं भवति हास्यरतिः प्रियदर्शनः ॥११॥

एकादश भाव में शुक्र हो तो उत्तम गुणोंसे युक्त, अग्निहोत्री, कामदेवके समान सुन्दर, सुखभागी, हास्य प्रिय और दर्शनीय होता है ॥ ११ ॥

जनुषि वा व्ययवर्तिनि भार्गवे भवति रोगयुतः प्रथमं नरः।
तदनु दम्भपरायणचेतनः कृशबलो मलिनः सहितः सदा ॥१२॥

जन्म के समय १२ वें भावमें शुक्र हो तो बाल्यावस्था में रोगी, पश्चात् कृश शरीर और दम्भ से युक्त मलिन पुरुष होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ शनिफल-

सततमल्पगतिर्मदपीडितस्तपनजे तनुगे खलु चाऽधमः ।
भवति हीनकचः कृशविग्रहो मितसुहृद्रिपुसद्मनि मानवः ॥ १ ॥

जन्म समय लग्न में शनि हो तो जातक मन्द गति, मदसे पीड़ित, नीच प्रकृति, अल्प केशवाला, दुर्बल शरीर होता है। यदि शनि अपने शत्रुकी राशि में हो तो थोड़े मित्र (अर्थात् अधिक शत्रु) वाला होता है ॥ १ ॥

धननिकेतनवर्त्तिनि भानुजे भवति वाक्यसहः स धनान्वितः ।
चपललोचनसञ्चयने रतो भवति चौरपरो नियतं सदा ॥ २ ॥

द्वितीय भाव में शनि हो तो वह मनुष्य सहनशील, धनवान्, चञ्चल नेत्र, शीघ्रगामी तथा चोरी करने में तत्पर रहता है ॥ २ ॥

सहजमन्दिरगे तपनात्मजे भवति सर्वसहोदरनाशकः ।
तदनुकूलनृपेण समो नरः स्वसुतपुत्रकलत्रसमन्वितः ॥ ३ ॥

तृतीय भाव में शनि हो तो सहोदर भाई से हीन, उत्तम राजा के समान तथा पुत्र-स्त्री सुख से युक्त होता है ॥ ३ ॥

बन्धुस्थितो भानुसुतो नराणां करोति बन्धोर्निधनं च रोगी ।
स्त्रीपुत्रभृत्येन विना कृतश्च ग्रामान्तरे चाऽसुखदः स वक्री ॥ ४ ॥

चतुर्थभाव में शनि हो तो बन्धु-स्त्री-पुत्र और नौकरोंसे हीन एवं रोगी होता है। यदि शनि वक्री हो तो दूसरे ग्राममें जाकर दुःखी होता है ॥ ४ ॥

शनैश्चरे पञ्चमशत्रुगेहे पुत्रार्थहीनो भवतीह दुःखी ।
तुङ्गे निजे मित्रगृहे च पङ्गौ पुत्रैकभागी भवतीह कश्चिद् ॥ ५ ॥

शनि यदि शत्रु राशिका पञ्चम भाव में हो तो पुत्र और धनसे हीन तथा दुःखी होता है। यदि उच्च या स्वगृह अथवा मित्र राशि का हो तो उसे एक पुत्र होता है ॥ ५ ॥

नीचे रिपोर्भे च कुलक्षयं च षष्ठे शनिर्गच्छति मानवानाम् ।
अन्यत्र शत्रून् विनिहन्ति तुङ्गगो पूर्णार्थकामार्ज्जनतां ददाति ॥ ६ ॥

यदि नीच या शत्रु का शनि षष्ठ भाव में हो तो उस मनुष्य के कुल का नाश करता है। भिन्न स्थानमें षष्ठ भावस्थ शनि हो तो शत्रुओं का नाश तथा उच्च का हो तो मनोरथ को पूर्ण करता है ॥ ६ ॥

विश्रामभूतां विनिहन्ति जायां सूर्यात्मजः सप्तमगे सरोगाम् ।
धत्ते पुनर्धर्मधराङ्गहीनां वित्तप्रणाशामयपीडितश्च ॥७॥

सप्तम भाव में शनि हो तो प्रथम स्त्री मर जाती है या रोगिणी रहती है, फिर दूसरी स्त्री भी रोगिणी या अङ्गहीना होती है। स्वयं धन नाश और रोग मे पीड़ित रहता है ॥ ७ ॥

शनैश्चरे चाऽष्टमगे मनुष्यो देशान्तरे तिष्ठति दुःखभागी ।
चौर्यापराधेन च नीचहस्तैः पश्चत्वमाप्नोत्यथ नेत्ररोगी ॥८॥

अष्टम भाव में शनि हो तो परदेश में जाकर दुःखी होता है। चोरी के अपराध में नीच के द्वारा मारा जाता है तथा नेत्ररोगी होता है ॥ ८ ॥

धर्मस्थ-पङ्गुर्बहु दम्भकारी धर्मार्थहीनः पितृवञ्चकश्च ।
मदानुरक्तो निधनोऽथ रोगी पापिष्ठभार्यापरहीनवीर्यः ॥९॥

नवम भाव में शनि हो तो दम्भ करनेवाला, धर्म और धन से हीन, पिता को धोखा देनेवाला, मदमत्त, धनहीन, रोगी, पापिनी, अन्य पत्नी होने से निर्बल होता है ॥ ९ ॥

शनैश्चरे कर्मगृहस्थितेऽपि महाधनी भृत्यजनानुरक्तः ।
प्राप्तप्रवासे नृपसद्मवासी न शत्रुवर्गाद्भयमेति मानी ॥१०॥

दशमभावमें शनि हो तो बड़ा धनवान्, नौकरोंसे प्रेम करनेवाला, परदेश जाकर राजा का आश्रित और शत्रुओं का भय नहीं रखता है ॥ १० ॥

सूर्यात्मजे चायगते मनुष्यो धनी विमृश्यो बहुभोग्यभागी ।
शीतानुरागी मुदितः सुशीलः स बालभावे भवतीति रोगी ॥११॥

एकादश भाव में शनि हो तो धनवान्, विवेकी, बहुत भोगी, शीतप्रिय, प्रसन्न, सुशील और बाल्यावस्था में रोगी होता है ॥ ११ ॥

व्यये शनौ पञ्चगणाधिनाथो गदान्वितो हीनवपुः सुदुःखी ।
जङ्घाव्रणी क्रूरमतिः मनुष्यो वधे रतः पक्षिगणस्य नित्यम् ॥१२॥

द्वादश भाव में शनि हो तो जातक पंचों का सरदार, रोगी, दुर्बलदेह, दुःखी, जाँघ में रोगवाला, क्रूर बुद्धि और पक्षियों को मारने वाला होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ राहु फल–

रोगी सदा देवरिपौ तनुस्थे कुले च मुख्यो बहुजल्पशीलः ।
रक्तेक्षणः क्रोधपरः कुकर्मरतः सदा साहसकर्मदक्षः ॥१॥

राहु यदि लग्न में हो तो जातक रोगी, अपने कुल में मुख्य, व्यर्थ बहुत बोलनेवाला, लालनेत्र, क्रोधी, कुकर्मी और साहसी होता है ॥ १ ॥

राहौ धनस्थे कृतचौरवृत्तिः सदावलिप्तो बहुदुःखभागी।
मत्स्येन मांसेन सदा धनी च सदा वसेन्नीचगृहे मनुष्यः ॥२॥

द्वितीय भाव में राहु हो तो चोरी करने वाला, अभिमानी, दुःख का भागी, मत्स्य-मांस से धनोपार्जन करनेवाला तथा नीच जनों का आश्रित होकर रहता है ॥ २ ॥

भ्रातुर्विनाशं प्रददाति राहुस्तृतीयभावे मनुजस्य गेहे।
सौख्यं धनं पुत्रकलत्रमित्रं ददाति तुङ्गो गजवाजिभृत्यान् ॥३॥

तृतीय भाव में राहु हो तो उसके भाई के लिये अनिष्ट होता है। परन्तु घर में सब प्रकार के सुख, पुत्र, स्त्री, मित्र होते हैं। यदि उच्च में राहु हो तो हाथी-घोड़े आदि सवारी देनेवाला होता है ॥ ३ ॥

राहौ चतुर्थे धनबन्धुहीनो ग्रामैकदेशे वसति प्रकृष्टः।
नीचानुरक्तः पिशुनश्च पापी पुत्रैकभागी कृशयोषिदाढ्यः ॥४॥

चतुर्थ भाव में राहु हो तो धन और बन्धुओं से हीन, गाँव के एक बगल में बसने वाला, नीचजनों का साथी, चुगुलखोर, पापी, एक पुत्र वाला और दुर्बल स्त्री वाला होता है ॥ ४ ॥

राहुः सुतस्थः शशिनानुगो हि पुत्रस्य हर्ता कुपितः सदैव।
गेहान्तरे सोऽपि सुतैकमात्रं दत्ते प्रमाणं मलिनं कुचैलम् ॥५॥

यदि राहु चन्द्रमा के साथ पञ्चम भाव में हो तो पुत्र का नाशक तथा सदा क्रोधयुक्त रहता है। यदि चन्द्रमा के साथ नहीं हो तो एकपुत्र, मलिन चेष्टा वाला होता है ॥ ५ ॥

षष्ठे स्थितः शत्रुविनाशकारी ददाति पुत्रं च धनानि भोगान्।
स्वर्भानुरुच्चैरखिलाननर्थान् हन्त्यन्ययोषिद्गमनं करोति ॥६॥

षष्ठभाव में राहु हो तो शत्रु को नाश करनेवाला, पुत्र, धन और सुख भोग देनेवाला होता है। यदि उच्च स्थित राहु हो तो सब अनर्थ (अनिष्ट) का निवारण करनेवाला, पर-स्त्रियों से प्रेम करनेवाला होता है ॥ ६ ॥

जायास्थराहुर्धनहानिकर्त्रीं ददाति नारीं विविधांश्च भोगान्।
पापानुरक्तां कुटिलां कुशीलां ददाति शेषैर्बहुभिर्युतश्च ॥७॥

सप्तमस्थान में राहु हो तो अधिक धन खर्च करनेवाली स्त्री तथा अनेक

प्रकार के भोग लाभ करनेवाला होता है। यदि अनेक ग्रहों से युक्त राहु हो तो उसकी स्त्री पापिनी, कुटिला और दुष्टस्वभाववाली होती है ॥ ७ ॥

राहुः सदा चाऽष्टममन्दिरस्थो रोगान्वितं पापरतं प्रगल्भम् ।
चौरं कृशं कापुरुषं धनाढ्यं मायामतीतं पुरुषं करोति ॥८॥

अष्टम भाव में राहु हो तो वह मनुष्य रोगी, पापी, ढीठ, चोर, दुर्बल, कायर, धनी और मायाजाल में पारङ्गत होता है ॥ ८ ॥

धर्मस्थिते चन्द्ररिपौ मनुष्यश्चाण्डालकर्मा पिशुनः कुचैलः ।
ज्ञातिप्रमोदे निरतश्च दीनः शत्रोः कुलाद्भीतिमुपैति नित्यम् ॥९॥

नवम स्थान में राहु हो तो निन्द्यकर्म करने वाला, चुगुलखोर, मलिन-वस्त्रधारी, अपने कुटुम्बियों को प्रसन्न करने वाला, धनहीन और शत्रुओं के भय से युक्त होता है ॥ ९ ॥

कामातुरः कर्मगते च राहौ परार्थलोभी मुखरश्च दीनः ।
म्लानो विरक्तः सुखवर्जितश्च विहारशीलश्चपलोऽतिदुष्टः ॥१०॥

दशम स्थान में राहु हो तो कामी, परधन का लोभी, व्यर्थ बात बोलने वाला, चञ्चल और दुष्ट होता है ॥ १० ॥

आयस्थिते सोमरिपौ मनुष्यो दान्तो भवेन्नीलवपुः सुमूर्तिः ।
वाचाल्ययुक्तः परदेशवासी शास्त्रार्थवेत्ता चपलो विलज्जः ॥११॥

एकादशस्थान में राहु होने से वह पुरुष जितेन्द्रिय, श्यामवर्ण, सुन्दर रूप, वक्ता (वकील, कथावाचक, व्याख्याता, प्राध्यापक), परदेशवासी, चञ्चल और निर्लज्ज, शास्त्रतत्त्व का ज्ञाता होता है ॥ ११ ॥

व्यये स्थिते सोमरिपौ मनुष्यो धर्मार्थहीनो बहुदुःखतप्तः ।
कान्ताविमुक्तश्च विदेशवासी सुखैश्च हीनः कुनखी कुवेषः ॥१२॥

द्वादशभाव में राहु रहने से वह मनुष्य धर्म और धन से वर्जित, अनेक दुःख से पीड़ित, स्त्री हीन, विदेशवासी, सुखहीन, खराब नख वाला और कुरूप होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ केतु फल—

तनुस्थः शिखी बान्धवक्लेशकर्ता
तथा दुर्जनेभ्यो भयं व्याकुलत्वम् ।
कलत्रादिचिन्ता सदोद्वेगिता च
शरीरे व्यथा नैकधा मारुती स्यात् ॥ १ ॥

जन्म समय में लग्न का केतु हो तो वह मनुष्य बन्धुओं को क्लेश देने-वाला, दुर्जनों से भय, व्याकुलता, स्त्री-पुत्रादि की चिन्ता, व्यग्रता तथा शरीर में अनेक प्रकार से वात रोग की पीड़ा होती है ॥ १ ॥

धने केतुरव्यग्रता किंनरेशाद्
भवेद्धान्यनाशो मुखे रोगकृच्च ।
कुटुम्बाद्विरोधो वचः सत्कृतं वा
भवेत् स्वे गृहे सौम्यगेहेऽतिसौख्यम् ॥ २ ॥

द्वितीयभाव में केतु हो तो उस मनुष्य को कोई व्यग्रता नहीं रहती, किंनरेश (अविचारी राजा) द्वारा धान्य का नाश, मुख में रोगी, कुटुम्ब से विरोध होता है। यदि केतु अपने गृह में हो तो वचन से सत्कार पाने-वाला, शुभ ग्रह की राशि में हो तो अत्यन्त सुखी होता है ॥ २ ॥

शिखी विक्रमे शत्रुनाशं विवादे धनं भोगमैश्वर्यतेजोऽधिकं च ।
सुहृद्वर्गनाशं सदा बाहुपीडा भयोद्वेगचिन्ताकुलत्वं विधत्ते ॥३॥

तृतीय स्थान में केतु हो तो विवाद करने वाले शत्रुओं का नाश, धन का लाभ, भोग, ऐश्वर्य और प्रताप की वृद्धि करता है तथा मित्रों की हानि, अपनी भुजा में पीड़ा, भय और उद्वेग से सदा व्याकुल रहता है ॥ ३ ॥

चतुर्थे च मातुः सुखं नो कदाचित्
सुहृद्वर्गतः पैतृकं नाशमेति ।
शिखी बन्धुवर्गात्सुखं स्वोच्चगेहे
चिरं नो वसेत् स्वे गृहे व्यग्रता चेत् ॥ ४ ॥

चतुर्थ भाव में केतु हो तो—उसे माता और मित्रों से सुख नहीं होता, पैतृक धन का नाश होता है। यदि अपने गृह या उच्च में केतु हो तो बन्धु-वर्गों से सुख होता है तथा अधिक समय व्यग्रता से युक्त होकर घर से बाहर रहता है ॥ ४ ॥

यदा पञ्चमे राहुपुच्छं प्रयाति
तदा सोदरे घातवातादिकष्टम् ।
स्वबुद्धिव्यथा सन्ततं स्वल्पपुत्रः
स-दासो भवेद्वीर्ययुक्तो नरोऽपि ॥ ५ ॥

जिसके पञ्चम भाव में केतु हो उसके सहोदरों को आघात और वात

रोग से कष्ट होता है । अपनी बुद्धि पर खेद प्रकाश, स्वल्प पुत्र हो, नौकर तथा अनेक प्रकार के बल से युक्त होता है ॥ ५ ॥

तमः पुच्छभागे गते षष्ठभावे
भवेन्मातुलान्मानभङ्गो रिपूणाम् ।
विनाशश्चतुष्पात्सुखं तुच्छचित्तं
शरीरे सदाऽनामयं व्याधिनाशः ॥ ६ ॥

षष्ठ स्थान में केतु हो तो मामा के द्वारा अनादर, शत्रुओं का नाश, चौपायों से सुख, स्वल्प धन, सदा नीरोग रहता है ॥ ६ ॥

शिखी सप्तमे भूयसी मार्गचिन्ता
निवृत्तः स्वनाशोऽथवा वारिभीतिः ।
भवेत्कीटगः सर्वदा लाभकारी
कलत्रादिपीडा व्ययो व्यग्रता च ॥ ७ ॥

सप्तम स्थान में केतु हो तो बराबर मार्ग चलने की चिन्ता, धन का नाश अथवा शत्रु का भय होता है । यदि स्वगृह (वृश्चिक) में हो तो धन का लाभ किन्तु स्त्री को कष्ट, व्यय (खर्च) और व्यग्रता बनी रहती है ॥७॥

गुदं पीड्यतेऽर्शादरोगैरवश्यं भयं वाहनादेः स्वद्रव्यस्य रोधः ।
भवेदष्टमे राहुपुच्छेऽर्थलाभः सदा कीटकन्याऽज-गोयुग्मकेतुः ॥ ८ ॥

अष्टम भाव में केतु हो तो बवासीर आदि रोग से पीड़ा, वाहनादि से भय, धन की अप्राप्ति होती है । यदि केतु वृश्चिक, कन्या, मेष, वृष या मिथुन में हो तो धन का लाभ होता है ॥ ८ ॥

शिखी धर्मभावे यदा क्लेशनाशः
सुतार्थी भवेन्म्लेच्छतो भाग्यवृद्धिः ।
सहोत्थव्यथां बाहुरोगं विधत्ते
तपोदानतो हास्यवृद्धिं तदानीम् ॥ ९ ॥

नवम भाव में केतु हो तो कष्टों का नाश, पुत्र की इच्छा, नीच के द्वारा भाग्योदय होता है । सहोदरों को पीड़ा, अपने हाथ में कष्ट होता है, तथा दान और तपस्या में उपहास होता है ॥ ९ ॥

पितुर्नो सुखं कर्मगो यस्य केतु-
स्तदा दुर्भगं कष्टभाजं करोति ।

तदा वाहने पीडितं जातु जन्म
वृषाऽजालिकन्यासु चेच्छत्रुनाशम् ।। १० ।।

दशम भाव में केतु हो तो वह मनुष्य पिता के सुख से हीन, भाग्य-रहित तथा वाहनों का कष्ट होता है। यदि केतु वृष, मेष, वृश्चिक या कन्या राशि में हो तो शत्रुओं का नाश होता है ।। १० ।।

सुभाग्यः सुविद्याधिको दर्शनीयः
सुगात्रः सुवस्त्रः सुतेजाश्च तस्य ।
दरैः पीड्यते सन्ततं शत्रुवर्गः
शिखी लाभगः सर्वलाभं करोति ।। ११ ।।

एकादश स्थान में केतु हो तो भाग्यवान्, विद्वान्, दर्शनीय स्वरुप, सुन्दर शरीर, सुवस्त्रधारी और तेजस्वी होता है। उसके भय से शत्रुदल काँपते हैं तथा उसे सब प्रकार से लाभ होता है ।। ११ ।।

शिखी रिष्फगो वस्तिगुह्याङ्घ्रिकाये
रुजा पीडनं मातुलान्नैव शर्म ।
सदा राजतुल्यं नरं सद्व्ययं तद्
रिपूणां विनाशं रणेऽसौ करोति ।। १२ ।।

द्वादश भाव में केतु हो तो वस्ति (पेंड़), गुदमार्ग, जाँघ आदि अंगों में रोग से पीड़ा, मामा से सुख का अभाव होता है। तथा राजा के समान खर्च और रण में शत्रुओं का नाश करने वाला होता है ।। १२ ।।

इति भावफल निरूपण ।

ग्रहयोगफल-निरूपण

द्विग्रहयोगफल-

स्त्रीवशः कूटकर्मा च दुर्विनीतः क्रियादृढः ।
विक्रमी लघुचेताश्च चन्द्र-सूर्यसमागमे ।। १ ।।

जिसके जन्म कुण्डली में रवि चन्द्रमा का योग हो वह मनुष्य स्त्री के वश, नकली वस्तु बनाने वाला, उद्दण्ड, कार्य में दक्ष, पराक्रमी और छोटे हृदय वाला होता है ।। १ ।।

सूर्यमङ्गलसंयोगे तेजस्वी पापमानसः ।
मिथ्यावादी च मूर्खश्च बन्धुनिष्ठो बली नरः ।। २ ।।

रवि-मङ्गल का योग हो तो वह मनुष्य तेजस्वी, पापी, मिथ्याभाषी, मूर्ख,वन्धुओं में प्रेम रखने वाला और बलवान् होता है ॥ २ ॥

विद्वानर्थो राजमान्यः सेवाशीलः प्रियम्वदः ।
यशस्वी च स्थिरद्रव्यो बुधसूर्यसमागमे ॥ ३ ॥

रवि-बुध का योग हो तो--विद्वान्, श्रेष्ठ, राजा से आदृत, सेवा-कार्य में चतुर, प्रिय वक्ता, यशस्वी और स्थिर धन वाला होता ॥ ३ ॥

नृपमान्यो धर्मनिष्ठो मित्रवानर्थवानपि ।
उपाध्यायोऽतिविख्यातो योगे जीवार्कयोर्भवेत् ॥ ४ ॥

रवि-गुरु के योग से--राजमान्य, धर्मात्मा, बहुत मित्र वाला, धनी, अध्यापक और लोक में विख्यात होता है ॥ ४ ॥

शस्त्रग्रहारिवन्द्यश्च रङ्गज्ञो नेत्रदुर्बलः ।
स्त्रीसङ्गलब्धद्रव्यश्च सक्तः शुक्रार्कसङ्गमे ॥ ५ ॥

रवि-शुक्र के योग से शस्त्र विद्या जानने वालों में श्रेष्ठ, नृत्यादि कला को जानने वाला, आँख से दुर्बल और स्त्री के द्वारा धन लाभ करने वाला एवं कार्य में दक्ष होता है ॥ ५ ॥

विद्वानपि क्रियानिष्ठो धातुज्ञो वृद्धचेष्टितः ।
प्रणष्टसुतदारश्च शनिसूर्यसमागमे ॥ ६ ॥

रवि-शनि का योग हो तो–विद्वान्, क्रिया में तत्पर, धातुओं को जानने वाला, वृद्ध के समान चेष्टावाला और अन्त में स्त्री-पुत्र से हीन होता है ॥६॥

चन्द्रमङ्गलसंयोगे रक्तपीडातुरो भवेत् ।
मृच्चर्मधातुशिल्पी धनी शूरो रणे भवेत् ॥ ७ ॥

चन्द्र-मङ्गल के योग से रक्त (शोणित) विकार से पीड़ित, मिट्टी, चमड़ा और धातुओं के शिल्प बनाने वाला, धनी और रण में वीर होता है ॥ ७ ॥

स्त्रीसंसक्तः सुरूपश्च काव्ये च निपुणो नरः ।
धनी गुणी हास्यवक्त्रो बुधेन्द्वोर्धार्मिकोऽन्वये ॥ ८ ॥

चन्द्र-बुध के योग से स्त्री के आधीन, सुन्दर रूप, काव्य में निपुण, धनवान्, गुणवान्, हँसमुख और अपने कुल में श्रेष्ठ धर्मात्मा होता है ॥ ८ ॥

देवद्विजार्चासक्तश्च वन्धुमानकरो धनी ।
दृढप्रीतिः सुशीलश्च जीवचन्द्रसमागमे ॥ ९ ॥

चन्द्र-बृहस्पति के योग होने से देव-ब्राह्मण का पूजक, बन्धुओं का सत्कार, धनवान्, निश्चय प्रेम करने वाला और सुशील होता है ॥ ९ ॥

कुशलो विक्रयादौ च वृषलः कलहप्रियः ।
अल्पवस्त्रादिसंयुक्तः शशिभार्गवसङ्गमे ॥ १० ॥

चन्द्र-शुक्र के योग से क्रय-विक्रय में चतुर, शूर सदृश आचरण वाला, झगड़ालू और थोड़े वस्त्रादि वाला होता है ॥ १० ॥

गजाश्वपालो दुःशीलो वृद्धस्त्रीरमणो नरः ।
वेश्याधनोऽल्पपुत्रश्च शनिचन्द्रसमागमे ॥ ११ ॥

चन्द्र-शनि का योग हो तो हाथी-घोड़े का पालन करने वाला, दुष्ट स्वभाव, वृद्धा स्त्री से प्रेम करने वाला, वेश्या के द्वारा धन लाभ करने वाला और थोड़े पुत्र वाला होता है ॥ ११ ॥

भूपुत्रबुधसंयोगे निर्धनो विधवापतिः ।
दुःस्त्रीको विक्रयप्रीतः स्वर्णलोहप्रकीर्णकः ॥ १२ ॥

मङ्गल-बुध के योग से धनहीन, विधवा अथवा दुष्टा स्त्री का पति, सोना और लोहा आदि खरीद-विक्रीकर प्रसन्न होता है ॥ १२ ॥

मेधावी शिल्पशास्त्रज्ञः श्रुतिज्ञो वाग्विशारदः ।
अश्वप्रियः प्रधानश्च जीवमङ्गलसङ्गमे ॥ १३ ॥

मङ्गल-गुरु का योग हो तो–बुद्धिमान्, शिल्प और शास्त्र को जानने वाला, बोलने में चतुर, घोड़ा सवारी रखनेवाला और प्रधान होता है ॥१३॥

गुणप्रधानो गणको द्यूतानृतरतः शठः ।
परदाररतो मान्यः शुक्रमङ्गलसंगमे ॥ १४ ॥

मङ्गल-शुक्र के योग से गुण में प्रधान, ज्योतिष जानने वाला, जुआड़ी, मिथ्याभाषी. शठ, परस्त्रीगामी किन्तु लोक में मान्य होता है ॥ १४ ॥

वाग्मीन्द्रजालदक्षश्च विधर्मी कलहप्रियः ।
विषमद्यप्रपञ्चाढ्यो मन्दमङ्गलसङ्गमे ॥ १५ ॥

मङ्गल-शनि के योग से वक्ता, इन्द्रजाल जानने वाला, धर्म हीन, झगड़ालू, विष और मदिरा बनाने वाला होता है ॥ १५ ॥

बुधस्य गुरुणा योगे नृत्यवाद्यविचक्षणः ।
धैर्ययुक्तः पण्डितश्च सुखी भवति मानवः ॥ १६ ॥

बुध-गुरु का योग हो तो नाच तथा वाद्य (बाजा) का ज्ञाता, धैर्यवान्, पण्डित और सुखी होता है ॥ १६ ॥

बुधभार्गवयोर्योगे नयज्ञो बहुशिल्पवित् ।
धनी सुवाक्यो वेदज्ञो गीतज्ञो हास्यलालसः ॥ १७ ॥

बुध-शुक्र का योग हो तो नीतिज्ञ, अनेकों कला को जानने वाला, धनवान्, प्रिय वचनभाषी, वेद और गीत को जाननेवाला तथा हास्यप्रिय होता है ॥ १७ ॥

क्षीणो भ्रमनशीलश्च निरुपायः कलिप्रियः ।
शुभवाक्यः कार्यदक्षो भानुसूनुबुधान्वये ॥ १८ ॥

बुध-शनि के योग से दुर्बल, अधिक घूमने वाला, कलह का प्रेमी, मीठा वाक्य बोलने वाला और कार्य में समर्थ होता है ॥ १८ ॥

गुरुभार्गवसंयोगे दिव्यदारो महाधनी ।
धर्मास्तिकप्रमाणज्ञो विद्याजीवी च जायते ॥ १९ ॥

गुरु-शुक्र के योग से पतिव्रता स्त्री का पति, बड़ा धनवान्, धर्मात्मा, आस्तिक, वेदादि शास्त्रज्ञाता और विद्या से जीविका करने वाला होता है ॥ १९ ॥

वृत्तिसिद्धिश्च शूरश्च यशस्वी नगराधिपः ।
श्रेणीसेनाभिमुख्यश्च गुरुमन्दान्वये नरः ॥ २० ॥

गुरु-शनि का योग हो तो–जीविका लाभ करने वाला, शूरवीर, यशस्वी, गाँव का मुखिया, लोक में मान्य और सेनापति होता है ॥ २० ॥

शुक्रेण च शनेर्योगे मत्तः पशुपतिर्नरः ।
दारुदारणदक्षश्च क्षाराम्लादिकशिल्पवित् ॥ २१ ॥

शुक्र-शनि का योग हो तो–उन्मत्त, पशुओं को पालने वाला, लकड़ी चीरने में चतुर, क्षार (लवण) और अम्ल (खट्टे पदार्थ) से बनने वाले पदार्थों का जानकार तथा शिल्पकला (हस्तकला) जानने वाला होता है ॥ २१ ॥

त्रिग्रहयोगफल—

यन्त्राश्मकूटकुशलोऽसृग्वेदनापीडितोऽतिशूरश्च ।
आदित्यचन्द्रभौमैरेकस्थैर्जायते सुततो विहीनः ॥ १ ॥

रवि-चन्द्र-मङ्गल के योग से मनुष्य यन्त्र, पत्थर, कूट (नकली चीज) बनाने में कुशल, शोणित विकार से पीड़ित, शूर तथा पुत्रहीन होता है ॥१॥

विद्यागुणरूपयुतः काव्यकथाकविसभाप्रियः सधनः ।
नृपसेवकश्च प्रियवागेकस्थैः सूर्यचन्द्रबुधैः ॥ २ ॥

रवि-चन्द्र-बुध के योग से मनुष्य विद्या, गुण, रूप से युक्त, काव्य में तथा कवि सभा में प्रेम रखने वाला, धनवान्, राजा का सेवक और प्रिय-वचनभाषी होता है ॥ २ ॥

धर्मपरो नृपसचिवो दृढमेधा मानकृच्च बन्धूनाम् ।
देवद्विजार्चनरतो रविशशिजीवैः सहैकस्थैः ॥ ३ ॥

रवि-चन्द्र-गुरु इन तीनों के योग से धर्मात्मा, राजमन्त्री, दृढ़बुद्धि, बन्धुओं का आदर करने वाला, देव और ब्राह्मण का भक्त होता है ॥ ३ ॥

सुवपुः क्षिप्तसपत्नो नरपतिसुभगः सदा प्रवरतेजाः ।
रविशशिशुक्रैः सहितैर्भवति नरो दन्तविकृतश्च ॥ ४ ॥

रवि-चन्द्र-शुक्र के योग से सुन्दर शरीर, शत्रु को जीतने वाला, राजा का प्रिय, अति तेजस्वी और दाँत में रोग वाला होता है ॥ ४ ॥

धर्मपरो विगतधनो गजाश्वपरिपालकः सुकर्मरतः ।
रवि-रवितनय-शशाङ्कैरेकस्थैर्विगतशीलश्च ॥ ५ ॥

रवि-चन्द्र-शनि के योग से धर्मात्मा, निर्धन, हाथी-घोड़े का पालक, सत्कर्म करने वाला किन्तु शीलहीन होता है ॥ ५ ॥

भानुभौमबुधैर्योगे ख्यातः साहसिको नरः ।
निष्ठुरो गतलज्जश्च धनस्त्रीपुत्रमण्डितः ॥ ६ ॥

रवि-मङ्गल-बुध इन तीनों का योग हो तो विख्यात, साहसी, निठुर, निर्लज्ज, धन-स्त्री और पुत्र से युक्त होता है ॥ ६ ॥

जीवसूर्यकुजैर्योगे प्रचण्डः सत्यभाषणः ।
राजमन्त्री नरश्चापि सुवाक्यो निपुणो भवेत् ॥ ७ ॥

रवि-मंगल-गुरु के योग से मनुष्य प्रचण्ड (अति क्रोधी), सत्यवक्ता, राजमन्त्री, मधुर भाषी, कार्य में कुशल होता है ॥ ७ ॥

शुक्रभौमार्कसंयोगे सुभगो नयनातुरः ।
कुशीलो वत्सलो दक्षो विषयासक्तमानसः ॥ ८ ॥

रवि-मंगल-शुक्र के योग से सुन्दर, नेत्र रोगी, कुशील, पुत्रादि में स्नेह रखने के कार्य में समर्थ और विषय में मन लगाने वाला होता है ॥ ८ ॥

शनिसूर्यकुजैर्योगे मूर्खो गोधनवर्जितः।
रोगार्तः स्वजनैर्हीनो विकलो कलहाकुलः ॥ ९ ॥

रवि-मंगल-शनि के योग से मूर्ख, गौ आदि धन से रहित, रोगी, अपने प्रियजनों से हीन, विकल और झगड़ा से तंग होता है ॥ ९ ॥

बुधजीवार्कसंयोगे नेत्ररोगी महाधनी।
शास्त्रशस्त्रकलाभिज्ञो लिपिकर्ता भवेन्नरः ॥ १० ॥

रवि-बुध-गुरु का योग हो तो आँख में रोगवाला, बड़ा धनवान्, शास्त्र और शस्त्र कला का ज्ञाता एवं लेखक होता है ॥ १० ॥

शुक्रसूर्यबुधैर्योगे गुरुवर्गैर्निराकृतः।
अभिशप्तो दिशो याति स्त्रीहेतोस्तप्तमानसः ॥ ११ ॥

रवि-बुध-शुक्र के योग से मनुष्य अपने गुरुजनों से अपमानित होकर बाहर जाता है और स्त्री के कारण सन्तप्त हृदय होता है ॥ ११ ॥

शनिसूर्यबुधैर्योगे दुराचारः पराजितः।
बन्धुभिश्च परित्यक्तो विद्वेषी जायते नरः ॥ १२ ॥

रवि-बुध-शनि का योग हो तो जातक दुराचारी, शत्रुओं से पराजित, बन्धुओं से त्यक्त और अकारण सबका द्वेषी होता है ॥ १२ ॥

शुक्रजीवार्कसंयोगे राजमन्त्री च निर्घृणः।
दुष्टचक्षुश्च शूरश्च प्राज्ञश्च परकर्मकृत् ॥ १३ ॥

रवि-गुरु-शुक्र के योग होने से राजमन्त्री, दयाहीन, खराब नेत्र वाला, शूर-वीर, पण्डित और परकार्य साधक होता है ॥ १३ ॥

मन्दजीवार्कसंयोगे पुत्रमित्रकलत्रवान्।
निर्भयो नृपतिद्वेष्टा स्वेष्टबन्धुर्भवेन्नरः ॥ १४ ॥

रवि-गुरु-शनि के योग होने से पुत्र, स्त्री और मित्रों से युक्त, निर्भय, राजा का द्वेषी और अपने बन्धुओं का पोषक होता है ॥ १४ ॥

शनिशुक्रार्कसंयोगे कलामानविवर्जितः।
कुष्ठी शत्रुभयोद्विग्नो दुष्टाचारी नरो भवेत् ॥ १५ ॥

रवि-शुक्र-शनि का योग हो तो—कारीगरी तथा आदर से रहित, कुष्ठ रोगी, शत्रु से भीत और दुराचारी होता है ॥ १५ ॥

चन्द्रचान्द्रिकुजैर्योगे नीचाचारश्च पापकृत् ।
आजीवितं हतो लोके बन्धुहानिश्च जायते ॥ १६ ॥

चन्द्र-बुध-मंगल जिसके जन्म समय में हों वह नीच आचरण वाला, पापी, जीवन पर्यन्त लोक में अपमानित और बन्धुहीन होता है ॥ १६ ॥

चन्द्रजीवकुजैर्योगे स्त्रीलोलो वीर्यसंयुतः ।
कान्तश्च सङ्गतः स्त्रीणां चन्द्रतुल्यमुखो भवेत् ॥ १७ ॥

चन्द्र-मंगल-गुरु का योग हो तो स्त्री में आसक्त, बलवान्, सुन्दर, स्त्रियों का प्रिय और चन्द्र समान मनोहर मुखवाला होता है ॥ १७ ॥

चन्द्रशुक्रकुजैर्योगे दुःशीलायाः पतिः सुतः ।
सदा भ्रमणशीलश्च शीतभीतोऽपि जायते ॥ १८ ॥

चन्द्र-मंगल-शुक्र के योग से कुशीला स्त्री का पति और कुशीला का पुत्र होता है तथा सदा भ्रमण करनेवाला एवं शीत से डरनेवाला होता है ॥१८॥

शनिचन्द्रकुजैर्योगे बाल्ये स्यान्मृतमातृकः ।
क्षुद्रश्च लोकविद्विष्टो विषमो जायते नरः ॥ १९ ॥

चन्द्र-मंगल-शनि का योग हो तो-वह पुरुष बाल्यावस्था में मातृहीन होता है, क्षुद्र एवं लोगों का द्वेषी और कुटिल-हृदय होता है ॥ १९ ॥

जीवचन्द्रबुधैर्योगे तेजस्वी धनवानपि ।
पुत्रमित्रादिसंयुक्तो वाग्मी ख्यातश्च कीर्तिमान् ॥ २० ॥

चन्द्र-बुध-गुरु एक स्थानमें हों तो-प्रतापी, धनी, पुत्र, मित्रादि परिवार से युक्त, वक्ता, विख्यात और यशस्वी होता है ॥ २० ॥

बुधेन्दुभार्गवैर्योगे विद्ययाऽलङ्कृतो नरः ।
सेर्ष्यो धनातिलोभी च नीचाचारश्च जायते ॥ २१ ॥

चन्द्र-बुध-शुक्र एक स्थान में हों तो--विद्या से विभूषित, ईर्ष्यावाला, धन का लोभी और निन्द्य आचरण वाला होता है ॥ २१ ॥

बुधेन्दुमन्दसंयोगे प्राज्ञो भूपतिपूजितः ।
अत्युच्चो विपुलाङ्गश्च वाग्मी भवति मानवः ॥ २२ ॥

चन्द्र-बुध-शनि के योग से पण्डित, राजमान्य, ऊँची और विशाल देह वाला तथा वक्ता होता है ॥ २२ ॥

शुक्रजीवेन्दुसंयोगे साध्वीपुत्रश्च पण्डितः ।
साधुः सर्वकलाभिज्ञः सुभगो जायते नरः ॥ २३ ॥

चन्द्र-गुरु-शुक्र के योग होने से उस मनुष्य की माता पतिव्रता होती है और स्वयं पण्डित, सच्चरित्र, सब कलाओं का ज्ञाता और सुन्दर होता है ॥ २३ ॥

जीवेन्दुमन्दसंयोगे नीरोगः स्त्रीगतो नरः।
शास्त्रार्थविज्ञः सर्वज्ञो ग्रामपत्तनपालकः ॥ २४ ॥

चन्द्र-गुरु-शनि के योग से नीरोग, स्त्रीवशी, शास्त्रों को जानने वाला, स्त्रियों को समझने वाला, गाँव या नगर का पालक होता है ॥ २४ ॥

शनिशुक्रेन्दुसंयोगे लिपिकर्ता च वेदवित्।
पुरोहितकुलोत्पन्नो भवेत् पुस्तकवाचकः ॥ २५ ॥

चन्द्र-शुक्र-शनि का योग हो तो सुलेखक, वेदों का ज्ञाता, पुरोहित के कुल में उत्पन्न तथा कथावाचक होता है ॥ २५ ॥

जीवभौमबुधैर्योगे सुकविर्युवतिप्रियः।
परोपकारकृत् तीक्ष्णो गान्धर्वकुशलो भवेत् ॥ २६ ॥

मंगल-बुध-गुरु एक स्थान में हों तो वह मनुष्य उत्तम कवि, स्त्रियों का प्रिय, परोपकारी, तेजस्वी और गाने-बजाने में निपुण होता है ॥ २६ ॥

भृगुभौमबुधैर्योगे विकलाङ्गश्च चञ्चलः।
अकुलीनः सदोत्साही तृप्तश्च मुखरो नरः ॥ २७ ॥

मंगल-बुध-शुक्र एक साथ हों तो विकल देह वाला, चञ्चल, कुलहीन, उत्साही, सन्तुष्ट और बहुत बोलने वाला होता है ॥ २७ ॥

बुधमन्दकुजैर्योगे प्रवासी नेत्ररोगवान्।
प्रेष्यो वदनरोगी च हास्यलुब्धो भवेन्नरः ॥ २८ ॥

मंगल-बुध-शनि के योग से परदेशी, आँख में रोगवाला, पथ-वाहक, मुखका रोगी और हास्यप्रिय होता है ॥ २८ ॥

जीवकाव्यकुजैर्योगे दिव्यनारीयुतः सुखी।
सर्वानन्दकरो लोके जायते नृपतिप्रियः ॥ २९ ॥

मंगल-गुरु-शुक्र एक स्थान में हों तो पतिव्रता का पति, सुखी, सब प्रकार के आनन्दों से युक्त और राजमान्य होता है ॥ २९ ॥

जीवमन्दकुजैर्योगे कृशाङ्गो राजपूजितः।
नीचाचारो निर्धनश्च भवेन्मित्रैर्विगर्हितः ॥ ३० ॥

मंगल-गुरु-शनि एक साथ हों तो दुर्बल देह, राजा का प्रिय, नीच आचरण वाला (चुगुलखोर), निर्धन और मित्रों से निन्दित होता है ॥३०॥

भृगुमन्दकुजैर्योगे दुःशीलायाः पतिः शुभः ।
प्रवासशीलो दुःखी च जातको जायते सदा ॥ ३१ ॥

मंगल-शुक्र-शनि ये तीनों एक साथ हों तो-दुश्चरित्रा स्त्री का पति, परञ्च स्वयं उत्तम स्वभाव वाला, परदेशी और दुःखी होता है ॥ ३१ ॥

बुधेज्यभृगुसंयोगे सुतनुर्नृपपूजितः ।
जितारिर्दीर्घकीर्तिश्च सत्यवादी भवेन्नरः ॥ ३२ ॥

बुध-गुरु-शुक्र ये तीनों एक साथ में हों तो जातक सुन्दर देहवाला, राजमान्य, शत्रुको जीतनेवाला, विख्यात कीर्ति और सत्यवक्ता होता है ॥ ३२ ॥

बुधार्किजीवसंयोगे सुदारो बहु भाग्यवान् ।
धनैश्वर्ययुतः प्राज्ञः सुखधैर्ययुतो भवेत् ॥ ३३ ॥

बुध-गुरु-शनि के योग से सुन्दरी स्त्री का पति, भाग्यशाली, धन, ऐश्वर्य से युक्त, पण्डित, सुखी तथा धैर्यवान् होता है ॥ ३३ ॥

मन्दशुक्रबुधैर्योगे मुखरः पारदारिकः ।
असङ्गतिः कलाभिज्ञः स्वदेशनिरतो भवेत् ॥ ३४ ॥

बुध-शुक्र-शनि के योग होने से बहुत बोलने वाला, परस्त्रीगामी, अधमजनों से संग करने वाला, कलाओं का ज्ञाता और स्वदेश भक्त होता है ॥ ३४ ॥

मन्देज्यशुक्रसंयोगे राजा भवति कीर्तिमान् ।
नीचवंशेऽपि सम्भूतः शीलयुक्तो नृपोपमः ॥ ३५ ॥

गुरु-शुक्र-शनि के योग होने से जातक राजा, यशस्वी होता है। नीच कुलोत्पन्न भी शीलवान् और राजा के समान होता है ॥ ३५ ॥

प्रायः पापैर्युते चन्द्रे मातुर्नाशो रवौ पितुः ।
शुभग्रहैः शुभं वाच्यं मिश्रितैर्मिश्रितं फलम् ॥ ३६ ॥

विशेष कर यह देखा जाता है कि, यदि चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त हो तो माता के लिये और रवि यदि पापग्रहों से युक्त हो तो पिता के लिये कष्टदायक होता है। यदि ये दोनों शुभग्रह से युक्त हों तो क्रम से माता और पिता को सुख देनेवाले होते हैं ॥ ३६ ॥

शुभास्त्रयो ग्रहा युक्ताः कुर्वन्ति सुखिनं नरम् ।
पापास्त्रयो दुःखितं च दुर्विनीतं विगर्हितम् ॥ ३७ ॥

जन्म समय यदि तीन शुभग्रह एक साथ हों तो वह जातक सुखी और तीन पापग्रह एक स्थान में हों तो दुःखी होता है ॥ ३७ ॥

चतुर्ग्रहयोगफल—

चन्द्र-चान्द्रि-कुजाऽर्काणां योगे लिपिकरो नरः ।
तस्करो मुखरो कामी मायावी कुशलो भवेत् ॥ १ ॥

रवि चन्द्र मंगल बुध इन चार ग्रहों का योग होने से जातक लेखक, चोर, मुखर (अधिक बोलने वाला), कामी, मायावी और कार्य में दक्ष होता है ॥ १ ॥

भौम-भास्कर-चन्द्रेज्य-संयोगे निपुणो धनी ।
तेजस्वी गतशोकश्च नीतिज्ञश्च भवेन्नरः ॥ २ ॥

रवि चन्द्र मंगल गुरु के योग से चतुर, धनवान्, तेजस्वी, शोकहीन और नीति को जानने वाला होता है ॥ २ ॥

सूर्येन्दुभौमशुक्राणां योगे विद्यार्थसंग्रही ।
सुखी पुत्री कलत्री च वाग्वृत्तिर्मनुजो भवेत् ॥ ३ ॥

रवि चन्द्र मंगल शुक्र के योग में जन्म होने से विद्यावान्, धनवान्, सुखी, पुत्रवान्, पतिव्रता स्त्री वाला और कथावाचक होता है ॥ ३ ॥

अर्कार्किशशिभौमानां योगे मूर्खश्च निर्धनः ।
ह्रस्वो विषमदेहश्च भिक्षावृत्तिर्भवेन्नरः ॥ ४ ॥

रवि चन्द्र मंगल शनि के योग से मूर्ख, धनहीन, बौना या कुबड़ा तथा भीख माँगने वाला होता है ॥ ४ ॥

सोमसौम्यार्कजीवानां योगे शिल्पकरो धनी ।
सौवर्णिकाप्लुताक्षश्च रोगहीनश्च जायते ॥ ५ ॥

रवि चन्द्र बुध गुरु के योग होने से चित्रकार, धनवान्, सुन्दर कान्ति और नेत्रवाला तथा रोगहीन होता है ॥ ५ ॥

चन्द्रार्कबुधशुक्राणां संयोगे शुभगो नरः ।
ह्रस्वश्च राजमान्यश्च वाग्मी च विकलो भवेत् ॥ ६ ॥

रवि चन्द्र बुध शुक्र एक साथ हों तो सुन्दर रूप, छोटा कद, राज-मान्य, वक्ता और विकल होता है ॥ ६ ॥

अर्कार्किचान्द्रिचन्द्राणां योगे भिक्षाशनो नरः ।
नियुक्तः पितृमातृभ्यां विकलाक्षश्च निर्धनः ॥ ७ ॥

रवि चन्द्र बुध शनि एक स्थान में हों तो वह माता-पिता की आज्ञा से भीख माँगने वाला, आँख में रोग वाला और निर्धन होता है ॥ ७ ॥

सूर्यचन्द्रेज्यशुक्राणां सम्बन्धे राजपूजितः ।
जलारण्यमृगस्वामी नरः स्यान्निपुणः सुखी ॥ ८ ॥

रवि चन्द्र गुरु शुक्र का योग होने से राजपूज्य, जल (समुद्र से तालाब आदि), जङ्गलका अधिपति, कार्यमें कुशल और सदा सुखी होता है ॥ ८ ॥

सूर्यचन्द्रार्किजीवानां मान्यश्च वनिताप्रियः ।
बहुवित्तसुतः क्षीणः समाक्षश्च प्रजायते ॥ ९ ॥

रवि चन्द्र गुरु शनि का योग हो तो लोकमें मान्य, स्त्री का प्रिय, बहुत पुत्र और धनवाला, कृश देह और सुन्दर नेत्रवाला होता है ॥ ९ ॥

सितार्कजरवीन्दूनां योगे चाऽत्यन्तदुर्बलः ।
वनितासदृशाचारी भीरुरग्रेसरो नरः ॥ १० ॥

रवि चन्द्रमा शुक्र शनि का योग हो तो बड़ा दुर्बल, स्त्री के समान आचरण करने वाला, डरपोक और अगुआ (किसी भी काम को सबसे आगे करने वाला) होता है ॥ १० ॥

बुधार्ककुजजीवानां योगे सूत्रकरो नरः ।
परदाररतः शूरो दुःखी चक्रधरो भवेत् ॥ ११ ॥

रवि मंगल बुध बृहस्पति एक स्थान में हों तो जातक सूत्रकार, परस्त्रीगामी, शूरवीर, किन्तु दुःखी और मण्डलेश्वर होता है ॥ ११ ॥

रविशुक्रकुजज्ञानामन्वये पारदारिकः ।
निर्लज्जो दुर्जनश्चौरो विषमाङ्गो नरो भवेत् ॥ १२ ॥

रवि मंगल बुध शुक्र का योग हो तो मनुष्य परस्त्रीगामी, निर्लज्ज, दुष्ट, चोर, न्यूनाधिक अङ्ग वाला होता है ॥ १२ ॥

अर्कार्किबुधभौमानां योगे योद्धा कविर्जनः ।
मन्त्री च भूपतिस्तीक्ष्णो नीचाचारोऽपि जायते ॥ १३ ॥

रवि मंगल बुध शनि के योग से जातक शूर, कवि, राजमन्त्री या राजा, उग्र प्रकृति और निन्दित आचार वाला होता है ॥ १३ ॥

भौमार्कगुरुशुक्राणां योगे पूज्यो धनी मतः ।
सुभगो नृपमान्यश्च नरो भवति नीतिमान् ॥ १४ ॥

रवि मंगल बृहस्पति शुक्र का योग होने से लोक में मान्य, धनी, सुन्दर, राजमान्य और नीति को जानने वाला होता है ॥ १४ ॥

भान्वर्किभौमजीवानामैक्ये च गणनायकः ।
सोन्मादो नृपमान्यश्च सिद्धार्थो जायते नरः ॥ १५ ॥

रवि मंगल गुरु शनि का योग हो तो लोक में मुखिया, उन्माद रोग से युक्त, राजा से मान्य और प्रयोजन को सिद्ध करनेवाला होता है ॥ १५ ॥

मन्दमार्तण्डशुक्रारैः संयुक्ते जायते नरः ।
लोकद्विष्टः समाख्यातो नीचाचारो जडाकृतिः ॥ १६ ॥

रवि मंगल शुक्र शनि का योग हो तो वह जातक समाज का द्वेषी, नीच आचरण वाला और मूर्ख होता है ॥ १६ ॥

जीवशुक्रबुधार्काणां योगे बहुमतिर्नरः ।
धनी सुखी च सिद्धार्थः सुहृष्टश्च प्रजायते ॥ १७ ॥

रवि बुध गुरु शुक्र एक स्थान में हों तो जातक तीक्ष्ण बुद्धि, धनी, सुखी, प्रयोजन को सिद्ध करने वाला और हर्षयुक्त होता है ॥ १७ ॥

अर्काऽर्किबुध-देवेज्यै—रेकराशिस्थितैर्नरः ।
भ्रातृमान् कलही मानी क्लीबाचारो निरुद्यमः ॥ १८ ॥

रवि बुध गुरु शनि एक स्थान में हों तो अधिक भाईवाला, झगड़ालू, अभिमानी, हिंजड़ा और उद्योगहीन होता है ॥ १८ ॥

शुक्रसौरिबुधार्काणां योगे मित्रयुतः शुचिः ।
मुखरः सुभगः प्राज्ञो जायते च सुखी नरः ॥ १९ ॥

रवि बुध शुक्र शनि एक स्थान में हों तो बहुत मित्रवाला, पवित्र हृदय, बहुत बोलने वाला, सुन्दर, पण्डित और सुखी होता है ॥ १९ ॥

सूर्यसौरिसितेज्यानां सम्बन्धे लाभवान् सुखी ।
कविः कारुकनाथश्च राजप्रीतो भवेन्नरः ॥ २० ॥

रवि गुरु शुक्र शनि एक साथ हों तो लोभी, सुखी, कवि, कारीगरों में श्रेष्ठ और राजा का प्रिय होता है ॥ २० ॥

चन्द्रचान्द्रिकुजेज्यानां संयोगे शास्त्रविचक्षणः ।
नरेन्द्रश्च महामान्यो महाबुद्धिर्नरो भवेत् ॥ २१ ॥

चन्द्र मंगल बुध गुरु का योग हो तो शास्त्रों का ज्ञाता, राजा या लोक से परमपूज्य तथा बुद्धिमान् होता है ॥ २१ ॥

भौमेन्दुबुधशुक्राणामन्वये बन्धकीपतिः ।
निद्रालुः कलही नीचो बन्धुद्वेषी जनो भवेत् ॥ २२ ॥

चन्द्रमा मङ्गल बुध शुक्र एक स्थान में हों तो वह मनुष्य कुलटा स्त्री का पति, अधिक नींदवाला, झगड़ालू, नीच और बन्धु-विरोधी होता है ॥२२॥

भौमेन्दुबुधसौरीणां योगे शूरकुलोद्भवः ।
पुत्रमित्रकलत्री च द्विमातृपितृको जनः ॥ २३ ॥

चन्द्रमा मङ्गल बुध शनि एक साथ हों तो वह वीर कुल में उत्पन्न, पुत्र, मित्र और स्त्री से युक्त तथा दो माता वाला होता है ॥ २३ ॥

चन्द्राऽऽरगुरुशुक्राणां योगे साहसिको भवेत् ।
विकलाङ्गो धनी पुत्री मानी प्राज्ञोऽपि जायते ॥ २४ ॥

चन्द्र मङ्गल गुरु शुक्र एक स्थान में हों तो जातक साहसी, अङ्गहीन, धनी, पुत्रवान्, मानी और पण्डित होता है ॥ २४ ॥

भौमेन्दुमन्दजीवानामन्वये बधिरो धनी ।
सोन्मादः स्थिरवाक्यश्च शूरो विज्ञो भवेन्नरः ॥ २५ ॥

चन्द्र मङ्गल गुरु शनि का योग हो तो वह मनुष्य बहरा, धनवान्, उन्माद युक्त, वचन का पक्का, वीर और पण्डित होता है ॥ २५ ॥

चन्द्रार-शुक्र-मन्दानां मलिनः कुलटापतिः ।
सोद्वेगः सर्पतुल्याक्षः प्रगल्भो जातको भवेत् ॥ २६ ॥

चन्द्रमा मङ्गल शुक्र शनि का योग होने से मलिन, कुलटा स्त्री का पति, घबड़ाहट वाला, साँप के समान आँखवाला और ढीठ होता है ॥ २६ ॥

जीवशुक्रबुधेन्दूनामन्वये सुभगो धनी ।
विमातृपितृकः प्राज्ञो गतारिर्जायते नरः ॥ २७ ॥

चन्द्र बुध गुरु शुक्र का योग हो तो सुन्दर, धनवान्, माता-पिता से त्यक्त, पण्डित और शत्रु रहित होता है ॥ २७ ॥

मन्देज्यचन्द्रचान्द्रीणां योगे बन्धुप्रियः कविः ।
तेजस्वी राजमन्त्री च यशोधर्मयुतो नरः ॥ २८ ॥

चन्द्रमा बुध गुरु शनि एक स्थान में हों तो बन्धुओं का प्रिय, कवि, तेजस्वी, राजमन्त्री, सुयश और धर्म से युक्त होता है ॥ २८ ॥

चन्द्रविच्छुक्रसौरीणां संयोगे नृपपूजितः ।
नेत्ररोगी पुराधीशो बहुदारयुतो धनी ॥ २९ ॥

चन्द्र बुध शुक्र शनि का योग हो तो राजपूज्य, आँख का रोगी, गाँव का मालिक, वहुत स्त्री वाला और धनवान् होता है ।। २९ ।।

चन्द्रेज्यसितसौरीणामन्त्रये पारदारिकः ।
प्राज्ञो निर्द्रव्यबन्धुर्ना स्थूलभार्यो नरोत्तमः ।। ३० ।।

चन्द्र गुरु शुक्र शनि का योग होने से परस्त्रीगामी, पण्डित, निर्धनों का बन्धु (सहायक) और स्थूल देहवाली स्त्री का पति होता है ।। ३० ।।

बुधारभृगुजीवानां योगे स्त्रीकलहप्रियः ।
धनी सुशीलो नीरोगो लोकपूज्यो नरो भवेत् ।। ३१ ।।

मंगल बुध गुरु शुक्र का योग हो तो स्त्री से झगड़ने वाला, धनी, सुशील, नीरोग और लोक में पूज्य होता है ।। ३१ ।।

भौमेज्य-सौम्य-सौरीणां योगे शूरश्च निर्धनः ।
सत्यशौचव्रते विद्वान् दीनो वाग्मी नरो भवेत् ।। ३२ ।।

मंगल बुध गुरु शनि के योग से शूर-वीर, धनहीन, सत्य, शौच और व्रत का विचारक, दीन किन्तु वक्ता होता है ।। ३२ ।।

मल्लो योऽन्यपुष्टियोद्धा बुधारयमभार्गवैः ।
ख्यातो लोके दृढाङ्गश्च सारमेयरुचिर्भवेत् ।। ३३ ।।

मंगल बुध शुक्र शनि के योग से योद्धा, दूसरों से पोषित, विख्यात, मजबूत शरीर वाला और कुत्तों में प्रेम रखने वाला होता है ।। ३३ ।।

भौमेज्यशनिशुक्राणां योगे स्याद्वासनातुरः ।
परदाररतो मानी कितवो जायते नरः ।। ३४ ।।

मंगल गुरु शुक्र शनि एक साथ हों तो विषय-वासना में आसक्त, परस्त्रीगामी, मानी और धूर्त होता है ।। ३४ ।।

मेधावी शास्त्रनिरतः कामे सक्तो विधेयसत्यश्च ।
बुधजीवशुक्रसौरैः सह स्थितैस्तीर्थसञ्चारी ।। ३५ ।।

बुध गुरु शुक्र शनि एक स्थान में हों तो बुद्धिमान्, शास्त्राभ्यासी, कामातुर, वचन पालने वाला तथा तीर्थाटन करने वाला होता है ।। ३५ ।।

पञ्चग्रहयोगफल–

बहुप्रपञ्ची दुःखी च जायाविरहतापितः ।
सूर्याद्यैर्जीवपर्यन्तैर्नरः स्यात्पञ्चभिर्ग्रहैः ।। १ ।।

रवि चन्द्र मंगल बुध गुरु ये पाँच ग्रह एक स्थान में हों तो जातक बहुत प्रपञ्च करने वाला, दुःखी और स्त्री के वियोग से सन्तप्त होता है ॥ १ ॥

गतसत्यो बन्धुहीनः परकर्मरतो नरः ।
क्लीबस्य च सखा सूर्यभौमेन्दुबुधभार्गवैः ॥ २ ॥

रवि चन्द्र मंगल बुध शुक्र एक स्थान में हों तो असत्यभाषी, बन्धु से हीन, दूसरों का नौकर तथा नपुंसकों का मित्र होता है ॥ २ ॥

स्यादल्पायुश्च विकलो दुःखी सुतविवर्जितः ।
अर्कार्किबुधचन्द्रारयोगे बन्धनभागपि ॥ ३ ॥

रवि चन्द्र मंगल बुध शनि एकत्र हों तो वह मनुष्य अल्पायु, विकल, दुःखी, पुत्रहीन तथा जेल का भी भागी होता है ॥ ३ ॥

जात्यन्धो बहुदुःखी च पितृमातृविवर्जितः ।
नागप्रीतो नरो भौमभानुचन्द्रेज्यभार्गवैः ॥ ४ ॥

रवि चन्द्र मंगल गुरु शुक्र का योग होने से अत्यन्त दुःखी, माता-पिता से रहित तथा हाथी पालने वाला होता है ॥ ४ ॥

परद्रव्यहरो योद्धा परतापकरः खलः ।
समर्थो जायते मन्दचन्द्रजीवार्कभूसुतैः ॥ ५ ॥

रवि चन्द्रमा मंगल गुरु शनि का योग हो तो दूसरे के धन को हरने वाला योद्धा, दूसरों को सन्ताप देनेवाला, दुष्ट और समर्थ होता है ॥ ५ ॥

मानाचारधनैर्हीनः परदाररतो नरः ।
एकस्थैर्जायते भानुभौमेन्दुशनिभार्गवैः ॥ ६ ॥

रवि चन्द्र मंगल शुक्र शनि के योग होने से मान, आचरण और धन से रहित, परस्त्रीगामी होता है ॥ ६ ॥

राजमन्त्री भूरिवित्तो यन्त्रज्ञो दण्डनायकः ।
ख्यातो जने यशस्वी च जीवार्केन्दुज्ञभार्गवैः ॥ ७ ॥

रवि चन्द्र बुध गुरु शुक्र का योग हो तो जातक राजमन्त्री, अधिक धनवान्, इञ्जीनियर, जज या कलेक्टर, लोक में ख्यात और यशस्वी होता है ॥ ७ ॥

परान्नभोजी सोन्मादः प्रियतप्तश्च वञ्चकः ।
उग्रो भीरुर्नरः सूर्यशनिचन्द्रेज्यचन्द्रजैः ॥ ८ ॥

रवि चन्द्र बुध गुरु शनि के योग में परान्नभोक्ता, उन्माद (पागलपन) रोग वाला, मित्रों से दुःखी, क्रूर और डरपोक होता है ॥ ८ ॥

धनपुत्रसुखैर्हीनो मृत्यूत्साहो च लोमशः।
दीर्घो भवति चन्द्रार्कबुधशुक्रशनैश्चरैः॥ ९॥

रवि-चन्द्र-बुध-शुक्र-शनि के योग में मनुष्य धन, पुत्र से हीन, अधिक रोग से युक्त देहवाला, लम्बा कद और मरने के लिए उद्यत रहता है॥ ९॥

इन्द्रजालरतो वाग्मी चलचित्तोऽङ्गनाप्रियः।
प्राज्ञश्च दक्षो निर्भीतः शुक्रज्यार्केन्दुसूर्यजैः॥ १०॥

रवि-चन्द्र-बृहस्पति-शुक्र-शनि के योग से इन्द्रजाल जानने वाला, वक्ता, चञ्चलचित्त, स्त्रियों का प्रिय, पण्डित, समर्थ और विनययुक्त होता है॥१०॥

स्फीतो बहुहयः कामी नरः शोकी च भूपतिः।
बुधार्ककुजशुक्रेज्यैः सुभगो भूपतेः प्रियः॥ ११॥

रवि मङ्गल बुध गुरु शुक्र के योग से जातक स्वच्छ हृदय, बहुत घोड़ा रखने वाला, कामी, शोक युक्त, राजा अथवा सुन्दर और राजा का प्रिय होता है॥ ११॥

भिक्षाभोगी च रोगी च नित्योद्विग्नो मलीमसः।
जीर्णो नरो भानुभौमशनिजीवबुधैर्भवेत्॥ १२॥

रवि-मङ्गल-बुध-गुरु-शनि का योग हो तो भीख माँगने वाला, रोगी, उद्विग्नमन, मलिन और वृद्ध समान होता है॥ १२॥

व्याधिभिः शत्रुभिर्ग्रस्तः स्थानभ्रष्टो बुभुक्षितः।
नरः स्याद् विकलः शुक्रमन्दार्कबुधभूसुतः॥ १३॥

रवि-मङ्गल-बुध-शनि-शुक्र के योग से रोग और शत्रुओं से पीड़ित, स्थान से भ्रष्ट, क्षुधा से पीड़ित और विकल होता है॥ १३॥

विज्ञो विचारदक्षश्च धातुयन्त्ररसायने।
नरः प्रसिद्धो भूपुत्ररविजीवसितासितैः॥ १४॥

रवि-मङ्गल-गुरु-शुक्र-शनि का योग हो तो विद्वान्, विवेकी, धातु-यन्त्र (इन्जीनियरिंग) और रसायन बनाने में विख्यात होता है॥ १४॥

बहुधनभागामार्तो विद्वाँल्लोकेषु पूजितो भवति।
विकलश्रोत्रशरीरो रविबुधगुरुशुक्रशनियोगे॥ १५॥

रवि-बुध-गुरु-शुक्र-शनि के योग से बहुत धन का स्वामी, आँव (पेचिस) रोग से पीड़ित, विद्वान्, लोक में पूज्य, कान से कमजोर होता है॥ १५॥

साधुकल्याणशीलश्च धनविद्यासुखान्वितः ।
बहुपुत्रो नरो जीवभौमेन्दुबुधभार्गवैः ॥ १६ ॥

चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र का योग हो तो जातक साधु, कल्याणभागी, धन-विद्या और सुख से युक्त एवं बहुत पुत्रों से युक्त होता है ॥ १६ ॥

परान्नयाचको विप्रो मलिनस्तिमिरामयो ।
नरो भवति भौमेन्दुबुधजीवशनैश्चरैः ॥ १७ ॥

चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु-शनि का योग हो तो परान्नभोजी, विप्र वर्ण, मलिन और अल्प दृष्टि वाला होता है ॥ १७ ॥

दुर्भगो मलिनो मूर्खः प्रेष्यः क्लीवश्च निर्धनः ।
नरो भवति चन्द्रेज्यशुक्रसौरिमहीसुतैः ॥ १८ ॥

चन्द्र-मंगल-गुरु-शुक्र-शनि का योग हो तो दुर्भग, मलिन, मूर्ख, नौकर, नपुंसक और निर्धन होता है ॥ १८ ॥

बहुमित्रारिपक्षश्च दुःशीलः परपीडकः ।
मानी नरः सोमजीवशुक्रमन्दधरासुतैः ॥ १९ ॥

चन्द्र-मंगल-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हों तो बहुत मित्र और बहुत शत्रुवाला, दुष्ट स्वभाव तथा दूसरों को कष्ट देने वाला होता है ॥ १९ ॥

राजमन्त्री राजतुल्यो लोकपूज्यो गुणाधिकः ।
चन्द्रचन्द्रजमन्देज्यभृगुपुत्रैर्नरो भवेत् ॥ २० ॥

चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र-शनि एक स्थान में हों तो राजा का मन्त्री या राजा के तुल्य, लोक में मान्य और अधिक गुणवान् होता है ॥ २० ॥

अलसस्तामसो नित्यं सोन्मादो राजवल्लभः ।
निद्रातुरो नरो भौमबुधजीवार्किभार्गवैः ॥ २१ ॥

चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र-शनि एक स्थान में हों तो जातक आलसी, तामसी, उन्माद रोग से युक्त, निद्राप्रिय, किन्तु राजा का प्रिय होता है ॥ २१ ॥

षड्ग्रहयोगफल-

विद्याधर्मधनैर्युक्तो बहुभोगी च भाग्यवान् ।
सूर्याद्यैः शुक्रपर्यन्तैः ख्यातो भवति षड्ग्रही ॥ १ ॥

रवि-चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र इन छह ग्रहों का योग हो तो जातक विद्या, धर्म और धन से युक्त, भोगी और भाग्यवान् होता है ॥ १ ॥

परकार्यकरो दाता शुद्धात्मा चञ्चलाकृतिः।
षड्भिर्ग्रहैर्विना शुक्रं रमते विजयी जनः॥ २॥

रवि-चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु-शनि का योग हो तो दूसरोंके कार्य करनेवाला, दानी, शुद्ध हृदय, चञ्चल प्रकृति और शत्रुओं को जीतनेवाला होता है ॥२॥

संशयी सुभगो मानी ख्यातो युद्धेऽरिमर्दकः।
विना जीवं ग्रहैः षड्भिर्विवादे रमते जनः॥ ३॥

रवि-चन्द्र-मंगल-बुध-शुक्र-शनि का योग हो तो संशयात्मा, सुन्दर, अभिमानी, लोक में ख्यात, शत्रुओं को जीतने वाला और विवादी होता है॥ ३॥

भार्याप्रियो रणोत्साही विभ्रमः क्रोधलोभवान्।
अर्कार्किचन्द्रभौमेज्यभार्गवैः सुभगो नरः॥ ४॥

रवि-चन्द्र-मंगल-गुरु-शुक्र-शनि एक स्थान में हों तो स्त्री का प्रिय, युद्ध में उत्साह रखने वाला, भ्रम रहित, क्रोधी और सुन्दर होता है॥ ४॥

कलत्रहीनो निर्द्रव्यो राजमन्त्री क्षमायुतः।
रवीन्दुबुधजीवार्किभृगुभिः सुभगो नरः॥ ५॥

रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र-शनि एक साथ हों तो स्त्री हीन, निर्धन, राजमन्त्री, क्षमाशील और सुरूपवान् होता है॥ ५॥

धनदारसुतैर्हीनस्तीर्थगामी वनाश्रितः।
सूर्यारसौम्यजीवार्किभृगुपुत्रैर्भवेन्नरः॥ ६॥

रवि-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि एक स्थान में हों तो धन, स्त्री और पुत्र से हीन, तीर्थाटन करने वाला और वनवास प्रिय होता है॥ ६॥

धनी मन्त्री शुचिस्तन्द्री बहुभार्यो नृपप्रियः।
विना सूर्यं ग्रहैः षड्भिः प्रतापी जायते नरः॥ ७॥

चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि ये एक स्थानमें हों तो धनवान्, राजमन्त्री पवित्र, आलसी, बहुत पत्नी वाला, राजा का प्रिय और प्रतापी होता है॥७॥

विशेष फल—

प्रायो दरिद्रो मूर्खश्च षड्भिर्वा पञ्चभिर्ग्रहैः।
अन्योन्यदर्शनात्तेषां फलमेतत्प्रकीर्तितम्॥ ८॥

प्रायः ५ या ६ ग्रहों के योग में जन्म लेनेवाला दरिद्र और मूर्ख ही होता है, ऊपर जो विशेष फल कहे गये हैं, वे परस्पर शुभ और पापग्रहों की दृष्टिवश संयोग से होते हैं॥ ८॥

सप्तग्रहयोगफल–

दिवाकरनिभस्तेजा भूपमान्यः शिवप्रियः ।
सूर्याद्यैः शनिपर्यन्तैर्योगे दानी धनान्वितः ॥ १ ॥

जन्म समय में यदि रवि-चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि ये सातों ग्रह एक स्थान में हों तो जन्म लेनेवाला सूर्य के समान प्रतापी, राजा का मान्य, महादेव का भक्त, दाता और धनवान् होता है ॥ १ ॥

केन्द्रायुः साधन–

केन्द्राङ्कसङ्ख्यां त्रिगुणीं विधाय राह्वारशन्यङ्कृतो विहीनम् ।
आयुः प्रमाणं कथितं मुनीन्द्रैश्चिरन्तनैर्ज्यौतिपिकैः स्मृतञ्च ॥२॥

केन्द्रस्थानस्थितानङ्कांस्त्रिगुणीकृत्य यावन्पिण्डस्तावद्वर्षसंख्यायुः । यदि केन्द्रमध्ये राहुशनिभौमा भवन्ति तत्केन्द्राङ्कान् सम्मील्य शेषं त्रिगुणं कार्यम् ।

लग्नादि केन्द्रों में जो अङ्क (राशि की संख्या) हो उन सबों को जोड़कर ३ से गुणा करे, फिर देखें कि जिस-किसी केन्द्र में शनि, मङ्गल या राहु हो उसके अंक को घटावे तब जो शेष बचे उतने वर्ष उस जातक की आयु प्राचीन ज्योतिषियों ने कही है ॥ २ ॥

विशेष यदि केन्द्र में शनि-मंगल-राहु इनमें से कोई नहीं हो तो केन्द्राङ्क संख्या त्रिगुणित तुल्य होती है ॥ २ ॥

परञ्च इस प्रकार से आयुर्दाय परम असङ्गत (प्रत्यक्ष विरुद्ध भी) है, क्योंकि-४ केन्द्राङ्कों का योग ३० से अधिक नहीं हो सकता । अतः किसी का आयुर्दाय ९० से अधिक नहीं आ सकता है, परञ्च कितने मनुष्य ९० वर्ष से अधिक जीते हैं ॥ २ ॥

उदाहरण–यहाँ केन्द्रस्थ राशियों की संख्या जोड़ने से २६ इसको ३ से गुणा करने से ७८ वर्ष जातक की आयु हुई ॥ १ ॥

यहाँ केन्द्र में रा० श० मं० इनमें से कोई नहीं है, अतः त्रिगुणित संख्या के तुल्य ही आयु समझनी चाहिये ॥ २ ॥

६
मं बृ ४ रा.
७
५
श. ३
८
सू. २ चं.
९
११
१ शु. बु.
१० के
१२

इति ग्रहयोगफल निरूपण ।

भावेशफल निरूपण

प्रणिपत्य परं ज्योतिः सर्वं च जगतीतलम् ।
तमः प्रशमनं वक्ष्ये जन्मशास्त्रप्रदीपकम् ।। १ ।।

सम्पूर्ण संसार के तमको नाश करने वाले परम ज्योतिःस्वरूप अनादि परब्रह्म परमेश्वर को प्रणाम कर जन्मशास्त्रप्रदीप्र को कहता हूँ ।। १ ।।

लग्नादिद्वादशभावस्थित लग्नेश फल—

लग्नाधिपतिर्लग्ने नीरोगं दीर्घजीविनं कुरुते ।
अतिबलमवनीशं वा भूलाभसमन्वितं जातम् ।। २ ।।

लग्नेश लग्न में हो तो जन्म लेने वाला रोगहीन, दीर्घायु, अति बलवान्, राजा या बहुत जमीन का मालिक होता है ।। २ ।।

लग्नपतिर्धनभवने धनवन्तं विपुलजीविनं स्थूलम् ।
अतिबलमवनीशं वा भूलाभं वा सुधर्मरतं कुरुते ।। ३ ।।

लग्नेश द्वितीय भाव में हो तो जन्म लेने वाला, धनी, दीर्घजीवी, स्थूल शरीर, बड़ा बलवान्, राजा या जमीन्दार अथवा धर्मात्मा होता है ।। ३ ।।

सहजगतो लग्नपतिः सद्बन्धुप्रवरमित्रपरिकलितम् ।
धर्मरतं दातारं शूरं स-बलं करोति नरम् ।। ४ ।।

लग्नेश तृतीय भाव में हो तो उत्तम बन्धु, उत्तम मित्र से युक्त-धर्मात्मा, दाता, शूरवीर और बलवान् होता है ।। ४ ।।

लग्नेशे तुर्यगते नृपप्रियं प्रचुरजीवितं कुरुते ।
संलब्धपितरं पित्रोर्भक्तमबहुभोजनं कुरुते ।। ५ ।।

लग्नाधिप चतुर्थ भाव में हो तो जातक राजा का प्रिय, चिरजीवी, पिता से धन पाने वाला, माता-पिता का भक्त और बहुत भोजन करने वाला होता है ।। ५ ।।

पञ्चमगे लग्नपतौ सुसुतं सत्यागमीश्वरं विदितम् ।
बहुजीवितं सुगीतं सुकर्मनिरतं जनं कुरुते ।। ६ ।।

लग्नपति पञ्चम भाव में हो तो जातक सुपुत्रवान्, दाता, राजा, विख्यात, दीर्घायु और सुकर्मरत होता है ।। ६ ।।

रिपुभवने लग्नेशे नीरोगं भूमिलाभं च ।
सबलं धनिनसरिध्नं सुकर्मपक्षान्वितं कुरुते ।। ७ ।।

लग्नेश षष्ठ भाव में हो तो जातक रोगहीन, जमीन्दार, बलवान्, शत्रु को जीतने वाला और सत्कर्म करने वाला धनी होता है ॥ ७ ॥

प्रथमपतौ सप्तमगे तेजस्वी शोकवान्भवेत्पुरुषः ।
तद्भार्याऽपि सुशीला तेजःकलिता सुरूपा च ॥ ८ ॥

लग्नपति सप्तम भाव में हो तो तेजस्वी किन्तु शोक युक्त पुरुष होता है, उसकी स्त्री भी सुशीला, तेजस्विनी और सुन्दरी होती है ॥ ८ ॥

लग्नपतावष्टमगे कृपणो धनसञ्चयी तु दीर्घायुः ।
क्रूरे खचरे क्रूरः सौम्यैः पुरुषो भवेत्सौम्यः ॥ ९ ॥

लग्नाधिप अष्टम स्थान में हो तो कृपण, धनसंग्रह करने वाला और दीर्घायु होता है । लग्नेश यदि पापग्रह हो तो जातक क्रूर तथा शुभग्रह हों तो सौम्य (सरल स्वभाव) होता है ॥ ९ ॥

मूर्तिपतिर्यदि नवमे तदा भवति प्रचुरबान्धवः सुकृती ।
सप्तमित्रस्तु सुशीलः सुमती ख्यातः सुतेजस्वी ॥१०॥

लग्नाधिप नवम भाव में हो तो वह जातक अधिक बन्धुवाला, पुण्यवान्, सबका मित्र, बुद्धिमान्, सुशील, विख्यात और तेजस्वी होता है ॥१०॥

प्रथमेशो दशमस्थो नृपलाभी पण्डितः सुशीलश्च ।
गुरुमातृपूजनमतिर्नृपप्रसिद्धः पुमान् भवति ॥ ११ ॥

लग्नपति यदि दशम भाव में हो तो राजा से लाभ करने वाला, पण्डित, सुशील, गुरु-माता-पिता का भक्त और राज दरबार में प्रसिद्ध पुरुष होता है ॥ ११ ॥

एकादशस्थतनुपः सुजीवितं सुतसमन्वितं विदितम् ।
तेजःकलितं कुरुते पुरुषं बलिनं सुवाहनैर्युक्तम् ॥ १२ ॥

लग्नेश एकादश भाव में हो तो सुखयुक्त, चिरंजीवी, पुत्रवान्, विख्यात, तेजस्वी, बलवान् और वाहनों (सवारियों) से युक्त होता है ॥ १२ ॥

द्वादशगे मूर्तिपतौ कटुकनरकर्मपरोऽशुभो नीचः ।
मानी सहगोत्रीभिर्विदेशगो दत्तभुक्नरः ॥ १३ ॥

लग्नेश द्वादश भाव में हो तो जातक कुकर्म करने वाला, परद्वेषी, नीच, बन्धुओं में मानी, परदेश में रहने वाला और दूसरों के दिये हुए अन्न खानेवाला होता है ॥ १३ ॥

द्वादशभावस्थित धनेश फल–

द्रव्यपतिर्लग्नगतः कृपणं व्यवसायिनं सुकर्माणम् ।
धनिनं श्रीपतिविदितं करोति नरमतुलभोगभुजम् ॥ १ ॥

द्वितीयेश (धनेश) लग्न में हो तो जातक कृपण, व्यवसायी, सत्कर्म करने वाला, धनवान्, धनियों में ख्यात और अतुल सुख भोग करने वाला होता है ॥ १ ॥

व्यवसायी च सुलाभी ह्युत्पन्नभुगलीककारको नीचः ।
आलिकृद्विदितोऽपि च पूर्णोद्योगीधनपतौ धनगे ॥२॥

धनेश द्वितीय (धन) भाव में हो तो—व्यवसाय से लाभ करने वाला, सत्य को छिपाने वाला, नीच, बाँध बनाने वाला और कार्यों में उद्योग वाला होता है ॥ २ ॥

धनपे सहजगते सति बन्धोर्भेदनावर्जितः क्रूरे ।
सौम्ये राजविरोधी भूतनये तस्करः पुरुषः ॥ ३ ॥

द्वितीयेश यदि तृतीय भाव में हो तो–तथा यदि पापग्रह हो तो बन्धुओं से भेद नहीं रखने वाला, यदि शुभग्रह हो तो राजा से विरोध करने वाला तथा मंगल धनेश होकर तृतीय भाव में हो तो चोर भी होता है ॥ ३ ॥

तुर्यगते द्रविणपतौ पितृलाभपरः सत्यदयायुक्तः ।
दीर्घायुः क्रूरखगे त्वथवा मरणं विनिर्देश्यम् ॥ ४ ॥

द्वितीयेश यदि चतुर्थ भाव में हो तो पिता से धन पाने वाला, सत्यभाषी, दयालु, दीर्घायु होता है । यदि धनेश पापग्रह होकर चतुर्थ भाव में हो तो मरण कारक भी हो सकता है ॥ ४ ॥

तनयकमलविलासी कष्टतरे कर्मणि प्रसिद्धं च ।
कृपणं दुःखनिधानं तनयगतो धनपतिः कुरुते ॥ ५ ॥

द्वितीयेश पञ्चम भाव में हो तो पुत्रों से सुखी, कठिन कर्म को करने वाला, कृपण और दुःखी होता है ॥ ५ ॥

षष्ठगतो द्रविणपतिर्धनसंग्रहतत्परं रिपुघ्नं च ।
भूलाभिनं सुखचरैः पापैर्धनवर्जितं पुरुषम् ॥ ६ ॥

धनेश षष्ठ भावमें हो तो धन संग्रह करनेवाला, शत्रुओंको जीतनेवाला, शुभग्रह हो तो भूमिलाभ करनेवाला और पापग्रह हो तो निर्धन होता है ॥६॥

धनपेऽपि च सप्तमगे श्रेष्ठगचिन्ताविलासभोगवती ।
धनसंग्रहणी भार्या क्रूरे खचरे भवेद्वन्ध्या ॥ ७ ॥

धनेश सप्तम भाव में हो और शुभग्रह हो तो उसकी स्त्री सुशीला, विलासिनी, सौभाग्यवती, धनसंग्रह करने वाली और पापग्रह हो तो वन्ध्या होती है ॥ ७ ॥

धनपेऽष्टमभवनस्थे अष्टकपाली चाऽऽत्मघातकः पुरुषः ।
उत्पन्नभुग्विलासी परधनहिंसी भवति दैवपरः ॥८॥

द्वितीयेश यदि अष्टम भाव में हो तो जातक, अठकपारी (कार्य में असफल), आत्मघाती, प्राप्त सुख को भोगने वाला, विलासी, परधन-हारक और प्रारब्धवादी होता है ॥ ८ ॥

धनपे धर्मगृहस्थे सौम्ये दानी प्रसिद्धवाग्भवति ।
क्रूरे दरिद्रभिक्षुर्विडम्बवृत्तिस्तथा मनुजः ॥ ९ ॥

धनेश यदि नवमभाव में हो और वह शुभग्रह हो तो जातक दानी और वचन-पालक होता है, पापग्रह हो तो दरिद्र, भिखमंगा और विडम्बना से युक्त होता है ॥ ९ ॥

दशमगृहस्थे धनपे नरेन्द्रमान्यो भवेन्नृपाल्लक्ष्मीः ।
सौम्यगृहगे च मातुर्मनुजः पितृपालको भवति ॥१०॥

द्वितीयेश दशमभाव में हो तो राजमान्य, राजा से धन पाने वाला होता है तथा शुभग्रह की राशि में होकर दशमभाव में हो तो माता और पिता का भक्त होता है ॥ १० ॥

एकादशगः खेचरव्यवहारे श्रीपतिः ख्यातः ।
लोकौघप्रतिपालनरतं धनेशो नरं कुरुते ॥ ११ ॥

धनेश यदि एकादश भाव में हो तो जातक ग्रहगति (ज्योतिष) शास्त्र द्वारा सम्पत्ति उपार्जन करने वाला, विख्यात, जन-समूह का पालक होता है ॥ ११ ॥

द्रविणपतौ व्ययलीने पुरुषं कृपणं धनवर्जितं क्रूरे ।
सौम्ये लाभाऽलाभे समं मनुष्यं विधिः कुरुते ॥ १२ ॥

द्वादश भाव में द्वितीयेश हो तथा वह पापग्रह हो तो कृपण और निर्धन होता है, शुभग्रह हो तो समान लाभ और हानि वाला मनुष्य होता है ॥१२॥

द्वादशभावस्थ तृतीयेश फल–

सहजपतिर्लग्नगतो वाग्वादी लम्पटः स्वजनभेदी।
सेवापरः कुमित्रः कूटकरः प्रोच्यते पुरुषः ॥१॥

तृतीयेश लग्न में हो तो बकवादी, लम्पट, अपने परिवार में भेद रखने वाला, नौकरी करने वाला, कुमित्र वाला और नकली वस्तु बनाने वाला होता है ॥ १ ॥

धनगृहगे सहजेशे भिक्षुर्निधनोऽल्पजीवितो मनुजः।
बन्धुविरोधी क्रूरे सौम्यैः पुनरीश्वरः खचरैः ॥२॥

तृतीयेश धनभावमें हो और वह पापग्रह हो तो भिक्षुक, निर्धन, अल्पायु और बन्धु-विरोधी होता है। शुभग्रह हो तो जातक धनवान् होता है ॥ २ ॥

सहजगतः सहजपतिः समसत्त्वं सुसुहृदं शुभस्वजनम्।
देवगुरुपूजनरतं नृपलाभपरं नरं कुरुते ॥३॥

सहजेश तृतीय भाव में हो तो जातक बलवान्, सुमित्र वाला, देवता और गुरु का भक्त, राजा से धन पानेवाला मनुष्य होता है ॥ ३ ॥

भ्रातृपतौ मातृगते पितृबन्धुसहोदरेषु सुखभोगी।
मात्रा सह वैरकरः पितृवित्तस्य प्रभक्षकः पुरुषः ॥४॥

सहजेश चतुर्थ भाव में हो तो पिता, बन्धु, सहोदरों से सुख पाने वाला, माता से वैर करने वाला और पिता के धन को खाने वाला होता है ॥ ४ ॥

दुश्चिक्यपतौ सुतगे सुतबान्धवसुतसहोदरैः पाल्यः।
दीर्घायुर्भवति नरः परोपकारैकनिरतमतिश्च ॥५॥

तृतीयेश पञ्चम भाव में हो तो वह मनुष्य, बेटे-भतीजे और सहोदरों से पालित होकर भी दीर्घायु और परोपकारी होता है ॥ ५ ॥

षष्ठगते सहजपतौ बन्धुविरोधी च नयनरोगी च।
भूलाभो भवति भृशं कदाचिदपि रोगसङ्कुलितः ॥६॥

सहजेश षष्ठभाव में हो तो बन्धुओं का विरोधी, नेत्र रोगी, भूमि उपार्जन करने वाला तथा कभी-कभी रोग से पीड़ित होता है ॥ ६ ॥

सप्तमगे सहजेशे नरस्य भार्या भवेत्सुशीला च।
सौभाग्यवती तु युवतिः क्रूरे देवरगृहं याति ॥७॥

सहजेश सप्तम भाव में हो तथा वह शुभग्रह हो तो उस जातक की स्त्री सौभाग्यवती एवं सुशीला होती है, यदि क्रूरग्रह हो तो देवर के घर रहती है ॥ ७ ॥

भ्रातृपतिस्त्वष्टमगः जातं मृतसोदरं नरं कुरुते ।
क्रूरे बाहुव्यङ्गिनमपि जीवति यद्यष्टवर्षाणि ॥८॥

तृतीयेश यदि अष्टम भाव में हो तो वह सहोदरहीन होता है। यदि वह पापग्रह हो तो जातक अङ्गहीन या ८ वर्ष की आयु वाला होता है ॥ ८ ॥

धर्मगते सहजपतौ क्रूरे बन्धूज्झितस्तथा सौम्ये ।
सद्बान्धवश्च सुकृती सोदरभक्तो भवेन्मनुजः ॥९॥

तृतीयेश नवम भाव में हो और वह पापग्रह हो तो बन्धुहीन, यदि शुभग्रह हो तो सद्बन्धु, पुण्यवान्, पण्डित और सहोदरों का भक्त होता है ॥ ९ ॥

दुश्चिक्येशे दशमे नृपपूज्यो मातृबन्धुपितृभक्तः ।
उत्तमबोधो बन्धुषु विनिश्चितो जायते जातः ॥१०॥

तृतीयेश यदि दशम भाव में हो तो जातक राजमान्य, माता-पिता और बन्धुओं का भक्त एवं सद्बुद्धि वाला होता है ॥ १० ॥

लाभस्थः सहजेशः सुबान्धवं राजशालिनं कुरुते ।
कुरुते बन्धुषु सेवाविधायिनं भोगनिरतं च ॥११॥

तृतीयेश लाभ स्थान में हो तो उत्तम बन्धुवाला, राजा, बन्धुओं का पालक तथा भोगी होता है ॥ ११ ॥

व्ययगे दुश्चिक्येशे मित्रविरोधोऽतिबन्धुसन्तापी ।
दूरे वासितबन्धुर्विदेशगामी नरो भवेज्जातः ॥१२॥

तृतीयेश द्वादश भाव में हो तो मित्रों का विरोधी, बन्धुओं को सन्ताप देनेवाला, बन्धुओं से दूर और विदेश में रहनेवाला होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ चतुर्थेश फल-

तुर्यपतिर्लग्नगतः स्नेहं पितृपुत्रयोर्मिथः कुरुते ।
उच्चतमं पितृपक्षे पितृनाम्नाऽपि प्रसिद्धं च ॥१॥

चतुर्थेश लग्नमें हो तो पिता-पुत्र में परस्पर प्रेम तथा पितृकुल में श्रेष्ठ, पिता के नाम और अपने नाम से विख्यात होता है ॥ १ ॥

पातालपे धनस्थे क्रूरखगे पितृविरोधकृच्छुभे भवति ।
पितृपालकः प्रसिद्धः पिता भुनक्तीह तल्लक्ष्मीम् ॥२॥

द्वितीय भाव में यदि चतुर्थेश पापग्रह हो तो पिता का विरोधी, शुभ ग्रह हो तो पिता का भक्त होता है तथा उसकी उपार्जित सम्पत्ति का भोग उसका पिता करता है ॥ २ ॥

तुर्येशे सहजस्थे पितृमातृविभेदकं नरं कुरुते ।
पित्रा सह कलहकरं पितृबान्धवघातकं कुरुते ॥ ३ ॥

चतुर्थेश तृतीय भाव में हो तो माता और पिता से विभेद रखनेवाला, पिता से कलह करनेवाला तथा पिता के बन्धुओं का घातक होता है ॥ ३ ॥

तुर्यगते तुर्यपतौ पितरि क्षितिप्राप्तबहुमानः ।
विदितः पितृलाभकरो भवति सुधर्मा सुखी धनपः ॥ ४ ॥

चतुर्थेश यदि चतुर्थ भाव में हो तो उसके पिता को राजा से आदर प्राप्त होता है, तथा वह जातक विख्यात, पिता के लिये लाभकारी, धर्मात्मा, सुखी और अति धनवान् होता है ॥ ४ ॥

सुतगे तुर्यगृहेशे पितृधनभागी च दीर्घायुः ।
भवति च कृतिप्रसिद्धः स-सुतः सुतपालकश्चैव ॥ ५ ॥

चतुर्थेश पञ्चम भाव में हो तो पिता के धन को सदुपयोग में लगाने वाला, क्रिया में प्रसिद्ध, पुत्रवान् और सन्तान का पालक होता है ॥ ५ ॥

हिबुकपतौ रिपुभावे मात्रर्थविनाशकः, शिशुर्जातः ।
पितृदोषरतः क्रूरे सौम्ये धनसञ्चयी मनुजः ॥ ६ ॥

चतुर्थेश षष्ठभाव में हो तो माता के धन को नष्ट करनेवाला होता है, यदि वह (चतुर्थेश) पापग्रह हो तो पिता का छिद्रान्वेषी और शुभग्रह हो तो धन सञ्चय करनेवाला होता है ॥ ६ ॥

अम्बुपतौ सप्तमगे क्रूरे श्वशुरं स्नुषा न पालयति ।
सौम्ये पालयति पुनः स-कुलवती कुजकवी कुरुतः ॥ ७ ॥

चतुर्थाधिप यदि सप्तम भाव में हो तथा वह पाप हो तो उसकी स्त्री श्वसुर को कष्ट देनेवाली, यदि शुभग्रह हो तो श्वसुर की सेवा करने वाली होती है। यदि मङ्गल या शुक्र हो तो कुलीना होती है ॥ ७ ॥

छिद्रगतस्तुर्यपतिः क्रूरं रोगान्वितं दरिद्रं वा ।
दुष्कर्मपरं मृत्युप्रियमथवा मानवं कुरुते ॥ ८ ॥

चतुर्थेश अष्टम भाव में हो तो जातक क्रूर, रोगी, दरिद्र, कुकर्म करने वाला तथा मरने के लिये उद्यत रहता है ॥ ८ ॥

सुकृते तुर्यपतौ सति पितर्यसङ्गी समस्तविद्यावान् ।
पितृधर्मसंग्रहपरः पितृनिरपेक्षो भवेन्मनुजः ॥ ९ ॥

चतुर्थेश नवम भाव में हो तो पिता से पृथक् रहनेवाला, सब विद्याओं का ज्ञाता, पिता के धर्म को पालनेवाला, परञ्च पिता की अपेक्षा नहीं करने वाला होता है ॥ ९ ॥

पातालपेऽम्बरगते पापे सुतमातरं त्यजेज्जनकः ।
सृजते त्वन्यां दयितां सौम्ये पुनरन्यपालकः पुरुषः ॥ १० ॥

चतुर्थेश यदि दशम भाव में हो और वह पापग्रह हो तो उसका पिता उसकी माता को त्याग देता है तथा दूसरा विवाह कर लेता है। शुभग्रह हो तो दूसरों का पालक (परोपकारी) होता है ॥ १० ॥

एकादशे तुर्यपतौ धर्मी जनपालकः सुकर्मा च ।
पितृभक्तो भवति पुनः प्रचुरायुर्व्याधिरहितश्च ॥ ११ ॥

चतुर्थेश एकादश भाव में हो तो जातक धर्मात्मा, परिजन का पालक, सत्कर्म करनेवाला, पिता का भक्त, दीर्घायु और रोगहीन होता है ॥ ११ ॥

द्वादशगे तुर्यपतौ मृतपितृको वा विदेशगो वाच्यः ।
पुत्रस्य पापखेटे चाऽन्यपितुर्जन्म निर्देश्यम् ॥ १२ ॥

चतुर्थ भाव का स्वामी द्वादश भाव में हो और वह शुभग्रह हो तो पिता के मरने के बाद या विदेश में रहने पर उसका जन्म समझना, यदि वह (चतुर्थेश) पापग्रह हो तो उसको पर-पुरुष से उत्पन्न समझना चाहिए ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ पञ्चमेश फल–

लग्नगते पञ्चमपे जनविदितं स्तोकतनयपरिकलितम् ।
शास्त्रविदं वेदविदं सुकर्मनिरतं तथा कुरुते ॥ १ ॥

जन्म समय पञ्चमेश लग्न में हो तो जातक लोक में ख्यात, थोड़े पुत्र-वाला, शास्त्रज्ञ, वेदवेत्ता और सुकर्म करनेवाला होता है ॥ १ ॥

पञ्चमपतिर्धनस्थः क्रूरे खेटे धनोज्झितं कुरुते ।
गीतादिकलाकलितं कष्टभुजं सद्ग्रहः सुखिनम् ॥ २ ॥

पञ्चमेश धन स्थान में यदि पापग्रह हो तो जातक, निर्धन, संगीतादि कला को जाननेवाला, कष्ट से भोजन पानेवाला होता है, यदि पञ्चमेश शुभग्रह हो तो जातक सुखी होता है ॥ २ ॥

तनयपतिः सहजगतः सुमधुरवाक्यं जनेषु सुविदितम्।
कुरुते सुतास्तदीयाः परितो रक्षन्ति तद्बन्धून्॥ ३॥

पञ्चमेश तृतीय भाव में हो तो मधुरभाषी, लोक में विदित होता है। और उसके पुत्र योग्य होकर पिता के परिवार की रक्षा करनेवाले होते हैं॥ ३॥

सुतपः पातालगतः पितृकर्मरतं प्रपालितं पित्रा।
जननीभक्तं कुरुते क्रूरे तु विरोधिनं पितृभिः॥ ४॥

पञ्चमेश चतुर्थ भाव में हो तो जातक अपने पिता के कार्य को करने वाला, पिता के द्वारा पालित और माता का भक्त होता है। यदि पञ्चमेश पापग्रह हो तो माता-पिता का विरोधी होता है॥ ४॥

तनयगतस्तनयपतिर्मतिमन्तं मानिनं जनं कुरुते।
सुतकलितं प्रकटजने विख्यातं मानवं कुरुते॥ ५॥

पञ्चमेश यदि पञ्चम भाव में हो तो जातक बुद्धिमान्, मानी, पुत्रवान्, प्रसिद्ध जनों में श्रेष्ठ पुरुष होता है॥ ५॥

पञ्चमपतिश्च षष्ठे शत्रुयुतं मानहीनं च।
रोगयुतं धनरहितं क्रूरः खचरः करोति नरम्॥ ६॥

पञ्चमेश षष्ठ भाव में हो तो बहुत शत्रुवाला, मानहीन होता है। पाप ग्रह हो तो रोगी और निर्धन भी होता है॥ ६॥

तनयपतौ सप्तमगे स्वसुताः सुभगाश्च देवगुरुभक्ताः।
प्रियवादिनी सुशीला नरस्य ननु जायते दयिता॥ ७॥

पञ्चमेश यदि सप्तम भाव में हो तो उसके पुत्र सुन्दर और देव-गुरु के भक्त होते हैं तथा उसकी स्त्री प्रियवादिनी और सुशीला होती है॥ ७॥

सुतपे निधनगृहस्थे कटुवाङ्स्त्रीविवर्जितः यदा भवति।
चण्डा पत्नी व्यङ्गी सहजास्तनया भवन्ति तथा॥ ८॥

पञ्चमेश अष्टम भाव में हो तो जातक स्त्री रहित हो अथवा स्त्री जीवित रहे तो क्रोधिनी, अङ्गहीना होती है तथा भाई और पुत्र भी क्रोधी एवं अंगहीन होते हैं॥ ८॥

सुकृतगतस्तनयपतिः सुबोधविद्यं कविं सुगीतिज्ञम्।
नृपपूजितं सुरूपं नाटकरसिकं नरं कुरुते॥ ९॥

पंचमेश यदि नवम भाव में हो तो सुबुद्धि, विद्यावान्, कवि, संगीतज्ञ, राजमान्य, सुन्दर और नाटकप्रिय होता है ॥ ९ ॥

सुतपतिरम्बरलीनो नृपकर्माणं नृपात कलितभावम् ।
सत्कर्मरतं प्रवरं जननीसुखकृत्सुतं कुरुते ॥ १० ॥

पंचम भावेश दशम स्थान में हो तो जातक राजकर्मचारी, राजमान्य, सत्कर्म करने वाला, श्रेष्ठ और माता का सुखकारक होता है ॥ १० ॥

सुतनाथे लाभस्थे शूरः सुतवान् सुसत्यकृतः सङ्गः ।
गीतादिकलाकलितो नृपभोगी जायते जातः ॥ ११ ॥

पंचमेश यदि एकादश भाव में हो तो जातक शूर, पुत्रवान्, सत्य से प्रेम रखनेवाला, संगीत आदि कला का ज्ञाता और राजा से सम्मानित होता है ॥ ११ ॥

पञ्चमपे द्वादशगे क्रूरे सुतवर्जितः शुभे सुसुतः ।
सुतसन्तानपरः स्याद्विदेशगामी भवेन्मनुजः ॥ १२ ॥

पंचमेश यदि द्वादश भाव में हो तथा वह पापग्रह हो तो जातक पुत्र-हीन तथा शुभग्रह हो तो पुत्रवान् होता है। परञ्च पुत्र से सन्तोष होता है तथा वह परदेशवासी होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ षष्ठेश फल

षष्ठेशो लग्नगतो नीरुक्सबलः कुटुम्बकष्टकरः ।
बहुपक्षो रिपुहन्ता भवति नरः स्वैरवचनधनः ॥ १ ॥

षष्ठेश लग्न में हो तो जातक नीरोग, बलवान्, कुटुम्बियों को कष्ट देनेवाला, बहुतों को अपने पक्षमें रखनेवाला, शत्रुओं को जीतनेवाला और बोलने तथा धन कमाने में स्वच्छन्द रहता है ॥ १ ॥

शत्रुपतौ द्रविणस्थे दुष्टश्चतुरो हि संग्रहपरेष्टः ।
स्थानप्रवरो विदितो व्याधितदेहः सुहृद्विधुरः ॥ २ ॥

षष्ठेश धन भाव में हो तो जन्म लेनेवाला दुष्ट, चतुर, धन संग्रह करने वाला, उत्तम स्थानवासी, ख्यात, रोगी और मित्ररहित होता है ॥ २ ॥

षष्ठपतिः सहजस्थः कुरुतेऽसौ लोककष्टकरम् ।
नीचाचरणं जातं कष्टं संग्रामतस्तस्य ॥ ३ ॥

षष्ठेश यदि तृतीय भाव में हो तो जातक लोक को कष्ट देने वाला, नीच आचरणवाला होता है तथा उसे लड़ाई से सदा कष्ट होता है ॥ ३ ॥

षष्ठाधिपतिस्तुर्ये पितृतनयो वैरिणौ मिथः कुरुते ।
स-रुक् पिताऽसौ ससुतो लक्ष्मीं लभते नरः सुचिरम् ॥ ४ ॥

षष्ठेश चतुर्थ स्थान में हो तो पिता और पुत्र में परस्पर शत्रुता होती है, और उसका पिता रोगी होता है। तथा वह पुत्र सहित चिरकाल पर्यन्त सम्पत्तिवान् होता है ॥ ४ ॥

रिपुभवनपतौ सुतगे पितृतनयो वैरिणौ मृतिः सुततः ।
क्रूरे शुभे च विधनः पदवीदुष्टश्च तत्कपटी ॥५॥

क्रूर षष्ठेश पञ्चम भाव में हो तो पुत्र से शत्रुता और पुत्र के कारण से मरण होता है। यदि षष्ठेश शुभग्रह हो तो निर्धन, दुष्ट और कपटी होता है ॥ ५ ॥

रिपुभावाधिपे रिपुस्थे नीरुग् वैरी सुखी कृपणः ।
न हि जन्मतोऽपि सीदति कुस्थलवासी च भवति नरः ॥६॥

षष्ठेश यदि षष्ठ स्थान में हो तो जातक नीरोग, अकारण लोगों से शत्रुता करने वाला, सुखी, कृपण, कभी भी खिन्न न होने वाला किन्तु दूषित स्थान में रहने वाला होता है ॥ ६ ॥

अहितपतौ सप्तमभे क्रूरे भार्या विरोधिनी चण्डी ।
सन्तापकारी त्वथ सौम्ये वन्ध्या वा गर्भनाशपरा ॥ ७॥

षष्ठेश सप्तम भाव में हो और वह पापग्रह हो तो उसकी स्त्री विरुद्ध आचरण वाली, क्रोधवती, सन्ताप देने वाली होती है। यदि शुभग्रह हो तो वन्ध्या या नष्ट गर्भवाली होती है ॥ ७ ॥

शनेर्ग्रहणिकारुजो विषधराद्धरानन्दनाद्
बुधश्च विषदोषतः सपदि मृत्युरेणाङ्कतः ।
रवेर्मृगपतेर्वधात्प्रकटमष्टमे षष्ठपाद्
गुरोरपि च दुष्टधीर्नयनदोषवाञ्छुक्रतः ॥ ८ ॥

अष्टम स्थान में षष्ठेश होकर शनि हो तो संग्रहणी रोग से, मंगल हो तो विषधर (सर्पादि) से, बुध हो तो विष से, चन्द्रमा हो तो शीघ्र मरण, रवि हो तो सिंह-व्याघ्रादि से मरण होता है। गुरु षष्ठेश होकर अष्टम में हो तो जातक दुष्टबुद्धि, शुक्र हो तो नेत्रदोष से युक्त होता है ॥ ८ ॥

शत्रुपतिर्यदि नवमः क्रूरः खचरस्तथा भवेत् खञ्जः ।
बन्धुविरोधी शास्त्रं न मन्यते याचकः सौम्ये ॥९॥

षष्ठेश नवम भाव में हो और वह पापग्रह हो तो जातक लँगड़ा, बन्धु-विरोधी, शास्त्र को नहीं मानने वाला होता है। यदि शुभग्रह हो तो याचक (भीख माँगने वाला) होता है ॥ ९ ॥

अरिपे दशमगृहस्थे क्रूरे मातू रिपुस्तदा दुष्टः ।
धर्मसुतपालनमतिर्मातुर्दोषो भवेत्सौम्ये ॥ १० ॥

षष्ठेश दशम स्थान में हो और पापग्रह हो तो जातक अपनी माता का शत्रु और दुष्ट स्वभाव का होता है। यदि शुभग्रह हो तो धर्म और सन्तान को पालने वाला परञ्च मातृदोष रहता है ॥ १० ॥

वैरिपतौ लाभगते क्रूरे मरणं विपक्षतो भवति ।
रिपुदलं तस्करहानिश्चतुष्पदाल्लाभवान् सौम्ये ॥ ११ ॥

षष्ठेश एकादश भाव में हो और वह पापग्रह हो तो उसका मरण शत्रु से होता है। शुभग्रह हो तो शत्रु और चोरों को नष्ट करने वाला, तथा चौपायों (पशु) से लाभ करने वाला होता है ॥ ११ ॥

षष्ठपतौ द्वादशगे चतुष्पदाद् द्रव्यहानिकरः ।
गमनाऽऽगमनाल्लक्ष्मी दैवपरः केवलं भवति ॥ १२ ॥

षष्ठेश द्वादश भाव में हो तो पशुओं से धन की हानि होती है, गमन-आगमन (दौड़-धूप) करने से धन का लाभ होता है। तथापि प्रारब्ध पर भरोसा रखने वाला होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ सप्तमेश फल-

दयितेशो लग्नगतः स्तोकस्नेहिनन्त्वन्य-भार्यायाम् ।
भोगभुजं रूपयुतं जनयति दयितादलितचित्तम् ॥ १ ॥

सप्तमेश लग्न में हो तो अन्य स्त्रियों में भी कुछ प्रेम रखने वाला, भोगी, सुन्दर और अपनी पत्नी से भी विशेष प्रेम करने वाला होता है ॥ १ ॥

जायापतौ धनस्थे दुष्टा दयिता सुतेप्सिता भवति ।
वित्तं च कलत्रकृतं सततं नित्रसति विसङ्गश्च ॥ २ ॥

सप्तमेश द्वितीय भाव में हो तो उसकी स्त्री दुष्टस्वभाव वाली, पुत्र की इच्छा करने वाली होती है, तथापि वह स्त्री द्वारा धन लाभ करता है, और अधिक समय स्त्री-सङ्ग से रहित होता है ॥ २ ॥

सप्तमपे सहजगते आत्मबलो बन्धुवत्सलो सौम्ये ।
देवररता सुरूपा गृहिणी क्रूरे सुहृद्गृहगा ॥ ३ ॥

सप्तमेश तृतीय भाव में हो और वह शुभग्रह हो तो जातक आत्मबली, बन्धुओं से प्रेम रखने वाला होता है। यदि पापग्रह हो तो उसकी स्त्री सुन्दरी होती और देवर या उसके मित्रों के घर में रहने वाली होती है ॥ ३ ॥

जायेशे तुर्यस्थे लोलः पितृवैरसाधकस्नेही।
अस्य पिता दुर्वाक्यस्तद्भार्यां पालयेज्जनकः ॥ ४ ॥

सप्तमेश चतुर्थ भाव में हो तो जातक चञ्चल और अपने पिता के शत्रुओं से स्नेह करने वाला होता है। उसका पिता भी कटुभाषी होता तथा उसकी स्त्री भी अपने पिता के घर में पालित होती है ॥ ४ ॥

सप्तमपतौ सुतस्थे सौभाग्ययुतः सुतान्वितः पुरुषः।
प्रियसाहसो दुष्टमतिस्तत्तनयः पालयेद् दयिताम् ॥ ५ ॥

सप्तमेश यदि पञ्चम भाव में हो तो जातक भाग्यवान्, पुत्रों से युक्त, साहसी और दुष्टबुद्धि होता है, किन्तु उसकी स्त्री का पालन उसके पुत्र करते हैं ॥ ५ ॥

रिपुगृहगः कान्तेशः प्रियया सह वैरिणं सरुग्भार्यम्।
दयितासङ्गक्षयिणं क्रूरः कुरुते च मृत्युपदम् ॥ ६ ॥

सप्तमेश षष्ठ भाव में हो तो स्त्री का विरोधी, रोगिणी स्त्री का पति, स्त्री संग से रहित होता है। यदि सप्तमेश पापग्रह हो तो मरण को प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

सप्तमपे सप्तमगे परमायुः प्रीतिवत्सलः पत्न्याः।
निर्मलशीलसमेतस्तेजस्वी जायते जातः ॥ ७ ॥

सप्तमेश यदि सप्तम भाव में हो तो जातक दीर्घायु, स्त्री का प्रेमी, सुशील और तेजस्वी होता है ॥ ७ ॥

सप्तमपतिर्निधनगतो गणिकासु रतो विवाहविधिरहितः।
नित्यं चिन्तायुक्तो मनुजः किल जायते दुःखी ॥ ८ ॥

सप्तमाधिप यदि अष्टम भाव में हो तो वह विवाह रहित, वेश्यागामी, चिन्ता से युक्त और दुःखी होता है ॥ ८ ॥

सुकृतगते सप्तमपे तेजोवाञ्छीलवान्प्रियाऽप्येवम्।
क्रूरे पण्ढविरूपो लग्नेशेनेक्षिते नये प्रबलः ॥ ९ ॥

सप्तम भावाधिप नवम भाव में हो तो तेजस्वी, सुशील होता है एवं उसकी स्त्री भी सुशीला होती है। यदि सप्तमेश पापग्रह हो तो जातक

नपुंसक और कुरूप होता है। यदि सप्तमेश पर लग्नेश की दृष्टि हो तो नीतिशास्त्र में प्रबल होता है ॥ ९ ॥

सप्तमपे दशमस्थे नृपदोषी लम्पटः कपटचित्तः ।
क्रूरे दुःखार्त्तः स्याच्छत्रोर्वशगो भवेत्पुरुषः ॥ १० ॥

सप्तमेश दशम स्थान में हो तो राजा के यहाँ दोषी, कपटी होता है। यदि सप्तमेश पापग्रह हो तो दुःखी और शत्रु से पराजित होता है ॥ १० ॥

लाभस्थे जायेशे भक्ता रूपान्विता सुशीला च ।
दयिता परिणीता स्यान्नरस्य ननु जायते सततम् ॥ ११ ॥

सप्तमेश एकादश स्थान में हो तो उसकी स्त्री पतिव्रता, सुन्दरी और सुशीला एवं स्नेहयुक्त होती है ॥ ११ ॥

सप्तमपे द्वादशगे गृहबन्धुरतो नवा भवेद्भार्या ।
सा लोला दुष्टयुता दूराच्चलति च तस्य पुरुषस्य ॥ १२ ॥

सप्तमेश द्वादश भाव में हो तो वह अपने घर और बन्धुओं के कार्य में रत होता है। परञ्च उसकी विवाहिता स्त्री उससे दूर हो जाती है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ अष्टमेश फल–

अष्टमपे लग्नगते बहुविघ्नो दीर्घरोगयुक्स्तेनः ।
नेष्टानुवादनिरतो लक्ष्मीं लभते नृपतिवचसा ॥ १ ॥

लग्न में अष्टमेश हो तो जातक बहुत विघ्न-बाधा से युक्त, दीर्घ रोगी, चोर, व्यर्थ विवाद में तत्पर रहता है और राजा की कृपा से धन लाभ करने वाला होता है ॥ १ ॥

निधनपतौ धनसंस्थेऽल्पजीवी वैरिवान्नरश्चौरः ।
क्रूरे सौम्येऽतिशुभं किन्तु क्षितिपालतो मरणम् ॥ २ ॥

अष्टमेश द्वितीय भाव में हो तथा वह पापग्रह हो तो जन्मने वाला अल्पायु, शत्रु से युक्त, चोर होता है। यदि शुभग्रह हो तो अत्यन्त शुभ फल होता है, किन्तु राजा के द्वारा उसका मरण होता है ॥ २ ॥

अष्टमपतौ तृतीये बन्धुविरोधी सुहृद्विरोधी च ।
व्यङ्गो दुर्वाग् लोलः सोदररहितो भवत्यथ वा ॥ ३ ॥

अष्टमेश तृतीय भाव में हो तो जातक बन्धुओं और मित्रों का विरोधी, अङ्गहीन, कटुभाषी, चञ्चल और सहोदर से रहित होता है ॥ ३ ॥

निधनेशे तुर्यगते पितृरिपुरथ वै ततो नयेल्लक्ष्मीम्।
पितृपुत्रयोश्च युद्धं जनको रोगान्वितो भवति ॥४॥

अष्टमेश चतुर्थ भाव में हो तो पिता से शत्रुता करके धन छीन ले तथा पिता-पुत्र में कलह होता रहे एवं पिता रोगी होता है ॥ ४ ॥

छिद्रपतौ तनयस्थे क्रूरे सुतविरहितः शुभे तु सुतः।
जातोऽपि नैव जीवति जीवेदथ कितवकर्मरतः ॥५॥

अष्टमेश पञ्चम भाव में हो और पापग्रह हो तो जातक पुत्रहीन होता है। यदि शुभग्रह हो तो पुत्र होता है किन्तु वह नहीं जीता, यदि जीता है तो धूर्त होता है ॥ ५ ॥

छिद्रेशे रिपुसङ्गते दिनकरे भूभृद्विरोधी गुरौ
त्वङ्गे सीदति दृष्टिरोगकलितः शुक्रे सरोगी विधौ।
भौमे कोपयुतो बुधे हि भयभृत्तुण्डार्तिभूतः शनौ
कष्टं चैव दधाति तत्र शशभृत्सौम्येक्षितेनैव किम् ॥६॥

षष्ठभाव में यदि अष्टमेश होकर सूर्य हो तो जातक राजा का विरोधी, गुरु हो तो शरीर से रोगी, शुक्र हो तो नेत्ररोगी, चन्द्रमा हो तो रोगवान्, मङ्गल हो तो क्रोधी, बुध हो तो डरपोक और मुखरोगी, शनि हो तो कष्टवान् होता है। यदि वह चन्द्रमा और बुध से दृष्ट हो तो विशेष अनिष्टकर होता है ॥ ६ ॥

मृत्युपतौ सप्तमगे दुरुदररुक् कुशीलवल्लभो दुष्टः।
क्रूरे भार्याद्वेषी कलत्रदोषान्मृतिं लभते ॥७॥

अष्टमेश सप्तम भाव में हो तो जातक उदर रोग से युक्त, दुःशीला स्त्री का पति, दुष्ट स्वभाव, यदि अष्टमेश पापग्रह होकर सप्तम में हो तो स्त्री के द्वारा मरण पाता है ॥ ७ ॥

निधनपतौ निधनगते व्यवसायी व्याधिवर्जितो नीरुक्।
कितवकलाकलितवपुः कितवकुले जायते विदितः ॥८॥

अष्टमेश यदि अष्टम भाव में हो तो उद्योगी, रोग रहित तथा धूर्तों के घर में जन्म लेकर धूर्त (कपटी) होता है ॥ ८ ॥

मृतिनाथे धर्मस्थे निःसङ्गी जीवघातकः पापी।
निर्बन्धुर्निःस्नेही रिपुपूज्यो भवेद् विमुखे व्यङ्गः ॥९॥

अष्टमेश नवम भाव में हो तो सङ्गहीन, जीवों का घात करने वाला, पापी, बन्धुहीन, प्रेमहीन, शत्रुओं में मान्य और मुख में अङ्गहीन (अर्थात् ओष्ठादि रहित) होता है ॥ ९ ॥

कर्मगते निधनेशे नृपकर्मा नीचकर्मनिरतश्च ।
अलसः क्रूरे खचरे तनयो वा न जीवति माता ॥ १० ॥

अष्टमेश दशम भाव में हो तो जातक राजकर्मचारी, निन्दा करने वाला एवं आलसी होता है। यदि अष्टमेश पापग्रह हो तो उसका पुत्र या माता दो में से किसी एक का मरण होता है ॥ १० ॥

लाभस्थे मृत्युपतौ बाल्ये दुःखी भवति पश्चात् ।
दीर्घायुः सौम्यखगे पापेऽल्पायुर्नरो भवति ॥ ११ ॥

अष्टमेश लाभ भाव में हो तो जातक बाल्यावस्था में दुःखी, पश्चात् सुखी होता है। अष्टमेश शुभग्रह हो तो दीर्घायु, पापग्रह हो तो अल्पायु होता है ॥ ११ ॥

व्ययसंस्थितेऽष्टमेशे क्रूरवाक् तस्करः शठो निर्घृणः ।
आत्मगतिर्व्यङ्गवपुर्मृतस्तु काकादिभिर्भक्ष्यः ॥१२॥

अष्टमेश द्वादश भाव में हो तो जातक कटुभाषी, चोर, शठ, निर्दय एवं स्वेच्छाचारी होता है। मरने के बाद उसका माँस कौआ, कुत्ता आदि खाते हैं, अर्थात् उसकी दुर्गति होती है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ नवमेश फल-

लग्नगते नवमपतौ सुरान् गुरून् मन्यते महाशूरः ।
कृपणः क्षितिपतिकर्मा स्वल्पग्रासी भवति मतिमान् ॥१॥

नवमेश लग्न में हो तो जातक—देव और गुरु का भक्त, महाबली, कृपण, राजकर्मचारी, अल्प आहारी और बुद्धिमान् होता है ॥ १ ॥

नवमेशे धनसंस्थे वृषतो विदितः सुशीलवात्सल्यः ।
सुकृती वदनव्यङ्गश्चतुष्पदोत्पन्नपीडितो मनुजः ॥२॥

नवमेश धन भाव में हो तो वृष (धर्म) से विख्यात, सुशील, प्रियवत्सल, पुण्यवान्, मुख में रोगवाला और पशुओं से पीड़ा पाने वाला होता है ॥ २ ॥

सहजगते सुकृतपतौ साधुस्त्रीबन्धुवत्सलः पुरुषः ।
बन्धुस्त्रीरक्षणकृद्यदि जीवति बन्धुभिः सदा सहितः ॥३॥

नवमेश यदि तृतीय भाव में हो तो सुन्दरी स्त्री और बन्धुओं का स्नेही, स्त्री और बन्धुओं की रक्षा करने वाला तथा जीवित रहने पर बन्धुओं के साथ जीवन बिताता है ।। ३ ।।

सुकृतेशे हिबुकस्थे पितृभक्तः पितृमित्रादिकेऽपि हितः ।
विदितः सुकृती पुरुषः पितृकर्मरतमतिर्भवति ।। ४ ।।

चतुर्थ भाव में नवमेश हो तो पिता का भक्त, पिता के कर्म को करने वाला, विख्यात और पुण्यवान् होता है ।। ४ ।।

सुकृतगृहपे सुतस्थे सुकृती देवगुरुपूजने निरतः ।
वपुषा सुन्दरमूर्तिः सुकृतसमेताः सुता बहवः ।। ५ ।।

नवमेश सुतभाव में हो तो पुण्यवान्, देव-गुरु का भक्त एवं सुन्दर होता है एवं उसके सब पुत्र भी पुण्यवान् होते हैं ।। ५ ।।

शत्रुप्रणतिपरायणधर्मप्रसितं कलाविकलकार्यम् ।
दर्शननिन्दानिरतं सुकृतपतिः षष्ठगः कुरुते ।। ६ ।।

नवमेश षष्ठ भाव में हो तो वह शत्रुओं के सामने झुकने वाला, कार्य को सम्पन्न नहीं करने वाला और दर्शन शास्त्र का निन्दक होता है ।। ६ ।।

नवमपतौ सप्तमगे सत्यवती सुवदना सुरूपा च ।
शीलश्रीयुतदयिता सुकृतयुता जायते नियतम् ।। ७ ।।

नवमेश सप्तम भाव में हो तो उसकी स्त्री सत्यवादिनी, सुन्दरी, शील सम्पत्ति से युक्ता और पुण्यवती होती है ।। ७ ।।

दुष्टो जन्तुविघाती गृहबन्धुविवर्जितः सुकृतरहितः ।
नवमेशे निधनगते क्रूरे षण्डः स विज्ञेयः ।। ८ ।।

नवमेश अष्टम भाव में हो तो दुष्ट, हिंसक, घर और बन्धुओं से रहित, पुण्यहीन होता है। यदि नवमेश पापग्रह हो तो वह नपुंसक होता है ।। ८ ।।

सुकृतगतः सुकृतपतिः स्वबन्धुभिः प्रीतिमतुलितसमत्वम् ।
दातारं देव-गुरु-स्वजन-कलत्रादि-संसक्तम् ।।९।।

नवमेश नवम भाव में हो तो बन्धुओं में प्रेम रखने वाला, दानी, देव-गुरु-स्वजन और स्त्री आदि में भी प्रीति रखने वाला होता है ।। ९ ।।

नृपकर्माणं शूरं माता-पित्रोश्च पूजकं पुरुषम् ।
धर्मख्यातं कुरुते सुकृतपतिर्गगनगृहशीलः ।। १० ।।

नवमेश दशम भाव में हो तो जातक राज कर्मचारी, शूर, माता-पिता का भक्त और धर्मात्मा होता है ।। १० ।।

दीर्घायुर्धर्मपरो धनेश्वरः स्नेहलो नृपतिलाभी ।
सुकृतख्याती सुसुतः सुकृतविभौ लाभभवनस्थे ।। ११ ।।

नवमेश लाभ भाव में हो तो जातक-दीर्घायु, धर्मात्मा, धनवान्, लोक में स्नेह रखने वाला, राजा से धन पाने वाला, पुण्य से विख्यात और उत्तम पुत्र वाला होता है ।। ११ ।।

द्वादशगे सुकृतेशे मानी देशान्तरे सुरूपश्च ।
विद्यावाञ्छुभखेटे क्रूरे च भवेज्जनो धूर्तः ।। १२ ।।

नवमेश द्वादश भाव में हो तो जातक देशान्तर में मान पाने वाला, सुन्दर होता है। शुभग्रह हो तो विद्यावान् और पापग्रह हो तो वह धूर्त होता है ।। १२ ।।

द्वादशभावस्थ दशमेश फल-

दशमपतौ लग्नगते मातरि वैरी पितुर्भक्तः ।
मृत्युङ्गते च ताते खलु परपुरुषरता भवति माता ।। १ ।।

दशमेश लग्न में हो तो माता का शत्रु और पिता का भक्त होता है। पिता के मरने पर उसकी माता दूसरे पुरुष के साथ रहती है ।। १ ।।

वित्तस्थे गगनपतौ मात्रा पालितसुतो भवति लोभी ।
मातरि दुष्टो नितरां स्वल्पग्रासो श्रुतसुकर्मा च ।। २ ।।

दशमेश द्वितीय भाव में हो तो माता के द्वारा पालित होकर भी माता का द्वेषी, थोड़ा भोजन करने वाला और वेदोक्त सुकर्म को सुनकर (जानकर) भी लोभी होता है ।। २ ।।

मातृस्वजनविरोधी सेवानिरतो न कर्मणि समर्थः ।
मातुलसुपालितः स्याद् दशमपतौ सहजभवनस्थे ।। ३ ।।

दशमेश तृतीय भाव में हो तो माता आदि स्वजन का विरोधी, सेवा कार्य करने वाला, परश्च कार्य में अक्षम और मामा के द्वारा पालित होता है ।। ३ ।।

व्योमपतौ तुर्यगते सुखे तु निरतः सदाचारः ।
भक्तश्च पितरि मातरि नृपमानी जायते पुरुषः ।। ४ ।।

दशमेश चतुर्थ भाव में हो तो जातक—सुखी, सदाचारी, माता-पिता का भक्त तथा राजा का मान्य होता है ।। ४ ।।

शुभकर्मको विडम्बी नृपलाभी गीतवाद्यनिरतः स्यात् ।
गगनपतौ तनयगते पालयति च तं सुतं माता ॥५॥

दशमेश पञ्चम भाव में हो तो सुकर्म में विडम्बना करने वाला, राजा से धन पाने वाला, गीत और वाद्य को जानने वाला तथा वह माता से पालित होता है ॥ ५ ॥

अम्बरपे रिपुसंस्थे शत्रुभयात्कातरः कलहशीलः ।
कृपणः कृपया हीनो नरो न रोगी भवति लोके ॥६॥

दशमेश षष्ठ भाव में हो तो वह शत्रुओं से भीत, झगड़ालू, कृपण, कृपाहीन और रोग रहित होता है ॥ ६ ॥

सुतवती शुभरूपसमन्विता निजपतिप्रतिपालनलालसा ।
भवति तस्य शुभं कुरुते सदा प्रियतमाऽम्बरपे दयितां गते ॥७॥

दशमेश सप्तम भाव में हो तो उसकी स्त्री पुत्रवती, सुन्दरी, पतिसेवा में परायण होती है और सदा शुभ कार्य करने वाली होती है ॥ ७ ॥

पुष्करपतिरष्टमगः क्रूरं शूरं मृषान्वितं दुष्टम् ।
मातरि सन्तापकरं जनयति तनुजीवितं कितवम् ॥ ८ ॥

दशमेश अष्टम स्थान में हो तो जातक कुटिल, शूर, मिथ्यावादी, दुष्ट, माता को कष्ट देनेवाला, अल्पायु और धूर्त होता है ॥ ८ ॥

शुभशीलः सद्बन्धुः सन्मित्रो दशमपे नवमलीने ।
तन्माताऽपि सुशीला सुकृतवती सत्यवचनरताः ॥ ९ ॥

दशमेश नवम भाव में हो तो वह जातक सुशील, उत्तम बन्धु वाला होता है। उसकी माता भी सुशीला, पुण्यवती, सत्यवादिनी होती है ॥ ९ ॥

गगनपतिर्गगनगते कुरुते जननीसुखप्रदं पुरुषम् ।
जननीकुलविपुलसुखं प्रकथनघटनापटीयांसम् ॥ १० ॥

दशमेश दशम स्थान में हो तो वह माता को सुख देनेवाला और माता से सुख पानेवाला तथा बोलने में परम चतुर होता है ॥ १० ॥

मानोर्जिताऽर्थसहितो माता च रक्षिणी भवेत्सुखिनी ।
दीर्घायुर्मातृसुखी पुरुषो लाभस्थितेऽम्बरपे ॥११॥

दशमेश लाभ भाव में हो तो जातक मानी, धनवान् होता है। माता उसकी रक्षा करने वाली सुखयुक्ता होती है। वह दीर्घायु और माता से सुख पाने वाला होता है ॥ ११ ॥

मात्रोज्झितो निजबलः शुभकर्मा नृपतिकर्मरतचेताः ।
व्योमपतौ व्ययसंस्थे देशान्तरगतश्च पापखगे ॥१२॥

दशमेश द्वादश भाव में हो तो वह बाल्यावस्था में माता से त्यक्त होता है, अपने भुजबल से सुकर्म करने वाला, राजा का कर्मचारी होता है। यदि दशमेश पापग्रह हो तो विदेशवासी होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ एकादशेश फल–

अल्पायुर्बलकलितः शूरो दाता जनप्रियः सुभगः ।
लाभपतौ लग्नगते तृष्णा-दोषान्मृतिं लभते ॥ १ ॥

एकादशेश लग्न में हो तो जातक अल्पायु, शूर, दानी, लोकों का प्रिय और सुन्दर होता है तथा तृष्णा दोष से मरण पाता है ॥ १ ॥

वित्तगते लाभपतावुत्पन्नसुखल्पभोजनोऽल्पायुः ।
अष्टकपाली रोगी क्रूरे सौम्ये च धनकलितः ॥ २ ॥

लाभेश धन भाव में हो तो प्राप्त सुख को भोगनेवाला, स्वल्पाहारी, अल्पायु होता है। यदि पापग्रह हो तो अठकपारी और रोगी होता है। यदि शुभग्रह हो तो धनवान् होता है ॥ २ ॥

बन्धुस्त्रीपालनकः सुबान्धवो बन्धुवत्सलः सुभगः ।
लाभेशे सहजगते बन्धूनां रिपुकुलोच्छेत्ता ॥ ३ ॥

लाभेश तृतीय भाव में हो तो बन्धु और स्त्री का पालक, उत्तम बन्धु वाला, सुन्दर और बन्धुओं के शत्रुकुल को मारने वाला होता है ॥ ३ ॥

तुर्यस्थे लाभेशे दीर्घायुः पितरि भक्तिभाग् भवति ।
समयैककर्मनिरतः स्वधर्मनिरतश्च लाभवान्मनुजः ॥ ४ ॥

एकादशेश चतुर्थ भावमें हो तो दीर्घायु, पिताका भक्त, एक समय में एक काम करनेवाला, अपने धर्म में रत और लाभ करनेवाला होता है ॥ ४ ॥

लाभपतिः पुत्रगतः पितृपुत्रस्नेहलं मिथः कुरुते ।
तुल्यगुणं च परस्परमल्पायुर्जायते पुरुषः ॥ ५ ॥

एकादशेश पञ्चम भाव में हो तो वह पिता के तुल्य रूप और गुणवाला होता है, पिता-पुत्र में परस्पर प्रेमवाला और अल्पायु होता है ॥ ५ ॥

षष्ठगते लाभपतौ सुदीर्घरोगी सुवैरिकलितश्च ।
तस्करहस्तान्मृत्युः क्रूरे देशान्तरगतस्य ॥ ६ ॥

लाभेश षष्ठ भाव में हो तो दीर्घ रोगी, शत्रुओं से युक्त होता है। पाप-ग्रह हो तो परदेश में चोर के द्वारा उसकी मृत्यु होती है ॥ ६ ॥

सप्तमगे लाभेशे तेजस्वी शीलसम्पदः पदवान् ।
दीर्घायुर्भवति नरस्तथैकदयितापतिर्नित्यम् ॥ ७ ॥

एकादशेश सप्तम भाव में हो तो जातक तेजस्वी, सुशील, सम्पत्तिमान्, उच्चपद पानेवाला, दीर्घायु और एक पत्नी का पति होता है ॥ ७ ॥

एकादशपेऽष्टमगेऽल्पायुर्भवति स जातकः सुरोगी ।
जीवन्मृतश्च दुःखी भवति नरोऽसौम्यगगनचरे ॥ ८ ॥

लाभेश अष्टमभाव में हो तो अल्पायु, रोगी होता है। यदि पापग्रह हो तो वह जातक जीता हुआ भी मृतकके समान और दुःखी होता है ॥ ८ ॥

एकादशेशे सुकृतालयस्थे बहुश्रुतः शास्त्रविशारदश्च ।
धर्मप्रसिद्धो गुरुदेवभक्तः क्रूरे च बन्धुव्रतवर्जितश्च ॥ ९ ॥

लाभेश नवम भाव में हो तो जातक बहुत विषयों का ज्ञाता, शास्त्रों में निपुण, धर्मात्मा, देव और गुरु का भक्त होता है, पापग्रह हो तो बन्धु और व्रत (नियम) से रहित होता है ॥ ९ ॥

मातरि भक्तः सुकृती पितरि द्वेषी सुदीर्घतरजीवी ।
धनवाञ्जननीपालननिरतो लाभाधिपे खगते ॥ १० ॥

लाभेश दशम भाव में हो तो माताका भक्त, पिताका द्वेषी, दीर्घजीवी, धनवान् और माता की सेवा करने वाला होता है ॥ १० ॥

लाभाधिपो लाभगतः करोति दीर्घायुषं पुष्कलपुत्रपौत्रम् ।
सुकर्मकं रूपवरं सुशीलं जनप्रधानं विपुलं मनोज्ञम् ॥ ११ ॥

लाभेश यदि लाभ में हो तो वह जातक दीर्घायु, अधिक पुत्र-पौत्र से युक्त, सुकर्म करने वाला, सुशील, लोक में प्रधान, सुन्दर और विख्यात होता है ॥ ११ ॥

द्वादशगे लाभेशे स्वल्पभुक् स्थिरो भवति रोगी ।
उत्पातरतो मानी दाता च सुखी सदा पुरुषः ॥ १२ ॥

लाभेश द्वादश भाव में हो तो जातक प्राप्त सुख भोगने वाला, स्थिर-चित्त, रोगी, उत्पाती, मानी, दानी और सुखी होता है ॥ १२ ॥

द्वादशभावस्थ द्वादशेश फल–

व्ययपे लग्नं प्राप्ते विदेशगः सुवचनः सुरूपश्च ।
अपसङ्गवाद्दोषी भवति कुमारोऽथ वा षण्ढः ॥ १ ॥

व्ययेश (द्वादशेश) लग्न में हो तो जातक विदेशमें रहनेवाला, प्रियवक्ता, सुन्दर, नीचों के सङ्ग में दोषी, आजन्म अविवाहित अथवा नपुंसक होता है ॥ १ ॥

द्वादशपे वित्तगते कृपणः कटुवाग् विनष्टलाभलयः ।
सौम्ये निधनं गच्छति नृपतस्करवह्नितोऽतिभयम् ॥ २ ॥

व्ययेश धन भाव में हो तो जातक कृपण, कटुभाषी होता है। यदि व्ययेश शुभग्रह हो तो वह राजा या चोर अथवा अग्निके भयसे मृत्यु पाता है ॥ २ ॥

सहजगते द्वादशपे क्रूरे गतबान्धवः शुभे च धनी ।
तनुसोदरः सुकृपणो बन्धुषु दूरे सदा भवति ॥ ३ ॥

द्वादशेश तृतीय भाव में हो तथा क्रूर (पापग्रह) हो तो बन्धुहीन, यदि शुभग्रह हो तो धनवान्, थोड़े सहोदर वाला, कुटुम्बियों से अलग दूर रहता है ॥ ३ ॥

तुर्यगते व्ययनाथे कृपणो रोगी सुकर्मा च ।
मृतिमाप्नोति सुतेभ्यः सततं मनुजो महादुःखी ॥ ४ ॥

व्ययेश चतुर्थ भाव में हो तो कृपण, रोगी, सुकर्मा, पुत्र के द्वारा मरण पाता है तथा सदा दुःखी रहता है ॥ ४ ॥

द्वादशपतौ सुतस्थे क्रूरे सुतविवर्जितः शुभे स-सुतः ।
जनककमलाविलासी समर्थताविरहितः पुरुषः ॥ ५ ॥

द्वादशेश पञ्चम भाव में हो तथा पापग्रह हो तो सन्तानहीन, शुभग्रह हो तो पुत्रवान्, पिताके धनको भोगनेवाला और सामर्थ्यहीन होता है ॥ ५ ॥

षष्ठगते व्ययनाथे क्रूरः कृपणोऽक्षिदूषणः पुरुषः ।
लभते मृतिं नितान्तं भृगुतनये नेत्रहीनः स्यात् ॥ ६ ॥

द्वादशेश षष्ठभाव में हो और वह यदि पापग्रह हो तो कृपण, नेत्ररोगी या नेत्रहीन हो अथवा बाल्यावस्था में मरण प्राप्त करे ॥ ६ ॥

द्वादशपे सप्तमपे दुष्टो दुश्चरितभृत्पटुवचनः ।
क्रूरे स्वस्त्रीतः स्यात्सौम्ये क्षयमेति गणिकातः ॥ ७ ॥

द्वादशेश सातवें स्थान में हो तो दुष्ट, दुश्चरित्र, बोलने में चतुर होता है, यदि वह पापग्रह हो तो अपनी स्त्री के द्वारा, शुभग्रह हो तो वेश्या के द्वारा मृत्यु पाता है ॥ ७ ॥

व्ययनाथे निधनगतेऽष्टकपाली कार्यसाधने रहितः।
द्रोहमतिः सौम्यखगे धनसंग्रहपरो नरो भवति ॥ ८ ॥

व्ययेश अष्टमभावमें हो तथा वह पापग्रह हो तो अठकपारी, उद्योगहीन लोगों का द्रोही हो, यदि शुभग्रह हो तो धन-संग्रह करने वाला होता है ॥८॥

व्ययनाथे सुकृतगते तीर्थालोकाटनं वृत्तिः।
क्रूरे खगे च पापैर्निरर्थकं याति तद्द्रव्यम् ॥ ९ ॥

व्ययेश नवें स्थान में हो तो–तीर्थाटन करने वाला, यदि वह पापग्रह हो तो धन को व्यर्थ खर्च करने वाला होता है ॥ ९ ॥

व्ययपे गगनगृहस्थे पररमणीपराङ्मुखः पवित्राङ्गः।
सुतधनसंग्रहनिरतो दुर्वचनपरा भवति तन्माता ॥१०॥

द्वादशेश कर्म भाव में हो तो वह पर-स्त्री से विमुख, पवित्र हृदय, पुत्रवान्, धन संग्रह करने वाला होता है, किन्तु उसकी माता कटु भाषिणी होती है ॥ १० ॥

द्वादशपे लाभस्थे द्रविणपतिर्दीर्घजीवितो भवति।
स्थानप्रवरो दाता विख्यातः सत्यवचनपरः ॥ ११ ॥

द्वादशेश लाभ में हो तो धनवान्, चिरंजीवी, उत्तम स्थान में रहने वाला, दाता, विख्यात और सत्यभाषी होता है ॥ ११ ॥

विभूतिमान् ग्रामनिवासचित्तः कार्पण्यवृद्धिः पशुसङ्ग्रही च।
चेज्जीवति ग्रामयुतः सदा स्याद् व्ययाधिनाथे व्ययगेहलीने ॥१२॥

द्वादशेश यदि द्वादश स्थान में हो तो सम्पत्तिमान्, ग्राम में निवास से सुखी, कृपण, पशुओं का संग्रह करनेवाला होता है। यदि जीवित रह जाये तो ग्राम का मालिक होता है ॥ १२ ॥

इति भावेशफल निरूपण।

---:०:---

अथ तृतीयोऽध्यायः [३]

अथ नीचस्थ ग्रहफल–

निष्ठुरदन्तवदनः समगात्रस्थूलजङ्घकरपादः ।
स्त्रीविनिवापितचित्तो भानुर्नीचस्थितो यस्य ॥ १ ॥

सूर्य अपने नीच (तुला) में हो तो कठोर दाँत और मुख वाला, सम शरीर, स्थूल जंघा, स्थूल हाथ, स्थूल पैरवाला, स्त्रियों में मन लगाने वाला होता है ॥ १ ॥

नृत्यक-वादक-जल्पक-धूर्तजनैश्चापि सङ्गतिः सहसा ।
कुमतिः संशयनिरतो नीचस्थो हिमकरे जातः ॥ २ ॥

चन्द्रमा नीच (वृश्चिक) में हो तो जातक-नर्तक, बाजा बजाने में निपुण, वक्ता, धूर्त, नीचों की सङ्गति वाला, कुबुद्धि और संशयालु होता है ॥ २ ॥

लक्ष्मी ह्यत्युग्रचला स्थिरविभवो बुद्धिमान्गुणज्ञश्च ।
रात्रिञ्चरोऽतिचौरो दुष्टात्मा भूसुते नीचे ॥ ३ ॥

मङ्गल नीच (कर्क) में हो तो स्थिर और अधिक सम्पत्ति वाला, बुद्धिमान्, गुणग्राही, रात्रि में काम करने वाला, चोर और दुष्ट स्वभाव वाला होता है ॥ ३ ॥

शुभसुमतिर्वरयुवतिः शुभशीला भर्तृवचन अनुमुदिता ।
सन्ततिपुत्रविहीनो नीचस्थे चन्द्रजे जातः ॥ ४ ॥

बुध अपने नीच (मीन) में हो तो उस जातक की स्त्री सती, सुबुद्धि, सुशीला, पतिकी आज्ञा पालने वाली किन्तु स्वयं सन्तान हीन होता है ॥४ ॥

दिव्यस्त्रीवरकाञ्चनपुष्पफलप्रकरपूजितः पुरुषः ।
भर्त्ता देशान्तरगो नीचस्थे सुरगुरौ जातः ॥ ५ ॥

गुरु अपने नीच (मकर) में हो तो जातक सुन्दरी स्त्री, सुवर्णादिधन, पुष्प-फलादि से सुखी, देशान्तर में रहकर बहुतों का पालन करने वाला होता है ॥ ५ ॥

अतिकौतुकी विनोदी सभासु सद्वाक् सदा प्राज्ञः ।
राज्यकलामतिमहितो नीचस्थो भार्गवः पुरुषः ॥ ६ ॥

शुक्र अपने नीच (कन्या) में हो तो जातक–कौतुकी, विनोदी, सभा में उचित बात कहने वाला, राजनीति में निपुण और मतिमान् होता है ॥ ६ ॥

शत्रूणां क्षयकारको दृढवपुर्दीप्ताग्निकान्तिश्चलो
देशग्रामपुरादिपत्तनबली साम्राज्यराज्याधिपः।
स्वेच्छाचारविचारदक्षशुभगः स्त्रीसौख्ययुक्तः सदा
ज्ञातिभ्रातृजनान्वितं च कुरुते नीचस्थितार्किः सदा ॥ ७ ॥

यदि शनि अपने नीच (मेष) में हो तो पुरुष शत्रुको जीतने वाला, मजबूत देह, अति कान्ति वाला, चञ्चल, देश-गाँव-नगर आदि में मान्य, राज्याधिकारी, स्वतन्त्र, विवेकशील, भाग्यवान्, स्त्री-सुख से युक्त और भाई आदि परिवार से युक्त होता है ॥ ७ ॥

दुर्भगदीनो दुष्टः पापात्मा दुष्टबुद्धिकृद्बहुलः।
स्वकुटुम्बपदक्षहीनो नीचस्थो राहुरिति कुरुते ॥ ८ ॥

राहु अपने नीच (धनु) में हो तो भाग्यहीन, निर्धन, दुष्ट, पापी, कुबुद्धि और बन्धुजनों से हीन होता है ॥ ८ ॥

कुमतिकुशीलः काणः स्त्रीविरही दुःखपीडितो विरुचिः।
प्रतिपक्षदलनकुशलो नीचस्थः केतुरिति कुरुते ॥९॥

केतु अपने नीच (मिथुन) में हो तो जातक कुबुद्धि, कुशील, काना, स्त्रीहीन, दुःख से पीड़ित, शत्रुओं से लड़ने वाला होता है ॥ ९ ॥

उच्चस्थग्रह फल–

धीरश्चण्डः कुशलो गौरः शूरः कलानिधिश्चतुरः।
दण्डपतिर्धनयुक्तः स्वोच्चस्थो भास्करः कुरुते ॥ १ ॥

सूर्य अपने उच्च (मेष) में हो तो जन्म लेने वाला धीर, उग्र, क्रोधी, कार्य में कुशल, शूर, कलाओं का ज्ञाता, चतुर, दण्ड देने का अधिकारी और धन से युक्त होता है ॥ १ ॥

विज्ञानधनसमेतः पात्रपवित्रश्च कामिनीविरही।
बहुजनताजनवल्लभ उच्चस्थो हिमकरः कुरुते ॥ २ ॥

चन्द्रमा अपने उच्च (वृष) में हो तो विज्ञानी, धनी, परम पवित्र, कामिनीविरही, बहुत लोगों का प्रिय होता है ॥ २ ॥

उग्रं दृढप्रहारं क्रूरं शस्त्रे वचने च बहुविदितम्।
नृपकुलवल्लभशूरं ह्युच्चस्थो भूसुतः कुरुते ॥ ३ ॥

मंगल अपने उच्च (मकर) स्थान में हो तो जातक उग्र स्वभाव, क्रूर,

लक्ष्य का वेध करने वाला, शस्त्र चलाने और भाषण करने में अत्यन्त विख्यात, राजा का मान्य और शूर होता है ॥ ३ ॥

चित्तसुबुद्धिबलिष्ठो मन्त्रारक्षः क्रियालसः सौरः ।
अतिमतिविभवो बालः पापविमुक्तो निजोच्चगे शशिजे ॥४॥

बुध अपने उच्च (कन्या) में हो तो मनस्वी, बुद्धिमान्, बली, विचार की रक्षा करने वाला, कार्य में आलसी, सूर्य का भक्त, अत्यन्त बुद्धिमान्, धनी और पापों से रहित होता है ॥ ४ ॥

स्वाचारः शुभयुक्तः सुन्दरवदनश्च मण्डलो मुदितः ।
बहुभृत्यश्च सुराज्ञां मन्त्री गुरूच्चगो यस्य ॥५॥

गुरु अपने उच्च स्थान (कर्क) में हो तो सदाचारी, सुशील, सुन्दर रूप, मण्डलाधिप, हर्ष युक्त, बहुत नौकर वाला और राजमन्त्री होता है ॥ ५ ॥

दैवज्ञाने कुशलो यन्त्री तन्त्री च गायकः कविपः ।
कमलाविलासभागी दैत्यगुरौ प्रोच्चगे पुरुषः ॥६॥

शुक्र अपने उच्च (मीन) में हो तो ज्यौतिष जानने वाला, यन्त्रज्ञ और तन्त्रज्ञ, गवैया, कवि और लक्ष्मीवान् होता है ॥ ६ ॥

सुस्रक्कार्मुकवृत्तिविख्यातः सकलवाहनाधीशः ।
मैत्रीसाहसधौर्त्यो मायावी सौरिरुच्चगो यस्य ॥७॥

शनि उच्च (तुला) में हो तो सुन्दर माला धारण करने वाला, धनुषबाण चलाने वाला, विख्यात सेनापति, मैत्री–साहस और धूर्तता से युक्त और मायावी होता है ॥ ७ ॥

क्रूरो दुष्टबलिष्ठः साहसनिरतश्च मन्त्रिणां प्रवरः ।
राज्यकमलाप्रणिसहितः स्वर्भानुः स्वोच्चगो यस्य ॥८॥

राहु अपने उच्च (मिथुन) में हो तो जातक क्रूर, दुष्ट, बलवान्, साहसी, मन्त्रियों में श्रेष्ठ, राजनीति में निपुण होता है ॥ ८ ॥

स्थविरो नीचाचारो मिथ्याभाषी भवेद् भ्रमणशीलः ।
परकर्मलिप्तचेता निजोच्चगे जायते शिखिनि ॥९॥

केतु अपने उच्च (धनु) में हो तो जातक-स्वभाव से वृद्ध, दुराचारी, मिथ्याभाषी, घूमने वाला और दूसरों के कार्य करने वाला होता है ॥ ९ ॥

मूलत्रिकोणस्थग्रह फल–

धनी सुखी कार्यविज्ञस्त्रिकोणस्थे दिवाकरे ।
चन्द्रे धनी च भोक्ता च भौमे शूरोऽदयः खलः ॥१॥

सूर्य अपने मूलत्रिकोण में हो तो जातक--धनी, सुखी, कार्य में कुशल होता है। चन्द्रमा अपने मूलत्रिकोण में हो तो धनी और भोगी होता है। मङ्गल मूलत्रिकोण में हो तो शूर, निर्धन और दयाहीन होता है ॥ १ ॥

बुधे त्रिकोणगे विज्ञो विनोदी विजयी नरः ।
गुरौ ग्रामपुरादीनां मठस्याधिपतिः सुधीः ॥ २ ॥

बुध मूलत्रिकोण में हो तो विद्वान्, विनोदी और विजयी होता है। गुरु मूलत्रिकोण में हो तो गाँव, नगर या मठ का मालिक और पण्डित होता है ॥ २ ॥

शुक्रे त्रिकोणगे सुज्ञः सुखयुक्तो महीपतिः ।
मन्दे नरो धनैः पूर्णो महाशूरः कुलन्धरः ॥ ३ ॥

शुक्र मूलत्रिकोण में हो तो ज्ञानी, सुखी और राजा होता है। शनि मूलत्रिकोण में हो तो धनी, शूर और कुलपोषक होता है ॥ ३ ॥

उच्च-नीच-मूलत्रिकोण ज्ञानार्थ चक्र--

ग्रह	सू.	च.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	रा.	क.
राशि	५	४	१।८	३।६	९।१२	२।७	१०, ११	६	१२
उच्च	१	२	१०	६	४	१२	७	३	९
नीच	७	८	४	१२	१०	६	१	९	३
मूलत्रिकोण	५	२	१	६	९	७	११	४	१०

स्वगृहस्थग्रहफल—

स्वगृहस्थे रवौ लोके महोग्रश्च सदोद्यमी ।
चन्द्रे कर्मरतः साधुर्मनस्वी रूपवानपि ॥ १ ॥

रवि अपने राशि में हो तो महाउग्र, उद्यमी। चन्द्रमा स्वराशि में हो तो कार्यरत, साधु, मनस्वी और सुन्दर होता है ॥ १ ॥

स्वगृहस्थे कुजे वाऽपि चपलो धनवानपि ।
बुधे नानाकलाभिज्ञः पण्डितो धनवानपि ॥ २ ॥

मङ्गल अपने घरका हो तो चञ्चल, धनी। बुध अपने घर का हो तो अनेक कला का ज्ञाता, पण्डित और धनवान् होता है ॥ २ ॥

धनी काव्यश्रुतिज्ञश्च स्वचेष्टः स्वगृहे गुरौ ।
स्फीतः कृषीवलः शुक्रे शनौ मान्यः सुलोचनः ॥ ३ ॥

गुरु अपने गृह का हो तो मनुष्य धनवान्, काव्य और वेदका ज्ञाता, उद्योगी । शुक्र स्वगृह का हो तो स्वच्छ और खेती करने वाला तथा शनि अपने घरका हो तो लोक में मान्य और सुन्दर नेत्र वाला होता है ॥ ३ ॥

मित्रगृहस्थ फल-

सूर्ये मित्रगृहे ख्यातः शास्त्रज्ञः सुस्थसौहृदः ।
चन्द्रे नरो भाग्ययुक्तश्चतुरो धनवानपि ॥ १ ॥

सूर्य अपने मित्र के गृह में हो तो विख्यात, शास्त्र का ज्ञाता, दृढ़मैत्री वाला होता है । चन्द्रमा मित्रगृह का हो तो भाग्यवान्, चतुर और धनी होता है ॥ १ ॥

भौमे शस्त्रोपजीवी च बुधे रूपधनान्वितः ।
गुरौ मित्रगृहे लोके धनी बन्धुजनप्रियः ॥ २ ॥

मित्र राशि का मङ्गल हो तो शस्त्र से जीविका करने वाला, बुध मित्र राशि में हो तो रूपवान्, धनवान्, गुरु मित्र राशि का हो तो लोक में पूज्य और सत्कार्य में निरत रहता है ॥ २ ॥

शुक्रे मित्रगृहे लोके धनी बन्धुजनप्रियः ।
शनौ रुजाकुलो देहः कुकर्मनिरती भवेत् ॥ ३ ॥

शुक्र मित्र राशि में हो तो धनवान् और बन्धुओं का प्रिय, शनि अपने मित्र की राशि में हो तो रोगी और कुकर्मी होता है ॥ ३ ॥

शत्रुगृहस्थ फल-

सूर्ये रिपुगृहे नीचो विषयैः पीडितो नरः ।
चन्द्रे हृदयरोगी च भौमे जायाजडोऽधनः ॥ १ ॥

सूर्य अपने शत्रु की राशि में हो तो जातक विषय सुख से हीन, चन्द्रमा शत्रु राशिगत हो तो हृदय रोगी, मङ्गल शत्रु राशिस्थ हो तो स्त्री के सामने मूर्ख और धनहीन होता है ॥ १ ॥

बुधे रिपुगृहे मूर्खो वाग्धनी दुःखपीडितः ।
जीवे च जायते क्लीबो नाशवृत्तिर्बुभुक्षितः ॥ २ ॥

बुध अपने शत्रु की राशि में हो तो मूर्ख, बातका धनी, दुःख से पीड़ित, गुरु शत्रु राशिस्थ हो तो नपुंसक, वृत्तिहीन, क्षुधातुर होता है ॥ २ ॥

शुक्रे शत्रुगृहे भृत्यः कुबुद्धिर्दुःखितो नरः।
शनौ व्याध्यर्थशोकेन सन्तप्तो मलिनो भवेत् ॥ ३ ॥

शुक्र शत्रु के गृह में हो तो नौकरी करने वाला, कुबुद्धि, दुःखी, यदि शनि अपने शत्रु के गृह में हो तो रोग और धन के शोक से सन्तप्त तथा मलिन होता है ॥ ३ ॥

अथ लग्नगत मेषादि द्वादश राशिफल–

मेषोदये रक्ततनुर्मनुष्यः श्लेष्माधिकः क्रोधपरः कृतघ्नः।
सुमन्दबुद्धिः स्थिरतासमेतः पराजितः स्त्रीभृतकैः सदैव ॥ १ ॥

लग्न में मेष राशि हो तो जन्म लेने वाला रक्त-गौर वर्ण, कफ प्रकृति, क्रोधी, कृतघ्न, मन्दबुद्धि, स्थिर, स्त्री और नौकरों से पराजित होता है ॥१॥

वृषोदये जन्म यदा भवेच्च स्वचित्तरोगं स्वजनापमानम्।
इष्टैर्वियोगं कलहं च दुःखं शस्त्राभिघातं च धनक्षयं च ॥ २ ॥

लग्न में वृष राशि हो तो मानसिक रोग, अपने जन में अपमान, मित्रजनों का वियोग, कलह, दुःख, शस्त्र से आघात और धन की हानि होती है ॥ २ ॥

तृतीयलग्ने पुरुषोऽतिगौरः स्त्रीरक्तचित्तो नृपपीडितश्च।
दूतः प्रसन्नः प्रियवाग्विनीतः सुमूर्द्धजो गीतविचक्षणश्च ॥ ३ ॥

जन्म समय मिथुन लग्न हो तो गौरवर्ण, स्त्री में आसक्त, राजा से पीड़ित, दूत का काम करने वाला, प्रसन्न चित्त, विनीत और सुन्दर केश वाला, गीतज्ञ होता है ॥ ३ ॥

कर्कोदये गौरवपुर्मनुष्यः पित्ताधिकः कल्पतरुः प्रगल्भः।
जलावगाहानुरतोऽतिबुद्धिः शुचिः क्षमी धर्मरुचिः सुसेव्यः ॥ ४ ॥

कर्क लग्न हो तो गौरवर्ण, पित्त प्रकृति, दानी, प्रौढ़, जल क्रीड़ा का प्रिय, अत्यन्त बुद्धिमान्, पवित्र, क्षमाशील, धर्मात्मा और नौकरों का प्रिय होता है ॥ ४ ॥

सिंहोदये पाण्डुतनुर्मनुष्यः पित्तानिलाभ्यां परिपीडिताङ्गः।
प्रियामिषो रम्यरसः सुतीक्ष्णः शूरः प्रगल्भः सुतरां चरश्च ॥ ५ ॥

सिंह लग्न हो तो जातक पाण्डु वर्ण, पित्त और वात प्रकृति, मांसप्रिय, रसिक, तीक्ष्ण स्वभाव, शूर, प्रौढ़ और भ्रमणशील होता है ॥ ५ ॥

कन्याख्यलग्ने कफपित्तयुक्तो भवेन्मनुष्यः शुभकान्तभावः ।
लक्ष्मीप्रियस्त्रीविजितो नु भीरुर्मायाधिकः कामकदर्थिताङ्गः ॥ ६ ॥

कन्या लग्न हो तो कफ और पित्त प्रकृति, सुशील, स्त्री के समान स्वभाव वाला, लक्ष्मी का प्रिय (धनी), स्त्री का वश, डरपोक, मायावी, काम से पीड़ित होता है ॥ ६ ॥

तुला विलग्ने च भवेन्मनुष्यः श्लेष्मान्वितः सत्यपरः सदैव ।
पराप्रियः पार्थिवमानयुक्तः सुरार्चने तत्परकल्प एव ॥ ७ ॥

लग्न में तुला राशि हो तो कफ प्रकृति, सत्य वक्ता, पर स्त्री से प्रेम करने वाला, राजमान्य, देवों का आराधक होता है ॥ ७ ॥

लग्नेऽष्टके क्रोधपरो जरावान्भवेन्मनुष्यो नृपपूजिताङ्गः ।
गुणान्वितः शास्त्रकथाऽनुरक्तो प्रमर्दकः शत्रुगणस्य नित्यम् ॥ ८ ॥

जन्म लग्न वृश्चिक हो तो क्रोधी, वृद्ध स्वभाव, राजा का मान्य, गुणवान्, शास्त्र में रुचिवाला और शत्रु को जीतने वाला होता है ॥ ८ ॥

चापोदये राजयुतो मनुष्यः कार्ये प्रवीणो द्विजदेवरक्तः ।
तुरङ्गयुक्तः सुहृदि प्रयुक्तस्तुरङ्गजङ्घश्च भवेत् सदैव ॥ ९ ॥

जन्म लग्न में धनुराशि हो तो राजा का प्रिय, कार्यों में कुशल, ब्राह्मण और देवताओं का भक्त, घोड़ा सवारी का प्रिय, घोड़े के जाँघ के समान जाँघ वाला होता है ॥ ९ ॥

मृगोदये तोयरतः सुतीव्रो भीरुः सदा पापरतश्च धूर्तः ।
श्लेष्माऽनिलाभ्यां परिपीडिताङ्गः सुदीर्घगात्रः परवञ्चकश्च ॥ १० ॥

मकर लग्न में जन्म हो तो जलप्रिय, बड़ा तीव्र, डरपोक, पापाचारी, धूर्त, कफ और वात से पीड़ित, लम्बा शरीर और दूसरों को ठगने वाला होता है ॥ १० ॥

घटोदये सुस्थिरतासमेतो वाताधिकस्तोयनिषेवणोक्तः ।
सुहृत्स्वगात्रः प्रमदास्वभीष्टः शिष्टानुरक्तो जनवल्लभश्च ॥ ११ ॥

जन्म समय में कुम्भ लग्न हो तो स्थिर स्वभाव, वात प्रकृति, जलक्रीड़ा प्रिय, छोटा शरीर, स्त्रियोंका प्रिय, शिष्टाचारी तथा लोगोंका प्रिय होता है ॥११॥

मीनोदये तोयरतो मनुष्यो भवेद्विनीतः सुरतानुकूलः ।
सुपण्डितः सूक्ष्मतनुः प्रचण्डः पित्ताधिकः कीर्तिसमन्वितश्च ॥ १२ ॥

मीन राशि जन्म लग्न में हो तो जलप्रिय, विनयी, सुरत प्रिय, पण्डित, कृश देह, अति क्रोधी, पित्त प्रकृति और यशस्वी होता है ॥ १२ ॥

धन (द्वितीय) भावस्थित मेषादिराशि फल-

मेषे धनस्थे कुरुते मनुष्यो धनं स पुण्यैर्विविधैः प्रभूतैः ।
सुनीतियुक्तं तनयं प्रसूते चतुष्पदाढ्यं बहुपण्डितज्ञम् ॥ १ ॥

लग्न से द्वितीय भाव में मेष राशि हो तो अनेक प्रकार के धर्मकार्य तथा नीति पूर्वक धनोपार्जन करता है, उसके पुत्र भी नीतिनिपुण, धन-वाहन से युक्त पण्डित होते हैं ॥ १ ॥

वृषे धनस्थे लभते मनुष्यः कृषिप्रसादेन धनं सदैव ।
अनाभिघातं च चतुष्पदाख्यं तथा हिरण्यं मणिमौक्तिकाद्यम् ॥ २ ॥

द्वितीय भाव में वृष राशि हो तो उसको कृषि कर्म से धन लाभ, गौ, भैंस आदि चतुष्पद, सुवर्ण-रत्नादि का निर्विघ्न लाभ होता है ॥ २ ॥

तृतीयराशौ धनगे मनुष्यो धनं लभेत् स्त्रीजनतश्च नित्यम् ।
रौप्यं तथा काञ्चनजं प्रभूतं हयादिकं साधुभिरेव सख्यम् ॥ ३ ॥

जिनके धन भाव में मिथुन राशि हो-उसको स्त्रियों की सहायता से सोना-चाँदी, चतुष्पदादि धन का लाभ और साधुजन से सङ्ग होता है ॥३॥

चतुर्थराशिर्धनगो मनुष्यो धनं लभेद् वृक्षजमेव नित्यम् ।
जलाद्भयं यद्धनमिष्टभोग्यं नयार्जितं प्रीतिकरं सुतानाम् ॥ ४ ॥

धन भाव में कर्क राशि हो तो उसे लकड़ी के व्यापार से विशेष धनका लाभ और जलमें डूबने का भय होता है। वह जो कुछ धन कमाता है वह नीति पूर्वक तथा वह धन भी उसके मित्रजन उपभोग करते हैं तथा उस धन से उसके पुत्र सुख करते हैं। अर्थात् स्वोपार्जित धन को अपने स्वार्थ में उपभोग नहीं करता ॥ ४ ॥

सिंहे धनस्थे लभते मनुष्यो धनं तपोऽरण्यजनात्तमानम् ।
सर्वोपकारं प्रवणं प्रभूतं स्वविक्रमोपार्जितमेव नित्यम् ॥ ५ ॥

धन भाव में सिंह राशि हो तो वह मनुष्य वन से उत्पन्न वस्तु तथा वन जन्तुओं से अपने पराक्रम द्वारा धन का उपार्जन करता है और वह धन सबके उपकार में आता है ॥ ५ ॥

कन्योदये वित्तगते मनुष्यो धनं लभेद् भूमिपतेः सकाशात् ।
हिरण्यमुक्तामणिरौप्यजातं गजाश्वनानाविधवित्तजं च ॥ ६ ॥

धन भाव में कन्याराशि हो तो उस मनुष्यको राजा से सोना, चाँदी, हीरा, मोती, हाथी, घोड़ा आदि नाना प्रकारके धनका लाभ होता है ॥ ६ ॥

तुले धनस्थे बहुपुण्यजातं धनं मनुष्यो लभते प्रभूतम् ।
पाषाणजं मृन्मयमार्तिजातं सस्योद्भवं कर्मजमेव नित्यम् ॥ ७ ॥

धन भाव में तुला राशि हो तो वह मनुष्य उसके प्रभाव से पत्थर, मिट्टी और धान्य आदि के व्यापार से बहुत धन लाभ करता है ॥ ७ ॥

धने त्वलिर्यस्य भवेच्च राशिः स्वधर्मशीलं प्रकरोति नित्यम् ।
विलासिनीकामपरं सदैव विचित्रवाक्यं द्विजदेवभक्तम् ॥ ८ ॥

धनस्थान में वृश्चिक राशि हो तो वह मनुष्य धर्मात्मा, स्त्रियों से प्रेम करने वाला, अनेक प्रकार के विनोद युक्त बात बोलनेवाला और ब्राह्मण का भक्त होता है ॥ ८ ॥

धनुर्धरे वित्तगते मनुष्यो धनं लभेत्स्थैर्यविधानजातम् ।
चतुष्पदाढ्यं विविधं यशस्वी रसोद्भवं धर्मविधानलब्धम् ॥ ९ ॥

धन भाव में धनु राशि हो तो स्थिरकार्यों के द्वारा गाय, भैंस, हाथी, घोड़े आदि अनेक प्रकार के स्थायी धन तथा रस से उत्पन्न धन का लाभ करता है एवं धर्म कार्यार्थ धन संग्रह करता है ॥ ९ ॥

मृगे धनस्थे लभते मनुष्यो धनं प्रपञ्चैर्विविधैरुपायैः ।
सेवासमुत्थं च सदा नृपाणां कृषिक्रियाभिश्च विदेशमज्ञात् ॥ १० ॥

धनस्थान में मकर राशि हो तो वह मनुष्य अनेक प्रकार के प्रपञ्चोंसे, राजाकी सेवासे, खेतीसे और विदेशयात्रासे धनका संग्रह करता है ॥ १० ॥

घटे धनस्थे लभते मनुष्यो धनं प्रभूतैर्नियमोपवासैः ।
जलोद्भवं साधुजनस्य भोज्यं महाजनोत्थं च परोपकारी ॥ ११ ॥

जिसके धन भाव में कुम्भ राशि हो वह मनुष्य फल, फूल और जलोत्पन्न वस्तुओं से धन लाभ कर साधुजनों को खिलाता है तथा बहुतों से चन्दा लेकर साधुओं को खिलाता है और परोपकारी होता है ॥ ११ ॥

मत्स्ये धनस्थे लभते मनुष्यो धनं प्रभूतैर्नियमोपवासैः ।
विद्याप्रभावान्निधिसङ्गमाच्च मातापितृभ्यां समुपार्जितं च ॥ १२ ॥

धन भाव में मीन राशि हो तो वह मनुष्य व्रत, उपवास, विद्या आदि के प्रभाव से, निधि (भूमिस्थ द्रव्य) के खोज से तथा माता-पिता के द्वारा उपार्जित धनका लाभ करता है ॥ १२ ॥

तृतीय भावस्थित मेषादिराशि फल–

तृतीयभावे प्रथमे च राशौ द्विजातिमित्रश्च भवेन्मनुष्यः ।
परोपकारः श्रवणः शुचिश्च प्रभूतविद्यो नृपपूजिताङ्गः ॥ १ ॥

जन्म समय तृतीय भाव में मेष राशि हो तो जातक ब्राह्मणों का हित, परोपकार और पुराण श्रवण द्वारा पवित्र, अनेक विद्याका ज्ञाता और राजमान्य होता है ॥ १ ॥

वृषे तृतीये लभते मनुष्यो नरेन्द्रमित्रं प्रचुरप्रतापम् ।
सुवित्तदं भूरियशोनिधानं सूरं कविं ब्राह्मणरक्तचित्तम् ॥ २ ॥

तृतीय भाव में वृष राशि हो तो जातक राजा का मित्र, अति प्रतापी, दानी, यशस्वी, पण्डित, काव्यकर्ता और ब्राह्मणों का भक्त होता है ॥ २ ॥

तृतीयसंस्थे मिथुने च लग्ने करोति मर्त्यं वरयानयुक्तम् ।
स्त्रीवल्लभं सत्यमुदारचेष्टं कुलाधिकं पूज्यतमं नृपाणाम् ॥ ३ ॥

तृतीय भाव में मिथुन राशि हो तो वह मनुष्य उत्तम सवारी रखने वाला, स्त्रियों का प्रिय, सत्यवक्ता, उदार, कुल में श्रेष्ठ और लोक में पूज्य होता है ॥ ३ ॥

कुलीरराशौ सहजं प्रयाते मित्रं लभेद् वैश्यगृहप्रदेशे ।
कृषीवलं धर्मकथानुरक्तं सदा सुशीलं जनसम्मतं च ॥ ४ ॥

तृतीय भाव में कर्क राशि हो तो वह मनुष्य वैश्य (व्यापारी) जनों से मैत्री करने वाला, खेती करने वाला धर्मातमा, सुशील, लोगों का प्रिय होता है ॥ ४ ॥

सिंहे तृतीये कुरुते मनुष्यं शूरं कुमित्रं वरवित्तलुब्धम् ।
वधात्मकं पापकथानुरक्तं प्रचण्डवाक्यं त्वतिगर्वितं च ॥ ५ ॥

तृतीय भाव में सिंह राशि हो तो वह मनुष्य, शूर, कुत्सित मित्रवाला, धन का लोभी, हिंसक, पाप कथा में रुचि रखने वाला, कठोर भाषण करने वाला और गौरवी होता है ॥ ५ ॥

तृतीयभावस्थितराशिकन्या शास्त्रानुरक्तं मनुजं सुशीलम् ।
नानासुहृत्संस्तुतकल्यकोपं प्रियद्विजं देवगुरुप्रभक्तम् ॥ ६ ॥

तृतीय भाव में कन्या राशि हो तो शास्त्राभ्यासी, सुशील, अनेक मित्रों की सहायता से धनसंग्रह करने वाला, ब्राह्मणों का प्रिय, देव और गुरुजनों का भक्त होता है ॥ ६ ॥

तृतीयसंस्थे तु तुलाभिधाने मैत्री भवेत्पापपरैर्मनुष्यैः ।
लौल्यात्मको लौल्यकथाऽनुरक्तः सार्द्धं मनुष्यैः स्वसुताल्पकश्च ॥ ७ ॥

तृतीय स्थान में तुला राशि हो तो पापियों से मैत्री करने वाला, चञ्चल

चित्त, अपने लड़के से भी छोटे बच्चों से चञ्चलता सहित बात करने वाला होता है ॥ ७ ॥

अलौ तृतीये च भवेन्नरस्य मैत्री सदा पापजनैर्दरिद्रैः ।
कृतघ्नघातैः कलहानुरक्तैर्व्यपेतलक्ष्यैर्जनताविरुद्धैः ॥ ८ ॥

तृतीय भाव में वृश्चिक हो तो उसको पापियों और दरिद्रों से मैत्री, कृतघ्न, झगड़ालू, अव्यवस्थित, लोक से विरुद्ध आचरणवालों से उसकी मैत्री होती है ॥ ८ ॥

चापे तृतीये च भवेन्मनुष्यो मन्त्री सुशूरो नृपसेवकश्च ।
चित्तैः स्वरैर्धर्मपदैः प्रसन्नः कृपानुरक्तो रणकोविदश्च ॥ ९ ॥

तृतीय स्थान में धनु हो तो वह राजमन्त्री, शूर, राजा का सेवक, हृदयाकर्षक वाक्य तथा धर्माचरण से सदा प्रसन्न, दया युक्त और युद्ध में कुशल होता है ॥ ९ ॥

नक्रस्तृतीये च नरस्य यस्य करोति सौम्यं सततं सुताढ्यम् ।
नित्यं सुहृद्देवगुरुप्रसक्तं महाधनं पण्डितमग्रेयम् ॥ १० ॥

तृतीय भाव में मकर राशि हो तो वह मनुष्य सदा प्रसन्न मुख, पुत्रवान्, देव, मित्र और गुरुका भक्त, महाधनवान् और अद्वितीय पण्डित होता है ॥१०॥

कुम्भे तृतीये लभते मनुष्यो मैत्रीं व्रतज्ञैर्बहुकीर्तियुक्तैः ।
क्षमाधिकैः सत्यपरैः सुशीलैर्गीतप्रियैर्गोदपरैः खलैश्च ॥ ११ ॥

तृतीय भाव में कुम्भ राशि हो तो मनुष्य-व्रती, यशस्वी, क्षमाशील, सत्यवक्ता, सुशील, गीतज्ञजनों से मैत्री करने वाला होता है तथा दुष्टों से भी मेल रखता है ॥ ११ ॥

तृतीयभावस्थितमीनराशौ नरं प्रसूतं बहुवित्तयुक्तम् ।
पुत्रान्वितं पुण्यधनैरुपेतं प्रियातिथिं सर्वजनाभिरामम् ॥ १२ ॥

तृतीय स्थान में मीन राशि हो तो-जातक धनवान्, पुत्रवान्, पुण्यवान्, अतिथियों का भक्त और सब का प्रिय होता है ॥ १२ ॥

सुख (चतुर्थ) भावस्थित मेषादिराशि फल-

मेषे सुखस्थे लभते सुखं च चतुष्पदेभ्योऽथ विलासिनीभ्यः ।
भोगैर्विचित्रैः प्रचुरान्नपानैः पराक्रमोपार्जितमर्दनैश्च ॥ १ ॥

चतुर्थ भाव में मेष राशि हो तो जन्म लेनेवाला चतुष्पदों से, स्त्रियों से, अनेक प्रकार के अन्न-पानादि भोगों से और अपने उपार्जित धनों से सुख प्राप्त करता है ॥ १ ॥

वृषे सुखस्थे लभते सुखानि नरोऽतिमान्यैर्विविधैर्जनैश्च ।
शौर्येण भूपालनिषेवणेन प्रियोपचारैर्नियमैर्व्रतैश्च ॥ २ ॥

चतुर्थ स्थान में वृष हो तो वह मनुष्य मान्यजनों से तथा अनेक प्रकार के लोगों से भी सुख लाभ करता है। अपने पराक्रम से राजा की सेवा और अनेक उपचारों से भी सुख प्राप्त करता है ॥ २ ॥

तृतीयराशौ सुखगे सुखानि लभेन्मनुष्यः प्रमदाकृतानि ।
जलावगाहैर्वनसेवया च प्रभूतपुष्पाम्बरसेवनेन ॥ ३ ॥

चतुर्थ स्थान में मिथुन हो तो वह मनुष्य स्त्रियों से, जल विहार, वन-भ्रमण और अनेक प्रकारके पुष्प-वस्त्रादिसे सुख प्राप्त करता है ॥ ३ ॥

कुलीरराशौ च यदा सुखस्थे नरं सुरूपं सुभगं सुशीलम् ।
स्त्रीसम्मतं सर्वगुणैः समेतं विद्याविनीतं जनवल्लभं च ॥ ४ ॥

चतुर्थ भाव में कर्क हो तो जातक सुन्दर, भाग्यवान्, सुशील, स्त्रियोंका प्रिय, सब गुणों से युक्त, विद्यावान् और सब जनों का प्रिय होता है ॥ ४ ॥

सिंहे सुखस्थे न सुखं मनुष्यः प्राप्नोति जातु प्रचुरप्रकोपात् ।
कन्याप्रसूतिं च दरिद्रसङ्गान्नरो भवेच्छीलविवर्जितश्च ॥ ५ ॥

चतुर्थ भाव में सिंह राशि हो तो वह मनुष्य अत्यन्त क्रोध होने के कारण कभी सुखी नहीं होता। कन्या सन्तानवाला और दरिद्रता के हेतु से शीलहीन होता है ॥ ५ ॥

कुमित्रसङ्गी धनसंश्रयाच्च कन्यागृहे बन्धुगते मनुष्यः ।
पैशुन्यसङ्गाल्लभतेऽसुखानि चौर्येण शुद्धेन विमोहनेन ॥ ६ ॥

चतुर्थ भाव में कन्याराशि हो तो वह मनुष्य धन पाकर दुष्टजनों से मैत्री करता है, चुगुलपन, चोरी और मारण-मोहन आदि क्रिया से सदा दुःख पाता है ॥ ६ ॥

तुला सुखस्था च नरस्य यस्य करोति सौम्यं शुभकर्मदक्षम् ।
विद्याविनीतं सततं सुखाढ्यं प्रसन्नचित्तं विभवैः समेतम् ॥ ७ ॥

चतुर्थ स्थान में तुला राशि हो तो वह मनुष्य सरल स्वभाव, सत्कार्य में निपुण, विद्या से विनीत, सर्वदा सुखी, प्रसन्न और धन से युक्त होता है ॥७॥

अलौ चतुर्थे विपदा समेतं नरं सुतीक्ष्णं परभीतचित्तम् ।
प्रभूतसेवं गतवीर्यदर्पं परैः सुदक्षं मतिबुद्धिहीनम् ॥ ८ ॥

चतुर्थ भावमें वृश्चिक हो तो मनुष्य विपत्ति से युक्त, तीक्ष्ण स्वभाव, दूसरे से भय रखने वाला, बहुतों की सेवा करनेवाला, शत्रुओं द्वारा गर्वहीन, कार्य में कुशल तथा बुद्धिमान् से पृथक् रहने वाला होता है ॥ ८ ॥

चापे सुखस्थे लभते मनुष्यः सुखं सदा सङ्गरसेवनेन ।
तत्कीर्तनेनैव हयैर्विचित्रैः सेवासुखं स्वेन निबन्धनेन ॥ ९ ॥

चतुर्थ भाव में धनु राशि हो तो युद्ध करने, युद्ध की चिन्ता करने से तथा अनेक प्रकार के घोड़ों के सेवाकार्य से और अपने प्रबन्धों से सुख पानेवाला होता है ॥ ९ ॥

मृगे सुखस्थे सुखभाग् मनुष्यः सदा भवेत्तोयनिषेवणेन ।
उद्यानवापीतटसङ्गमेन मित्रोपचारैः सुरतप्रधानैः ॥१०॥

चतुर्थ स्थान में मकर राशि हो तो वह मनुष्य सर्वदा जल विहार, बगीचा, तालाव आदि स्थान में जानेसे, मित्रों के उपचार से, सुरत क्रिया से सुख पानेवाला होता है ॥ १० ॥

घटे सुखस्थे प्रमदाभिधानात्प्राप्नोति सौख्यं विविधं मनुष्यः ।
मिष्टान्नपानैः फलशाकपत्रैर्विदग्धवाक्यैश्च समुत्सुकत्वः ॥११॥

चतुर्थ भावमें कुम्भ राशि हो तो वह मनुष्य स्त्रियों के आश्रय से, मिष्ठान्न, पान, फल, शाकपत्रादि से, उत्साहवर्धक वाक्यों की चतुरतासे सुख पानेवाला होता है ॥ ११ ॥

मीने सुखस्थे तु सुखी मनुष्यः प्राप्नोति सौख्यं जलसंश्रयेण ।
शनैश्चरो देवसमुद्भवैश्च स्थानैः सुवस्त्रैः सुधनैर्विचित्रैः ॥१२॥

चतुर्थ भाव में मीन राशि हो तो वह मनुष्य सदा सुखी तथा जल के आश्रय से, देवताओं की कृपा से, वस्त्र और अनेक प्रकार के धनोंसे सुख लाभ करनेवाला तथा मन्दगति से चलनेवाला होता है ॥ १२ ॥

पञ्चम भावस्थित मेषादिराशि फल–

मेषे सुतस्थे लभते मनुष्यः प्रियेण पुत्रान्वितचेतसा च ।
सुरात्सुखानीह कृतानि यानि पापानुरक्ताकुलचित्तयुक्तः ॥ १ ॥

पुत्र (५) भाव में मेष राशि हो तो वह मनुष्य मित्रों से तथा पुत्रों में स्नेह से, देवताओं की सेवा से सुख प्राप्त करनेवाला होता है । परञ्च पाप-कार्य में भी फँसने से चिन्तित रहता है ॥ १ ॥

वृषे सुतस्थे जनिमान् मनुष्यः प्राप्नोति कन्यां सुभगां सुरूपाम् ।
अपत्यहीनां बहुकान्तियुक्तां सदाऽनुरक्तां निजभर्तृधर्मे ॥२॥

पञ्चम स्थानमें वृष हो तो मनुष्य को सुन्दरी, सौभाग्यवती, परञ्च सन्तानहीन, लावण्यवती और पतिव्रत परायणा कन्या होती है ॥ २ ॥

तृतीयराशौ सुतगे मनुष्यः प्राप्नोत्यपत्यानि मनःसुखानि ।
सुशीलयुक्तानि गुणाधिकानि प्रीत्या समेतानि बलाधिकानि ॥ ३ ॥

पुत्र (५) भाव में मिथुन राशि हो तो उस मनुष्य को प्रसन्न, सुखी, सुशील, गुणवान् लोगोंसे प्रेम रखनेवाले और बलवान् पुत्र होते हैं ॥ ३ ॥

कर्के सुतस्थे जनयेन्मनुष्यः पुत्रान् प्रसिद्धान् पितृहर्षकांश्च ।
विस्तीर्णकीर्तींश्च महानुभावान् धनेन युक्तान् विनयेन युक्तान् ॥४॥

पुत्र स्थानमें कर्क राशि हो तो उसके पुत्र विख्यात, पितृ सुखदायक, यशस्वी, उदार, धनवान् और विनय से युक्त होते हैं ॥ ४ ॥

सिंहे सुतस्थे जनयेन्मनुष्यः क्रूरस्वभावान्नयनेन कान्तान् ।
मांसप्रियान् स्त्रीजनकान् सुतीव्रान् विदेशभाजः क्षुधया समेतान् ॥५॥

पञ्चम भाव में सिंह राशि हो तो उसके पुत्र क्रूर स्वभाव वाले, सुन्दर नेत्र वाले, मत्स्य-मांस प्रिय, कन्या सन्तान वाले, तीव्र, विदेशवासी, क्षुधातुर होते हैं ॥ ५ ॥

कन्या यदा पञ्चमगा तदा स्युः कन्या नराणां तनयैर्विहीनाः ।
पतिप्रियाः पुण्यतराः प्रगल्भाः प्रशान्तपापाः प्रियभूषणाश्च ॥६॥

पुत्र भाव में कन्या राशि हो तो उस मनुष्य को अधिक कन्या होती हैं और वे पुत्रहीना, पतिव्रता, कार्यमें निपुण, पापहीना और आभूषण में प्रेम रखनेवाली होती हैं ॥ ६ ॥

तुला यदा पञ्चमगा नराणां तदा सुशीलानि मनोहराणि ।
भवन्त्यपत्यानि सरूपकाणि क्रियासमेतानि शुभेक्षणानि ॥७॥

पञ्चम भाव में तुला राशि हो तो उसके पुत्रादि सन्तान सुशील, सुरूपवान्, कार्य में दक्ष और सुन्दर नेत्रवाले होते हैं ॥ ७ ॥

कीटे सुतस्थे जनयेन्नृयोनौ पुत्रान्मनुष्यः शुभगान् सुशीलान् ।
अज्ञातदोषान् प्रणयेन युक्तान्निजेऽत्र धर्मे सततं मनुष्यः ॥८॥

पञ्चम भाव में वृश्चिक राशि हो तो उसके पुत्र भाग्यवान्, सुशील, दोषहीन, विनीत और अपने धर्म में तत्पर रहते हैं ॥ ८ ॥

चापे सुतस्थे जनयेन्मनुष्यः सुतान् विचित्रान् हयलुब्धदक्षान् ।
धानुष्कचर्यान् हतशत्रुपक्षान् सेवाप्रियान् पार्थिवमानयुक्तान् ॥९॥

पुत्र भाव में धनु राशि हो तो उसके पुत्र घोड़े आदि सवारी रखने वाले, धनुष आदि शस्त्र चलाने में समर्थ, शत्रुओं को जीतने वाले, सेवा कार्य जानने वाले और राजा से आदर पानेवाले, अनेक प्रकार के गुणों से युक्त होते हैं ॥ ९ ॥

मृगे सुतस्थे जनयेन्मनुष्यः पुत्रान् सदा पापमतीन् कुरूपान् ।
क्लिबान् कुभावान्विगतप्रभावान् सुनिष्ठुरान् प्रेमविवर्जितांश्च ॥१०॥

पुत्र भाव में मकर राशि हो तो उसके पुत्र पापी, कुरूप, नपुंसक, दुष्ट स्वभाव, प्रभावहीन, निष्ठुर और प्रेम रहित होते हैं ॥ १० ॥

कुम्भे सुतस्थे स्थिरतासमेतान् गम्भीरचेष्टानतिसत्ययुक्तान् ।
पुत्रान् मनुष्यो जनयेत्प्रसिद्धान् कष्टसहान् पुण्ययशः प्रभूतान् ॥११॥

पुत्र भाव में कुम्भराशि हो तो उसके पुत्र स्थिर, सत्यवक्ता, विख्यात, कष्ट को सहने वाले, पुण्यवान् और यशस्वी होते हैं ॥ ११ ॥

मीने सुतस्थे ललितान् सुरक्तान् पुत्रान् मनुष्यो लभते व्यवायात् ।
रोगैः समेतांश्च सदा कुरूपान् सपापके स्त्रीसहितान् सदैव ॥१२॥

पुत्र भाव में मीन राशि हो तो उस मनुष्य के पुत्र सुन्दर और अपने में अनुरक्त (श्रद्धा रखने वाले) होते हैं। यदि उसमें पापग्रह हो तो उसके रोग से युक्त, कुरूप और स्त्री से युक्त होते हैं ॥ १२ ॥

षष्ठ भावस्थित मेषादिराशि फल—

मेषे रिपुस्थे प्रभवेच्च वैरं सदा नराणां वृषभे रिपुस्थे ।
अपत्यवर्गे शतमङ्गनानां मङ्क्षु नितान्तं निजबन्धुवर्गे ॥ १ ॥

षष्ठ भाव में मेष राशि हो तो लोगों से शत्रुता करने वाला होता है। वृष राशि हो तो अपने सन्तानवर्ग में, स्त्रियों में और अपने बन्धुवर्ग में ही शत्रुता होती है ॥ १ ॥

तृतीयराशौ रिपुगे नराणां वैरं भवेत् स्त्रीजनितं सदैव ।
तथा नराणां निहितं च पापैर्वणिग्जनैर्नीचजनानुरक्तैः ॥ २ ॥

जिसके षष्ठ भाव में मिथुन राशि हो, तो उसको अपनी स्त्री से, पापीजनों से, वनियों से और नीचजनों से शत्रुता होती है ॥ २ ॥

कर्के रिपुस्थे सहसा भयं च भवेन्मनुष्यस्य सुज्ञातुरस्य ।
समं द्विजेन्द्रैश्च नराधिपैश्च महाजनेनैव परानुरोधात् ॥ ३ ॥

षष्ठभाव में कर्क राशि हो तो उस मनुष्य को पुत्र के कारण तथा अन्यजनों के अनुरोध से ब्राह्मण, राजा और बड़े आदमियों से वैर होता है ॥ ३ ॥

सिंहे रिपुस्थे प्रभवेच्च वैरं पुत्रैः समं बन्धुजनेन नित्यम् ।
धनं क्षणात्तस्य विनिर्जितं च यद्वा मनुष्यस्य पराङ्गनाभिः ॥ ४ ॥

रिपु (६) भाव में सिंह हो तो पुत्रों और वन्धुजनों से शत्रुता अथवा परस्त्रियों के सङ्गवश सव सम्पत्ति नष्ट हो जाती है ॥ ४ ॥

कन्यास्थिते शत्रुगृहे स्ववैरैरसंयुतिर्निर्धनता नराणाम् ।
दुश्चारिणीभिश्च सुनिम्नगाभिर्वेश्याभिरेवाश्रयवर्जिताभिः ॥ ५ ॥

षष्ठभाव में कन्या राशि हो तो उसको किसी से शत्रुता नहीं होती, किन्तु दुराचारिणी, नीच स्त्री या वेश्या के सङ्ग से धनका नाश होता है ॥ ५ ॥

तुलाधरे शत्रुगृहे नरस्य निधिस्थितस्य प्रभवेच्च वैरम् ।
कार्यं सुधर्मस्य नरस्य साधोः स्ववन्धुवर्गाच्च निजालयाच्च ॥ ६ ॥

षष्ठभाव में तुला राशि हो तो वह धन को भूमि में रखने वाला अथवा धर्म कार्य या साधुजनों के उपकार करता है, इसलिये अपने घर में, अपने वन्धुजनों से वैर होता है ॥ ६ ॥

कौर्पे रिपुस्थे प्रभवेच्च वैरं सार्द्धं द्विजिह्वैश्च सरीसृपैश्च ।
व्यालैर्मृगैश्चौरगणैर्नराणां सर्वैः सुधन्यैश्च विलासिभिश्च ॥ ७ ॥

जिसके षष्ठभाव में वृश्चिक राशि हो, उसको चुगुलखोरों से, विच्छुओं, सर्पों से, वनजन्तुओं से एवं चोरों से भय और प्रतिष्ठित तथा विलासी पुरुषों से शत्रुता होती है ॥ ७ ॥

चापे रिपुस्थे च भवेच्च वैरं शरैः समेतैश्च सरागकैश्च ।
सदा मनुष्यैश्च हयैश्च नागैः पुण्यैस्तथाऽन्यैः परवञ्चनाच्च ॥ ८ ॥

षष्ठभाव में धनु राशि हो तो शरधारियों से, रागवान् मनुष्यों से, घोड़े-हाथी और पुण्य करने वालों से द्वेष होता है ॥ ८ ॥

मृगे रिपुस्थे च भवेच्च वैरं सदा नराणां धनसम्भवं च ।
मित्रैः समं साधुजने सहाये प्रभूतकाले गृहसम्भवं च ॥ ९ ॥

षष्ठभाव में मकर राशि हो तो उसको धन के कारण अपने हितजनों से भी शत्रुता होती है, बहुत समय में साधुजन के सहायक होने पर घर के लोगों से भी शत्रुता होती है ॥ ९ ॥

कुम्भे रिपुस्थे पुरुषस्य वैरं नराधिपेनैव जलाश्रयैश्च ।
वापीतडागादिभिरेव नित्यं क्षेत्राधिपोच्चैः पुरुषैः प्रवृद्धः ॥ १० ॥

षष्ठभाव में कुम्भ राशि हो तो उसको राजा से, जल-जन्तुओं से, बावली, तालाब आदि से भय और बड़े लोगों से शत्रुता होती है ॥ १० ॥

मीने रिपुस्थे च भवेन्नराणां वैरं च नित्यं सुतवर्गजातम् ।
स्त्रीहेतुकं स्वीयभवं पराणामपि प्रियाणामितरेतरं च ॥ ११ ॥

षष्ठभाव में मीन राशि हो तो उसको पुत्रों से, स्त्री से और अन्य हितजनों से अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए शत्रुता होती है ॥ ११ ॥

सप्तम भावस्थित मेषादिराशि फल-

मेषेऽस्तसंस्थे च भवेत्कलत्रं क्रूरं नराणां च खलस्वभावम् ।
पापानुरक्तं कठिनं नृशंसं वित्तप्रियं साध्यपरं सदैव ॥ १ ॥

सप्तम भाव में मेष राशि हो तो उस मनुष्य की स्त्री क्रूरा, दुष्टा, पापिनी, कठोर, निर्दयी और धन चाहने वाली होती है ॥ १ ॥

वृषेऽस्तसंस्थे च भवेत्कलत्रं सरूपकं वाक्प्रणतं प्रशान्तम् ।
पतिव्रता चारुगुणेन युक्तं कलाधिकं ब्राह्मणदेवभक्तिम् ॥ २ ॥

सप्तम भाव में वृष राशि हो तो उसको सुरूपा, मधुर वाक्यवाली, गृहकार्य में चतुरा, शान्त स्वभाव, पतिव्रता, कलाओं को जाननेवाली, ब्राह्मण-देवताओं में भक्ति वाली स्त्री होती है ॥ २ ॥

तृतीयराशौ च भवेत्कलत्रं कलत्रयुक्तं सुधनं सुवृत्तम् ।
रूपान्वितं सर्वगुणोपपन्नं विनीतवेषं गणवर्जितं च ॥ ३ ॥

सप्तम भावमें मिथुन हो तो उसकी स्त्री धनवती, सदाचारिणी, रूपवती, सब गुणों से युक्ता, कोमल स्वभाववाली और संघ से रहिता होती है ॥ ३ ॥

कर्केण युक्ते च मनोहराणि सौभाग्ययुक्तानि गुणान्वितानि ।
भवन्ति सौभाग्यकलत्रकाणि कलङ्कहीनानि सुसम्मतानि ॥ ४ ॥

स्त्री (७) भाव में कर्क राशि हो तो उस मनुष्य की स्त्री सुन्दरी, सौभाग्यवती, गुणवती, प्रसन्न हृदया, झगड़े से डरनेवाली और आज्ञाकारिणी होती है ॥ ४ ॥

सिंहेऽस्तसंस्थे च भवेत्कलत्रं तीव्रस्वभावं च खलं च दुष्टम् ।
विहीनवेषं परसद्मयुक्तं वसुप्रियं स्वल्पकृतं कृशं च ॥ ५ ॥

सप्तम भाव में सिंह राशि हो तो उसकी स्त्री तीव्र स्वभाव वाली, क्रूरा, दुष्टा, शृङ्गारहीना, दूसरों के घर में रहने वाली, धन चाहने वाली, थोड़े कार्य करने वाली और दुर्बल देहवाली होती है ॥ ५ ॥

षष्ठेऽस्तसंस्थे च भवन्ति दाराः सुरूपदेहास्तनयैर्विहीनाः ।
सौभाग्यभोगार्थनयेन युक्ताः प्रियंवदाः सत्यधनाः प्रगल्भाः ॥ ६ ॥

सप्तम स्थान में कन्या राशि हो तो उसकी स्त्री अति सुन्दरी, कन्या सन्तान वाली, सौभाग्य भोग और धन से युक्ता, प्रिय और सत्य बोलने वाली तथा कार्य करने में दक्ष होती है ॥ ६ ॥

तुलेऽस्तसंस्थे गुणगर्विताङ्ग्यो भवन्ति नार्यो विविधप्रकाराः ।
पुण्यप्रिया धर्मपराः सुदान्तप्रभूतपुत्राः पृथिवीविनीताः ॥ ७ ॥

सप्तम भाव में तुला राशि हो तो उस मनुष्य की स्त्री गुणों के गौरव रखने वाली, पुण्यकार्य करने वाली, धर्मपरायणा, गुणयुक्त पुत्रवाली, पृथिवी सदृश क्षमा वाली अनेक स्त्रियाँ होती हैं ॥ ७ ॥

कीटेऽस्तसंस्थे विकलासमेता भवेच्च भार्या कृपणा नराणाम् ।
सुशिक्षिता च प्रणयेन हीना दुर्भाग्यदोषैर्विविधैः समेताः ॥ ८ ॥

सप्तम स्थान में वृश्चिक हो तो उसकी स्त्री विविध कलाओं को जाननेवाली, कृपण स्वभाव वाली, शिक्षिता होने पर भी विनयरहिता तथा दुर्भाग्य दोषों से युक्ता होती है ॥ ८ ॥

चापेऽस्तसंस्थे च भवेत्कलत्रं नृणां सुदुष्टं विगतस्वभावम् ।
विस्रस्तलज्जं परदोषरक्षं युद्धप्रियं दम्भसमन्वितं च ॥ ९ ॥

सप्तम भाव में धनु राशि हो तो उसकी स्त्री दुष्टा, कुशीला, लज्जा से रहिता, दूसरों के दोष देखने वाली, झगड़ा करने वाली और दम्भ–ईर्ष्यादि से युक्ता होती है ॥ ९ ॥

मकरो यस्य च द्यूने भार्या दम्भान्विताऽधमा ।
निर्लज्जा लोलुपा क्रूरा दुःस्वभावा च दुःखिता ॥ १० ॥

जिसके सप्तम भाव में मकर राशि हो तो उसकी स्त्री दम्भ से युक्ता, अधम प्रकृति, निर्लज्जा, लोभ रखने वाली, दुष्ट स्वभाव वाली और दुःखिता होती है ॥ १० ॥

घटेऽस्तसंस्थे च भवेत्कलत्रं नृणां सुदुष्टं विगतस्वभावम् ।
देवद्विजानां सततं प्रहृष्टं धर्मध्वजं सत्यदयासमेतम् ॥ ११ ॥

सप्तम स्थान में कुम्भ राशि हो तो उस मनुष्य की स्त्री दुष्टस्वभाव वाली, देव और ब्राह्मणों में भक्ति, सत्य और दया आदि धर्म को रखने वाली होती है ॥ ११ ॥

मीनेऽस्तसंस्थे च विकारयुक्तं भवेत्कलत्रं विमतं कुपुत्रम् ।
स्वधर्मशीलं प्रणयेन हीनं सदा नराणां विभवप्रियं च ॥ १२ ॥

सप्तम भाव में मीन राशि हो तो उसकी स्त्री विकारों से युक्ता, अपने से भिन्न मत रखने वाली, कुत्सित पुत्रवाली, अपने धर्म में प्रेम रखती हुई भी विनय से हीना, सर्वदा धन चाहनेवाली होती है ॥ १२ ॥

अष्टम भावस्थित मेषादिराशि फल-

मेषेऽष्टमस्थे च भवेन्नराणां वासो विदेशे तु रुजा स्थितानाम् ।
कथास्मृतेश्चैव विमूर्च्छितानां महाधनानामतिदुःखितानाम् ॥ १ ॥

अष्टमस्थान में मेष राशि हो तो वह रोग से युक्त, परदेश में रहनेवाला, अपनी बीती हुई बातों को याद कर मूर्च्छित होनेवाला, धनवान् और दुःखी होता है ॥ १ ॥

वृषेऽष्टमस्थे च भवेन्नराणां मृत्युर्गृहे श्लेष्मकृताद्विकारात् ।
महाशनाद्वाऽथ चतुष्पदाद्वा रात्रौ तथा दुष्टजनादिसङ्गात् ॥ २ ॥

अष्टम भाव में वृष हो तो कफ के विकार या अति खाने से या चौपायों द्वारा या रात्रि में दुष्टजनों के संसर्ग से घर में मृत्यु होती है ॥ २ ॥

तृतीयराशौ च भवेन्नराणां मृत्युस्थिते मृत्युरनिष्टसङ्गात् ।
लोभोद्भवो वा रससम्भवो वा गुदप्रकोपादथवा प्रमेहात् ॥ ३ ॥

अष्टम भाव में मिथुन राशि हो तो शत्रु सङ्ग या लोभ वा किसी रस-पदार्थ के खाने से या गुदा रोग या प्रमेह से मृत्यु होती है ॥ ३ ॥

कर्केऽष्टमस्थे च जलोपसर्गात्कीटात्तथा चैव विभीषणाद्वा ।
भवेद्विनाशः परहस्ततो वा विदेशसंस्थस्य नरस्य चैव ॥ ४ ॥

अष्टम भाव में कर्क राशि हो तो जातक जल में डूबकर या किसी कीड़े के काटने से या अन्य देश में अन्य मनुष्य द्वारा मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ ४ ॥

सिंहेऽष्टमस्थे च सरीसृपाच्च भवेद् विनाशः पुरुषस्य सम्यक् ।
व्यालोद्भवो वाऽपि वनाश्रितस्य चौरोद्भवो वाऽथ चतुष्पदाच्च ॥ ५ ॥

अष्टम भाव में सिंह राशि हो तो उसकी विषैले जन्तु या जङ्गल में या चोर से अथवा चतुष्पद द्वारा मृत्यु होती है ॥ ५ ॥

कन्या यदा चाऽष्टमगो विलासात्सदा स्वचित्तान्मनुजस्य मृत्युः ।
स्त्रीणां हि हिंसाद् विषप्राशनात्स्यात् स्त्रीणां कृते वा स्वगृहाश्रितस्य ॥६॥

अष्टम भाव में कन्या राशि हो तो उसको अधिक भोग-विलास से, हितों की बात न सुनकर मनमानी करने से, स्त्री की हत्या करने से, विष भोजन से या स्त्री के हेतु से अपने घर में मृत्यु होती है ॥ ६ ॥

तुलाधरे चाऽष्टमगे च मृत्युर्भवेन्नराणां द्विपदोत्थ एव ।
निशागमे संस्थकृतोपवासाद् विद्विट्प्रकोपादथवा प्रतापात् ॥ ७ ॥

अष्टम भाव में तुला राशि हो तो किसी द्विपद (मनुष्य) द्वारा उसकी मृत्यु होगी अथवा रात्रि के समय में अधिक उपवास के कारण अथवा शत्रुके कोप से या प्रताप (सन्ताप) से उसकी मृत्यु होती है ॥ ७ ॥

स्थानेऽष्टमस्याऽष्टमराशिसङ्गे नृणां विनाशो रुधिरोद्भवेन ।
रोगेण वा कीटसमुद्भवेन स्वस्थानसंस्थस्य विषोद्भवो वा ॥ ८ ॥

अष्टम भाव में वृश्चिक राशि हो तो उस मनुष्य की मृत्यु शोणित विकार से, कीड़े के द्वारा अथवा विषसे अपने स्थान में ही होती है ॥ ८ ॥

चापेऽष्टमस्थे प्रभवेन्नराणां मृत्युः स्वसंस्थे शरताडनेन ।
गुह्योद्भवेनापि गदोद्भवेन चतुष्पदोत्थेन जलोद्भवेन ॥ ९ ॥

मृत्यु (८) भाव में धनु राशि हो तो शरके आघात से, गुप्तेन्द्रिय में रोग होने से या चतुष्पद्से अथवा जलसे उसकी मृत्यु होती है ॥ ९ ॥

मृगेऽष्टमस्थे च नरस्य यस्य विद्यान्वितो मानगुणैरुपेतः ।
कामी स शूरोऽथ विशालवक्षाः शास्त्रार्थवित्सर्वकलासु दक्षः ॥१०॥

अष्टम भावमें मकर राशि हो तो वह मनुष्य विद्वान्, मानी, गुणी, कामी, शूर, विशाल छाती वाला, शास्त्रों को जानने वाला और सब कलाओं में निपुण होता है ॥ १० ॥

घटेऽष्टमस्थे विभवप्रणाशो वैश्वानरात्सद्मगतात्तु जन्तोः ।
नानाव्रणैर्वायुभवैर्विकारैः श्रमात्तथा गेहविहीनमृत्युः ॥११॥

अष्टम भाव में कुम्भ राशि हो तो अग्नि से उसकी सब सम्पत्ति नष्ट होती है, अनेक प्रकार के व्रण, वायु के विकार, अधिक श्रम से अथवा पराये घर में उसका मरण होता है ॥ ११ ॥

मीनेऽष्टमस्थे प्रभवेच्च मृत्युर्नृणामतीसारकृतश्च कष्टात् ।
पित्तज्वराद्वा सलिलाश्रयाद् वा रक्तप्रकोपादथवा च शस्त्रात् ॥१२॥

अष्टम स्थान में मीन राशि हो तो अतिसार के रोग से या पित्तज्वर से, जलसे, शोणित विकारसे या शस्त्रके आघातसे उसका मरण होता है ॥ १२ ॥

नवम भावस्थित मेषादिराशि फल–

धर्मस्थिते चैव हि मेषलग्ने चतुष्पदोत्थं प्रकरोति धर्मम् ।
तेषां प्रदानेन तु पोषणेन दयाविवेकेन सुपालनेन ॥ १ ॥

नवम (धर्म) भाव में मेष राशि हो तो पशुओं का पालन, पोषण, पशुओं पर दया और पशुओं के दानरूप धर्म करनेवाला होता है ॥ १ ॥

वृषे च धर्मं प्रगते मनुष्यो धर्मं करोत्येव धनप्रभूतम् ।
विचित्रदानैर्बहुगोप्रदानै - र्विभूषणाच्छादनभोजनेन ॥ २ ॥

धर्म भाव में वृषराशि हो तो अपने उपार्जित धन से, अनेक प्रकार के अन्नदान, वस्त्र दान, सुवर्ण-भूषणादि दान, गोदानादि रूप धर्म करने वाला होता है ॥ २ ॥

तृतीयराशौ प्रकरोति धर्मं धर्माकृतिं सौम्यकृतं सदैव ।
अभ्यागतोत्थं द्विजभोजनाद् वा दीनानुकम्पाश्रयमानसेवाः ॥ ३ ॥

धर्मस्थान में मिथुन राशि हो तो सद्भाव से धर्माचरण वाला होता है, अभ्यागतों का सत्कार, ब्राह्मण भोजन, दीनजनों पर दया आदि धर्म करने वाला होता है ॥ ३ ॥

व्रतोपवासैर्विषमैर्विचित्रैर्धर्मं नरः संकुरुते सदैव ।
धर्माश्रिते चैव चतुर्थराशौ तीर्थाश्रयाद् वा वनसेवनेन ॥ ४ ॥

नवम स्थान में कर्क राशि हो तो वह मनुष्य विविध भाँति के व्रत, उपवास, तीर्थ यात्रा, वन में रहकर तपस्या आदि करने वाला होता है ॥४॥

धर्माख्यभावाश्रितसिंहराशौ धर्मं परेषां प्रकरोति मर्त्यः ।
स्वधर्महीनो विक्रियाभिरेव सुतीर्थगामी विनयेन हीनः ॥ ५ ॥

धर्म स्थान में सिंह राशि हो तो वह मनुष्य अपना धर्म छोड़कर अन्य धर्म को माननेवाला, बिना कर्म के ही तीर्थ घूमने वाला और विनयहीन होता है ॥ ५ ॥

धर्माश्रितः स्याद्यदि षष्ठराशिः स्त्रीधर्मसेवां कुरुते मनुष्यः ।
विहीनभक्तिर्बहुजन्मतश्च पाखण्डमाश्रित्य तथाऽन्यपक्षम् ॥ ६ ॥

धर्म भाव में कन्या राशि हो तो वह स्त्रीधर्म को करनेवाला, अनेक जन्म से भक्ति हीन, पाखण्ड मत या अन्य मतको माननेवाला होता है ॥ ६ ॥

तुलाधरे धर्मगते मनुष्यो धर्मं करोत्येव सदा प्रसिद्धम् ।
देवद्विजानां परितोषणं च जनानुरागेण तथाऽद्भुतञ्च ॥ ७ ॥

धर्म भाव में तुला राशि हो तो वह मनुष्य अपने कुलक्रमागत धर्म को पालने वाला, देव और ब्राह्मणों का सत्कार तथा लोक के अनुराग से अद्भुत धर्म करने वाला होता है ॥ ७ ॥

धर्माश्रिते चाऽष्टमगे च राशौ पाखण्डधर्मं द्विजदेवतर्पणम् ।
पीडाकारं चैव तथा जनानां भक्त्या विहीनं परपोषणेन ॥ ८ ॥

नवम भाव में वृश्चिक राशि हो तो पाखण्ड धर्म, दूसरों के क्लेशकारक धर्म तथा दूसरों का कभी पालन रूप धर्म करता भी है तो भक्ति हीन होकर ऐसा मनुष्य होता है ॥ ८ ॥

चापे तथा धर्मगते मनुष्यः करोति धर्मं द्विजदेवतर्पणम् ।
स्वेच्छान्वितं शास्त्रविनिर्मितं च प्रभूततोयं प्रथितं त्रिलोके ॥ ९ ॥

धर्म स्थान में धनु राशि हो तो वह मनुष्य ब्राह्मण और देवताओं का पूजनादि धर्म, अपनी इच्छा के अनुकूल, शास्त्र विहित तीनों लोक में प्रसिद्ध धर्म को करने वाला होता है ॥ ९ ॥

धर्माश्रिते चेन्मकरे मनुष्यः प्राप्नोत्यधर्मं कुरुते प्रतापम् ।
पश्चाद् विरक्तश्च विडम्बनाभिः कौलं समाश्रित्य सदैव पक्षम् ॥१०॥

धर्म भाव में मकर राशि हो तो अपने प्रताप को बढ़ाने के कारण अधर्म करता है, पीछे बहुत विडम्बना के कारण विरक्त होकर अपने कुल के धर्म का आश्रय लेता है ॥ १० ॥

कुम्भे च धर्मं प्रगते च धर्मं पुंसां विधत्ते सुरसङ्घजातम् ।
वृक्षाश्रयोत्थं च तथा शिवं च आरामवापीप्रियता सदैव ॥११॥

नवम भाव में कुम्भ राशि हो तो वह देवभक्ति रूप धर्म, वृक्ष आदि लगाने का धर्म, बगीचा, कूप, तालाब आदि खननरूप धर्म करने वाला होता है ॥ ११ ॥

धर्माश्रिते चैव हि मीनराशौ करोति धर्मं विविधं नृलोके ।
सत्सेवयाऽऽरामतडागजातं तीर्थाऽटनेनाऽर्थसुखैर्विचित्रैः ॥१२॥

धर्म भाव में मीन राशि हो तो वह मनुष्य सज्जनों की सेवा, लोकोपकारार्थ बगीचा, तालाब बनवाना, तीर्थ भ्रमण आदि धर्म करने वाला होता है ॥ १२ ॥

दशम भावस्थित मेषादिराशि फल-

कर्माश्रिते मेषसुनामराशौ करोत्यधर्मं प्रवरं सुदुष्टम् ।
पैशुन्यरूपं विनयातिरिक्तं सुनिन्दितं साधुजनस्य लोके ॥ १ ॥

दशम भाव में मेष राशि हो तो वह विनय हीन होकर चुगुलखोरी तथा साधुजनों से निन्दनीय कर्म को करनेवाला होता है ॥ १ ॥

वृषेऽम्बरस्थे प्रकरोति कर्म व्ययात्मकं साधुजनानुकम्पम् ।
द्विजेन्द्रदेवातिथिभिर्विभाजकं ज्ञानात्मकं प्रीतिकरं सतां च ॥ २ ॥

दशमभाव में वृष राशि हो तो वह मनुष्य साधुजनों के उपकार में खर्च, देव, ब्राह्मणों, अतिथि आदि के सत्कार और ज्ञानात्मक, साधुओं के प्रेमोत्पादक कार्य को करनेवाला होता है ॥ २ ॥

युग्मेऽम्बरस्थे प्रकरोति मर्त्यं कर्मप्रधानं गुरुभिः प्रदिष्टम् ।
कीर्त्यान्वितं प्रीतिकरं जनानां प्रभासमेतं कृषिजं सदैव ॥ ३ ॥

दशम भाव में मिथुन राशि हो तो वह मनुष्य गुरुजनोंके आदेशानुसार लोगों के प्रीतिकारक यशस्कर कर्म तथा खेती करने वाला होता है ॥ ३ ॥

कर्केऽम्बरस्थे प्रकरोति मर्त्यः कर्म प्रपारामतडागसंज्ञम् ।
विचित्रवापीतटवृन्दजं च कृपापरं नित्यमकल्मषं च ॥ ४ ॥

दशम भाव में कर्क राशि हो तो वह बगीचा, तालाव आदि खनवाना, लोगों के उपकारार्थ निष्पाप कर्म को करने वाला होता है ॥ ४ ॥

सिंहेऽम्बरस्थे कुरुते मनुष्यो रौद्रं स-पापं विकृतं च कर्म ।
सपौरुषं प्राणसमं च नित्यं वधात्मकं निन्दितमेव नित्यम् ॥ ५ ॥

दशम भाव में सिंह राशि हो तो वह विकृत और हिंसात्मक, निन्दित, क्रूर कर्म करने वाला होता है ॥ ५ ॥

नभःस्थलस्थे त्वथ पृष्ठराशौ करोति कर्माज्ञमितो मनुष्यः ।
स्त्रीराजमानो भजते विरुद्धं कामाल्पको निर्धन एव लोके ॥ ६ ॥

जिसके दशम भाव में कन्या राशि हो तो वह मूर्ख के समान कार्य करता है, स्त्री और राजा के यहाँ अपमानित होता है, अल्पवीर्य और निर्धन होता है ॥ ६ ॥

तुलाधरे व्योमगते मनुष्यो वाणिज्यकर्म प्रचुरं करोति ।
धर्मात्मकं चापि नयेन युक्तं सतामभीष्टं परसम्पदं च ॥ ७ ॥

दशम भाव में तुला राशि हो तो वह बहुत यत्न से वाणिज्य कर्म को करने वाला, धर्म और नीति पुरस्सर धनोपार्जन, सज्जनों का प्रिय और दूसरों के धन की वृद्धि करने वाला होता है ॥ ७ ॥

कीटेऽम्बरस्थे च करोति कर्म पुंसामदुष्टं जनसम्मतं च।
व्ययङ्करं देवगुरुद्विजानां सुनिर्दयं नीतिविवर्जितं च ॥ ८ ॥

दशम भाव में वृश्चिक राशि हो तो वह शास्त्र और लोकसम्मत कर्म, देव, गुरु और ब्राह्मणों के हित में खर्च करने वाला, परञ्च निर्दयता और अनीति पुरस्सर कार्य करने वाला होता है ॥ ८ ॥

चापेऽम्बरस्थे च करोति कर्म सर्वात्मकं चाययुतं मनुष्यम्।
परोपकारात्मकमोचनाद्यं नृपात्मकं भूमियशः समेतम् ॥ ९ ॥

दशम भाव में धनु राशि हो तो वह मनुष्य सब कार्य करने में दक्ष, नित्य लाभ करने वाला, परोपकारी, राजा का कार्यकर्ता और भूमि तथा यश से युक्त होता है ॥ ९ ॥

मृगेऽम्बरस्थे प्रखरप्रतापं कर्मप्रधानं कुरुते मनुष्यम्।
सुनिर्दयं बन्धुजनैः समेतं धर्मेण हीनं खलसम्मतं च ॥ १० ॥

दशम स्थान में मकर राशि हो तो उग्र प्रताप वाला, कार्य में तत्पर, दयाहीन, बन्धुओं से युक्त, धर्महीन, दुष्टों का प्रिय होता है ॥ १० ॥

घटेऽम्बरस्थे च करोति कर्म प्रधानमर्त्यं परवञ्चनार्थम्।
पाखण्डधर्मान्वितमिष्टलोभाद्विश्वासहीनं जनताविरुद्धम् ॥ ११ ॥

दशम भाव में कुम्भ राशि हो तो वह मनुष्य कर्म करने में चतुर, दूसरों को ठगने वाला, पाखण्डी, लोभ से लोक में विश्वासहीन तथा समाज से विरुद्ध आचरण वाला होता है ॥ ११ ॥

मीनेऽम्बरस्थे प्रकरोति कर्म मर्त्यं कुले धर्मगुरूपदिष्टम्।
कीर्त्यान्वितं सुस्थिरमादरेण नानाद्विजाराधनसंस्थिरं च ॥ १२ ॥

दशम भाव में मीन राशि हो तो वह मनुष्य अपने कुल और धर्माचार्यों के कहे हुए धर्म कार्य करने वाला, कीर्तिमान्, आदर से ब्राह्मणों का सत्कार करने वाला और स्थिर पुरुष होता है ॥ १२ ॥

एकादशभावस्थित मेषादिराशि फल–

लाभालये मेषगते च राशौ चतुष्पदोत्थं प्रकरोति लाभम्।
तथा नराणां नृपसेवया च देशान्तराऽऽराधितसम्प्रभूतम् ॥ १ ॥

लाभ (११) स्थान में मेष राशि हो तो पशुओं से लाभ करने वाला, राजा की सेवा से या देशान्तर से विशेष धन लाभ करने वाला होता है ॥१॥

आयस्थिते वै वृषभे प्रलाभो भवेन्मनुष्यस्य विशिष्टजातः ।
स्त्रीभ्यः सकाशादथ सज्जनेभ्यः कुसीदगोधर्मकृतेस्तथैव ॥ २ ॥

लाभस्थान में वृष राशि हो तो उस मनुष्य को स्त्रियों के द्वारा, साधुजनों द्वारा विशेष लाभ होता है तथा सूद और गायों की सेवा से अधिक लाभ होता है ॥ २ ॥

तृतीयराशिः कुरुतेऽतिलाभं लाभाश्रितः स्त्रीदयितं सदैव ।
वस्त्वर्थमुख्याशनपानजातं सदा पुमांसं विबुधप्रसिद्धम् ॥ ३ ॥

लाभ भाव में मिथुन राशि हो तो वह सब कार्य से लाभ करने वाला, स्त्रियों का प्रिय, उत्तम पदार्थ-भोजन-पान करने वाला और पण्डितों में प्रसिद्ध होता है ॥ ३ ॥

लाभी भवेल्लाभगते च राशौ सदा चतुर्थे वरजातकानाम् ।
सेवाकृषिभ्यां जनितप्रभूतः शास्त्रेण वा साधुजनैश्च पश्चात् ॥ ४ ॥

जिसके लाभस्थान में कर्क राशि हो उसको नौकरी या खेती से विशेष लाभ होता है, पीछे शास्त्र से और साधुजनों के द्वारा भी लाभ होता है ॥४॥

लाभाश्रिते पञ्चमगे च राशौ भवेन्मनुष्यस्य निगर्हणाच्च ।
नानाजनानां बधबन्धनैर्वा व्यायामदेशान्तरसंश्रयाच्च ॥ ५ ॥

लाभस्थान में सिंह राशि हो तो उस मनुष्य को निन्द्य कर्म से, नाना जन्तुओं की हिंसा आदि कर्म से, व्यायाम (कसरत आदि) से तथा देशान्तर जाने से लाभ होता है ॥ ५ ॥

कन्यात्मके लाभगते मनुष्यः प्राप्नोति लाभं विविधं सपर्याः ।
शास्त्रागमाभ्यां विनयेन सार्धं नित्यं विवेकेन तथाऽद्भुतेन ॥ ६ ॥

लाभस्थान में कन्या राशि हो तो वह अनेक प्रकार से लाभ करने वाला, शास्त्र-पुराणादि के अभ्यास से, विनय तथा विवेक से सर्वत्र पूजित होता है ॥ ६ ॥

तुलाधरे लाभगते मनुष्यः प्राप्नोति लाभं वणिजे विचित्रे ।
सुसाधुसेवाविनयेन नित्यं सुखं स्तुतं मुख्यतमं प्रभूतम् ॥ ७ ॥

लाभ भाव में तुला राशि हो तो वह विविध व्यापार से लाभ करनेवाला, साधुओं की सेवा और अपनी नम्रता से लोक में प्रशंसा और सुख का भागी होता है ॥ ७ ॥

लाभाश्रिते चाऽष्टमगेहराशौ प्राप्नोति लाभं मनुजोऽतिमुख्यम्।
छलेन पापेन मुभापणेन परस्य पैशुन्यकृतैर्विकारैः॥ ८॥

एकादश भाव में वृश्चिक राशि हो तो वह मनुष्य छल, कपट, मिथ्या-भाषण और अन्यों की चुगली करके लाभ करनेवाला होता है॥ ८॥

लाभाश्रिते चैव धनुर्धरे च नृपैर्विलासान् भजते मनुष्यः।
सत्सेवया वा निजपौरुषेण मुख्यं चराराधनतश्च लाभम्॥ ९॥

लाभस्थान में धनु राशि हो तो वह राजा के साथ विलास करनेवाला तथा साधुओं की सेवा से, अपने पुरुषार्थ से विशेष लाभ करने वाला होता है॥ ९॥

लाभाश्रिते वै मकरेऽर्थलाभो भवेन्नराणां जलयानयोगात्।
विदेशवासान्नृपसेवनाद् वा व्ययात्मकं भूरितरं सदैव॥१०॥

लाभ स्थान में मकर राशि हो तो वह मनुष्य नौका, जहाज आदि के द्वारा विदेश यात्रा से और राजा की सेवा से धन लाभ करता है तथा शीघ्र ही उसको खर्च भी कर देता है॥ १०॥

आयस्थिते कुम्भधरे च लाभो भवेन्मनुष्यस्य कुकर्मजातः।
त्यागेन धैर्येण पराक्रमेण विद्याप्रभावात्सुसमागमश्च॥११॥

लाभ स्थान में कुम्भ राशि हो तो वह मनुष्य कुत्सित कर्म के द्वारा, त्याग, धैर्य, पराक्रम तथा विद्या के प्रभाव से लाभ करता है॥ ११॥

लाभाश्रिते चाऽन्त्यगमे च राशौ प्राप्नोति लाभं विविधं मनुष्यः।
मित्रोद्भवं पार्थिवमानजातं विचित्रवाक्यैः प्रणयेन नित्यम्॥१२॥

लाभ स्थान में मीन राशि हो तो वह मनुष्य अनेक तरह से, मित्रों के द्वारा, राजा के आदर से, विविध कथा-पुराणों से विनयपूर्वक लाभ करने वाला होता है॥ १२॥

व्ययभावस्थित मेषादिराशि फल–

मेषे व्ययस्थे च भवेन्नराणां व्ययः सुखाच्छादनभोजनेन।
चतुष्पदानेकविवर्द्धनेन लाभेन नानाविधपौरुषेण॥ १॥

व्ययभाव में मेषराशि हो तो वह मनुष्य उत्तम भोजन-वस्त्रादि सुख में, गाय आदि पशुओं के पालन में, अपने उपार्जित धन को खर्च करनेवाला होता है॥ १॥

वृषे व्ययस्थे व्यय एव पुंसां भवेद् विचित्राम्बरयोषितां च।
लाभेन राज्येन पराक्रमेण स धातुवादैर्विबुधैः सदैव॥ २॥

व्यय स्थान में वृष राशि हो तो वह अनेक प्रकार के वस्त्र और अनेक स्त्रियों में प्रेम करने में, अपने पराक्रम से उपार्जित राज्य-धन आदि को खर्च करने वाला होता है ॥ २ ॥

तृतीयराशौ व्ययगे नराणां व्ययो भवेत्स्त्रीव्यसनात्मकैश्च ।
भृत्योद्भवो वा सततप्रभूतः कुशीलजः पापजनैर्गजैश्च ॥ ३ ॥

व्यय भाव में मिथुन राशि हो तो वह स्त्रियों के साथ सतत प्रेम में, नौकरों के वेतन में, दुष्टजनों के संगवश कुत्सित कर्मों में अधिक खर्च करनेवाला होता है ॥ ३ ॥

कर्के व्ययस्थे द्विजदेवतानां व्ययो भवेद्यज्ञसमुद्भवैश्च ।
धर्मक्रियाभिर्विदधाति चैव प्रशंसिते साधुजनेन लोके ॥ ४ ॥

व्यय भाव में कर्क राशि हो तो ब्राह्मण और देवता की आराधना, यज्ञ, साधुजनों से प्रशंसित, धर्म कार्य में व्यय करनेवाला होता है ॥ ४ ॥

सिंहे व्ययस्थे तु भवेन्नराणामसंशयो भूरितमः सदैव ।
रूपैश्च जातैश्च कुकर्मणा च निन्द्यः सतां पार्थिवचौरतो वा ॥ ५ ॥

द्वादश भाव में सिंह राशि हो तो वह अधिक तमोगुण (क्रोध) वाला, रूप, जन्म और क्रिया से निन्दनीय एवं राजा तथा चोर के द्वारा उसका धन व्यय होता है ॥ ५ ॥

कन्यात्मके चान्त्यगते व्ययी च
भवेन्मनुष्यः स हि चाङ्गनोत्सुकः ।
विवाहमाङ्गल्यविचित्रमुख्यैः
सत्प्रभाभिर्बहुसाधुसङ्गात् ॥ ६ ॥

व्यय भाव में कन्या राशि हो तो वह स्त्रियों के पीछे अधिक खर्च करने वाला एवं विवाहादि मङ्गल कार्य तथा साधुओं की संगति में खर्च करने वाला होता है ॥ ६ ॥

तुले व्ययस्थे सुरविप्रबन्धुश्रुतिस्मृतिभ्यश्च कृतो व्ययश्च ।
भवेन्नराणां नियमैर्यमैश्च सदार्यसेवाजनिता प्रसिद्धिः ॥ ७ ॥

व्यय भाव में तुला राशि हो तो देवता, ब्राह्मण, बन्धुवर्ग, वेद और शास्त्रों की रक्षा में व्यय करने वाला होता है तथा नियम व्रत से, सर्वदा श्रेष्ठजनों की सेवा से उसकी प्रसिद्धि होती है ॥ ७ ॥

अलौ व्ययस्थे च भवेद् व्ययस्तु पुंसां प्रदानेन विडम्बनाभिः ।
कुमित्रसेवाजनितः सुनिन्द्यः कुबुद्धितश्चौरकृताधिकारात् ॥८॥

द्वादश स्थान में वृश्चिक राशि हो तो अनेक विडम्बनाओं से दान करने में, कपटी मित्रों की सहायता में, दुर्बुद्धि से चोरों को अधिकार देने में व्यय करने वाला होता है, इसलिए लोक-निन्द्य होता है ॥ ८ ॥

चापे व्ययस्थे परवञ्चनेष व्ययो भवेत्पापजनप्रसङ्गात् ।
सेवाकृतो जात्यधिकारिपुंसः कृषिप्रसङ्गात्परबन्धनाद्वा ॥ ९ ॥

द्वादश स्थान में धनु राशि हो तो पापियों की सङ्गति में पड़कर दूसरों की वञ्चना तथा अपनी जाति के अधिकारी पुरुषों की खुशामद में, कृषि-कर्म में तथा दूसरों के अधीन होकर रहने में व्यय होता है ॥ ९ ॥

मृगे व्ययस्थे च भवेन्नराणां व्ययस्तु पापाशनके च जातः ।
स्ववर्गपूजानिरतस्तथाल्पकृषिर्विहीनश्च विगर्हितश्च ॥१०॥

व्यय स्थान में मकर राशि हो तो वह मनुष्य निन्द्य वस्तुओं के भोजन में खर्च करने वाला तथा अपने वर्ग के मनुष्यों के सत्कार में रत, थोड़ी खेती करने वाला, धनहीन और लोक में निन्दित होता है ॥ १० ॥

घटे व्ययस्थे सुरसिद्धविप्रतपस्विनो वन्दनगो व्ययश्च ।
मीने च पुंसां जलयानजातस्तथा विवादेन विनिर्गतेन ॥११॥

व्यय स्थान में कुम्भ राशि हो तो वह देव, ब्राह्मण, तपस्वी आदि की पूजा में व्यय करता है। मीन व्यय स्थान में हो तो नौका आदि बनवाने में, विवाद में तथा विदेश यात्रा में व्यय करता है ॥ ११ ॥

ये स्थानचिन्तासु पुरा प्रदिष्टा
योगा मया तान्परिगृह्य शास्त्रात् ।
योगा विचिन्त्याः सुधिया ततस्तु
वाच्यः नराणां हि शुभाऽशुभैस्ते ॥१२॥

हमने पूर्व में द्वादशभाव की चिन्ता और वर्गों के फल कहे हैं, उन सबको विचार कर तारतम्य से शुभ या अशुभ फलों का आदेश करना चाहिए ॥ १२ ॥

द्वादशराशिस्थ रविफल–

भवति साहसकर्मकरो नरो रुधिरपित्तविकारकलेवरः ।
क्षितिपतिर्मतिमान् हितकृत्सदा सुमहसां महसामधिपे क्रिये ॥ १ ॥

सूर्य—मेष राशि में हो तो जातक साहस से कार्य करने वाला, शोणित और पित्त विकार से कष्ट, राजा, बुद्धिमान् तथा बड़े आदमियों का हित-साधक होता है ॥ १ ॥

परिमलैर्विमलैः कुसुमासनैः सुवसनैः पशुभिः सुखमद्भुतम् ।
गवि गतो हि रविर्जलभीरुतां विहितमाहितमादिशते नृणाम् ॥ २ ॥

वृष में सूर्य हो तो वह मनुष्य सुगन्ध पुष्प, सुन्दर आसन, शय्या, वस्त्र आदि से सुखी, जल से भय रखने वाला तथा शास्त्र और हित जनों के आदेश को मानने वाला होता है ॥ २ ॥

गणितशास्त्रकलामलशीलता सुललितोऽद्भुतवाक्प्रथितो भवेत् ।
दिनपतौ मिथुने ननु मानवो विनयतानयतातिशयान्वितः ॥ ३ ॥

सूर्य मिथुन में हो तो गणित शास्त्र और कलाओं में पटु, बोलने में चतुर और नीति में निपुण होता है ॥ ३ ॥

सुजनतारहितः कलिकालविज्जनकवाक्यविलोपकरो नरः ।
दिनकरे तु कुलीरगते भवेत्सधनतासहितो रहितोऽधिकः ॥ ४ ॥

कर्क में रवि हो तो--सुजनता से हीन, कलियुग के धर्म से युक्त, पिता के वाक्य को नहीं मानने वाला, कभी धन से पूर्ण और कभी धन से हीन होता है ॥ ४ ॥

स्थिरमतिश्च पराक्रमतोऽधिको विभुतयाऽद्भुतकीर्तिसमन्वितः ।
दिनकरे करिवैरिगते नरो नृपरतः परितोषकरो भवेत् ॥ ५ ॥

सूर्य सिंह में हो तो जातक स्थिरबुद्धि, अधिक पराक्रमी, प्रभुत्व और कीर्ति से युक्त, राजा के आश्रित, लोक को परितोष देनेवाला होता है ॥५॥

दिनपतौ युवतौ समवस्थिते नरपतेश्च नरो द्रविणं लभेत् ।
मृदुवचाः श्रुतगेयपरायणः समहिमामहिमापहताहितः ॥ ६ ॥

सूर्य कन्या राशि में हो तो वह राजा से धन पाने वाला, दिव्यभाषी, सङ्गीत में निपुण, महान् और अपने महत्त्व से शत्रुओं को नाश करने वाला होता है ॥ ६ ॥

नरपतेरतिभीतिमहर्निशं जनविरोधविधानमघं दिशेत् ।
कलिमनाः परकर्मरतिर्घटे दिनमणिर्न मणिर्द्रविणादिकम् ॥ ७ ॥

सूर्य यदि तुला राशि में हो तो राजा से भय, समाज के विरुद्ध कार्य से पाप का भागी, झगड़ालू, दूसरों के काम करने वाला तथा धनहीन होता है ॥ ७ ॥

कृपणतां कलहं च भृशं रुषं विषहुताशनशस्त्रभयं दिशेत् ।
अलिगतः पितृमातृविरोधितां दिनकरो न करोति समुन्नतिम् ॥ ८ ॥

सूर्य वृश्चिक में हो तो वह कृपणता, झगड़ालू, क्रोध, विष, अग्नि और शस्त्राघात के भय से युक्त, माता-पिता का विरोधी होता है, कभी भी उन्नति नहीं करने पाता है ॥ ८ ॥

स्वजनकोपमतीवमहन्मतिं बहुधनं हि धनुर्धरगो रविः ।
सुजनपूजनमादिशते नृणां सुमतितो मतितोषविवर्द्धनम् ॥ ९ ॥

रवि यदि धनु में हो तो वह अपने परिजनों पर कोप करने वाला, बुद्धिमान्, धनवान्, साधुओं का आदर करने वाला, अपनी सुबुद्धि से लोगों की बुद्धि और सन्तोष को बढ़ाने वाला होता है ॥ ९ ॥

अटनतां निजपक्षविपक्षतः सधनतां कुरुते सततं नृणाम् ।
मकरराशिगतो विगतोत्सवं दिनविभुर्न विभुत्वसुखं दिशेत् ॥१०॥

सूर्य मकर में हो तो वह भ्रमणशील, अपने हित और शत्रु से सतत धन लाभ करने वाला, किन्तु उत्सव और सुख से हीन होता है ॥ १० ॥

कलशगामिनि पङ्कजिनीपतौ शठतरो हि नरो गतसौहृदः ।
मलिनताकलितो रहितः सदा करुणयारुणयार्तसुखी भवेत् ॥११॥

सूर्य यादि कुम्भ राशि में हो तो वह परम शठ, सौहार्दहीन, मलिनता से युक्त, दया से रहित, कभी दुःखी, कभी सुखी होता है ॥ ११ ॥

बहुधनं क्रयविक्रयतः सुखं निजजनादपि गुह्यमहाभयम् ।
दिनपतौ झषगेऽतिमतिर्भवेद् विभुतयाऽद्भुतयायतकीर्तिभाक् ॥१२॥

मीन राशि में सूर्य हो तो वह क्रय-विक्रय से अधिक धनी, स्वजनों से सुख पाने वाला, गुप्त भय से युक्त, अत्यन्त बुद्धिमान्, समस्त देश में विख्यात कीतिवाला होता है ॥ १२ ॥

द्वादशराशिस्थ चन्द्रफल–

स्थिरधनी रहितः सुजनैर्नरः सुतयुतः प्रमदाविजितो भवेत् ।
अजगतो द्विजराज इतीरितं विभुतयाद्भुतया स्वसुकीर्तिभाक् ॥ १ ॥

चन्द्रमा मेष राशि में हो तो स्थिरधन, सुजन की सङ्गति से रहित, स्त्री का वशी, अत्यन्त प्रभुत्ववाला और परम यशस्वी होता है ॥ १ ॥

स्थिरगतिं सुमतिं कमनीयतां कुशलतां हि नृणामुपभोगताम् ।
वृषगतो हिमगुर्भृशमादिशेत्सुकृतितः कृतितश्च सुखानि च ॥ २ ॥

वृष में चन्द्रमा हो तो स्थिरस्वभाव, सुबुद्धि, सुन्दर, कार्यों में कुशल, भोगवान् तथा सत्क्रिया से सुख पानेवाला होता है ॥ २ ॥

प्रियकरः सुकर्मयुतो नरः सुरतसौख्यभरो युवतिप्रियः ।
मिथुनराशिगतो हिमगुर्भवेत्सुजनताजनताकृतगौरवः ॥ ३ ॥

चन्द्रमा मिथुन राशि में हो तो वह लोगों का हितकारक, सत्कर्म करने वाला, सुरत सुख भोगने वाला, स्त्रियों का प्रिय, अपनी सुजनता से जन-समूह में गौरव पाने वाला होता है ॥ ३ ॥

श्रुतकलाबलनिर्मलवृत्तयः कुसुमगन्धजलाशयकेलयः ।
किल नरास्तु कुलीरगते विधौ वसुमतीसुमतीप्सितलब्धयः ॥ ४ ॥

चन्द्रमा कर्क में हो तो जातक शास्त्र-कथा-कला बल से परिपूर्ण, पुष्प-गन्धादि प्रिय, जलक्रीडा में रत, भूमि और सुबुद्धि से युक्त होता है ॥ ४ ॥

अचलकाननयानमनोरथं गृहकलिं विकलोदरपीडनम् ।
द्विजपतिर्मृगराजगतो नृणां वितनुते तनुते यशहीनताम् ॥ ५ ॥

सिंह में चन्द्रमा हो तो जातक पर्वत और वन में विहार करने वाला, घर में कलहकारक, उदर पीडा से युक्त और सुयश हीन होता है ॥ ५ ॥

युवतिगे शशिनि प्रमदाजन-प्रबलकेलि-विलासकुतूहलैः ।
विमलशील-सुताजननोत्सवैः सुविधिना विधिना सहितः पुमान् ॥६॥

चन्द्रमा कन्या राशि में हो तो स्त्रियों से विविध सुख पाने वाला, सुशील, अधिक कन्या सन्तान वाला, उत्तम भाग्य और उत्तम क्रिया वाला होता है ॥ ६ ॥

वृषतुरङ्गमविक्रयवान्क्रये द्विजसुरार्चनदानमतिः पुमान् ।
शशिनि तौलिगते बहुदारभाग्विभवसम्भवसञ्चितविक्रमः ॥ ७ ॥

चन्द्रमा तुला राशि में हो तो जातक गाय, बैल, घोड़े आदि के क्रय-विक्रय करने वाला, ब्राह्मण और देवता का पूजन करने वाला, बहुत स्त्री, बहुत सम्पत्ति और बहुत पराक्रम वाला होता है ॥ ७ ॥

शशधरे हि सरीसृपे नरो नृपदुरोदरजातधनक्षयः ।
कलिरुचिर्विबलः खलमानसः कृशमनाः शमनापहतो भवेत् ॥ ८ ॥

चन्द्रमा वृश्चिक राशि में हो तो उसका धन राजा और जूआ के खेल द्वारा नाश होता है। वह झगड़ालू, विकल, दुष्ट हृदय, थोड़ा आत्मबल वाला तथा अन्त में अधिक कष्ट से मरण प्राप्त करता है ॥ ८ ॥

बहुकलाकुशलः किल गीतवान्विमलताकलितः सरलोक्तिभाक् ।
शशधरे हि धनुर्धरगे नरो धनकरो न करोति बहुव्ययम् ॥ ९ ॥

धनु का चन्द्रमा हो तो अनेक कलाओं का ज्ञाता, गानमें कुशल, स्वच्छ सरल वचनवाला, धनी होने पर भी कृपण होता है ॥ ९ ॥

कलितशीतभयः किल गीतवित्तनुरुषा सहितो मदनातुरः ।
निजकुलोत्तमवित्तकरः परं हिमकरे मकरे पुरुषो भवेत् ॥ १० ॥

मकर का चन्द्रमा हो तो शीत प्रकृति, गायक, किञ्चित् क्रोधी, काम से विकल, अपने कुलका सम्पूर्ण धन खर्च करनेवाला होता है ॥ १० ॥

अलसतासहितोऽन्यसुतप्रियः कुशलताकलितोऽतिविचक्षणः ।
कलशगामिनि शीतकरे नरः प्रशमितोऽशमितोरुरिपुव्रजात् ॥ ११ ॥

कुम्भ का चन्द्रमा हो तो अत्यन्त आलसी, दूसरों के सन्तान में स्नेह वाला, चतुर, अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि वाला, चारों तरफ से शत्रु द्वारा पीडित होकर रहता है ॥ ११ ॥

शशिनि मीनगते विजितेन्द्रियो बहुगुणः कुशलोऽनिललालसः ।
विमलधीः किल शस्त्रकलादराच्च चलताचलताकलितो नरः ॥१२॥

मीन का चन्द्रमा हो तो जितेन्द्रिय, बड़ा गुणवान्, कार्य में कुशल, हवा खाने का शौकीन, निर्मल बुद्धि, शस्त्रकला में दुष्ट से आदरणीय, चञ्चल हो ॥ १२ ॥

द्वादशराशिस्थ भौमफल–

क्षितिपतेः क्षितिमानधनागमैः सुवचसा महसा बहुसाहसैः ।
अवनिजः कुरुते सततं शुभं त्वजगतो जगतोऽभिमतं नरम् ॥ १ ॥

मेष का मंगल हो तो राजा से जमीन, दान धन का आगमन, सुन्दर वचन, साहसी, सबका प्यारा हो ॥ १ ॥

गृहधनाल्पसुखं च रिपूदयं परगृहस्थितिमादिशते नृणाम् ।
रुधिरजातिरुजो वृषभस्थितः क्षितिसुतोऽतिसुतोद्भवपीडनम् ॥ २ ॥

जन्म समय में वृषका मंगल हो तो धन और घरका अल्पसुख, शत्रु की वृद्धि, दूसरे के घर में निवास, शोणित विकार से रोग और पुत्रों से पीडा होती है ॥ २ ॥

बहुकलाकलनाकुलजोत्कलिं प्रचलनप्रियतां च निजस्थालत् ।
ननु नृणां कुरुते मिथुनस्थितः कृतनयस्तनयप्रमुखात्सुखम् ॥ ३ ॥

जिसके जन्म समय में मिथुन का मंगल हो वह अनेक कलाओं का ज्ञाता, कुलमें आकुलता, परदेश-भ्रमण की इच्छा और पुत्र से सुख होता है ॥ ३ ॥

परगृहस्थितितामतिदीनतां विमतितां शमितां च रिपूदयम् ।
हिमकरालयगे किल मङ्गले प्रबलयाऽबलया कलहं व्रजेत् ॥ ४ ॥

कर्क राशि का मंगल जन्म समय में हो तो दूसरों के घर से स्नेह, दीनतायुक्त, दुष्ट बुद्धि, शक्तिह्रास होने से शान्त, शत्रुओं की वृद्धि, प्रबल स्त्री से झगड़ा हो ॥ ४ ॥

अतितरां सुतदारसुखान्वितो हतरिपुर्विततोद्यमसाहसः ।
अवनिजे मृगराजगते पुमान् सुनयतानयताऽभियुतो भवेत् ॥ ५ ॥

सिंह राशि का मंगल जन्म समय में हो तो पुत्र-स्त्री से सुख, शत्रुरहित, उद्यमी, साहसी एवं नीति से युक्त होता है ॥ ५ ॥

स्वजनपूजनताधिको यजन-याजनकर्मरतो भवेत् ।
क्षितिसुते सति कन्यकयाऽन्विते त्ववनितो वनितोत्सवतः सुखी ॥६॥

कन्या राशि का मंगल जन्म समयमें हो तो कुटुम्ब का पोषक, यज्ञ करना तथा जमीन, स्त्री से सुख हो ॥ ६ ॥

बहुधनव्ययताङ्गविहीनता-गतगुरुप्रियतापरितापितः ।
वणिजि भूमिसुते विकलः पुमानवनितो वनितोद्भवदुःखभाक् ॥७॥

जन्म समय में तुला में मंगल हो तो अधिक खर्च, एक अंग से हीन, गुरुजनों के प्रेमसे रहित, विकल, पृथ्वी तथा स्त्री से दुःख हो ॥ ७ ॥

विषहुताशनशस्त्रभयान्वितः सुतसुतावनितादिमहासुखः ।
वसुमतीसुतभाजि सरीसृपे नृपरतः परतश्च जयं व्रजेत् ॥ ८ ॥

जन्म समय में वृश्चिक का मंगल हो तो विष, अग्नि, शस्त्र से भय, पुत्र-पुत्री-स्त्री से सुख, राजमान्य और शत्रु को जीतने वाला हो ॥ ८ ॥

रथतुरङ्गमगौरवसंयुतः परमरातिजनैः कृतदुःखितः ।
भवति वाऽवनिजे धनुषि स्थिते सुवनिता वनिता भवति प्रिया ॥९॥

जन्म समय में धनुका मंगल हो तो रथ, घोड़ा, गौरव से युक्त, शत्रु से दुःखी, पतिव्रता स्त्री युक्त हो ॥ ९ ॥

रणपराक्रमता वनितासुखं निजजनप्रतिकूलभयाश्रितः ।
विभवता मनुजस्य धरात्मजे मकरगे करगा च रमा भवेत् ॥ १० ॥

जन्म समय में मकर का मंगल हो तो रण में पराक्रमी, स्त्री से सुख, स्वजनों की प्रतिकूलतासे भय, वैभवशाली एवं लक्ष्मीवान् होता है ॥१०॥

विनयितारहितं सहितं रुजा निजजनप्रतिकूलमलं खलम् ।
प्रकुरुते मनुजं कलशाश्रयः क्षितिसुतोऽसुतोद्भवदुःखितम् ।। ११ ।।

जन्म समय में कुम्भ का मङ्गल हो तो विनयरहित, रोगी, स्वजन से प्रतिकूल, बहुत दुष्ट पुत्र के कारण दुःखी होता है ।। ११ ।।

व्यसनतां खलतामदयालुतां विकलतां चलतां च निजालयात् ।
क्षितिसुतस्तिमिना सुसमन्वितो विमतिना मतिनाशनमादिशेत् ।।१२।।

जन्म समय में मीन का मङ्गल हो तो दुःखी, दुष्ट, निर्दयी, विकल, परदेशी, मूर्ख के सङ्ग से वुद्धि भ्रष्ट होती है ।। १२ ।।

द्वादशराशिस्थ बुधफल-

खलमतिः किल चञ्चलमानसो बहुलभुक्कलहाकुलितो नरः ।
अकरुणोऽप्यृणवांश्च बुधे भवेदजिगते विगतेप्सितसाधनः ।। १ ।।

जन्म समय में मेष का बुध हो तो दुष्ट बुद्धि, चञ्चल मन, बहुभोजी, झगड़ालू, निर्दयी, ऋणी, इच्छित पदार्थों से रहित होता है ।। १ ।।

वितरणप्रयतं गुणिनं दिशेद् बहुकलाकुशलं रतिलालसम् ।
धनिनमिन्दुसुतो वृषभस्थितस्तनुजतोऽनुजतोऽतिसुखं नरम् ।। २ ।।

जन्म समय में वृष का बुध हो तो दानी, गुणी, अनेक कलाकुशल, रति में लालसा, धनी, पुत्र एवं छोटे भाई से सुख होता है ।। २ ।।

प्रियवचा रचनासु विचक्षणो द्विजननीतनयः शुभवेषभाक् ।
मिथुनगे जनने शशिनन्दने सदनतोऽदनतोऽपि सुखी नरः ।। ३ ।।

जन्म समय में मिथुन का बुध हो तो प्रियवक्ता, रचना में कुशल, दो माता वाला, शुभ वेष, अपने घर से सब प्रकार का सुखी होता है ।। ३ ।।

कुचरितानि च गीतकथादरो नृपरुचिः परदेशगतिर्नृणाम् ।
किल कुलीरगते शशिभृत्सुते सुरततारतता नितरां भवेत् ।। ४ ।।

जन्म समय में कर्क का बुध हो तो खराब आचरण, गीत और कथा से आदर, राजा में रुचि, परदेशी, सुन्दरी स्त्रियों के साथ रहनेवाला हो ।।४।।

अनततासहितं विमतिं परं सहजवैरकरं कुरुते नरम् ।
युवतिहर्षपरं शशिनः सुतो हरिगतोऽरिगतोन्नतिदुःखितम् ।। ५ ।।

जन्म समय में सिंह का बुध हो तो मिथ्यावादी, दुष्ट बुद्धि, भाई से शत्रुता, स्त्री को प्रसन्न करने वाला, शत्रु से दुःखी होता है ।। ५ ।।

सुवचनानुरतश्चतुरो नरो लिखनकर्मपरो हि वरोन्नतिः ।
शशिसुते युवतिं च गते सुखी सुनयनानयनाञ्चलचेष्टितैः ।। ६ ।।

जन्म समय में कन्या का बुध हो तो सुन्दर वक्ता, चतुर लेखक, उन्नतिशील, सुखी, उत्तम आँख वाली स्त्रियों से सुख होता है ॥ ६ ॥

अमृतवाग् व्ययभाक् खलु शिल्पवित्कुचरिताभिरतिर्बहुजल्पकः ।
व्यसनयुग्मनुजः सहिते बुधे वितुलयच्चलयान्नसतीयुतः ॥७॥

जन्म समय में तुला का बुध हो तो अमृत के समान वचन, खर्चीला, कारीगर, बकवादी, दुःखी एवं खराब स्त्री के सङ्ग वाला हो ॥ ७ ॥

कृपणतातिरतिप्रणयश्रमो विहितकर्मसुखोपहतिर्भवेत् ।
धवलभानुसुतेऽलिगते क्षतिस्त्वलसतो लसतोऽपि च वस्तुनः ॥ ८ ॥

जन्म समय में वृश्चिक का बुध हो तो कृपण स्त्री में आसक्त, पूर्वोपार्जित सुख रहित, आलस से हानि पाने वाला होता है ॥ ८ ॥

वितरणप्रणयो बहुवैभवः कुलपतिश्च कलाकुशलो भवेत् ।
शशिसुतेऽत्र शरासनसंस्थिते विहितया हितया रमयान्वितः ॥ ९ ॥

जन्म समय में धनुका बुध हो तो दानी, धनी, कलाकुशल, कुल में श्रेष्ठ और स्वयं उपार्जित लक्ष्मी वाला होता है ॥ ९ ॥

रिपुभयेन युतः कुमतिर्नरः स्मरविहीनतरः परकर्मकृत् ।
मकरगे सति शीतकरात्मजे व्यसनतः स नतः पुरुषो भवेत् ॥ १० ॥

जन्म समय में मकर का बुध हो तो शत्रु से भय, दुष्ट बुद्धि, नपुंसक, दूसरे का भृत्य, व्यसनी, किन्तु नम्र स्वभाव वाला होता है ॥ १० ॥

गृहकलिं कलशे शशिनन्दनो वितनुते तनुतामनुदीनताम् ।
धनपराक्रमधर्मविहीनतां विमतितामतितापितशत्रुभिः ॥ ११ ॥

जन्म समय में कुम्भ का बुध हो तो घर में कलह, गर्वीला, धनी, पराक्रम हीन, धर्म रहित, शत्रु से पीड़ित होता है ॥ ११ ॥

परधनादिकरक्षणतत्परो द्विजसुरानुचरो हि नरो भवेत् ।
शशिसुते पृथुरोमसमाश्रिते सुवदनावदनानुविलोकनः ॥ १२ ॥

जन्म समय में मीन का बुध हो तो पर धन रक्षक, देव-ब्राह्मण पूजक, सुन्दर स्त्री वाला होता है ॥ १२ ॥

द्वादशराशिस्थ गुरुफल–

बहुतरां कुरुते समुदारतां सुचरितानि च वैरिसमुन्नतिम् ।
विभवता च मरुत्पतिपूजितः क्रियगतोऽयगतोऽनुमतिप्रदः ॥ १ ॥

जन्म समय में मेष का गुरु हो तो उदार, उत्तम कर्मकर्ता, शत्रुयुक्त, लक्ष्मीवान्, बुद्धिपूर्वक कार्य करने वाला होता है ॥ १ ॥

द्विजसुरार्चनभक्तिविभूतयो द्रविणवाहनगौरवलब्धयः ।
सुरगुरौ वृषभे बहुवैरिणश्चरणगारणगाढपराक्रमः ॥ २ ॥

जन्म समय में वृष का गुरु हो तो देवता, ब्राह्मण द्वारा ऐश्वर्यशाली, धन वाहन गौरवसे प्रतिष्ठित, अधिक शत्रु परन्तु शत्रु विजेता होता है ॥ २ ॥

कवितयासहितः प्रियवाक् शुचिर्विमलशीलरुचिर्निपुणः पुमान् ।
मिथुनगे सति देवपुरोहिते सहितता हितताहितैर्भवेत् ॥ ३ ॥

जन्म समय में मिथुन का गुरु हो तो कवि, प्रियवक्ता, पवित्र, निर्मल स्वभाव में रुचि, निपुण मित्र वाला होता है ॥ ३ ॥

बहुधनागमनो मदनोन्नतिर्विविधिशास्त्रकलाकुशलो नरः ।
प्रियवचाश्च कुलीरगते गुरौ चतुरगैस्तुरगैः करिभिर्युतः ॥ ४ ॥

जन्म समय में कर्क का गुरु हो तो अनेक प्रकार के धनागम, कामोन्मत्त, अनेक शास्त्र कला में कुशल, प्रिय वक्ता, चतुर, घोड़ा-हाथी से युक्त हो ॥ ४ ॥

अचलदुर्गवनप्रभुतोर्जितो दृढतनुर्ननु दानपरो भवेत् ।
अरिविभूतिहरो हि नरो युतः सुवचसा वचसामधिपे गुरौ ॥ ५ ॥

जन्म समय में सिंह का गुरु हो तो पहाड़ी किला, वन में प्रभुता से अर्जित धन, गठीले शरीर, दानी, शत्रु का धनहारी, बोलने में श्रेष्ठ होता है ॥ ५ ॥

कुसुमगन्धसदम्बरशालिता विमलता धनदानमतिर्भ्रशम् ।
सुरगुरौ सुतया सति संयुते रुचिरता चिरतापितशत्रुता ॥ ६ ॥

जन्म समय में कन्या का गुरु हो तो पुष्प, गन्ध, उत्तम वस्त्र, शुद्धता, दानी, सुन्दर स्वरूप एवं शत्रु को पीड़ा देने वाला होता है ॥ ६ ॥

सुतनयो जपहोममहोत्सवो द्विजसुरार्चनदानमतिर्भवेत् ।
वणिजजन्मपवित्रशिखण्डिजे चतुरतातुरतासहितारिणा ॥ ७ ॥

जन्म समय में तुला का गुरु हो तो, सुपुत्र से युक्त, जप, होम, उत्सव, देव-ब्राह्मण पूजक, दानी, चतुर, घबड़ाने वाला, शत्रु से दुःख पाने वाला होता है ॥ ७ ॥

धनविनाशनदोपसमुद्भवैः कृशतनुर्बहुदम्भपरो नरः ।
अलिगते सति देवपुरोहिते भवनतो वनतोऽपि च दुःखभाक् ॥ ८ ॥

जन्म समय में वृश्चिक का गुरु हो तो दरिद्रता के कारण कृश शरीर, दम्भी, घर और बाहर से दुःखी रहने वाला होता है ॥ ८ ॥

वितरणप्रणयो बहुवैभवं ननु धनान्यपि वाहनसञ्चयः ।
धनुषि देवगुरौ हि मतिर्भवेत्सुरुचिरा रुचिराभरणानि च ॥ ९ ॥

जन्म समय में धनु का गुरु हो तो बहुत धन दान देनेवाला, धनी, सवारी से सम्पन्न, तीक्ष्णबुद्धि, दिव्य आभूषण से शोभित होता है ॥ ९ ॥

हतमतिः परकर्मकरो नरः स्मरविहीनितरो भयरोषभाक् ।
सुरगुरौ मकरे विदधाति न जनमनो न मनोरथसाधनम् ॥ १० ॥

जन्म समय में मकर का गुरु हो तो नष्ट बुद्धि, सेवक, काम रहित, भय, क्रोध से युक्त और व्यर्थ मनोरथ करने वाला होता है ॥ १० ॥

गदयुतः कुमतिर्द्रविणोज्झितः कृशतनुर्ननु दैवविनिन्दकः ।
घटगते सति देवपुरोहिते कदशनो दशनोदरपीडितः ॥ ११ ॥

जन्म समय में कुम्भ का गुरु हो तो रोगी, कुबुद्धि, दरिद्र, कृश-शरीर, देवनिन्दक, दाँत और उदर रोग वाला होता है ॥ ११ ॥

नृपकृपात्तधनागमनोन्नतिः सदनसाधनदानपरो नरः ।
सुरगुरौ तिमिना सहिते सुतामनुमतोऽनुमतोत्सवदो भवेत् ॥ १२ ॥

जन्म समय में मीन का गुरु हो तो राजकृपा से धन की उत्पत्ति, घर के कार्य में दक्ष, दानी, सज्जनों से अनुमत और वह प्रसन्नता युक्त होता है ॥ १२ ॥

द्वादशराशिस्थ शुक्रफल-

भवनवाहनवृन्दपुराधिपः प्रचलनप्रियताविहितादरः ।
यदि च संजनने हि भवेत्कविः कवियुतो वियुतो रिपुभिर्नरः ॥ १ ॥

जन्म समय में मेष का शुक्र हो तो विविध प्रकार की सवारी, गृह और नगर का मालिक, परदेश घूमने की इच्छा, आदरणीय, कवियों से युत, शत्रु रहित होता है ॥ १ ॥

बहुकलत्रसुतोत्सवगौरवं कुसुमगन्धिरुचिः कृषिकारकः ।
वृषगते भृगुजे कमला भवेदविरला विरला रिपुमण्डली ॥ २ ॥

जन्म समय में वृष का शुक्र हो तो अनेक पुत्र-स्त्री के सुख से युक्त, सुगन्धित वस्तु में रुचि, खेती करने वाला, लक्ष्मीवान्, शत्रु रहित होता है ॥ २ ॥

भृगुसुते जनने मिथुने स्थिते सकलशास्त्रकलाकुशलो नरः ।
सरलता ललिता किल भारती स-मधुरा मधुरान्नरुचिर्भवेत् ॥ ३ ॥

जन्म समय में मिथुन का शुक्र हो तो सम्पूर्ण शास्त्र कला में कुशल, मधुर वचन तथा मिष्ठान्न भोजन करने वाला होता है ॥ ३ ॥

द्विजपतेः सदने भृगुनन्दने विमलकर्ममतिर्गुणसंयुतः।
जनमलं सकलं कुरुते वशं सकलया कलयापि गिरा नरः ॥ ४ ॥

जन्म समय में कर्क का शुक्र हो तो अच्छे कार्य में मन, शुभगुण से सम्पन्न, प्रिय वाणी द्वारा जनता को वश में करने वाला होता है ॥ ४ ॥

हरिगते सुरवैरिपुरोहिते युवतितो धनमानसुखानि च।
निजजनव्यसनान्यपि मानवस्त्वहिततो हिततोषमनुव्रजेत् ॥ ५ ॥

जन्म जमय में सिंह का शुक्र हो तो स्त्री से धन, मान, सुख, अपने बन्धु से दुःख और शत्रु से लाभ होता है ॥ ५ ॥

भृगुसुते सति कन्यकयान्विते बहुधने खलु तीर्थमनोरथः।
कमलयाऽमलयापि विभूपितस्त्वमितया मितयापि गिराऽन्वितः ॥६॥

जन्म समय में कन्या का शुक्र हो तो धनवान्, तीर्थयात्री, लक्ष्मी से युक्त और मितभाषी होता है ॥ ६ ॥

कुसुमवस्त्रविचित्रधनान्वितो बहुगमागमनो ननु मानवः।
जननकालतुलाकलनं यदा सुकविना कविनायकतां व्रजेत् ॥ ७ ॥

जन्म समय में तुला का शुक्र हो तो फूल, अनेक प्रकार के वस्त्र, धन से सम्पन्न, बहुत घूमनेवाला एवं कवियों में श्रेष्ठ होता है ॥ ७ ॥

कलहघातमतिं जननिन्द्यतां प्रजनतामयता नियतां नृणाम्।
व्यसनतां जननेऽलिसमाश्रितः कविरलं विरलं कुरुते धनम् ॥ ८ ॥

जन्म समय में वृश्चिक का शुक्र हो तो झगड़ालू, घातक, जनता में बदनाम, कुव्यसन से गुप्त इन्द्रिय में रोग, अल्प धन वाला होता है ॥ ८ ॥

युवतिसूनुधनागमनोत्सवं सचिवतां नियतं शुभलीलताम्।
यदि हि कार्मुकगः कविनन्दनः कविरतिं विरतिं कुरुते नृणाम् ॥९॥

जन्म समय में धनु का शुक्र हो तो धन, पुत्र, स्त्री से सुखी, मन्त्री, शुभशील युक्त, कवियों से प्रेम एवं वैरागी होता है ॥ ९ ॥

अभिरतिस्तु जराङ्गनया नृणां व्ययभयात्कृशतामतिचिन्तया।
भृगुसुते मृगराशिगते सदा कविजने विजनेऽपि मतिर्भवेत् ॥१०॥

जन्म समय में मकर का शुक्र हो तो वृद्धा स्त्री से रति, खर्च के डर से चिन्तित, दुर्बल, कविका साथी, जङ्गल में रहने वाला होता है ॥ १० ॥

उशनसः कलशे जनुषि स्थितौ वसनभूषणभोगविहीनता ।
विमलकर्ममहालसता नरैरुपगतापगतोऽपि रमा भवेत् ।। ११ ।।

जन्म समय में कुम्भ का शुक्र हो तो वस्त्र, आभूषण, भोग से रहित, अच्छे काम में आलस, धनी रहते हुए भी निर्धन होता है ।। ११ ।।

भृगुसुते सति मीनसमन्विते नरपतेर्विभुता वितता भवेत् ।
रिपुसमाक्रमणद्रविणागमो वितरणे तरणे प्रणयो नृणाम् ।। १२ ।।

जन्म समय में मीन का शुक्र हो तो राजा से धन प्राप्त, शत्रु का धनहारी, दीन मनुष्य को धन देने वाला होता है १२ ।।

द्वादशराशिस्थ शनिफल-

धनविहीनतया तनुता तनौ जनविरोधितयेप्सितनाशनम् ।
क्रियगतेऽर्कसुते सुजनैर्नृणां विषमता समताशमनं भवेत् ।। १ ।।

जन्म समय में मेष का शनि हो तो दरिद्रता से दुर्बल, जन विरुद्धता से मनोरथ नाश, सज्जन से वैर, समान स्थिति वाले से हानि हो ।। १ ।।

युवतिसौख्यविनाशनता भृशं पिशुनसङ्गरुचिं मतिविच्युतिम् ।
तनुभृतां जनने वृषभस्थितो रविसुतो विसुतोत्सवमादिशेत् ।। २ ।।

जन्म समय में वृष का शनि हो तो स्त्री-सुख से रहित, चुगलखोर का संग, बुद्धि भ्रम और पुत्र रहित होता है ।। २ ।।

प्रबलताविमलत्वविहीनता भवनबाह्यविलासकुतूहलात् ।
व्रजति नो मिथुनोपगते सुते दिनविभोर्न विभोर्लभते सुखम् ।। ३ ।।

जन्म समय में मिथुन का शनि हो तो अत्यन्त मैत्री, बाहरी सुख भोग से वञ्चित किसी से सुख नहीं पाता है ।। ३ ।।

शशिनिकेतनगामिनि भानुजे तनुभृतां कृशतां भृशमम्बया ।
वरविलासकरा कमला भवेदविरलं विरलं रिपुमण्डनम् ।। ४ ।।

जन्म समय में कर्क का शनि हो तो माता सहित दुर्बल शरीर, धन भोगने वाला, शत्रु से रहित होता है ।। ४ ।।

लिपिकलाकुशलश्च जनप्रियो विमलशीलसहोदरसंयुतः ।
रविसुते रविवेश्मनि संस्थिते हतनयस्तनयः प्रमदात्सुखम् ।। ५ ।।

जन्म समय में सिह का शनि हो तो लेखन में कुशल, जनप्रिय, भाई से युत, नीति रहित, पुत्रवान्, स्त्री से सुख पाता है ।। ५ ।।

विहितकर्मणि शर्म कदापि नो विनयतोपहतिश्चलसौहृदः।
रविसुते सति कन्यकयान्वितः विबलताबलतासहितो भवेत् ॥ ६ ॥

जन्म समय में कन्या का शनि हो तो कार्य में असफलता, विनय रहित, चञ्चल स्नेह, कभी सबल, कभी निर्बल होता है ॥ ६ ॥

निजकुलेऽवनिपालबलान्वितः स्मरबलाकुलितो बहुदानदः।
जलजिनीशसुते तुलयान्विते नृपकृतोपकृतो हि नरो भवेत् ॥ ७ ॥

जन्म समय में तुला का शनि हो तो अपने कुल में राजा के तुल्य, अधिक कामी, दानी, राजा से उपकृत होता है ॥ ७ ॥

विषहुताशनशस्त्रभयान्वितो धनविनाशनवैरिगदार्दितः।
विकलिताकलितोऽलिसमन्वितो रविसुतो विसुतोऽप्यसुखो नरः ॥८॥

जन्म समय में वृश्चिक का शनि हो तो विष, शस्त्र, अग्नि से भय, धन का नाश, शत्रु एवं रोग से पीड़ित, विकल, पुत्रहीन, दरिद्र होता है ॥ ८ ॥

रविसुतेन युते सति कार्मुके सुतगणैः परिपूर्णमनोरथः।
प्रथितकीर्त्तिसुवृत्तिपरो नरो विभवतो भवतोषयुतो भवेत् ॥ ९ ॥

जन्म समय में धनु का शनि हो तो पुत्रों द्वारा मनोरथ पूर्ति, विख्यात कीर्ति, उत्तम जीविका, अनेक प्रकार के ऐश्वर्य से तुष्ट रहता है ॥ ९ ॥

नरपतौ रविगौरवतां व्रजेद्रविसुते मृगराशिगते नरः।
अगरुणा कुसुमैर्मृगजातया विमलया मलयाचलजैः सुखम् ॥१०॥

जन्म समय में मकर का शनि हो तो राज्यप्रिय होने से महत्त्व, धूप, कस्तूरी, फूल, चन्दन से सुख पाने वाला होता है ॥ १० ॥

ननु जितो रिपुभिर्व्यसनावृतैर्विहितकर्मपराङ्मुखतान्वितः।
रविसुते कलशेन समन्विते सुसहितः सहितप्रचयैर्नरः ॥ ११ ॥

जन्म समय में कुम्भ का शनि हो तो शत्रुओं से दुःख, कर्तव्यहीन, अच्छे मित्र एवं सहायता रहित होता है ॥ ११ ॥

विनयता व्यवहारसुशीलता सकललोकगृहीतगुणो नरः।
उपकृतौ निपुणस्तिमिसंश्रिते रविभवे विभवेन समन्वितः ॥ १२ ॥

जन्म समय में मीन का शनि हो तो विनय, सुन्दर व्यवहार, जन में गुणग्राही, उपकारी, निपुण, वैभव से युक्त होता है ॥ १२ ॥

मित्राऽमित्रकथन–

विनापि मैत्री खलु खेचराणां न ज्ञायते ह्युत्तम-मध्य-हीनता।
दशादिकानां विदशादिकानां तस्मात्प्रवक्ष्ये खलु मैत्रिचक्रम् ॥ १ ॥

ग्रहों के मैत्री ज्ञान विना दशा-अन्तर्दशा-विदशा आदि के बिना फल की उत्तमता, मध्यमता और अधमता का ज्ञान नहीं हो सकता है, इसलिये अब ग्रहों की मैत्री को कहता हूँ ॥ १ ॥

ग्रहों की स्वाभाविक मैत्री तथा तात्कालिक मैत्री–

शत्रू मन्द-सितौ समश्च शशिजो मित्राणि शेषा रवे-
स्तीक्ष्णांशुर्हिमरश्मिजश्च सुहृदौ शेषाः समाः शीतगोः ।
जीवेन्दूष्णकराः कुजस्य सुहृदो ज्ञोऽरिः सितार्कौ समौ
मित्रे सूर्यसितौ बुधस्य हिमगुः शत्रुः समाश्चाऽपरे ॥ २ ॥

सूर्य के शुक्र, शनि शत्रु; बुध सम; मंगल, गुरु, चन्द्र मित्र। चन्द्रमा के सूर्य बुध मित्र; शेष ग्रह सम। मंगल के गुरु, चन्द्र, सूर्य मित्र; बुध शत्रु; शुक्र, शनि सम। बुध के सूर्य, शुक्र मित्र; चन्द्रमा शत्रु; शेष ग्रह सम ॥ २ ॥

सूरेः सौम्यसितावरी रविसुतो मध्योऽपरे त्वन्यथा
सौम्यार्की सुहृदौ समौ कुज-गुरू शुक्रस्य शेषावरी ।
शुक्रज्ञौ सुहृदौ समः सुरगुरुः सौरस्य चान्येऽरयः
तत्काले च दशायबन्धुसहजस्वान्त्येषु मित्रं स्थितः ॥३॥ ब.मि.

गुरु के बुध, शुक्र शत्रु; शनि सम; शेष ग्रह मित्र। शुक्र के बुध, शनि मित्र; मंगल, गुरु सम; शेष ग्रह शत्रु। शनि के बुध, शुक्र, मित्र; गुरु सम; अन्य ग्रह शत्रु होते हैं। परन्तु जन्म काल में १०, ११, ४, ३, २, १२ अपने-अपने स्थान से इन घरों में स्थित ग्रह तात्कालिक मित्र होते हैं और शेष ग्रह शत्रु होते हैं ॥ ३ ॥

नैसर्गिकमैत्रीचक्र

सू.	चं.	म.	बु.	गु.	शु.	श.	ग्रहाः
गु चं. मं	सू.बु.	चं. सू.गु.	सू शु.	सू. चं. मं.	बु. श.	बु,शु.	मित्राणि
बु.	गु.म. शु.श.	शु.श.	म.गु. श.	श.	मं.गु.	बृ.	समाः
शु.श.	०	बु.	चं.	बु. शु.	सू.च.	सू. चं. मं.	शत्रवः

मित्रमुदासीनोऽरिर्व्याख्याता ये निसर्गभावेन ।
तेऽधिसुहृन्मित्रसमास्तत्कालमुपस्थिताश्चिन्त्याः ॥ ४ ॥ ब.मि.

नैसर्गिक मित्र, सम, शत्रु का विचार कर तत्काल उपस्थित ग्रहों के मित्र, सम, शत्रु का चिन्तन करना चाहिए ॥ ४ ॥

मूलत्रिकोणषष्ठत्रिकोणनिधनैकराशिसप्तमगाः ।
एकैकस्य यथासम्भवन्ति तात्कालिका रिपवः ॥ ५ ॥ व.मि.

मूल त्रिकोण में स्थित ग्रह तत्काल मित्र होता है, परन्तु ९।५।८।६।१।७ इन स्थानों में स्थित ग्रह शत्रु होते हैं ॥ ५ ॥

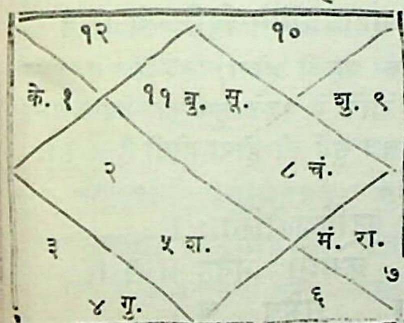
तात्कालिकपञ्चधामैत्रीकथन–

तत्कालमित्रं तु निसर्गमित्रं द्वयं भवेत्तत्त्वधिमित्रसंज्ञम् ।
तथैव शत्रोरधिशत्रुसंज्ञमेकत्र शत्रुः समतामुपैति ॥ ६ ॥

नैसर्गिक मित्र और तात्कालिक मित्र से अधिमित्र इसी प्रकार शत्रु शत्रु अधिशत्रु; मित्र सम से मित्र, सम शत्रु से शत्रु होता है ॥ ६ ॥

ग्रहाः	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
मित्र	०	मं. श. शु.	शु. श.	०	रा. श.	मं. रा.	बृ.
अधिमित्र	चं.	सू.बु.	बृ. च.	शु.	मं.	बु.	रा.
शत्रु	बु.	बृ.	रा.	मं बु. शु.रा	०	बृ.	०
अधिशत्रु	श. रा.	०	बु.	०	बु.शु.	०	सू.
सम	शु. मं.बृ.	०	सू.	चं. सू.	चं.सू.	सू. चं.शु.	मं.चं. शु.

उदाहरणार्थ जन्माङ्गचक्र–



यहाँ चन्द्र सूर्य का नैसर्गिकमित्र है और तात्कालिक १० वें स्थान में पड़ने से मित्र है, अतः सूर्य का चन्द्रमा अधिमित्र हुआ। बुध नैसर्गिक सम है और तात्कालिक शत्रु है अतः सम शत्रु से शत्रु हुआ।

गुरु—मंगल सूर्य का नैसर्गिक मित्र है और तात्कालिक शत्रु हो गया है, क्योंकि सूर्य से ६ ठें और ९ वें स्थान में पड़ता है अतः शत्रु मित्र से सम हो गया। शुक्र सूर्य का नैसर्गिक शत्रु है और ग्यारहवें स्थान में पड़ने से

तात्कालिक मित्र है अतः सम हुआ। शनि सूर्य का शत्रु है और तात्कालिक ७ वें और नवमें स्थान में पड़ने से शत्रु ही हुआ अतः शनि सूर्य का अधिशत्रु हुआ। इसी प्रकार सब ग्रहों का विचार करना चाहिए।

अथ षड्वर्गशुद्धि–

लग्ने देहाचारो होरायामर्थसम्पदो विपदः।
द्रेष्काणे कर्मफलं सप्तांशे बन्धुसंख्या च॥ १॥
जातकफलं नवांशे द्वादशभागे विचिन्तयेत्पत्नीम्।
त्रिंशांशे निधनं वै यवनाचार्यैः सदा ह्युक्तम्॥ २॥

लग्न से शरीर का विचार; होरा से धन-सम्पत्ति, विपत्ति का विचार, द्रेष्काण से कर्मफल; सप्तमांश से बन्धु-संख्या ज्ञान; नवमांश से जातक फल; द्वादशांश से स्त्री का फल; त्रिंशांश से मृत्यु का विचार करना चाहिए ऐसा यवनाचार्य का मत है॥ १-२॥

यस्मिन्मित्रगृहे स्वकीयभवने तुङ्गे त्रिकोणेऽपि वा
तत्सर्वं विदधाति जन्मसमये षड्वर्गशुद्धा ग्रहाः।
एकस्तत्र हि सर्वभूरिनिकरो हस्तेषु कोशान्वितो
द्वाभ्यां किन्नरमत्र सिद्धसदृशं कुर्वन्ति मर्त्यं भुवि॥ ३॥

जन्म समय में कोई ग्रह मित्र क्षेत्र, अपने घर, त्रिकोण (अपने स्थान से १।५।९) उच्च में हो तो षड्वर्ग ग्रह शुद्ध फल देता है। षड्वर्ग शुद्ध में यदि एक ग्रह हो तो सर्व-सम्पत्ति से युक्त, खजानावाला; दो ग्रह हों तो किन्नर सिद्ध के समान होता है॥ ३॥

होरा–

ओजे रवीन्दोः सम इन्दुरव्योर्होरे गृहार्धप्रमिते विचिन्त्ये॥ १॥

एक राशि का दो भाग १५ अंश तक पहली होरा, १६ अंश से तीस अंश तक दूसरी होरा होती है। विषम राशि में पहले सूर्य की तब चन्द्रमा की और सम राशि में पहले चन्द्रमा की तब सूर्य की होरा होती है॥ १॥

द्रेष्काण–

राशित्रिभागा द्रेष्काणास्ते च षट्त्रिंशदीरिताः।
परिवृत्तित्रयं तेषां मेषादेः क्रमशो भवेत्॥ १॥
स्वपञ्चनवपानां च विषमेषु समेषु च।
नारदागस्तिदुर्वासो द्रेष्काणेशाश्चरादयः॥ २॥ बृ.पा.

एक राशि का तीसरा भाग द्रेष्काण होता है, इस तरह १२ राशि के ३६ द्रेष्काण होते हैं। जिस राशि का द्रेष्काण निकालना हो तो पहला

उसके स्वामी का, दूसरा उससे पाँचवीं राशि के स्वामी का, तीसरा उससे ९ वीं राशि के स्वामी का द्रेष्काण होता है। इसमें विषम, सम का विचार नहीं है। अब द्रेष्काण के स्वामी कहते हैं–चर राशि के द्रेष्काण का स्वामी नारद, स्थिर का अगस्ति, द्विस्वभाव का दुर्वासा स्वामी हैं ॥ १–२ ॥

द्रेष्काणज्ञानार्थ चक्र

स्वा.	रा.	मे.	वृ	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ	ध.	म.	कुं.	मी.
नारद	१०	१ मे	२ वृ.	३ मि	४ क.	५ सिं	६ क	७ तु.	८ वृ.	९ ध.	१० म.	११ कुं.	१२ मी
अग.	२०	५ सिं.	६ क	७ तु.	८ वृ	९ ध.	१० म.	११ कुं.	१२ मी	१ मे.	२ वृ.	३ मि.	४ क.
दुर्वा.	३०	९ ध.	१० म.	११ कु.	१२ मी.	१ मे.	२ वृ.	३ मि.	४ क.	५ सिं.	६ क.	७ तु	८ वृ.

द्रेष्काण का उदाहरण—जन्म लग्न १०।०।२२।४५ है, यह १० अंश के भीतर है। इसलिये पहला द्रेष्काण हुआ। अतः पूर्वोक्त अनुसार कुम्भ राशि का स्वामी शनि अधिपति हुआ।

सप्तमांश–

सप्तांशपास्त्वोजग्रहे गणनीया निजेशतः।
युग्मराशौ तु विज्ञेयाः सप्तमर्क्षादिनायकात् ॥ १ ॥

एकराशि का सातवाँ हिस्सा सप्तमांश होता है। विषम राशि में अपने स्वामी से और सम राशि में अपने से सातवीं राशि का पहला सप्तमांश होता है ॥ १ ॥

सप्तमांश उदाहरण—कुम्भ लग्न है, इसलिये पहला सप्तमांश कुम्भ का हुआ। यदि मीन लग्न हो तो मीन से सातवाँ कन्या का पहला सप्तमांश समझना चाहिए ॥१॥

नवमांश–

मेषाद्या धनुसिंहश्च मकराद्या वृषकन्ययोः।
तुलाद्या घटमिथुनश्च कर्काद् वृश्चिकमीनयोः ॥ १ ॥

एक राशि का नवाँ भाग नवमांश कहलाता है। मेष, सिंह, धनु में मेष से, वृष कन्या मकर में मकर से; मिथुन, तुला कुंभ में तुला से; वृश्चिक, मीन कर्क में कर्क से नवमांश शुरू होता है ॥ १ ॥

नवमांश उदाहरण—१०।०।२२।४५ कुम्भ लग्न है। इसलिये तुला से

नवमांश गुरू होता है, अतः पहला नवमांश तुला का हुआ, जिसका अधिपति शुक्र है ॥ १ ॥

द्वादशांश––

द्वादशांशस्य गणनां तत्तत्क्षेत्राद्विनिर्दिशेत् ।
तेषामधीशाः क्रमशो गणेशाश्वियमाहयः ॥ १ ॥

राशि के बारहवें भाग को द्वादशांश कहते हैं। जिस राशिका द्वादशांश निकालना हो उसमें पहला अपना, बाद में क्रम से दूसरा, तीसरा अगले राशि का होता है। इन द्वादशांशों के स्वामी क्रम से गणेश, अश्विनीकुमार, यम, सर्प होते हैं ॥ १ ॥

१०।०।२२।४५ में पहला द्वादशांश कुम्भ का हुआ।

द्वादशांश चक्र

स्वामी	अंशाः	मे.	वृ.	मि.	क.	सि	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं	मी.
गणेश	२।३०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
अ कु.	५।००	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१
यम	७।३०	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२
सर्प	१०।००	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३
गणेश	१२।३०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
अ.कु.	१५।००	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५
यम	१७ ३०	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
सर्प	२०।००	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७
गणेश	२२।३०	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८
अ.कु.	२५।००	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९
यम	२७।३०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
सर्प	३०।००	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११

त्रिंशांश–

कुजशनिजीवज्ञसिताः पञ्चेन्द्रियवसुमुनीन्द्रियांशानाम् ।
विषमेषु समर्क्षेपूत्क्रमेण त्रिंशांशपाः कल्प्याः ॥ १ ॥

विषम राशि में पहले ५ अंश मङ्गल के, फिर १० अंश तक शनि का, फिर १८ अंश तक गुरु का, फिर २५ अंश तक बुध का, फिर ३० अंश तक शुक्र का त्रिंशांश होता है। परन्तु समराशि में इसका उलटा समझना चाहिए ॥ १ ॥

त्रिंशांश उदाहरण–१०।०।२२।४५ विषम राशि होने के कारण पहला त्रिंशांश मेष का हुआ। इसका स्वामी मङ्गल है अतः मङ्गल का त्रिंशांश हुआ ॥ १ ॥

त्रिंशांशज्ञानार्थ चक्र

मे,	वृ	मि.	क.	सि.	क.	तु	वृ.	ध.	मं.	कु.	मी.
५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
मं.	शु.	मं	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.
१०	१२	१०	१२	१०	१२	१०	१२	१०	१२	१०	१२
श.	बु	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श	बु.
१८	२०	१८	२०	१८	२०	१८	२०	१८	२०	१८	२०
गु.	गु.	गु.	गु.	गु.	गु.	गु.	गु.	गु.	गु.	गु.	गु.
२५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	५	२५	२५
बु	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.
३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०
शु.	मं.	शु	शु.	शु.	मं.	मं.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.

षड्वर्गफल–

होरागतोऽर्कस्य करोति चन्द्रो नरं स-कामं वनिताऽऽप्तकष्टम् ।
दोषात्मकं बन्धुजनैर्विमुक्तं सव्याधिदेहं रिपुवर्गगम्यम् ॥ १ ॥

सूर्य की होरा में चन्द्रमा हो तो अत्यन्त कामी, स्त्री से कष्ट, दोषी, बन्धु से रहित, रोगी, शत्रु के वश में रहने वाला होता है ॥ १ ॥

सूर्यस्य होरां प्रगतो हिमांशुर्नरं प्रतापं विविधञ्च सौख्यम् ।
स्वबाहुसम्पादितवित्तपुष्टं जायास्वभावस्य मतिं करोति ॥ २ ॥

सूर्य की होरा में चन्द्र हो तो प्रतापी, विविध प्रकार के सुख, अपने बाहुबल से उपार्जित धन एवं स्त्री स्वभाव वाला होता है ॥ २ ॥

धर्मिष्ठः सत्यवक्ता च गुरुदेवप्रपूजकः ।
उपार्जितार्थसम्भोगी होरायां सूर्यलक्षणम् ॥ ३ ॥

सूर्य की होरा में जिसका जन्म हो वह धर्मिष्ठ, सत्यवादी, गुरु, देव-पूजक, अपने कमाये धन से सुख भोगने वाला होता है ॥ ३ ॥

गन्धर्वसिद्धिं राज्यं च लक्ष्मीभोगी सदा सुखी ।
पुत्रपौत्रं च कल्याणं शतवर्षाणि जीवति ॥ ४ ॥

गन्धर्व सिद्धि से राज्यलक्ष्मी भोगी, सुखी, पुत्र-पौत्र से कल्याण युत, सौ वर्ष जीता है ॥ ४ ॥

क्रूराः सूर्यस्य होरायां धनधान्यविभूतिदाः ।
आचारसत्यशीलाढ्यो रोगाङ्गो नृपवल्लभः ॥ ५ ॥

सूर्य की होरा में दुष्ट ग्रह धन-धान्य, ऐश्वर्य देने वाले हों और जातक आचार, सत्य शील से युत, रोगी, राजप्रिय होता है ॥ ५ ॥

शुभा यदीन्दुहोरायां कामिनीस्नेहवान्नरः ।
शीघ्रं मैथुनगामी च चिरं सेवेत कामिनीम् ॥ ६ ॥

चन्द्रमा की होरा में शुभग्रह हों तो स्त्री से स्नेह रखने वाला, बहुत कामुक, बहुत समय स्त्री की सेवा में लगाता है ॥ ६ ॥

होरायां सूर्यस्य कठिनप्रायश्च सम्भोगः ।
पापैः सर्वैर्बलवान् जितेन्द्रियो मानवो भवति ॥ ७ ॥

सूर्य की होरा में सब बलवान् पापग्रह हों तो मुश्किल से स्त्री प्रसंग हो तथा मनुष्य जितेन्द्रिय होता है ॥ ७ ॥

होरायां कर्कटे चन्द्रे मृत्युसुन्दरमुत्तमम् ।
कामिनीनां प्रियं चैव जनयेत्पुत्रमीदृशम् ॥ ८ ॥

चन्द्रमा की होरा में कर्क राशि हो तो मर्त्यलोक में स्त्रियों के लिए सुन्दर एवं प्यारे पुत्र को जन्म देता है ॥ ८ ॥

बुधः करोति विख्यातं साध्वीपत्नीपतिं शुभम् ।
जीवः करोति निर्धनं तेजस्विनमनिन्दितम् ॥ ९ ॥

चन्द्र होरा में बुध हो तो नामी, पतिव्रता स्त्री का स्वामी हो, यदि चन्द्र होरा में गुरु हो तो निर्धन, तेजस्वी, अनिन्दनीय होता है ॥ ९ ॥

भोग्यपत्नी पतिं शुक्रः क्षीणचन्द्रोऽपि शुक्रवत् ।
जनयेत् कर्कटे भौमे मृतस्त्रीकं नराधमम् ॥ १० ॥

चन्द्र की होरा में शुक्र हो तो अच्छी स्त्री का पति हो, क्षीण चन्द्र होने से शुक्र सदृश फल होता है। कर्क राशिस्थित मंगल चन्द्रमा की होरा में हो तो स्त्री मर जाती है और वह मनुष्य नराधम होता है ॥ १० ॥

रविर्दुःखितमत्यन्तं पीडितं गुह्यपीडितम् ।
शनिर्दासीपतिं कुर्यात्कर्कटस्थो न संशयः ॥ ११ ॥

कर्क राशि की होरा में सूर्य हो तो बहुत दुःखी, गुप्त रोग से पीड़ित, कर्क होरा में शनि हो तो दासीपति होता है, इसमें संशय नहीं है ॥ ११ ॥

स्वहोरायां रविः कुर्याद्विद्वांसं दृष्टपौरुषम् ।
जितेन्द्रियं च शूरं तमुद्यमे धृतमानसम् ॥ १२ ॥

अपनी होरा में सूर्य हो तो विद्वान्, पुरुषार्थ दिखाने वाला, इन्द्रिय को वश में रखने वाला, शूर एवं उद्यमी रहता है ॥ १२ ॥

होरायां च यदा प्राप्ते भौमं सूतं सतां प्रियम् ।
शूरं धीरं धनाढ्यं च सन्मित्रं प्राप्तसम्पदम् ॥ १३ ॥

सूर्य की होरा में मंगल के रहने से सारथी, सज्जनों का प्रिय, शूर, धैर्यवान्, अनेक मित्र एवं सम्पत्ति सहित होता है ॥ १३ ॥

दिवानाथस्य होरायां चन्द्रे नीचमनारतम् ।
बुधे दारिद्र्यपिशुनं जीवे रोगभृतन्तकम् ।
शुक्रेऽगम्याभ्रतिं कुर्याद् शनौ स्याद् वृपलीपतिः ॥ १४ ॥

सूर्य की होरा में चन्द्रमा हो तो नीच बुद्धि वाला, बुध हो तो दरिद्र, चुगुलखोर, गुरु हो तो रोगी होकर मरे, शुक्र हो तो अगम्या में गमन की इच्छा, शनि हो तो वृपली का पति होता है ॥ १४ ॥

द्रेष्काणफल–

यादृग् द्रेष्काणगाः सौम्या उच्चस्था वा स्ववर्गगाः ।
नित्यं भुञ्जयते लक्ष्मीर्वरदा सत्यवादिनी ॥ १ ॥

जो भी शुभग्रह जिस प्रकार के द्रेष्काण, उच्च अथवा अपने वर्ग में बैठा हो तो जातक वरदात्री, सत्यवादिनी, लक्ष्मी को भोगता है ॥ १ ॥

द्रेष्काणमात्मप्रकरोति सौम्यः केन्द्रत्रिकोणे समये बलिष्ठः ।
द्रव्याधिकं मानगुणैः समेतं विद्यान्वितं सर्वकलासु दक्षम् ॥ २ ॥

अपने द्रेष्काण में बैठा हुआ सौम्यग्रह केन्द्र अथवा त्रिकोण में हो तो जातक को धनी, मानी, गुणी, विद्वान् और सब कला में दक्ष बनाता है ॥२॥

द्रेष्काणपे सौम्यगते निरीक्षिते शुक्रेक्षिते स्याद्विविधं च सौख्यम् ।
आरोग्यतां मानयशोऽभिवृद्धिं स्वदेशकर्मप्रकटं विरुद्धम् ॥३॥

द्रेष्काणपति शुभग्रह की राशि में हो या शुभग्रह देखता हो या शुक्र से देखा जाता हो तो अनेक प्रकार के सौख्य, निरोगता, मान, यश की वृद्धि, अपने देश के कार्य से विख्यात, दूसरे का विरोधी होता है ॥ ३ ॥

द्रेष्काणनाथे शशिसंयुतेक्षिते वा भौमेक्षिते स्याद् भृगुनन्दने वा ।
वयः प्रमाणेन फलेच्च कर्म धर्मे धनं स्याद्विविधप्रकारम् ॥४॥

द्रेष्काणपति चन्द्रमा से युत दृष्ट हो वा मङ्गल से दृष्ट हो या शुक्र से दृष्ट हो तो जातक को अपने अवस्थानुसार कर्म से धन प्राप्ति होती है ॥४॥

द्रेष्काणेशः केन्द्रगश्चेदुच्चस्थो भूपतिं गृहे ।
स्वक्षेत्रस्य स्वभृतार्थं मैत्रे सन्मानमागमम् ॥ ५ ॥

द्रेष्काणेश अपने उच्च में रहकर केन्द्र में हो तो जातक राजा हो, अपने घरका हो तो धनी, मित्र के घर का हो तो सम्मान पाता है ॥ ५ ॥

तथा पणफरस्थाने स्वमित्रोच्चगृहाश्रयः ।
सन्मित्रं पार्थिवं तद्वद्धनिनं चक्रतानरम् ॥ ६ ॥

द्रेष्काणेश पणफर २।५।८।११ में स्थित, अपने उच्च का या मित्र के घरका वा अपने घर का हो तो राजा या राजा के बराबर बनाता है ॥ ६ ॥

आपोक्लिमे च व्युत्पन्नो मित्रस्वगृहदा च भूः ।
अपत्यं हि सदाचारे कृपितः प्राप्तवित्तसम् ॥ ७ ॥

द्रेष्काणेश आपोक्लिम ३।६।९।१२ में होकर अपने घर या मित्र के घर का हो तो जातक सुबोध, उसके सन्तति सदाचारी तथा खेतों द्वारा धनी होता है ॥ ७ ॥

शत्रुनीचाश्रिता ये च तेषां तत्तुल्यके तनौ ।
व्रणे घातादिकं चापि वदेत्तदनुपूर्वकम् ॥ ८ ॥

द्रेष्काणेश शत्रु या नीच राशि में हो तो उस राशितुल्य शरीर में घाव, चोट इत्यादि का चिह्न हो ॥ ८ ॥

सप्तमांशफल-

सप्तांशपे चन्द्रयुते च दृष्टे सौम्येक्षिते स्यात्स्वसहोदरः स्यात् ।
अत्युग्रता कान्तियशोऽभिवृद्धिं मित्राधिको मैत्रयुतः प्रगल्भः ॥१॥

सप्तमांशाधिप चन्द्रमा से युत-दृष्ट हो या शुभग्रह से देखा जाता हो तो सहोदर, उग्र कान्ति, यश, मित्र, प्रगल्भता से युत होता है ॥ १ ॥

सप्तांशके च ये खेटा नीचस्था रविवर्जिताः ।
तेषां बलवती ज्ञेया बन्धूनां चिन्तया स्थितिः ॥ २ ॥

सप्तमांश में सूर्य छोड़कर जितने ग्रह नीच स्थित हों उनमें जो बली हो उससे भ्राता के लिए चिन्ता हो ॥ २ ॥

वर्गेऽन्तिमांशे ये खेटा उच्चस्था वा स्ववर्गगाः ।
अश्वादिवाहने दक्षः शूरो बन्धुविवर्जितः ॥ ३ ॥

वर्ग के अन्तिम अंश में जो ग्रह हो वह यदि अपने उच्च या अपने वर्ग का हो तो घोड़ों की सवारी में कुशल, शूर और बन्धुओं से त्यक्त होता है ॥ ३ ॥

नृपपूज्यो भवेन्नित्यं सर्वकार्यार्थसम्पदा ।
सप्तवर्गग्रहाश्चैवमुच्चस्थाः शुभवर्गगाः ॥ ४ ॥

सप्तमांश स्थित ग्रह अपने उच्च या शुभग्रह के वर्ग में हो तो राजपूज्य, कार्य में सफल एवं धन से सम्पन्न होता है ॥ ४ ॥

नित्यं भुञ्जयते लक्ष्मीर्वरदा सत्यवादिनी ।
सप्तांशे भ्रातृभवने रविर्जीवश्च भूमिजः ।
पश्चाज्जाताः पितुः पुत्राः शुक्रचन्द्रज्ञकन्यकाः ॥ ५ ॥

तृतीय स्थान स्थित रवि या गुरु अथवा मङ्गल सप्तमांश में हो तो जातक सत्यवादिनी, वरदायिनी लक्ष्मी भोगने वाला, पिता के मरने के बाद पुत्र की उत्पत्ति और शुक्र चन्द्रमा बुध सप्तमांश में तृतीय स्थान स्थित हो तो पिता के मरने के बाद कन्या का जन्म होता है ॥ ५ ॥

उच्चस्थक्षेत्रगाः खेटाः सप्तांशे निखिलाः स्थिताः ।
महाधनी च भवति नीचस्थे च दरिद्रकः ॥ ६ ॥

अपने सप्तमाश में सभी ग्रह उच्च स्थित हों तो महाधनी, नीच में सभी ग्रह अपने सप्तमांश में पड़ें तो दरिद्र होता है ॥ ६ ॥

नवमांश फल—

गुरोर्नवांशे विचरच्छशाङ्के नरं प्रसूते बहुवित्तयुक्तम् ।
पुत्रान्वितः पुण्यधनैरुपेतः प्रियातिथिं सर्वजनाभिरामम् ॥ १ ॥

गुरु के नवांश में चन्द्रमा हो तो बहुत धन से युक्त, पुत्रवान्, पुण्यवान्, अतिथिप्रिय एवं जनता को आनन्द देता है ॥ १ ॥

सन्मित्रदाराधनमित्रसौख्यं श्रेष्ठप्रतिष्ठासितिराजमानम् ।
नरं प्रकुर्यात्सुरराजमन्त्री नवांशके स्वे सुखसम्पदाः स्युः ॥ २ ॥

गुरु अपने नवांश में हो तो अच्छा मित्र, स्त्री, धन से सुखी, उच्च प्रतिष्ठा से शोभित, सुख-सम्पत्ति वाला होता है ॥ २ ॥

नीचस्त्रीकश्च नीचस्थे भावेशे तुङ्ग उच्चगे ।
कुर्याद्राजा नवांशे तु स्वनवांशे तदाऽधिपम् ॥ ३ ॥

किसी भाव का स्वामी यदि नीच राशि में हो तो नीच स्त्री वाला बनाता है, और वही भावेश उच्च का हो तो राजा, अपने नवांश का हो तो राजा के समान बनाता है ॥ ३ ॥

सेनानीर्मित्रनवांशे भोगगुणसंयुतश्च ।
शत्रुनवांशे दुःखितमत्यन्तमलीमसम् ॥ ४ ॥

कोई ग्रह मित्र के नवांश में हो तो सेनापति, भोगी, शत्रु के नवांश में हो तो दुःखी, अति मलिन होता है ॥ ४ ॥

नीचांशे तु भवेद् दास्यं दशां प्राप्य फलं लभेत् ।
सर्वमेव खगैश्चिन्त्यं फलं वाक्यं विचक्षणैः ॥ ५ ॥

ग्रह यदि नीच के नवांश में हों तो दास (नौकरी करने वाला) बनकर जीवन निर्वाह करने वाला होता है। इसी प्रकार विद्वानों को ग्रह-स्थिति देखकर फल का विचार करना चाहिए ॥ ५ ॥

नवांशकुण्डली में पंचमस्थितग्रह फल-

एकत्रिपञ्चपुत्रः स्युर्धीस्थे तुर्ये कुजे गुरौ ।
द्विचतुःषट्सप्तसङ्ख्यपुत्रदा ज्ञसितौ शनिः ॥ १ ॥

नवांश कुण्डली में पञ्चम घर में मंगल, चौथे में गुरु हो तो १ या ३ या ५ पुत्र हों, यदि नवांश कुण्डली में बुध, शुक्र, शनि हों तो २ या ४ या ६ या ७ पुत्र हों ॥ १ ॥

दुश्चिक्यसिंहं सुतजीवकेतू षष्ठे शनिः सूर्यकलत्रसंस्थः ।
केन्द्रे च राहुर्दशमे च भौमे सन्तानहानिस्तु भवेन्नराणाम् ॥ २ ॥

नवांश कुण्डली से तृतीयस्थान में सिंह राशि हो, ५ में गुरु केतु हो, छठे में शनि हो, ७ वें सूर्य, राहु केन्द्र में, १० वें मंगल हो तो सन्तान नहीं होती है ॥ २ ॥

ग्रहः क्रूरो व्ययाधीशो धर्मारिसहजे व्यये ।
मृतौ शिखी सुतस्थाने जातको म्रियते ध्रुवम् ॥ ३ ॥

नवांश कुण्डली में द्वादशेश क्रूरग्रह हो, वह ९, ६, ३, १२ वें घर में हो, ८ वें या ५ वें में केतु हो तो पुत्र होकर निश्चय मर जाते हैं ॥ ३ ॥

यावत्संख्या ग्रहाणां सुतभवनगता पूर्णदृष्टिर्यदा वा
तावत्संख्या प्रसूतिर्भवति बलयुताः पुंग्रहाः पुत्रकाख्यम् ।
कन्या चन्द्रस्य शुक्रो हिमसुतरविजो गर्भहानिं करोति
केचिच्चन्द्राद्विचार्यं मुनिगणकथितं तद्विचिन्त्यं नवांशे ॥४॥

नवांश कुण्डली में जितने पुरुष ग्रह बलवान् होकर लग्न से ५ वें घर में हों वा ५ वें पर पूर्णदृष्टि हो तो उतने ही पुत्र हों। ५ वें घर में यदि चन्द्रमा, शुक्र, बुध हों अथवा इनसे देखा जाता हो तो कन्या होती है। शनि होने से गर्भ स्थिर नहीं रहता है। किसी-किसी मुनिका मत है कि चन्द्रमा के नवांश से ये सब विचार करना चाहिए ॥ ४ ॥

द्वादशांशफल–

ग्रहाः स्युर्द्वादशे भागे मित्रोच्चसमवस्थिताः।
बहुस्त्रीष्वधिकारी स्यान्नानाऋद्धिसमन्वितः॥ १॥

द्वादशांश में जो ग्रह मित्र का या उच्च का हो तो बहुत स्त्रियों का मालिक, अनेक प्रकार के धन, रत्न से पूर्ण होता है॥ १॥

राशिद्वादशांशचक्र फल–

अशीति-चतुराशीति-षडशीत्यथ सप्तकम्।
अष्टौ पञ्च च षट्षष्टिः पञ्चाशच्चैव सप्ततिः॥ २॥
नवत्यङ्गाधिकाषष्टिः षट्पञ्चाशच्छतं तथा।
उत्क्रमायुः प्रमाणेन द्विरसांशैकभेदतः॥ ३॥

बारहों राशि के द्वादशांश में क्रम से आयु प्रमाण है–८०, ८४, ८६, ८७, ८५, ६०, ५६, ७०, ९०, ६६, ५६, १०० अर्थात् क्रम से द्वादशांश में इतने आयु के बाद मनुष्य की मृत्यु होती है॥ २-३॥

जलेनाऽष्टादशे वर्षे सर्पेण नवमे पुनः।
ज्वरेण दशमे चैवं द्वात्रिंशे राजयक्ष्मणा॥ ४॥

उपरोक्त कहे हुए आयु के भीतर भी मरण हो सकता है। प्रथम द्वादशांश में १८ वे वर्ष में जल से; द्वितीय द्वादशांश में ९ वर्ष में साँप से, तृतीय में १० वें वर्ष में ज्वर से, ४ में क्षयरोग से, ३२ वें वर्ष में मरण हो॥ ४॥

विंशे रक्तप्रमाणेन द्वाविंशे वह्निना तथा।
अष्टाविंशतमे वर्षे जलोदरचयं तथा॥ ५॥

पाँचवें द्वादशांश में २० वर्ष में रक्त विकार से, छठें द्वादशांश में ३२ वें वर्ष में आग से, ७ वें द्वादशांश में २८ वें वर्ष में जलोदर रोगसे मृत्यु हो॥५॥

व्याघ्रात्त्रिंशत्तमे वर्षे शरघातेन दन्तके।
जलेन वातपीडाभिर्मरणं त्रिंशदब्दके॥ ६॥

८ वें द्वादशांश में ३० वर्ष की अवस्था में व्याघ्र से, ९ वें द्वादशांश में १२ वें वर्ष की अवस्था में बाण या अस्त्र-शस्त्र से, १० वें द्वादशांश में ३० वर्ष की अवस्था में पानी में डूबने से एवं वात विकार से मृत्यु हो॥ ६॥

स्त्री-कन्या-मरणं विद्यात्त्रिंशद्वर्षेऽप्सु मज्जनात्।
चक्रेण मरणं प्राहुरूनत्रिंशे ततो नरः।
पूर्वोक्तमायुः प्राप्नोति सत्यमेतन्मयोदितम्॥ ७॥

११ वें द्वादशांश में ३० वर्ष की अवस्था से स्त्री-कन्या की मृत्यु, जल में डूबने का भय, १२ वें द्वादशांश में २९ वर्ष की अवस्था में किसी गाड़ी के पहिया के नीचे दबकर मरे। यदि असमय मृत्यु से बच जाय तो पूर्व लिखित आयु प्राप्त करे, यह मैं सत्य कहता हूँ ॥ ७ ॥

अथ द्वादशांश चक्र

द्वादशांश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
आयु प्रमाण	८०	८४	८६	८७	८५	६०	५६	७०	९०	६६	५६	१००
भय निमित्त	जलात्	सर्पतः	शत्रुतः	श्रयात्	रक्तविकारतः	अग्नितः	जलोदरतः	व्याघ्रात्	शस्त्रात्	जलात्वातात्	जलात्	चक्रतः
भय वर्ष	१८	९	१०	३२	२०	२२	२८	३०	३२	३०	३०	२९

त्रिंशांशफल-

त्रिंशांशके च ये खेटा मित्रोच्चसमवस्थिताः ।
सर्वकार्यकृतोत्साही धर्मिष्ठः कृतपूजितः ॥ १ ॥

त्रिंशांश में जो ग्रह मित्र के घर में या उच्च में हों तो सर्व कार्य में उत्साही, धर्मिष्ठ, पूज्य होता है ॥ १ ॥

सत्त्वं रजस्तमो वा त्रिंशांशे यस्य भास्करस्तादृक् ।
बलिनः सदृशी मूर्तिर्बुद्ध्वा वा जातिकुलदेशान् ॥ २ ॥ व. मि.

त्रिंशांश में सत्त्वगुणी, रजोगुणी, तमोगुणी, तेजवान् ग्रह जो अधिक बली हो उसी के अनुसार फल कहना चाहिए। परन्तु उस फल कहने में भी जाति, देश, कुलाचार के अनुसार फल कहना चाहिए ॥ २ ॥

ग्रहों की सत्त्व-रज-तमोगुण संज्ञा-

गुरुरविशशिनः सत्त्वं रजस्सितज्ञौ तमोऽर्कसुतभौमौ ।
एते ह्यात्मसमानाः प्रकृतीस्तेभ्यः प्रयच्छति ॥ ३ ॥ व. मि.

गुरु-सूर्य-चन्द्रमा सत्त्वगुणी, बुध, शुक्र रजोगुणी, शनि-मङ्गल तमोगुणी ये ग्रह अपने आत्मसदृश फल देते हैं ॥ ३ ॥

यः सात्त्विकस्तस्य दयास्थिरत्वं सत्यार्जवं ब्राह्मणदेवभक्तिः ।
रजोऽधिकः काव्यकरः कुलस्त्रीसमग्रवित्तः पुरुषोऽतिशूरः ॥ ४ ॥

जो ग्रह सत्त्वगुणी हो तो दयावान्, स्थिर, सत्य वक्ता, तेजस्वी, ब्राह्मण, देव भक्त हो। रजोगुणी ग्रह बलवान् हो तो कवि, कुलस्त्री ही जिसका सर्व धन तथा शूर-वीर होता है ॥ ४ ॥

तमोऽधिके वञ्चयते परेषां मूर्खोऽलसः क्रोधपरोऽतिनिद्रः।
मिश्रैर्गुणैः सत्त्वरजस्तमोभिर्मिश्रोच्यते सा तु सहस्रभेदाः॥ ५॥

तमोगुणी ग्रह बलवान् हो तो दूसरों को ठगे, मूर्ख, आलसी, क्रोधी, अधिक सोनेवाला तथा सत्त्वादि गुणों के मिल जाने से हजारों भेद फल के हो जाते हैं॥ ५॥

इति प्रकीर्णफल निरूपण।



अथ चतुर्थोऽध्यायः [४]

पंचमहापुरुषलक्षणम्–

ये महापुरुषसंज्ञकाः शुभाः पञ्च पूर्वमुनिभिः प्रकीर्तिताः।
वच्मि तान्सरलनिर्मलोक्तिभिः राजयोगविधिदर्शनेच्छया॥ १॥

जो पाँच महापुरुषों के शुभलक्षण पहले मुनियों ने कहे हैं, उसी राजयोग को दिखाने की इच्छा से सुन्दर वाक्य एवं सरल शुद्ध रीति से कहता हूँ॥ १॥

रुचकादिपंचयोगाः–

स्वगेहतुङ्गाश्रयकेन्द्रसंस्थैरुच्चोपगैर्वाचनिसूनुमुख्यैः।
क्रमेण योगा रुचकाख्यभद्रहंसाख्यमालव्यशशाभिधानाः॥ १॥

जन्म समय में मङ्गलादि पाँचग्रह अपने घर के अथवा उच्च के होकर केन्द्र में हों तो क्रम से रुचक, भद्र, हंस, मालव्य, शश नामक पाँच योग होते हैं॥ १॥

रुचकयोगफलम्–

दीर्घायुः स्वच्छकान्तिर्बहुरुधिरबलः साहसी चाप्तसिद्धि-
श्चारुभ्रूनीलकेशः समकरचरणो मन्त्रविच्चारुकीर्तिः।
रक्तः श्यामोऽतिशूरो रिपुबलमथनः कम्बुकण्ठो महौजाः
क्रूरो भक्तो नराणां द्विजगुरुविनतः क्षामजानूरुजङ्घः॥ २॥

जिसके जन्म समय में रुचक योग हो वह दीर्घायु, स्वच्छ कान्ति, रक्ताधिक्य, बल, साहसी, सिद्धि प्राप्त, सुन्दर भ्रू (भृकुटी), नील केश, हाथ-पैर सुडौल, मंत्रज्ञ, रक्तश्याम वर्ण, बड़ा शूर, शत्रुजित्, शंख समान

कण्ठ, बड़ा पराक्रमी, दुष्ट, ब्राह्मण गुरु के सामने विनयी, जनता में प्रेम, पैर से ऊपर कटि से नीचे का दुवला होता है ॥ २ ॥

खट्वाङ्गपाशवृषकार्मुकचक्रवीणा-
विज्ञाङ्कहस्तचरणः सरलाङ्गुलिः स्यात् ।
मन्त्राभिचारकुशलस्तुलयेत्सहस्रं
मध्यं च तस्य गदितं मुखदैर्घ्यतुल्यम् ॥ ३ ॥

जिसका जन्म रुचक योग में हो तो हाथ-पैर में खट्वांग, पाश, वृष, धनुष, चक्र, वीणा रेखा समझना चाहिए। सरल अँगुली, मंत्री, हजारों में एक, न बड़ा न छोटा (मध्यम कद का), लम्वे मुख वाला हो ॥ ३ ॥

सह्यस्य विन्ध्यस्य तथोज्जयिन्याः प्रभुः शरत्सप्ततिरायुरस्मात् ।
शस्त्राग्निचिह्नो रुचकाभिधाने देवालयान्ते निधनं करोति ॥ ४ ॥

जिसका रुचक योग में जन्म हो वह सह्य, विन्ध्य पर्वत एवं उज्जयिनी देश का राजा, ७० वर्ष की आयु, शस्त्र, अस्त्र का चिह्न तथा अन्त में देवालय में शरीर त्याग हो ॥ ४ ॥

भद्रयोगफलम्-

शार्दूलप्रतिमाननो द्विपगतिः पीनोरुवक्षःस्थलो
रम्या पीनसुवृत्तवाहुयुगलस्तत्तुल्यदेहोच्छ्रयः ।
कामी कोमलसूक्ष्मरोमनिचयैः संरुद्धगण्डस्थलः
प्राज्ञः पङ्कजगर्भपाणिचरणः सत्त्वाधिको योगवित् ॥ १ ॥

जिसका जन्म भद्र नामक योग में हो तो सिंह समान मुख, हाथी की सी चाल, पुष्ट वक्षस्थल, गोलाकार सुडौल दोनों बाहु, दोनों बाहु फैलाने से जितना हो उतना लम्वा, कामी, मुलायम रोग से युक्त कपोल, विद्वान्, कमलसदृश हाथ-पैर, सत्त्वगुण विशेष तथा योग का ज्ञाता हो ॥ १ ॥

शङ्खासिकुञ्जरगदाकुसुमेषुकेतु-
चक्राब्जलाङ्गलसुचिह्नितपाणिपादः ।
यात्रागजेन्द्रमदवारिकृतार्द्रभूमिः
सत्कुंकुमप्रतिमगन्धतनुः सुघोषः ॥ २ ॥

जिसका जन्म भद्रनामक योग में हो उसके हाथ-पैर में शंख, तलवार, हाथी, गदा, फूल, वाण, पताका, चक्र, कमल, हल चिह्न हो तथा यात्रा के समय मतवाले हाथियों के मद से भूमि गीली हो जाये एवं वढ़िया कंकुम के समान शरीर में गन्ध और सुन्दर वाणी हो ॥ २ ॥

सम्भ्रूयुगोऽतिमतिमान्खलु शास्त्रवेत्ता
मानोपभोगसहितोऽपि निगूढगुह्यः ।
सत्कुक्षिधर्मनिरतः सुललाटपट्टी
धीरो भवेदसितकुञ्चितकेशपाशः ॥ ३ ॥

दोनों भृकुटी सुन्दर, बुद्धिमान्, शास्त्रवेत्ता, मान सहित भोगी, बात छिपाने वाला, सुन्दर कुक्षि (कोंख) वाला, धार्मिक, सुन्दर ललाट, धैर्यवान्, काले घुँघराले बालवाला हो ॥ ३ ॥

स्वतन्त्रः सर्वकार्येषु स्वजनं प्रति न क्षमाः ।
भुज्यते विभवस्तस्य नित्यमर्थिजनैः परैः ॥ ४ ॥

सब कार्य में स्वतन्त्र, अपने जनको भी क्षमा न करने वाला तथा उसकी सम्पत्ति को अन्य धन के इच्छुक नित्य भोग करते हैं, अर्थात् उसको अपना धन भोग नहीं होता ॥ ४ ॥

भारं तुलायां तुलयेत्प्रयत्नैः श्रीकान्यकुब्जाधिपतिर्भवेत्सः ।
भद्रोद्भवः पुत्रकलत्रसौख्यो जीवेन्नृपालः शरदामशीतिम् ॥ ५ ॥

भद्र नामक योग में उत्पन्न धन को तराजू पर तौले तथा कान्यकुब्ज देश का राजा, पुत्र, स्त्री से सुख तथा ८० वर्ष की आयु वाला हो ॥ ५ ॥

हंसयोगफलम्–

रक्तास्योन्नतनासिकासुचरणो हंसप्रसन्नेन्द्रियो
गौरः पीनकपालरक्तकरजा हंसस्वनः श्लेष्मवान् ।
शङ्खाब्जाङ्कुशमत्स्यदामयुगकैः खट्वाङ्गमालाघटै-
श्चञ्चत्पादकरस्थलो मधुनिभे नेत्रे सुवृत्तं शिरः ॥ १ ॥

हंसयोग में जिसका जन्म हो उसका मुख अरुण, ऊँची नासिका, सुन्दर पाँव, हंस समान शरीर, गौर वर्ण, पुष्ट कपोल, लाल नख, हंस समान शब्द, श्लेष्म प्रकृति, शंख, कमल, अंकुश, मछली, खट्वाङ्ग, माला, घटादि चिह्न से युत, हाथ-पैर, शहद जैसा आँख का रंग तथा गोलाकार शिर हो ॥ १ ॥

जलाशयप्रीतिरतीव कामी न याति तृप्तिं वनितासु नूनम् ।
उच्चः षडष्टाङ्गुलमानयुक्तो देहस्तथास्यायुरिहास्ति षष्टिः ॥ २ ॥

जल में विहार करने वाला, अत्यन्त कामी, कभी भी स्त्री से तृप्त न होने वाला, अड़सठ अङ्गुल ऊँचा शरीर तथा ६० वर्ष जीता है ॥ २ ॥

वाह्लीकदेशादर-शूरसेन-गन्धर्व-गङ्गा-यमुनान्तरालान् ।
भुक्त्वा वनान्ते निधनं प्रयाति हंसोऽयमुक्ता मुनिभिः प्रमाणैः ॥ ३ ॥

वाह्लीक, शूरसेन, गन्धर्व देश, गङ्गा-यमुना के बीच के देश को भोगने वाला और अन्त में जंगल में प्राण त्याग करता है ऐसा प्राचीन मुनियों ने कहा है ॥ ३ ॥

मालव्ययोगफलम्-

अस्थूलोष्ठोऽप्यविषमवपुर्नैव रक्ताङ्गसन्धि-
र्मध्ये क्षामः शशधररुचिर्हस्तिनासः सुगण्डः ।
सद्दीप्ताक्षः समितिशितरहो जानुदेशाप्तपाणि-
र्मालव्योऽयं विलसति नृपः सप्ततिर्वत्सराणाम् ॥ १ ॥

मालव्य योग में उत्पन्न मनुष्य के पतले होठ, बराबर शरीर, शरीर की सन्धि रक्त रहित, दुर्बल, चन्द्रमा समान कान्ति, हाथी की सूँड़ सदृश नासिका, सुन्दर कपोल, उत्तम तेज दृष्टि, सर्वत्र पराक्रमी, जानु पर्यन्त बाहुओं और ७० वर्ष राज्य सदृश भोग करता है ॥ १ ॥

वक्त्रं त्रयोदशमिताङ्गुलमस्य दीर्घं
तिर्यग्दशाङ्गुलमितं श्रवणान्तरालम् ।
मालव्यसंज्ञनृपतिः ससुतो भुनक्ति
लाटांश्च मालव-ससिन्धु-सुपारियात्रान् ॥ २ ॥

मालव्य योग में उत्पन्न होने वाले की १३ अंगुल मुँह की लम्बाई, दोनों कान के मध्य का स्थान दश अंगुल चौड़ा होता है। अपने लड़के सहित लाट देश, मालवा, सिन्धु और पारियात्र पर्वत तक राज्य करता है ॥ २ ॥

शशकयोगफलम्-

लघुर्द्विजाऽस्योऽद्रिगतः सकोपः शठोऽतिशूरो विजनप्रचारः ।
वनाद्रिदुर्गेषु नदीषु सक्तः प्रियातिथिर्नातिलघुः प्रसिद्धः ॥ १ ॥

शशक योग में उत्पन्न होने वाले का छोटा मुँह, छोटे-छोटे दाँत, पर्वतवासी, क्रोधी, शठ, बड़ा वीर, वन-पर्वत-किला एवं नदियों में भ्रमणशील, मेहमान का प्रिय, मध्यम कद का, प्रसिद्ध होता है ॥ १ ॥

नानासेनानिचयनिरतो दन्तुरश्चापि किञ्चि-
द्धातोर्वादे भवति कुशलश्चञ्चलो लोलनेत्रः ।

स्त्रीसंसक्तः परधनहरो मातृभक्तः सुजंघो
मध्ये क्षामः सुललितमती रन्ध्रवेदी परेषाम् ।। २ ।।

सेनाओं के समूह को इकट्ठा करने में लगा रहना, बड़े दाँत वाला, धातुवाद (मेटल इण्डस्ट्रियल) में कुशल, चञ्चल, चञ्चल नेत्र, स्त्री भक्त, दूसरे का धन हरने वाला, माता का भक्त, सुन्दर जँघा वाला, पतली कमर वाला, सुबुद्धिमान् और दूसरे का दोष ढूँढ़ने में दक्ष होता है ।। २ ।।

पर्यङ्कशङ्खशरशस्त्रमृदङ्गमाला
वीणोपमः खलु करे चरणे च रेखाः ।
वर्षाणि सप्तति सितानि करोति राज्यं
प्राप्तं शशाख्यनृपतिः कथितो मुनीन्द्रैः ।। ३ ।।

शशक योग में उत्पन्न हुए के हाथ-पैर में पलंग, शंख, वाण, शस्त्र, मृदंग, माला, वीणा आदि रेखा हों और ७० वर्ष पर्यन्त राज्य भोग करता है, ऐसा मुनियों ने कहा है ।। ३ ।।

पञ्चमहापुरुषभङ्गयोगाः–

केन्द्रोच्चगा यद्यपि भूसुताद्या मार्तण्डशीतांशुवशा भवन्ति ।
कुर्वन्ति नोर्वीपतिमात्मपाके यच्छन्ति ते केवलसत्फलानि ।। १ ।।

यद्यपि भौमादि पाँचों ग्रह अपने केन्द्र और उच्च में बैठे हों परन्तु यदि सूर्य-चन्द्रमा के वश हों तो पाँचों ग्रह अपनी दशा में राजा न बना कर केवल शुभ फल देते हैं, अतः सूर्य-चन्द्र देखकर राजयोग या पाँच महापुरुष का योग विचार करें ।। १ ।।

अनफा, सुनफा, दुरुधरा, केमद्रुम योगाः–

रविवर्जं द्वादशगैरनफा चन्द्रात् द्वितीयगैः सुनफा ।
उभयस्थितैर्दुरुधरा केमद्रुमसंज्ञकोऽतोऽन्यः ।। १ ।।

रवि को छोड़कर दूसरा कोई भी ग्रह यदि चन्द्रमा से १२ वें स्थान में हो तो अनफा, द्वितीय स्थान में हो तो सुनफा और दोनों (१२, २) में हो तो दुरुधरा नाम का (शुभप्रद) योग होता है। यदि १२, २ इनमें सूर्य को छोड़कर दूसरा कोई भी ग्रह नहीं हो अर्थात् दोनों स्थल खाली हों तो केमद्रुम नामक (अशुभ) योग होता है ।। १ ।।

भौमादीनां फलं यस्स्याज्ज्ञात्वा त्वविकलं बुधः ।
प्राज्ञाय प्रवदेत्सम्यक् सुनफादिकृतं फलम् ।। २ ।।

आगे के श्लोकों में भौमादि ग्रहों के गुण-स्वरूप कहे गये हैं, उन ग्रहों से सुनफा योग होता हो तो जातक तत्तद् ग्रह स्वरूपानुसार गुणों से युक्त समझना चाहिए ॥ २ ॥

विक्रमवित्तप्रायो निष्ठुरवचनश्च भूपतिश्चन्द्रे ।
हिंस्रो नित्यविरोधी सुनफायां भौमसंयोगे ॥ ३ ॥

चन्द्रमा में यदि मङ्गल से सुनफा योग हो तो पराक्रमी, धनवान्, कड़क मिजाज, भूपति (राजा) के सदृश, हिंसक और अन्य जनों से विरोध करने वाला होता है ॥ ३ ॥

श्रुतिशास्त्रगेयकुशलो धर्मरतः काव्यकृन्मनस्वी च ।
सर्वहितो रुचिरतनुः सुनफायां सोमजो भवति ॥ ४ ॥

बुध से सुनफा योग हो तो वेद, शास्त्र और सङ्गीत में कुशल, धर्मात्मा, काव्य करनेवाला, मनस्वी, सबका प्रिय, सुन्दर शरीर वाला होता है ॥४॥

नानाविद्याचार्यं ख्यातिं नृपतिं नृपप्रियं चापि ।
सकुटुम्बधनसमृद्धं सुनफायां सुरगुरुः कुरुते ॥ ५ ॥

बृहस्पति से सुनफा योग हो तो अनेक विद्याओं का आचार्य, विख्यात, राजा, वृष (धर्म) का स्नेही, परिवार सहित धन से सम्पन्न होता है ॥५॥

स्त्रीक्षेत्रभूमिगृहपश्चतुष्पदाढ्यः सुविक्रमो भवति ।
नृपसत्कृतः सुवेषो दक्षः शुक्रेण सुनफायाम् ॥ ६ ॥

शुक्र से यदि सुनफा योग हो तो स्त्री, खेती, भूमि, गृह, पशुओं को रखने वाला, पराक्रमी, राजमान्य, सुन्दर वेष एवं चतुर होता है ॥ ६ ॥

निपुणमतिर्ग्रामपुरैर्नित्यं सम्पूजितो धनसमृद्धः ।
सुनफायां रवितनये क्रियासु गुप्तो भवेन्मलिनः ॥ ७ ॥

यदि शनि से सुनफा योग हो तो बुद्धिमान्, शहर-देहात में पूज्य, धनी, कार्य को गुप्त रखने वाला, परन्तु मलिन मन होता है ॥ ७ ॥

अनफायोगफलम्—

चौरस्वामी दृप्तः स्ववशो मानी रणोत्कण्ठः ।
क्रोधात्सम्पत्साध्यः कुजेऽनफायां प्रगल्भश्च ॥ १ ॥

मङ्गल से यदि अनफायोग हो तो चोरों का सरदार, तेजस्वी, अपने को सीमित रखने वाला एवं मानी, लड़ाई का सदा इच्छुक, क्रोध द्वारा शत्रु को साध्य करने वाला, परन्तु ढीठ होता है ॥ १ ॥

गन्धर्वो लेखपटुः कविः प्रवक्ता नृपाप्तसत्कारः ।
रुचिरः सुभगश्च बुधे प्रसिद्धकर्माऽनफायां स्यात् ॥ २ ॥

बुध से अनफा हो तो गन्धर्व समान गायक, चतुर लेखक, कवि, वक्ता, राजमान्य, सुन्दर, सुभग और प्रसिद्ध कार्यकर्ता हो ॥ २ ॥

गम्भीरः सन्मेधासंयुक्तो बुद्धिमान्नृपाप्तयशाः ।
अनफायां त्रिदशगुरौ सञ्जातः सत्कविर्भवति ॥ ३ ॥

गुरु से अनफा योग हो तो गम्भीर, मेधावी, बुद्धिमान्, राजकीय सम्मान प्राप्त और प्रसिद्ध कवि होता है ॥ ३ ॥

युवतीनामतिसुभगः प्रणयी क्षितिपस्य गोपतिः कान्तः ।
कनकसमृद्धश्च पुमाननफायां भार्गवे भवति ॥४॥

शुक्र से अनफा योग हो तो स्त्रियों में मान्य, राजस्नेही, पशु पालक, सुन्दर, सुवर्ण से परिपूर्ण रहता है ॥ ४ ॥

विस्तीर्णभुजः सुभगो गृहीतवाक्यश्चतुष्पदसमृद्धः ।
दुर्वनितागणभोक्ता गुणसहितः पुत्रवान् रविजे ॥ ५ ॥

यदि शनि से अनफा योग हो तो लम्बी बाहु, भाग्यवान्, वाक्यग्रही, पशुओं से युत, दुष्ट स्त्रियों का भोक्ता, गुणी, पुत्रवान् होता है ॥ ५ ॥

दुरुधरायोगफलम्–

अनृतवचा बहुवित्तो निपुणोऽतिशठो गुणाधिको लुब्धः ।
वृद्धस्त्रीषु प्रसक्तः कुलाग्रणीः शशिनि भौमबुधमध्ये ॥१॥

मङ्गल-बुध से दुरुधरा योग हो तो असत्यवादी, पूर्ण धनी, चतुर, शठ, गुणवान्, लोभी, वृद्ध स्त्री में आसक्त, परन्तु कुल में श्रेष्ठ होता है ॥ १ ॥

ख्यातः कर्मसु कितवो बहुधनवैरस्त्वमर्षणो धृष्टः ।
आरक्षः कुजगुर्वोर्मध्यगते शशिनि सङ्ग्राही ॥ २ ॥

मङ्गल-गुरु से दुरुधरा योग हो तो अपने कार्य से विख्यात, कपटी, धन के कारण शत्रुता, क्रोधी, ढीठ, रक्षक और संग्रही होता है ॥ २ ॥

उत्तमरामा सुभगो विवादशीलोऽस्त्रविद्भवेच्छूरः ।
व्यायामी रणशीलः सीतारयोर्मध्यगे चन्द्रे ॥ ३ ॥

मङ्गल-शुक्र से दुरुधरा योग हो तो सुन्दरी स्त्री वाला, सुन्दर, विवादी, अस्त्रज्ञ, शूर, कसरत करनेवाला, लड़ाई में उत्साही होता है ॥ ३ ॥

उत्तमसुरतो बहुधनसञ्चयकारी व्यसनसक्तश्च ।
क्रोधी पिशुनो रिपुमान् यमारयोः स्याद् दुरुधरायाम् ॥ ४ ॥

मङ्गल-शनि से दुरुधरा योग हो तो कामी, धन इकट्ठा करनेवाला, व्यसनी, क्रोधी, चुगुलखोर, शत्रुवाला होता है ॥ ४ ॥

धर्मरतः शास्त्रज्ञो वाचि पटुः सर्ववर्द्धनसमृद्धः ।
त्यागयुतो विख्यातो गुरुबुधमध्यस्थिते चन्द्रे ॥ ५ ॥

बुध-गुरु से दुरुधरा योग हो तो वह मनुष्य धार्मिक, शास्त्रज्ञ, वक्ता, सब वस्तु से सुखी, त्यागी और विख्यात होगा ॥ ५ ॥

देशे देशे गच्छति वित्तवशे नास्ति विद्यया सहितः ।
चन्द्रेऽन्येषां पूज्यः स्वजनविरोधी ज्ञशुक्रयोर्मध्ये ॥ ६ ॥

बुध-शुक्र से दुरुधरा योग हो तो देश-विदेश घूमने वाला, निर्लोभी, विद्वान्, दूसरों से पूज्य परन्तु स्वजन विरोधी होता है ॥ ६ ॥

प्रियवाक् सुभगः कान्तः प्रवृत्तगो यदि सुकृतवान्नृपतिः ।
सौख्यं शूरो मन्त्री ज्ञमन्दयोर्मध्यगे च हिमकिरणे ॥ ७ ॥

यदि बुध-शनि से दुरुधरा योग हो तो प्रियवक्ता, सुन्दर, तेजस्वी, प्रवृत्तिमार्गगामी, पुण्यवान्, राजा, सुखी, शूर अथवा वीर राजमन्त्री हो ॥ ७ ॥

धृतिमेधः स्थैर्ययुतो नीतिज्ञः कनकरत्नपरिपूर्णः ।
ख्यातो नृपकृत्यकरो गुरुसितयोर्दुरुधरायोगे ॥ ८ ॥

गुरु और शुक्र से दुरुधरा योग हो तो वह जातक धैर्यवान्, मेधावी, स्थिर स्वभाव, नीति जानने वाला, सुवर्ण-रत्नादि से पूर्ण, देश में विख्यात, राजा का कर्मचारी होता है ॥ ८ ॥

सुखनयविज्ञानयुतः प्रियवाग् विद्वान् धुरन्धरो मर्त्यः ।
स-सुतो धनी सुरूपश्चन्द्रो गुरुमन्दयोर्मध्ये ॥ ९ ॥

चन्द्रमा यदि गुरु और शनि के बीच में हो तो जातक सुखी, नीतिज्ञ, विज्ञानी, प्रिय वक्ता, विद्वान्, कार्यों को करने में समर्थ, पुत्रवान्, धनवान् और रूपवान् होता है ॥ ९ ॥

वृद्धापतिं कुलाढ्यं निपुणं स्त्रीवल्लभं धनसमृद्धम् ।
नृपसत्कृतं बहुज्ञं कुरुते शनिशुक्रयोश्चन्द्रः ॥१०॥

चन्द्रमा यदि शुक्र और शनि के बीच में हो तो वह मनुष्य वृद्ध स्त्री (वयस में अपने से बड़ी) का पति, कुलीन, सब कार्यों में निपुण, स्त्रियों

का प्रिय, अति धनवान्, राजा से सत्कार पानेवाला और बहुत विषयों का ज्ञाता होता है ॥ १० ॥

केमद्रुमयोगफलम्–

केमद्रुमे भवति पुत्रकलत्रहीनो देशान्तरे व्रजति दुःखसमाभितप्तः ।
ज्ञातिप्रमोदनिरतो मुखरःकुचैलो नीचः सदा भवति भीतियुतश्चिरायुः ॥१॥

जिसके जन्म समय में केमद्रुम योग हो वह पुत्र और स्त्री के सुख से हीन, देशान्तर में रहने वाला, दुःख से चिन्तित, गोतियों (परिजनों) को सुख देने में तत्पर, व्यर्थ बात करने वाला, मलिन वस्त्रधारी, नीच स्वभाव, डरपोक और दीर्घजीवी होता है ॥ १ ॥

बृहज्जातकोक्तं दुरुधराकेमद्रुमयोः फलम्–

उत्पन्नभोगसुखभुग् धनवाहनाढ्य-
स्त्यागान्वितो दुरुधराप्रभवः सुभृत्यः ।
केमद्रुमे मलिनदुःखितनीचनिःस्वः
प्रेष्यः खलश्च नृपतेरपि वंशजातः ॥ २ ॥

दुरुधरा योग में जन्म लेने वाला प्राप्त सुख को भोगने वाला, धन-सम्पत्ति और सवारी से युक्त, दाता और सुन्दर नौकरों से युक्त होता है। तथा केमद्रुम में उत्पन्न मनुष्य मलिन, दुःखी, नीच, निधन, दूसरों का दास और दुष्ट होता है चाहे वह राजवंश का ही क्यों न हो ॥ २ ॥

पुनः–बृहज्जातकोक्तं सुनफादिलक्षणं केमद्रुमभङ्गश्च–

हित्वाऽर्कं सुनफाऽनफा दुरुधरा स्वान्त्योभयस्थैर्ग्रहैः
शीतांशोः कथितोऽन्यथा तु बहुभिः केमद्रुमोऽन्यैस्त्वसौ ।
केन्द्रे शीतकरेऽथवा ग्रहयुते केमद्रुमो नेष्यते
केचित्केन्द्रनवांशकेष्विति वदन्त्युक्तिः प्रसिद्धा न ते ॥३॥

सूर्य को छोड़कर कोई अन्य ग्रह चन्द्रमा से द्वितीय में हो तो सुनफा, द्वादश में हो तो अनफा और दोनों स्थानमें ग्रह हो तो दुरुधरा नामक योग होता है। यदि चन्द्रमा से द्वितीय और द्वादश में कोई ग्रह नहीं हो तो केमद्रुम योग कहलाता है। यदि चन्द्रमा केन्द्र में हो या ग्रह से युक्त हो तो केमद्रुम योग का भङ्ग हो जाता है। कोई आचार्य कहते हैं कि–यदि चन्द्रमा के आगे-पीछे केन्द्र और नवांश में भी इस प्रकार ग्रहस्थिति हो तब भी सुनफा, अनफा, दुरुधरा और केमद्रुम होते हैं। परञ्च उनका यह कथन बहुसम्मत नहीं है ॥ ३ ॥

पुनः केमद्रुमभङ्गः–

कुमुदगहनबन्धुर्वीक्ष्यमाणः समस्तै-
र्गगनगृहनिवासैर्दीर्घजीवी मनुष्यः ।
फलमशुभसमुत्थं नैव केमद्रुमोक्तं
स भवति नरनाथः सार्वभौमो जितारिः ॥ ४ ॥

यदि चन्द्रमा पर सब ग्रहों (उपलक्षण से अधिक ग्रहों) की दृष्टि हो तो वह मनुष्य दीर्घायु होता है । तथा केमद्रुम आदि अशुभ योगों के फल नहीं होते हैं और वह शत्रुओं को जीतने वाला सार्वभौम राजा होता है ॥ ४ ॥

अन्य केमद्रुमभङ्गयोगः–

पूर्णः शशी यदि भवेच्छुभसंस्थितो वा
सौम्यामरेज्यभृगुनन्दनसंयुतश्च ।
पुत्रार्थसौख्यजनकः कथितो मुनीन्द्रैः
केमद्रुमे भवति मङ्गलसुप्रसिद्धिः ॥ ५ ॥

केमद्रुम योग होने पर भी यदि चन्द्रमा शुभग्रह के राश्यादि में हो तथा बुध, बृहस्पति या शुक्र से युक्त हो तो वह मनुष्य पुत्र-धन और सुखों से युक्त होता है ॥ ५ ॥

वोशि-वेशि-उभयचरीयोगाश्च–

सूर्याद्व्ययगे वोशिर्द्वितयगैश्चन्द्रवर्जितैर्वेशिः ।
उभयस्थितैर्ग्रहगणैरुभयचरीनामतः प्रोक्तः ॥ १ ॥

यदि चन्द्रमा को छोड़कर अन्य कोई भी ग्रह सूर्य से १२ में हो तो वोशि नामक, २ में हो तो वेशि और दोनों (१२, २) में हो तो उभयचरी नामक योग होता है ॥ १ ॥

वोशियोगफलम्–

मन्ददृशं स्थिरवचनं परिभूरिश्रमं नतोर्द्धतनुम् ।
कथयति गणिताधिपतिर्वोशिसमुत्थं त्वधोदृष्टिम् ॥ २ ॥

वोशि योग में उत्पन्न स्वल्प दृष्टि, स्थिर वाक्य वाला, बड़ा परिश्रमी, झुका शरीर और गणित शास्त्रका वेत्ता, नीचे दृष्टि वाला होता है ॥ २ ॥

परतर्कितो दरिद्रो मृदुर्विनीतो बुधो विगतलज्जः ।
मातृघ्नः क्षितिपुत्रः परोपकारी नरो वोशी ॥ ३ ॥

बुध से वोशि योग हो तो दूसरों की नजर में खटकने वाला, दरिद्र,

कोमल, विनयी, माता को मारने वाला तथा मंगल से वोशि योग हो तो परोपकारी होता है ॥ ३ ॥

वहु सञ्चयी दिनसदृग् वोशौ पुरुषो भवेद् गुरोर्जातः।
भीरुः कामविलग्नो लघुचेष्टो भृगुसुते पराधीनः ॥ ४ ॥

गुरु से वोशि योग हो तो वहुत बड़ा संचयी, अनेक वस्तु संचित करने वाला, दिन समान भासमान्, शुक्रसे वोशि योग हो तो डरपोक, कामी, आलसी, दूसरे के वश होता है ॥ ४ ॥

परदाररतस्तन्द्री वृद्धाकारो घृणी भवेन्मनुजः।
जातः पुमानिह स्याद् वोशौ योगे शनैश्चरे संयुक्ते ॥ ५ ॥

शनि से वोशि योग हो तो परस्त्रीगामी, देखने में बूढ़ा, घृणा करने वाला होता है ॥ ५ ॥

वेशियोगफलम्–

उच्चेष्टवचाः स्मृतिमान् भोगयुतो निरीक्षते तिर्यक्।
पूर्वशरीरे पृथुलस्तुच्छगतिः सात्त्विको वेशौ ॥ १ ॥

वेशि योग में उत्पन्न होने वाला, हितवाक्य कहने वाला, किसी वस्तु या वाक्य को न भूलने वाला, भोगी, टेढ़ा देखने वाला, शरीर का पहला भाग मोटा, मन्दगति, सात्त्विक होता है ॥ १ ॥

प्रियभाषी रुचिरतनुर्वेशौ स्याद्वा बुधे पराज्ञकृत् पुरुषः।
संग्रामे विख्यातो भूमिसुते सूतगुणवानपि ख्यातः ॥ २ ॥

बुध से वेशि योग हो तो प्रियभाषी, सुन्दर शरीर, दूसरे को मूर्ख बनाने वाला, मंगल से वेशियोग हो तो लड़ाई में प्रधान, यान-सवारी आदि के उपकरण चालन में निपुण हो ॥ २ ॥

धृतिसत्यबुद्धियुक्तो भवति गुरुर्वेशिगो रणे शूरः।
ख्यातो गुणवानार्यः शूरो वै भार्गवे पुरुषः ॥ ३ ॥

गुरु से वेशियोग हो तो धैर्यवान्, सत्यवादी, बुद्धिमान्, रण में शूर-वीर हो। शुक्र से वेशियोग हो तो गुणवान्, विख्यात, सभ्य एवं शूर हो ॥ ३ ॥

वणिकलास्वभावः स्यात् परद्रव्यापहारकः।
गुरुद्वेषी भवेन्मर्त्यो वेशिस्थाने शनैश्चरे ॥ ४ ॥

शनि से वेशियोग हो तो व्यापार-कलामें बुद्धि रखे, दूसरे का धन हरण करने वाला, गुरुद्वेषी (अपने से आदरणीय व्यक्ति से द्वेष करने वाला) होता है ॥ ४ ॥

उभयचरीयोगफलम्–

सर्वसहःसुसमदृक्समकायः सुस्थितो निपुणसत्त्वः ।
नात्युच्चः परिपूर्णग्रीवादेशो भवेदुभयचर्याम् ॥ १ ॥

उभयचरीयोग में जन्म लेने वाला मनुष्य सहनशील (सबका अपराध क्षमा करने वाला), सम दृष्टि, स्थिर, पूर्ण बली, बहुत ऊँचा नहीं, पुष्ट ग्रीवावाला होता है ॥ १ ॥

सुभगो बहुभृत्यजनो बन्धूनामाश्रयो नृपतितुल्यः ।
नित्योत्साही हृष्टो भुनक्ति भोगानुभयचर्याम् ॥ २ ॥

सुन्दर रूपवान्, बहुत नौकर वाला, बन्धुजनों का आश्रय, राजा के तुल्य, सदा उत्साह रखने वाला, प्रसन्न और सब सुखों का भोग करने वाला होता है ॥ २ ॥

सिंहासनयोगः–

षष्ठाष्टमे द्वादशे च द्वितीये च यदा ग्रहाः ।
सिंहासनाख्ययोगोऽयं राजसिंहासनं विशेत् ॥ १ ॥

लग्न से छठे, ८वें, १२वें, २रे में सब ग्रह हों तो सिंहासनयोग होता है, इस योग में उत्पन्न जातक राजसिंहासन पर बैठता है ॥ १ ॥

ध्वजयोगः–

अष्टमस्था यदा क्रूराः सौम्या लग्ने स्थिता ग्रहाः ।
ध्वजयोगोऽत्र जातस्तु स पुमान्नायको भवेत् ॥ २ ॥

आठवें स्थान में सब क्रूरग्रह हों तथा लग्न में सब सौम्यग्रह हों तो ध्वज योग होता है, इसमें उत्पन्न मनुष्य नायक होता है ॥ २ ॥

हंसयोगः–

त्रिकोणे सप्तमे लग्ने भवन्ति च यदा ग्रहाः ।
हंसयोगं विजानीयात्स्ववंशस्यैव पालकः ॥ १ ॥

लग्न, पंचम, नवम, सप्तम में सब ग्रह हों तो हंसयोग होता है। इसमें जन्म लेने वाला अपने ही कुल का पालक होता है ॥ १ ॥

कारिकायोगः–

एकादशे यदा सर्वे ग्रहाः स्युर्दशमेऽपि च ।
लग्नस्य सम्मुखे वाऽपि कारिका परिकीर्तिता ॥ १ ॥

ग्यारहवें अथवा दशम में अथवा लग्न के सम्मुख सब ग्रह हों तो कारिका योग कहते हैं ॥ १ ॥

उत्पन्नः कारिकायोगे नीचोऽपि नृपतिर्भवेत् ।
राजवंशसमुत्पन्नो राजा तत्र न संशयः ॥ २ ॥

कारिका योग में उत्पन्न यदि नीच भी हो तो राजा होता है और यदि राजवंश में जन्म हो तो कोई सन्देह ही नहीं अर्थात् वह अवश्य राजा होता है ॥ २ ॥

एकावलीयोगः–

लग्नतश्चान्यतो वाऽपि क्रमेण पतिता ग्रहाः ।
एकावली समाख्याता महाराजो भवेन्नरः ॥ ३ ॥

लग्न से या किसी भी घर से क्रमसे सब ग्रह पड़े हों तो एकावली योग होता है, इसमें उत्पन्न मनुष्य महाराजा होता है ॥ ३ ॥

चतुःसागरयोगः–

चतुर्षु केन्द्रसंज्ञेषु सौम्यपापग्रहाः स्थिताः ।
चतुःसागरयोगोऽयं राज्यदो धनदो भवेत् ॥ १ ॥

केन्द्र में (अर्थात् १।४।७।१० में) सब ग्रह पड़ जायें तो चतुःसागर योग होता है, इससे धन और राज्य प्राप्त होता है ॥ १ ॥

कर्कटे मकरे मेषे तुलायाञ्च ग्रहाः स्थिताः ।
चतुःसागरयोगः स्यात्सर्वारिष्टनिषूदनः ॥ २ ॥

कर्क, मकर, मेष, तुला इन चारों राशियों में सब ग्रह हों तो चतुःसागर योग होता है, यह योग सब अशुभों का नाश करने वाला होता है ॥ २ ॥

चतुःसिन्धौ नरो जातो बहुरत्नसमन्वितः ।
गजवाजिधनैः पूर्णो धरणीशो भवेन्नरः ॥ ३ ॥

चतुःसागर में जन्म लेने वाला विविध प्रकार के रत्न से युत, हाथी, घोड़ा, धनादि से परिपूर्ण राजा होता है ॥ ३ ॥

अमरयोगः–

चतुर्ष्वपि च केन्द्रेषु क्रूराः सौम्या यदा ग्रहाः ।
क्रूरैः पृथ्वीपतिर्विद्यात्सौम्यैर्लक्ष्मीपतिर्भवेत् ॥ १ ॥

लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम में सब शुभग्रह वा पापग्रह हों तो अमर योग होता है। क्रूरग्रहसे राजा और सौम्यग्रह से लक्ष्मीवान् होता है ॥ १ ॥

अजमृगपतिलग्ने भानुकेन्द्रे त्रिकोणे
व्ययनिधनसुसंस्थे चन्द्रकर्के वृषे वा ।
यदि तदुभयमेनं पश्यतौ जीवशुक्रौ
तदमरवरयोगे सर्वरिष्टस्य नाशः ॥ २ ॥

मेष, सिंह तथा जन्मलग्न इन तीनों में-से किसी में स्थित सूर्य यदि केन्द्र (१।४।७।१०) या त्रिकोण (९।५) में पड़े तथा कर्क या वृष का चन्द्रमा बारहवें, आठवें में हो और दोनों को गुरु, शुक्र देखता हो तो अमर योग कहलाता है, यह योग सब अशुभों का नाश करनेवाला होता है ॥ २ ॥

चापयोगः–

शुक्रे घटे कुजे मेषे स्वस्थो देवपुरोहितः ।
तदा राजा भवेन्नूनं चापः सौख्यानिदिङ्मुखः ॥ १ ॥

कुम्भ में शुक्र, मेष में मङ्गल और गुरु अपनी राशिका हो तो चापयोग होता है, इसमें उत्पन्न मनुष्य राजा होता है ॥ १ ॥

दण्डयोगः–

कर्कटे मिथुने मीने कन्यायां चापगे ग्रहे ।
दण्डयोगः समाख्यातो राज्ञामास्पदकारकः ॥ १ ॥

कर्क, मीन, मिथुन, कन्या, धनु इन राशियों में सब ग्रह हों तो दण्ड योग होता है, इस योग में उत्पन्न हुए को राज्यपद प्राप्त होता है ॥ १ ॥

दण्डे च जातः पृथुपुण्यभागी एकातपत्री भवति क्षितीशः ।
तेजोमयः सिंहपराक्रमश्च संसेव्यमानो गुरुपात्रवृन्दैः ॥ २ ॥

दण्डयोग में उत्पन्न बहुत पुण्य का भागी, एक छत्र राज्य करने वाला पृथ्वीपति, तेजस्वी, सिंह समान पराक्रमी, बड़े-बड़े धनी-मानियों से पूज्य होता है ॥ २ ॥

पुनर्हंसयोगः–

मेषे घटे चापतुलामृगालौ सर्वग्रहे हंस इति प्रसिद्धः ।
सर्वैश्च पूर्णो नृपतेश्च पूज्यो हंसोद्भवो राजसमो मनुष्यः ॥ १ ॥

मेष, कुम्भ, धनु, तुला, वृश्चिक इन स्थानों में ही सब ग्रह हों तो हंस नामक योग होता है, इसमें उत्पन्न सब वस्तु से परिपूर्ण, राजमान्य और राजा के बराबर होता है ॥ १ ॥

वापीयोगः फलञ्च–

धनलग्नव्ययांस्त्यक्त्वा शेषस्थानेषु संस्थिताः ।
वापीयोगो भवेदेवमुदितः पूर्वसूरिभिः ॥ १ ॥

द्वितीयभाव, लग्न तथा बारहवें स्थान को छोड़कर यदि सब ग्रह शेष स्थान में हों तो वापी योग कहलाता है ॥ १ ॥

दीर्घायुः स्यादात्मवंशप्रधानः सौख्योपेतोऽत्यन्तधीरो नरो हि ।
चञ्चद्वाक्यस्तन्मनाः पुण्यवापी वापीयोगे यः प्रसूतः प्रतापी ॥२॥

वापीयोग में उत्पन्न होने वाला मनुष्य दीर्घायु, अपने कुल में श्रेष्ठ, सुख सम्पन्न, अतिधैर्यवान्, बोलने में चतुर, पुण्यवान्, प्रतापी होता है ॥२॥

यूपशरशक्तिदण्डयोगाः–

लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमध्याच्चतुर्गृहस्थैर्गगनेचरेन्द्रैः ।
क्रमेण यूपश्च शरश्च शक्तिर्दण्डः प्रदिष्टः खलु जातकज्ञैः ॥ १ ॥

लग्न से आरम्भ कर ४ स्थानों में सब (रवि से शनि तक) ग्रह हों तो यूप नामक योग, चतुर्थ से लेकर सप्तम तक ४ गृह में सातों ग्रह हों तो शर, सप्तम से दशम भाव तक ४ स्थान में सब ग्रह हों तो शक्ति और दशम से लग्न तक ४ स्थान में सब ग्रह हों तो दण्डयोग होता है ॥ १ ॥

यूपयोगफलम्–

धीरोदारो यज्ञकर्मानुसारो नानाविद्यासद्विचारो नरोच्चः ।
यस्योत्पत्तौ वर्तते यूपयोगे योगो लक्ष्म्या जायते तस्य नित्यम् ॥२॥

जिसके जन्म समय में यूप योग होता है वह मनुष्य धीर, उदार, यज्ञादि सत्कर्म करने वाला, अनेक विद्या का ज्ञाता, विवेकी, मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है तथा सर्वदा उसके घर में लक्ष्मी का वास रहता है ॥ २ ॥

शरयोगफलम्–

हिंस्रोऽत्यन्तं तुल्यदुःखैः प्रतप्तः
प्राप्तानन्दः काननान्ते शरज्ञः ।
मर्त्यो योगे यः शरे जातजन्मा
स्त्री रम्भाख्या तस्य न क्वापि सौख्यम् ॥ ३ ॥

शरयोग में जिसका जन्म होता है वह हिंसा करने वाला, दुःख से परितप्त, वन में जाकर आनन्द पाने वाला, बाण चलाने में निपुण, उसकी स्त्री रम्भा अप्सरा के समान सुन्दरी हो तथापि वह सुखी नहीं होता ॥ ३ ॥

शक्तियोगफलम्-

नीचैरुच्चैः प्रीतिकृत्सालसश्च
सौख्यैरर्थैर्वर्जितो दुर्बलश्च ।
वादे युद्धे तस्य बुद्धिर्विशाला
शालासौख्यस्याऽल्पता शक्तियोगे ॥ ४ ॥

जन्म समय में शक्ति योग हो तो वह मनुष्य छोटे और बड़े सबसे प्रेम करनेवाला, आलसी, धन और सुख से वर्जित, दुर्बल देह किन्तु विवाद और युद्ध में बहुत चतुर तथा उसे घर का सुख अति अल्प होता है ॥ ४ ॥

दण्डयोगफलम्-

दीनो हीनोन्मत्तसंयातसौख्यो द्वेष्योद्वेगी गोत्रजैर्जातवैरः ।
कान्तापुत्रैरर्थमित्रैर्विहीनो हीनो बुद्ध्या दण्डयोगाप्तजन्मा ॥ ५ ॥

जन्म समय में दण्ड योग हो तो दरिद्र, नीच, सुखहीन, द्वेषी, उद्वेगी, कुटुम्बियों का वैरी, स्त्री-पुत्र-धन से वर्जित और बुद्धिहीन होता है ॥ ५ ॥

नौका-कूट-छत्र-चामर-अर्धचन्द्रयोगाः-

लग्नाच्चतुर्थात् स्मरतः खमध्यात्ससर्क्षगैर्नौरथ कूटसंज्ञः ।
छत्रं धनुश्चान्यगृहप्रवृत्तैर्नौपूर्वको योग इहार्द्धचन्द्रः ॥ ६ ॥

लग्न से आरम्भ कर क्रम से सप्तम तक सातों घर में सातों ग्रह हों तो नौका, चतुर्थ से आरम्भ कर ७ राशि में सातों ग्रह हों तो कूट, सप्तम से लेकर ७ स्थान में सब ग्रह हों तो छत्र और दशम से लेकर चतुर्थ तक ७ स्थान में सब ग्रह हों तो चाप (धनुष) योग होता है। एवं केन्द्र से भिन्न स्थान (२।५।८।११ आदि) से आरम्भ कर ७ स्थान में ग्रह हों तो अर्धचन्द्र योग होता है ॥ ६ ॥

नौकायोगफलम्-

ख्यातो लुब्धो भोगसौख्यैर्विहीनः स्यान्नौयोगे लब्धजन्मा मनुष्यः ।
क्लेशी शश्वच्चञ्चलस्वान्तवृत्तिस्तोयोद्भूतेनार्थधान्येन तस्य ॥ ७ ॥

नौका योग में जन्म हो तो विख्यात, लोभी, भोग और सुख से वर्जित सर्वदा क्लेशभागी, चञ्चल हृदय, परन्तु जल सम्बन्धी धन-धान्य से युक्त होता है ॥ ७ ॥

कूटयोगफलम्-

दुर्गारण्यावासशीलश्च मल्लो भिल्लप्रीतिर्निर्धनो निन्द्यकर्मा ।
धर्माऽधर्मज्ञानहीनश्च दुष्टः कूटप्राप्तोत्पत्तिरेवं मनुष्यः ॥ ८ ॥

कूटयोग में जन्म हो तो वह मनुष्य दुर्गम वन में विहार करने वाला, योद्धा, मित्रों से प्रेम करने वाला, निर्धन, निन्द्य कार्य करने वाला, धर्म-अधर्म के ज्ञान से हीन और दुष्ट होता है ॥ ८ ॥

छत्रयोगफलम्–

प्राज्ञो राज्ञां कार्यकर्ता दयालुः पूर्वे पश्चात्सर्वसौख्यैरुपेतः।
यस्योत्पत्तौ छत्रयोगोपलब्धिर्लब्धिः स्याच्चेच्छत्रसच्चामराद्यैः ॥ ९ ॥

छत्र योग में जन्म लेने वाला पण्डित, राजकार्याधिकारी, दयावान् आदि और अन्त समय में सब सुखों से युक्त, चामर-छत्र आदि राज चिह्न से युक्त होता है ॥ ९ ॥

चापयोगफलम्–

आद्ये भागे चान्तिमे जीवितस्य सौख्योपेतः काननाद्रिप्रचारः।
योगे जातः कार्मुके सोऽतिदुष्टो गर्वोन्मत्तोत्पत्तिकृत्कार्मुकास्त्रः ॥१०॥

चाप योग में जन्म होने से पूर्व और अन्तिम वयस् में सुखी, [वन-पर्वत में विहार करने वाला, दुष्ट, गौरवी और धनुष बनाने वाला होता है ॥१०॥

अर्धचन्द्रयोगफलम्–

भूमिपालप्राप्तवश्यप्रतिष्ठः श्रेष्ठो युक्तो भूषणार्थाम्बराद्यैः।
चेदुत्पत्तौ यस्य योगोऽर्द्धचन्द्रश्चन्द्रः स स्यादुत्सवार्थं जनानाम् ॥११॥

जिसके जन्म समय में अर्धचन्द्र योग हो वह मनुष्य राजा से आदर पाने वाला, श्रेष्ठ पुरुष, भूषण, धन, वस्त्रादि से युक्त और लोगों को प्रसन्न करने वाला होता है ॥ ११ ॥

चक्रसमुद्रयोगयोर्लक्षणम्–

तनोर्द्धनाच्चैकगृहान्तरेण स्युः स्थानषट्के गगनेचरेन्द्राः।
चक्राभिधानश्च समुद्रनामा योगावितीहाकृतिजाश्च विंशत् ॥१२॥

लग्न से आरम्भ करके एक-एक स्थान के अन्तर से (अर्थात् २,४,६ आदि) सब स्थान में सब ग्रह हों तो समुद्र योग कहलाता है, ये २० योग आकृति योग कहलाते हैं ॥ १२ ॥

द्रष्टव्य–ग्रहों की स्थितिवश जैसी आकृति होती है वैसा ही नाम रखने के कारण ये आकृति योग कहलाते हैं। इन योगों में राहु और केतु का ग्रहण नहीं है ॥ १२ ॥

चक्रयोगफलम्–

श्रीमद्रूपोऽत्यन्तजातप्रतापो भूपो भूपोपायनैरर्चितः स्यात्।
योगे जातः पूरुषो यस्तु चक्रे पृथ्व्याः शालिनी तस्य कीर्तिः ॥१३॥

चक्र योग में जन्म लेनेवाला धनवान्, सुन्दर, प्रतापी, स्वयं राजा अथवा राजा से आदर पानेवाला तथा समस्त पृथिवी में विख्यात, अपने कुल को उन्नत करने वाला होता है ॥ १३ ॥

समुद्रयोगफलम्–

दाता धीरश्चारुशीलो दयालुः पृथ्वीपालप्राप्तसाम्यः प्रकामम् ।
योगे जातो यः समुद्रे स धन्यो धन्यो वंशस्तेन नूनं नरेण ॥१४॥

समुद्र योग में जन्म होने से दाता, धीर, सुशील, दयावान्, सब विषयों में राजा के समान, लोक में विख्यात, अपने कुल को उन्नत करने वाला होता है ॥ १४ ॥

गोलादि-सप्तसंख्यायोगानां लक्षणम्–

ये योगाः कथिताः पुरा बहुतरास्तेषामभावे भवेद्-
गोलश्चैकगतैर्युगं द्विगृहगैः शूलस्त्रिगेहोपगैः ।
केदारश्च चतुर्षु सर्वखचरैः पाशस्तु पञ्चस्थितैः
षट्स्थैर्दामनिका च सप्तगृहगैर्वीणेति सङ्ख्या इमे ॥१५॥

पूर्व में जो २० आकृति योग कहे गये हैं, उनके लक्षणों से भिन्न लक्षण यदि एक स्थान में सब ग्रह हों तो गोलयोग, २ स्थान में सब ग्रह हों तो युगयोग, ३ स्थान में सातों ग्रह हों तो शूलयोग, ४ स्थान में सब ग्रह हों तो केदारयोग, ५ स्थान में सब ग्रह हों तो पाशयोग, ६ स्थान में सब ग्रह हों तो दामनिक योग और ७ स्थान में सातों ग्रह हों तो वीणायोग होता है। ये योग संख्या से बनने के कारण संख्या योग कहलाते हैं ॥ १५ ॥

गोलयोगफलम्–

विद्यासत्त्वौदार्यसामर्थ्यहीना नानायासा नित्यजातप्रयासाः ।
येषां योगः सम्भवेद् गोलनामा नामासत्यप्रीतयोऽनीतयस्ते ॥१६॥

जन्म समय में गोलयोग हो तो विद्या, बल, उदारता तथा सामर्थ्य इन सबों से हीन, अनेक प्रकार के यत्न में व्यग्र, असत्यभाषी तथा अनीति करने वाला होता है ॥ १६ ॥

युगयोगफलम्–

पाखण्डेनाखण्डितप्रीतिभाजो निर्लज्जः स्युर्धर्मकर्मप्रमुक्ताः ।
पुत्रैरर्थैः सर्वथा ते वियुक्ता युक्ताऽयुक्तज्ञानशून्या युगाख्ये ॥१७॥

युगयोग में जन्म हो तो पाखण्डी, कपट प्रेम करने वाला, निर्लज्ज, धर्म कर्म से हीन, धन-सन्तान से रहित और उचित-अनुचित विचार से वर्जित होता है ॥ १७ ॥

शूलयोगफलम्–

युद्धे वादे तत्पराः क्रूरचेष्टाः क्रूराः स्वान्ते निष्ठुरा निर्धनाश्च ।
योगो येषां सूतिकाले हि शूलः शूलप्रायास्ते जनानां भवन्ति ॥१८॥

जन्म समय में शूलयोग हो तो वह युद्ध और वाद-विवाद में तत्पर, हृदय का कुटिल, क्रूर, निष्ठुर, निर्धन और सब लोगों के लिए वह शूल समान होता है ॥ १८ ॥

केदारयोगफलम्–

सत्योपेताश्चार्थवन्तो विनीताः कृष्यौत्सुक्याश्चोपकारादराश्च ।
योगे केदारे नरास्तेऽपि धीरा धीराचाराश्चापि तेषां विशेषात् ॥१९॥

केदार योग में जन्म हो तो सत्यवान्, धनवान्, विनयी, खेती करनेवाला, परोपकारी, विशेष कर धैर्यवान् मनुष्य होता है ॥ १९ ॥

पाशयोगफलम्–

दीनाकारास्तत्पराश्चापकारे बन्धेनार्त्ता भूरिजल्पाः सदम्भाः ।
नानानर्थाः पाशयोगप्रजाता जातारण्यप्रीतयः स्युर्मनुष्याः ॥२०॥

पाश योग में जन्म लेनेवाला दरिद्र के समान आकृति वाला, लोगों का अपकार करने वाला, बन्धन से दुःख पाने वाला, व्यर्थ बात करने वाला, दम्भी, अनर्थ करने वाला और वन का प्रेमी होता है ॥ २० ॥

दामयोगफलम्–

जातानन्दो नन्दनाढ्यः सुधीरो विद्वान्भूपः कोपसञ्जाततोषः ।
चञ्चच्छीलौदार्यबुद्धिः प्रशस्तः शस्तः सूतौ दामिनी यस्य योगः ॥२१॥

दाम योग में जिसका जन्म हो वह मनुष्य सदा आनन्दी, पुत्रवान्, धीर, विद्वान्, राजा, कोप से सन्तोषी, सुशील, उदार, बुद्धिमान् और प्रशस्त हृदय वाला मनुष्य होता है ॥ २१ ॥

वीणायोगफलम्–

अर्थोपेताः शास्त्रपारङ्गताश्च सङ्गीतज्ञाः पोषकाः स्युर्बहूनाम् ।
नानासौख्यैरन्वितास्तु प्रवीणा वीणायोगे प्राणिनां जन्म येषाम् ॥२२॥

वीणायोग में जन्म हो तो वह मनुष्य धनवान्, शास्त्र में पारङ्गत, सङ्गीत जानने वाला, बहुतों का पालन करने वाला, सब प्रकार के सुखों से संयुत एवं प्रवीण होता है ॥ २२ ॥

प्रोक्तैरेतैर्नाभसाख्यैश्च योगैः स्यात्सर्वेषां सर्वकाले फलानि ।
तस्मादेतेऽत्यन्तयत्नादपूर्वाः पूर्वाचार्यैर्जातके सम्प्रदिष्टाः ॥२३॥

कहे हुए इन नाभसयोगों से मनुष्य को सर्वदा (सब ग्रहों की दशा में) फल प्राप्त होते हैं। इसलिए प्राचीनाचार्यों ने यत्न पूर्वक इन योगों को कहा है ॥ २३ ॥

अथ कारकयोगा:–

मूलत्रिकोणस्वगृहोच्चसंस्था नभश्चराः केन्द्रगता मिथः स्युः ।
ते कारकाख्याः कथिता मुनीन्द्रैर्विज्ञाय चाज्ञाभवने विशेषात् ॥ १॥

जन्म समय में यदि अपने मूलत्रिकोण, उच्च-स्वगृह में होकर ग्रह केन्द्र में हों तो परस्पर वे कारक कहलाते हैं। इनमें दसवें स्थान स्थित ग्रह विशेष कारक होते हैं ॥ १ ॥

उदाहरणम्

प्रालेयरश्मिर्यदि मूर्तिवर्ती स्वमन्दिरस्थो निजतुङ्गयाताः ।
कुजार्कजार्कामरराजपूज्याः केन्द्रस्थिताः कारकसंज्ञिताश्च ॥ २ ॥

कारकयोगः

५ ३
६ चं.गु.४ २
७ श. सू.१
८ १० मं. १२
९ ११

यदि अपने गृह (कर्क) का चन्द्रमा लग्न में हो और अपने-अपने उच्च में होकर मङ्गल, शनि, रवि और गुरु केन्द्र में हों तो ये परस्पर कारक होते हैं। यह योग अत्यन्त श्रेष्ठ होता है ॥ २ ॥

अन्ययोगाश्च

शुभग्रहे लग्नगतेऽम्बराम्बुस्थितो ग्रहः कारकसंज्ञकः स्यात् ।
तुङ्गत्रिकोणस्वगृहांशयातास्तेऽपीह माने तपनो विशेषात् ॥ ३ ॥

शुभग्रह यदि लग्न में हो तो कोई भी ग्रह ४, १० स्थान में परस्पर कारक होते हैं। यदि अपने उच्च-त्रिकोण या स्वराशि के नवमांश में होकर १० वें स्थान में हो तो भी कारक होते हैं। यदि सूर्य इस प्रकार नवांश में होकर १० वें स्थान में हो तो विशेष कारक होता है ॥ ३ ॥

कारकयोगानां फलानि–

नीचान्वये यद्यपि जातजन्मा मन्त्री भवेत्कारकखेचराद्यैः ।
राजान्वये तस्य यदि प्रसूतिरचलापतित्वं स कथं न याति ॥ ४ ॥

जन्म समय में इस प्रकार के कारक ग्रह हों तो नीच कुल में उत्पन्न पुरुष भी राजमन्त्री होता है, फिर जो राजकुल में उत्पन्न होगा वह भूपति क्यों नहीं हो सकता है, अर्थात् वह अवश्य ही राजा होता है ॥ ४ ॥

वेशिस्थितो यस्य शुभो नभोगो जन्माख्यलग्ने च लवे स्वकीये।
केन्द्राणि सर्वाणि च सद्ग्रहाणि तस्यालये श्रीः कुरुते विलासम् ॥५॥

जिसके जन्म समय में वेशि (सूर्य से द्वितीय) स्थान में शुभग्रह हों और सब ग्रह केन्द्र में हों तो उस मनुष्य के घर में सर्वदा लक्ष्मी निवास करती है ॥ ५ ॥

पुनर्विशेषयोगः—

केन्द्रस्थिता गुरुविलग्नपचन्द्रभेशा
मध्ये च यस्य नितरां वितरन्ति भाग्यम्।
शीर्षोदयाद्युदयभेषु गता भवेयु-
रारम्भमध्यमविरामफलप्रदास्ते ॥ ६ ॥

जन्म समय में यदि गुरु, लग्नेश और चन्द्र राशीश केन्द्र में विशेष कर मध्य (५ से १० अंश तक) में हों तो वह मनुष्य बड़ा ही भाग्यशाली होता है। यदि गुरु, लग्नेश, चन्द्रराशीश ये शीर्षोदयादि राशि के होकर लग्न में हों तो वयस के आदि भाग में, उभयोदय में हों तो वयस के मध्य में और पृष्ठोदय राशि में होकर केन्द्र में हों तो वयस के अन्त में फलप्रद होते हैं ॥ ६ ॥

शकटयोगः फलञ्च—

संस्था विलग्नेऽप्यथ सप्तमे च मतङ्गमुख्यास्तु ग्रहा नितान्तम्।
वदन्ति योगं शकटाभिधं तं जातो नरः स्याच्छकटोपजीवी ॥७॥

यदि सूर्य आदि सातों ग्रह लग्न और सप्तम (दो ही) स्थान में हों तो शकटयोग होता है, इसमें जन्म लेनेवाला शकट (गाड़ी) से आजीविका करनेवाला होता है ॥ ७ ॥

नन्दायोगः फलञ्च—

युग्मयुग्मग्रहाश्लिष्टा ह्येकैकं च त्रिषु स्थितम्।
नन्दायोगः स विज्ञेयश्चिरायुः सुखभाग् भवेत् ॥८॥

सूर्य आदि ९ ग्रहों में से दो-दो ग्रह तीन स्थान में और एक-एक ग्रह तीन स्थानों में हों तो नन्दा योग कहलाता है, इसमें जन्म लेने वाला दीर्घायु और सुखी होता है ॥ ८ ॥

दातायोगः फलञ्च—

लग्ने च जीवो युगगो भृगुश्च द्यूने च सौम्यो दशमे महीजः।
केन्द्रे त्वमी चारुफलप्रदाः स्युः सर्वार्थदातार इति प्रसिद्धाः ॥९॥

जन्म समय में लग्न में गुरु, चतुर्थ में शुक्र, सप्तम में बुध और दशम में मङ्गल हो तो वह सब सम्पत्ति को देनेवाला दाता नामक योग होता है तथा वह मनुष्य बड़ा ही दानी होता है ॥ ९ ॥

राजहंसयोगः–

घटे मेषे नरे चापे तुलायां सिंहगे ग्रहे ।
राजहंसो भवेद्योगो राज्यास्पदसुखप्रदः ॥ १० ॥

कुम्भ, मेष, मिथुन, धनु, तुला और सिंह में सब ग्रह हों तो राजहंस नामक योग होता है, यह राज्य और सुख देनेवाला होता है ॥ १० ॥

सिंहासनादियोगेषु वैशिष्टयम्–

सिंहासने च हंसे च दण्डे योगे मरुध्वजे ।
चतुःसागरयोगे च चिल्लीपुच्छो महाफलः ॥ ११ ॥

सिंहासन, हंस, दण्ड, मरुध्वज या चतुःसागर योग में यदि चिल्लीपुच्छ योग हो तो विशेष फल होता है ॥ ११ ॥

चिल्लीपुच्छलक्षणानि–

तुलामकरमेषाद्यलग्ने वै ह्यथवा क्वचित् ।
सिंहासने च डमरौ चिल्लपुच्छः स शस्यते ॥ १२ ॥

तुला, मकर या मेष लग्न में सिंहासन या डमरु योग हो तो चिल्ली-पुच्छ नामक योग हो जाता है, इसमें जन्म होने से विशेष फल कहा गया है ॥ १२ ॥

मृगे कर्के च पुच्छः स्याद्राजहंसः सुखप्रदः ।
कुम्भे च मन्मथे चैव चिल्लीपुच्छोऽभिधीयते ॥ १३ ॥

मकर, कर्क, कुम्भ या मिथुन लग्न से राजहंस योग हो तो भी चिल्ली-पुच्छ योग कहलाता है और वह विशेष सुखप्रद होता है ॥ १३ ॥

मृगे कर्के ध्वजे पुच्छः कन्यालौ वृषभे झषे ।
चिल्लीपुच्छो भवेद्योगश्चतुःसागरगोचरे ॥ १४ ॥

मकर या कर्क लग्न में ध्वज योग अथवा कन्या, वृश्चिक, वृष या मीन लग्न में चतुस्सागर योग हो तो ये दोनों चिल्लीपुच्छ कहलाते हैं, इनमें भी विशेष शुभफल होता है ॥ १४ ॥

योगोदितफलं पुच्छः करोति द्विगुणं फलम् ।
तेन योगाधियोगोऽयं लग्नेऽपि कस्यचिन्मते ॥ १५ ॥

इस प्रकार पूर्व कथित योगों में चिल्लीपुच्छ का लक्षण हो तो उक्त के

फल को द्विगुणित कर देता है। इस प्रकार के योग को किसी ने योगाधियोग भी कहा है ॥ १५ ॥

घटशून्ये नृपसचिवो गोमहिषीहयगजैर्युक्तः ।
नीतिज्ञो बहुपुत्रो लग्नेऽपि च सम्मता केचित् ॥ १६ ॥

कुम्भ से इतर लग्न में उक्त योग हो तो जातक राजमन्त्री होकर गायें, भैंस, घोड़े, हाथी आदि सवारी से युक्त, नीतिज्ञ और पुत्रवान् होता है, ऐसा भी बहुत लोग कहते हैं ॥ १६ ॥

लालाटिकयोगः-

चन्द्रोऽष्टमे विधोर्गेहेऽर्कार्किशुक्रग्रहाः स्थिताः ।
केमद्रुमे च सम्पूर्णे योगो लालाटिको मतः ॥ १ ॥

लग्न से अष्टमस्थान में चन्द्रमा हो और कर्कराशि में सूर्य, शनि, शुक्र हों तथा पूर्ण केमद्रुम योग हो तो लालाटिक योग कहलाता है ॥ १ ॥

आजन्मतो भवति कारकगैः प्रसिद्धः
शिल्पादिकर्मकुशलो मुशलाकृतिश्च ।
सूर्यात्मजोऽपि लभते विविधामलक्ष्मीं
जन्मान्तरेऽपि न जहाति ललाटयोगे ॥ २ ॥

जन्म समय में कारक ग्रह रहते हुए भी यदि लालाटिक योग हो जाये तो वह मनुष्य मुसल समान आकृति वाला, शिल्प कला में निपुण और बहुत पुत्रवान् होता हुआ भी अनेक प्रकार से दरिद्रता को प्राप्त करता है। अग्रिम जन्म तक दरिद्रता उसे नहीं छोड़ती है ॥ २ ॥

महापातकयोगः-

राहुणा सहितश्चन्द्रः स-पापगुरुवीक्षितः ।
महापातकयोगोऽयं यदि शक्रसमो भवेत् ॥ ३ ॥

राहु से युक्त चन्द्रमा यदि पापयुत गुरु से देखा जाता हो तो इन्द्र समान होने पर भी महापातक करनेवाला होता है, इसलिए इस योग का नाम महापातक होता है ॥ ३ ॥

वृषभहन्तायोगः-

भौमो न वीक्षते लग्नं लग्नं पश्यति भास्करः ।
गुरुशुक्रौ न वीक्षेते बलीवर्देन हन्यते ॥ ४ ॥

जन्म लग्न को यदि मङ्गल और सूर्य देखते हों तथा गुरु और शुक्र नहीं देखते हों तो उस मनुष्य को बैल से आघात होता है ॥ ४ ॥

हठहन्तायोगः-

अर्कस्थानगते चन्द्रे चन्द्रस्थानगते रवौ ।
हठेन नाशो विज्ञेयः पापे लग्ने विशेषतः ॥ ५ ॥

रवि के स्थान में चन्द्रमा और चन्द्रमा की राशि में रवि हो तो वह मनुष्य अपने हठ से नष्ट होता है। पापग्रह लग्न में हो तो विशेष कर हठी होता है ॥ ५ ॥

वृक्षात् पतनयोगः-

पतनो नाम योगश्चेल्लग्नं स्याद्राहुवीक्षितम् ।
वृक्षतः पतनं तस्य यदि शक्रसमो भवेत् ॥ ६ ॥

यदि लग्न पर राहु की पूर्ण दृष्टि हो तो पतन योग होता है। इस योग में इन्द्र के समान होने पर भी वृक्षादि से पतन होता है ॥ ६ ॥

नासिकाच्छेदयोगः-

षष्ठस्थानगते शुक्रे तनुस्थानगते कुजे ।
नासाच्छेदकरो योगो वदन्ति मुनिसत्तमाः ॥ ७ ॥

लग्न से ६ठें शुक्र और लग्न में मङ्गल हो तो जातक की नासिका छेदित हो जाती है, ऐसा मुनियों ने कहा है ॥ ७ ॥

कर्णच्छेदयोगः-

मन्देन दृश्यते चन्द्रो लग्ने च रविभार्गवौ ।
शुभग्रहाः न पश्यन्ति कर्णच्छेदो न संशयः ॥ ८ ॥

चन्द्रमा पर शनि की दृष्टि हो और लग्न में रवि शुक्र हों, उस पर शुभ ग्रह की दृष्टि नहीं हो तो जातक का कर्णच्छेद होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥ ८ ॥

खञ्जयोगः-

कविना सहितो मन्दो गुरुणा सहितो रविः ।
शुभग्रहा न पश्यन्ति पादखञ्जी भवेन्नरः ॥ ९ ॥

शुक्र से युत शनि और गुरु से युत रवि हो और उस पर अन्य शुभग्रह की दृष्टि नहीं हो तो लंगड़ा होता है ॥ ९ ॥

सर्पदंशयोगः-

लग्नाच्च सप्तमस्थाने शन्यर्कौ राहुसंयुतौ ।
सर्पेण बाधा तस्योक्ता शय्यायां स्वपितोऽपि च ॥ १० ॥

लग्न से सप्तमभाव में शनि, रवि और राहु तीनों हों तो पलङ्ग पर सोने पर भी उसे सर्पदंश का भय होता है॥ १०॥

व्याघ्राघातयोगः–

गुरुस्थानगते सौम्ये शनिस्थानगते कुजे।
पञ्चविंशतिवर्षे च वने व्याघ्रेण हन्यते॥ ११॥

जन्म समय में गुरु की राशि में बुध और शनि के घर (१०।११) में मङ्गल हो तो २५ वर्ष के वयस में बाघ का आघात होता है॥ ११॥

खड्गघातयोगः–

शुक्रस्थानगते चन्द्रे चन्द्रस्थानगते शनौ॥
अष्टाविंशतिवर्षे च ह्यसिघातेन मृत्युदः॥ १२॥

शुक्र की राशि में चन्द्रमा और चन्द्रमा की राशि में शनि हो तो ३८वें वर्ष की अवस्था में तलवार आदि शस्त्र का आघात होता है॥ १२॥

शरघातयोगः–

धर्मस्थानगते भौमे शन्यर्कौ राहुसंयुतौ।
शुभग्रहा न पश्यन्ति शरक्षेपेण हन्यते॥ १३॥

नवमभाव में मङ्गल हो, शनि-रवि ये दोनों राहु से युक्त हों, उनपर शुभग्रह की दृष्टि नहीं हो तो वह शरसे आहत होता है॥ १३॥

ब्रह्महत्यायोगः–

रविणा सहितो भौमः शनिर्वा जीवसंयुतः।
अष्टाविंशतिवर्षे च ब्रह्मघाती न संशयः॥ १४॥

रवि से युक्त मङ्गल और शनि से युक्त बृहस्पति हो तो वह मनुष्य ब्रह्मघाती होता है॥ १४॥

स्थानविच्छेदयोगः–

लग्नस्थानगतो भौमो राहुशन्यर्कवीक्षितः।
योगः पदकविच्छेदो यदि शक्रसमो भवेत्॥ १५॥

लग्न में मङ्गल हो तो उस पर शनि, राहु और सूर्य की दृष्टि हो तो पदक विच्छेद नामक योग होता है। इसमें जन्म होने से स्थान पाकर भी छूट जाता है॥ १५॥

इच्छामृत्युयोगः–

केन्द्रस्थानगते भौमे सैंहिकेये च सप्तमे।
तदा नित्यं विजानीयादिच्छामृत्युस्तदा भवेत्॥ १६॥

जन्म समय में लग्न से किसी केन्द्र में मङ्गल हो और सप्तम स्थान में राहु हो तो इच्छा मरण योग होता है। इसमें जन्म लेनेवाला अपनी इच्छा से मर जाता है अर्थात् इसी योग में आत्मघात भी करता है॥ १६॥

दोलायोगः–

मीने मेषे च चापे च स्थिताः स्थानत्रये ग्रहाः।
दोलासंज्ञकयोगः स्याद्राज्यदोऽयमुदाहृतः॥ १७॥

जिसके जन्म समय में मीन, मेष और धनु इन्हीं ३ स्थान में सब (रवि आदि ७) ग्रह हों तो दोलानामक योग होता है, वह राज्य आदि शुभ फल देता है॥ १७॥

केन्द्रगतगुरुफलम्–

सम्मानदानगुणपात्रपरीक्षितो वा कलानिधिः कौशलगीतनृत्यः।
मन्त्रीश्वरो राजसभाविवेकी केन्द्रस्थिते पापविवर्जिते गुरौ॥१८॥

यदि पापग्रह से रहित बृहस्पति केन्द्र स्थान में हो तो जातक आदर, उदारता और सब गुणों का पात्र, सब कला को जानने वाला, सङ्गीत, नृत्य जानने वाला, मन्त्रियों में श्रेष्ठ, राजसभा में विचारकर्ता होता है॥ १८॥

राजयोगाः–

लग्ने लग्नपतिर्बलान्वितवपुः केन्द्रे त्रिकोणे शिवे
पृच्छाजन्मविवाहयानतिलके कुर्यान्नृपं तं ध्रुवम्।
सच्छीलं विभवान्वितं गजयुतं मुक्तातपत्रान्वितम्
जातं निम्नकुले विभूतिपुरुषं शंसन्ति गर्गादयः॥ १॥

जन्म समय में लग्नेश बली होकर लग्न अथवा केन्द्र (१।४।७।१०) अथवा त्रिकोण (९।५) वा ११वें स्थान में स्थित हो तो जातक राजा होता है और सुशील, ऐश्वर्य से युत, हाथी, मोती, छत्र से युत होता है। अगर नीचकुल में इस योग में उत्पन्न हो तो ऐश्वर्यवान् राजा के बराबर होता है। यह राजयोग, जन्मलग्न, प्रश्नलग्न, विवाह, यात्रा, राज्याभिषेक इन सबों में विचार करे॥ १॥

एकः शुक्रो जननसमये लाभसंस्थे च केन्द्रे
जातो वै जन्मराशौ यदि सहजगते प्राप्तये वा त्रिकोणे।
विद्याविज्ञानयुक्तो भवति नरपतिर्विश्वविख्यातकीर्ति-
र्दानी मानी च शूरो हयगणसहितः सद्गजैः सेव्यमानः॥२॥

जन्म काल में अकेला शुक्र यदि ११ वें स्थान अथवा केन्द्र (१।४।७।१०) या जन्मराशि में अथवा तृतीयभाव में अथवा त्रिकोण (९।५) में हो तो मनुष्य विद्या, विज्ञान से युत, विश्वविख्यात, राजा, कीर्तिमान्, दानी, मानी, शूर-वीर, हाथी, घोड़ों के समूह रखने वाला होता है ॥ २ ॥

दशमभवननाथे केन्द्रकोणे धनस्थे-
ऽवनिपतिबलयाने शस्तसिंहासनेषु ।
स भवति नरनाथो विश्वविख्यातकीर्ति-
र्मदगलितकपोलैः सद्गजैः सेव्यमानः ॥३॥

दशमेश यदि केन्द्र-त्रिकोण (१।४।७।१०।५।९) में हो अथवा द्वितीय स्थान में हो तो जातक राजसिंहासन पर बैठने वाला, संसार में कीर्तिमान् और जिनके मस्तक से मद गिरता हो ऐसे हाथियों से युत राजा होता है ॥ ३ ॥

एकोऽपि केन्द्रभवने नवपञ्चमे वा
भास्वन्मयूखविमलीकृतदिग्विभागः ।
निःशेषदोषमपहृत्य शुभः प्रसूतं
दीर्घायुषं विगतरोगभयं करोति ॥ ४ ॥

जन्म समय में कोई भी एक शुभग्रह अपने तेज से प्रकाशमान होकर दिशाओं को प्रकाश करता हुआ, केन्द्र-त्रिकोण (१।४।७।१०।९।५) में हो तो सब दोष को हटाकर शुभ, दीर्घायु और नीरोग करता है ॥ ४ ॥

चन्द्रः पश्येद्यदाऽऽदित्यं बुधः पश्येन्निशापतिम् ।
अस्मिन्योगे तु यो जातः स भवेद्वसुधाधिपः ॥ ५ ॥

जन्मकाल में चन्द्रमा सूर्य को देखता हो और बुध चन्द्रमा को देखता हो तो इस योग में उत्पन्न राजा होता है ॥ ५ ॥

यदि भवति च केन्द्रे यामिनीनाथ एवं
प्रवितरति सुभार्यां पुत्रिणीं वा सुरूपाम् ।
धनकनकसमृद्धिं माणिकं हीररत्नं
रचयति मृगनाभिद्रव्यवर्यैः शरीरम् ॥ ६ ॥

यदि चन्द्रमा केन्द्र में हो तो जातक सुन्दरी स्त्री वाला, धन, सुवर्ण, माणिक, हीरा से परिपूर्ण और शरीर में कस्तूरी लगाने वाला होता है ॥६॥

शुक्रो यस्य बुधो यस्य यस्य केन्द्रे बृहस्पतिः ।
दशमोऽङ्गारको यस्य स जातः कुलदीपकः ॥ ७ ॥

जिसके शुक्र, बुध, गुरु केन्द्र (१।४।७।१०) में हों और मङ्गल दशवें स्थान में हो तो वह अपने कुल में श्रेष्ठ होता है ॥ ७ ॥

हयरथनरनागोद्यानरत्नैः प्रपूर्णो
जलधितटनिवासी रत्नतुल्यं च धान्यम् ।
बहुजनकुलमित्रैः सत्यवादी प्रसूतो
भवति यदि च केन्द्री दैत्यपूज्यो बुधश्च ॥ ८ ॥

जन्म समय में केन्द्र (१।४।७।१०) में शुक्र, बुध हो तो जातक घोड़ा, रथ, हाथी, बगीचा, रत्न से परिपूर्ण, समुद्र तट का वासी, अन्न भी रत्न के बराबर रखने वाला, अच्छे आदमियों से मैत्री वाला तथा सत्यवक्ता होता है ॥ ८ ॥

किं कुर्वन्ति ग्रहाः सर्वे यस्य केन्द्रे बृहस्पतिः ।
मत्तमातङ्गयूथानां भिनत्त्येकोऽपि केसरी ॥ ९ ॥

जिसके जन्म समय में केन्द्र (१।४।७।१०) इन स्थानों में से किसी भी स्थान में गुरु हो तो सब कुयोग को नाश करता है, अर्थात् राजा बनाता हैं। जिस तरह हाथियों के झुण्ड को सिंह अकेले नाश करता है, उसी तरह गुरु भी सब दोष को नाश करता है ॥ ९ ॥

एक एव सुरराजपुरोधाः केन्द्रगोऽथ नवपञ्चमगो वा ।
लाभगो भवति यत्र विलग्ने तत्र शेषखचरैरबलैः किम् ॥१०॥

यदि अकेले गुरु केन्द्र (१।४।७।१०), त्रिकोण (९।५) वा लग्न अथवा ११ वें स्थान में हो तो अनेकों निर्बल ग्रह क्या करेंगे ? अर्थात् वह अवश्य राजतुल्य होगा ॥ १० ॥

भवति मदनमूर्तिर्वल्लभः कामिनीनां
सकलजनसमर्थो दीर्घजन्मा विधेयः ।
गजविषयगुणज्ञो द्रव्यमुख्यः प्रधानः
सधनकनकपूर्णो दैत्यपो यस्य केन्द्रे ॥ ११ ॥

जिसके जन्म समय में केन्द्र (१।४।७।१०) इन स्थानों में से किसी एक में शुक्र हो तो कामदेव स्वरूप स्त्रियों का प्रिय, सब मनुष्यों में प्रधान, दीर्घायु, हाथी के गुण जानने वाला (अर्थात् अपने यहाँ हाथी रखने वाला), द्रव्य की प्रधानता प्रधान, धन, सोना से पूर्ण होता है ॥ ११ ॥

धनवान् प्रायः शूरो मन्त्री वा दण्डनायकः पुरुषः ।
दशमस्थे रवितनये वृन्दपुरग्रामनेता वा ॥ १२ ॥

जिसके जन्मकाल में लग्न से दशम स्थान में शनि हो तो धनवान्, विद्वान्, शूर-वीर, मन्त्री, दण्ड देनेवाला (अर्थात् जज वगैरह), एक गाँव या गावों के समूह का नेता होता है ॥ १२ ॥

तुलाकोदण्डमीनस्थो लग्नस्थोऽपि शनैश्चरः ।
करोति भूपतेर्जन्म वंशे च नृपतिर्भवेत् ॥ १३ ॥

जन्म काल में तुला, धनु वा मीन लग्न में शनि बैठा हो तो राजकुल में जन्म और राजा होता है ॥ १३ ॥

दिव्यस्त्रीवरकाञ्चनाम्बरयुतः साधारलक्ष्मीमयः
शास्त्रं कौतुकगीतनृत्यरसिकव्यापारदीक्षागुरुः ।
पुत्रभ्रातृजनान्वितः स्थिरमतिः कर्ताऽतिप्रीत्यन्वितो
जीवः केन्द्रगतो भवेन्निजसुखो सत्कर्मकारी नरः ॥१४॥

जन्म समय में केन्द्र (१।४।७।१०) में गुरु हो तो सुन्दरी स्त्री, सुवर्ण, वस्त्र तथा स्थिर लक्ष्मी से युत, शास्त्र, खेल, गीत, नृत्य का रसिक, व्यापार कार्य में चतुर, पुत्र, भाई से युत, स्थिर बुद्धि, अत्यन्त प्रीति पूर्वक काम करने वाला, सुखी, अच्छे कर्म करने वाला होता है ॥ १४ ॥

आकाशमन्दिरगतस्तनुपः स्वगेहे
कुर्यान्नरं नृपतिचक्रवरैः सुसेव्यः ।
सैन्यप्रतापदहनाहतशत्रुपक्षं
शक्रो यथा सुरगणैश्च विराजमानः ॥ १५ ॥

जन्म काल में शनि अपने घर का होकर १० वें स्थान में हो तो जातक राजाओं से सेवित, शत्रु को दुःख देने वाला, सेना से युत होता है। जिस प्रकार देवताओं के समूह से इन्द्र विराजमान रहते हैं, उसी प्रकार जातक भी विराजमान रहता है ॥ १५ ॥

उपचयगृहसंस्थो जन्मिनो यस्य चन्द्रः
स्वगृहमथ नवांशे केन्द्रजाताश्च सौम्याः ।
सकलबलयुताश्चैव पापाभिधानाः
स भवति नरनाथः शक्रतुल्यो बलेन ॥ १६ ॥

जिसके जन्म काल में उपचय (३।६।१०।११) में चन्द्रमा हो, शुभग्रह अपने घर में वा अपने नवांश में होकर केन्द्र (१।४।७।१०) में हो और पापग्रह निर्बल होकर कहीं भी हो तो इन्द्र तुल्य राजा होता है ॥ १६ ॥

विद्याकलागुणविराजितकामधेनु-
भोगैः सुरूपयुवतीजितकामराजः ।
देशाधिपत्यपुरदर्शनतः श्रमान्तो
मीने सिते यदि च केन्द्रगते क्षितीशः ॥ १७ ॥

मीन का शुक्र यदि केन्द्र (१।४।७।१०) में बैठा हो तो विद्या, कला, बहुगुणों से शोभित, कामधेनु के बराबर भोग से पूर्ण, सुन्दरी स्त्रियों के साथ विलास करने वाला, देश, नगर देखने में व्यस्त राजा होता है ॥ १७ ॥

कामाजकन्यारिपुरन्ध्रसंस्थे केन्द्रे त्रिकोणे व्ययगे च राहौ ।
कामी च शूरो बलवान् स भोगी छत्रं गजाश्वा बहुपुत्रता च ॥१८॥

जन्म समय में सप्तम में मेष अथवा कन्या और छठे, आठवें, केन्द्र (१।४।७।१०), त्रिकोण (९।५), बारहवें इनमें से किसी भी घर में राहु हो तो जातक कामी, शूर, बलवान्, भोगी, हाथी-घोड़ा, छत्र और बहुत पुत्र-वाला राजतुल्य होता है ॥ १८ ॥

मृगपतिवृषकन्याकर्कटस्थे च राहौ
भवति विपुललक्ष्मी राजराजाधिपो वा ।
हयगजनरनौकामेदिनीपण्डितश्च
स भवति कुलदीपो राहुतुङ्गो नराणाम् ॥ १९ ॥

जन्म समय में सिंह, वृष, कन्या, कर्क इन चारों राशियों में-से किसी में भी राहु हो तो जातक महाराजाधिराज और लक्ष्मी से सम्पन्न होता है। राहु उच्च में हो तो हाथी, घोड़ा, मनुष्य तथा नाव की सवारी वाला, जमीन वाला, पण्डित और अपने कुल का श्रेष्ठ होता है ॥ १९ ॥

केन्द्र-त्रिकोणे बुधजीवशुक्राः स्थितो नराणां यदि जन्मकाले ।
धर्मार्थविद्यायुतकीर्तिलाभः शान्तः सुशीलः स नराधिपः स्यात् ॥२०॥

जिसके जन्म काल में केन्द्र (१।४।७।१०), त्रिकोण (९।५) में बुध, गुरु, शुक्र हों तो वह धर्म, अर्थ, विद्या, कीर्ति, आय से युत तथा शान्त एवं सुशील राजा होता है ॥ २० ॥

भृगुसुतसुरपूज्यश्चन्द्रमाः केन्द्रवर्ती
बहुसुखधनवृद्धिः कर्म साध्यं नराणाम् ।
रविसुतशशिपुत्रे भानुजीवे त्रिकोणे
क्षितिसुतदशमे वै राजयोगा भवन्ति ॥ २१ ॥

जिसके केन्द्र में शुक्र, गुरु, चन्द्रमा हों, उसको बहुत सुख, धन एवं कोई भी काम कठिन नहीं होता है। और यदि शनि, बुध, सूर्य, गुरु, त्रिकोण (९।५) में हों और मङ्गल दशम स्थान में हो तो वह राजा होता है ॥२१॥

केन्द्रत्रिकोणेषु भवन्ति सौम्या दुश्चिक्यलाभारिगताश्च पापाः ।
यस्य प्रयाणेऽप्यथ जन्मकाले ध्रुवं भवेत्तस्य महीपतित्वम् ॥२२॥

जिसके केन्द्र (१।४।७।१०), त्रिकोण (९।५) में सौम्यग्रह हों और ३ रे, ११ वें, छठे स्थान में पापग्रह हों तो जातक राजा होता है। यह जन्मलग्न से और यात्रा समय से भी विचार करना चाहिये, क्योंकि यदि कोई राजा दूसरे राजा पर चढ़ाई करे और यात्रा में समय ऐसा योग पड़े तभी उसको राज्यलाभ होगा ॥ २२ ॥

लाभे त्रिकोणे यदि शीतरश्मिः करोत्यवश्यं क्षितिपालतुल्यम् ।
कुलद्वयानन्दकरं नरेन्द्रं ज्योत्स्नेव दीपस्य तमोऽपहर्त्री ॥२३॥

ग्यारहवें अथवा त्रिकोण में यदि चन्द्रमा हो तो अवश्य राजा के समान बनाता है और पितृ मातृकुल को आनन्द देनेवाला होता है। जिस तरह दीप से अन्धकार दूर होता है, उसी तरह यह भी शोभायमान होता है ॥ २३ ॥

शत्रुस्थाने यदा जीवो लाभस्थाने शशी भवेत् ।
गृहमध्ये स जातश्च विख्यातः कुलदीपकः ॥ २४ ॥

छठे स्थान में गुरु और ग्यारहवें स्थान में चन्द्रमा हो तो जातक अपने कुल में श्रेष्ठ होता है ॥ २४ ॥

लग्नाधिपो वा जीवो वा शुक्रो वा यत्र केन्द्रगः ।
तस्य पुंसश्च दीर्घायुः स भवेद्राजवल्लभः ॥ २५ ॥

लग्नेश अथवा गुरु या शुक्र इनमें से एक भी केन्द्र में हो तो अपने कुल का श्रेष्ठ होता है और राजा का प्रिय होता है ॥ २५ ॥

दशमे बुध-सूर्यौ च भौम-राहू च षष्ठगौ ।
राजयोगोऽत्र यो जातः स पुमान्नायको भवेत् ॥ २६ ॥

दशवें में बुध-सूर्य हो और मङ्गल-राहु छठे में हो तो इस राजयोग में उत्पन्न जातक मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है ॥ २६ ॥

आदौ जीवः शनिश्चान्ते ग्रहा मध्ये निरन्तरम् ।
राजयोगं विजानीयात् कुटुम्बबलमुत्तमम् ॥ २७ ॥

लग्न में गुरु और बारहवें भाव में शनि हो तथा गुरु शनि के बीच

सब ग्रह पड़ जायें तो राजयोग होता है, इस योग में कुटुम्ब से बहुत बल मिलता है ॥ २७ ॥

सहजस्थो यदा जीवो मृत्युस्थाने यदा सितः ।
निरन्तरं ग्रहा मध्ये राजा भवति निश्चितम् ॥ २८ ॥

तृतीय स्थान में गुरु हो, अष्टम में शुक्र हो और सब ग्रह इन दोनों के बीच स्थित हों तो यह राजयोग होता है, इसमें उत्पन्न मनुष्य अवश्य ही राजा होता है ॥ २८ ॥

जीवो वृषे सुधारश्मिर्मिथुने मकरे कुजः ।
सिंहे भवति सौरिश्च कन्यायां बुध-भास्करौ ॥ २९ ॥
तुलायामसुराचार्यो राजयोगो भवेदयम् ।
अत्र योगे समुत्पन्नो महाराजो भवेन्नरः ॥ ३० ॥

वृष में गुरु, मिथुन में चन्द्रमा, मकर में मङ्गल, सिंह में शनि, कन्या में बुध-सूर्य, तुला में शुक्र हो तो यह राजयोग होता है। इस योग में उत्पन्न महाराजा होता है ॥ २९-३० ॥

अष्टमे द्वादशे वर्षे यदि जीवति मानवः ।
सार्वभौमस्तदा राजा जायते विश्वपालकः ॥ ३१ ॥

उपरोक्त योग में उत्पन्न मनुष्य यदि ८ और बारहवें इन दोनों वर्ष में बच जाये अर्थात् मृत्यु नहीं हो तो संसार का पालन करने वाला सार्वभौम सम्राट् होता है ॥ ३१ ॥

एको जीवो यदा लग्ने सर्वे योगास्तदा शुभाः ।
दीर्घजीवी महाप्राज्ञो जातको नायको भवेत् ॥ ३२ ॥

यदि एक ही गुरु लग्न में स्थित हो तो सब अशुभयोग शुभ हो जाते हैं और जातक दीर्घजीवी, विद्वान् और नेता होता है ॥ ३२ ॥

धने शुक्रोऽथ भौमश्च मीने जीवस्तुले बुधः ।
नीचस्थौ शनि-चन्द्रौ च राजयोगस्तदा ध्रुवम् ॥ ३३ ॥

शुक्र, मङ्गल द्वितीय भाव में, मीन में गुरु, तुला में बुध और शनि-चन्द्रमा नीच राशि में हों तो राजयोग होता है ॥ ३३ ॥

अस्मिन् योगे च जातः स राजा धनवर्जितः ।
दाता भोक्ता च विख्यातो मान्यो मण्डलनायकः ॥ ३४ ॥

३३वें श्लोक में कहे हुए राजयोग में जो उत्पन्न होता है, वह राजा

अवश्य होता है लेकिन उसके पास धन नहीं रहता। वह दानी, भोगी, मानी, माण्डलीक एवं विख्यात होता है ॥ ३४ ॥

मीने शुक्रो बुधश्चान्ते धने राहुस्तनौ रविः ।
सहजे च भवेद्भौमो राजयोगोऽभिधीयते ॥ ३५ ॥

मीन में शुक्र, बारहवें भाव में बुध, धन भाव में राहु, लग्न में रवि, तीसरे भाव में मङ्गल हो तो राजयोग होता है ॥ ३५ ॥

सहजे च यदा जीवो लाभस्थाने च चन्द्रमाः ।
स राजा गृहमध्यस्थो विख्यातः कुलदीपकः ॥ ३६ ॥

तृतीय भाव में गुरु, ११वें भाव में चन्द्रमा हो तो वह घर में ही राजा होकर अपने कुल में श्रेष्ठ होता है ॥ ३६ ॥

शुभग्रहाः शुभक्षेत्रे भवन्ति यदि केन्द्रगाः ।
तदा शुभानि कर्माणि स करोति हि जातकः ॥ ३७ ॥

शुभग्रह शुभ घर में होकर यदि केन्द्र में हों तो जातक शुभकर्म करने वाला होता है ॥ ३७ ॥

उच्चस्थानगताः सौम्याः केन्द्रस्थाने भवन्ति चेत् ।
ध्रुवं राज्यं भवेत्तस्य यदि नीचसुतो भवेत् ॥ ३८ ॥

शुभग्रह अपने-अपने उच्च के होकर केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो नीच कुल में उत्पन्न भी अवश्य राजा होता है ॥ ३८ ॥

स्वक्षेत्रस्थो यदा जीवो बुधः सौरिश्च चेद्भवेत् ।
तस्य जातस्य दीर्घायुः सम्पत्तिश्च पदे पदे ॥ ३९ ॥

बुध, गुरु, शनि अपने घर के हों तो जातक दीर्घायु और पद-पद में सम्पत्ति पानेवाला होता है ॥ ३९ ॥

मीने बृहस्पतिः शुक्रश्चन्द्रमाश्च यदा भवेत् ।
तस्य जातस्य राज्यं स्यात् पत्नी च बहुपुत्रिणी ॥ ४० ॥

गुरु, शुक्र, चन्द्रमा मीन के हों तो जातक राजा होता है और उसकी पत्नी बहुत पुत्र उत्पन्न करने वाली होती है ॥ ४० ॥

पञ्चमस्थो यदा जीवो दशमस्थश्च चन्द्रमाः ।
स राज्यवान् महाबुद्धिस्तपस्वी च जितेन्द्रियः ॥ ४१ ॥

पाचवें स्थान में गुरु, १० वें में चन्द्रमा हो तो जातक, जितेन्द्रिय, महा-बुद्धिमान् तपस्वी, राजा होता है ॥ ४१ ॥

सिंहे जीवस्तुलाकीटचापेषु मकरेऽपि च ।
ग्रहा यदा तदा जातो देशभोगी भवेन्नरः ॥ ४२ ॥

सिंह में गुरु, तुला, कर्क, धनु, मकर में सब शेष ग्रह हों तो जातक प्रान्तपति होता है ॥ ४२ ॥

तुला-कोदण्ड-मीनस्थो लग्नसंस्थोऽपि चेच्छनिः ।
करोति भूपतेर्जन्म महापुण्यानुभावतः ॥ ४३ ॥

तुला, धनु, मीन अथवा लग्न इनमें से किसी में भी शनि हो तो महा-पुण्य फल के द्वारा राजा के घर में जन्म होता है ॥ ४३ ॥

विद्यास्थाने यदा सौम्याः कर्मस्थाने च चन्द्रमाः ।
धर्मस्थाने यदा सौम्या राजयोगस्तदा भवेत् ॥ ४४ ॥

पाचवें घर में बुध, दशम स्थान में चन्द्रमा, नवम में शुभग्रह हों तो राजयोग होता है ॥ ४४ ॥

मकरे च घटे मीने वृषे मिथुन-मेषयोः ।
ग्रहास्तदा च विख्यातो राजा भवति मानवः ॥ ४५ ॥

मकर, कुम्भ, मीन, वृष, मिथुन, मेष इन राशियों में सब ग्रह हों तो जातक प्रसिद्ध राजा होता है ॥ ४५ ॥

बुधभार्गवजीवार्कियुक्तो राहुश्चतुष्टये ।
कुरुते कमलारोग्यपुत्रमानादिकं फलम् ॥ ४६ ॥

बुध, शुक्र, गुरु, शनि इनमें से किसी से युत राहु यदि केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो जातक को लक्ष्मी, आरोग्यता, पुत्र, मान देता है ॥ ४६ ॥

चतुर्थभवने शुक्रो गुरुचन्द्रधरासुताः ।
रविसौरियुता सन्ति राजा भवति निश्चितम् ॥ ४७ ॥

चौथे स्थान में शुक्र, गुरु, चन्द्र, मंगल, रवि, शनि से युत हों तो जातक निश्चय राजा होता है ॥ ४७ ॥

अष्टमे च व्यये क्रूरौ मध्ये च क्रूरसौम्यकौ ।
राजयोगाश्रयो जाता महाभूपो भविष्यति ॥ ४८ ॥

जन्म लग्न से आठवें और बारहवें दुष्ट ग्रह हों और इन दोनों स्थानों के वीच में शेष क्रूरग्रह और शुभग्रह हों तो जातक राजा होता है ॥ ४८ ॥

लग्ने सौरिस्तथा चन्द्रस्त्रिकोणे जीव-भास्करौ ।
कर्मस्थाने भवेद्भौमो राजयोगोऽभिधीयते ॥ ४९ ॥

लग्न में शनि, चन्द्र हो और त्रिकोण (९।५) में गुरु-सूर्य हों तथा १० वें स्थान में मङ्गल हो तो इसको राजयोग कहते हैं ॥ ४९ ॥

नवमे च यदा सूर्यः स्वगृहस्थो भवेत्तदा ।
तस्य जीवति नो भ्राता यदि कोऽपि नृपैः समः ॥ ५० ॥

अपने घर का होकर सूर्य यदि नवम स्थान में हो तो उसका भाई नहीं जीता है। यदि कोई भाई जीवे तो राजा होता है ॥ ५० ॥

द्वित्रितुर्ये सुते षष्ठे कर्मण्यपि यदा ग्रहाः ।
राजयोगं विजानीयाज्जातस्तुच्छकुलेऽपि चेत् ॥ ५१ ॥

२।३।४।५।६।१० इन स्थानों में सब ग्रह हों तो नीच कुल में उत्पन्न हुआ मनुष्य भी राजा होता है ॥ ५१ ॥

लग्ने क्रूरे व्यये सौम्यो धने क्रूरश्च जायते ।
राजयोगेन राजा च भूपतिर्भवति स्फुटम् ॥ ५२ ॥

लग्न में दुष्टग्रह, बारहवें में शुभग्रह तथा द्वितीय स्थान में भी क्रूरग्रह हों तो इस योग से राजा पृथ्वी-पालक होता है ॥ ५२ ॥

लग्ने क्रूरो व्यये क्रूरो धने सौम्यो यदा भवेत् ।
सप्तमे भवति क्रूरः परिवारक्षयङ्करः ॥ ५३ ॥

लग्न में, बारहवें में क्रूर ग्रह हों, द्वितीय स्थान में सौम्यग्रह हों और सातवें में क्रूर ग्रह हों तो परिवार का नाश करने वाला होता है ॥ ५३ ॥

धने चन्द्रश्च सौम्यश्च मेषे जीवो यदा भवेत् ।
दशमे राहु-शुक्रौ च राजयोगोऽभिधीयते ॥ ५४ ॥

द्वितीय स्थान में चन्द्रमा-बुध, मेष में गुरु, दशम स्थान में राहु-शुक्र हों तो राजयोग होता है ॥ ५४ ॥

सिंहे जीवोऽथ कन्यायां भार्गवो मिथुने शनिः ।
स्वक्षेत्रे हिबुके भौमः स पुमान्नायको भवेत् ॥ ५५ ॥

सिंह में गुरु, कन्या में शुक्र, मिथुन में शनि, अपने घर का मङ्गल चौथे स्थान में हो तो जातक नेता होता है ॥ ५५ ॥

शनि-चन्द्रौ च कन्यायां सिंहे जीवो घटे तमः ।
मकरे च कुजस्तत्र जातः स्याद्विश्वपालकः ॥ ५६ ॥

कन्या में शनि-चन्द्रमा, सिंह में गुरु, कुम्भ में राहु, मकर में मंगल हो तो जातक संसार का पालक होता है ॥ ५६ ॥

शुक्रो जीवो रविर्भौमश्चापे मकर-कुम्भयोः ।
मीने च वत्सरे त्रिंशे समर्थः सर्वकर्मसु ॥ ५७ ॥

शुक्र, गुरु, सूर्य, मंगल क्रम से धनु, मकर, कुम्भ, मीन राशि में हों तो ३० वर्ष की अवस्था में सब कार्य सँभालने लायक हो जाता है ॥ ५७ ॥

कर्कलग्ने जीवयुक्ते लाभे चन्द्रज-भार्गवौ ।
मेषे भानुश्च जातो यो योगेऽस्मिन्नृपतिर्भवेत् ॥ ५८ ॥

कर्क लग्न में गुरु हो, ११ वें स्थान में बुध-शुक्र हो, मेष में सूर्य हो तो इस योग में उत्पन्न राजा होता है ॥ ५८ ॥

कर्मस्थाने यदा जीवो बुधः शुक्रस्तथा शशी ।
सर्वकर्माणि सिद्धयन्ति राजमान्यो भवेन्नरः ॥ ५९ ॥

दशम स्थान में गुरु, बुध, शुक्र, चन्द्रमा हों तो जातक का सब कार्य सिद्ध होता है और वह राजमान्य होता है ॥ ५९ ॥

षष्ठेऽष्टमे पञ्चमे वा नवमे द्वादशे तथा ।
सौम्यक्रूरग्रहैर्योगे राजमान्यो न संशयः ॥ ६० ॥

६।८।५।९।१२ इन घरों में शुभग्रह एवं दुष्टग्रह हों तो जातक राजमान्य होता है ॥ ६० ॥

पञ्चमे च यदा षष्ठे चाऽष्टमे नवमे क्रमात् ।
भौमराहुसितार्काः स्युर्जातकः कुलपालकः ॥ ६१ ॥

पाँचवें, छठे, आठवें, नवें इन घरों में क्रम से मंगल, राहु, शुक्र, सूर्य हो तो जातक अपने कुल का पालन करने वाला होता है ॥ ६१ ॥

लग्ने सौरिस्तथा चन्द्रश्चाऽष्टमे भार्गवो यदा ।
जायतेऽत्र नृपो योगे मानी भूरिप्रियः सदा ॥ ६२ ॥

लग्न में शनि, चन्द्रमा हो और आठवें स्थान में शुक्र हो तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य मानी और सबका प्रिय राजा होता है ॥ ६२ ॥

मिथुनस्थो यदा राहुः सिंहस्थो भूमिनन्दनः ।
अत्र योगे नरो जातो नृपोऽश्वगजनायकः ॥ ६३ ॥

मिथुन में राहु, सिंह में मङ्गल हो तो इस योग में जातक घोड़ा, हाथी रखने वाला राजा होता है ॥ ६३ ॥

चापार्द्धे शशिना युक्तो यदि सूर्यः प्रजायते ।
लग्ने च स-बलो मन्दो मकरे च कुजो भवेत् ॥ ६४ ॥

अत्र योगे समुत्पन्नो महाराजो भवेन्नरः ।
दूरादेव नमन्त्यस्य प्रतापैश्चरणौ नृपाः ।। ६५ ।।

धनु के पूर्वार्ध में चन्द्रमा से युत सूर्य हो और बली शनि लग्न में हो तथा मकर में मंगल हो तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य महाराज होता है और राजा लोग दूर ही से उसकी चरण-वन्दना करते हैं ।। ६४-६५ ।।

उच्चाभिलाषुकः सूर्यस्त्रिकोणस्थो यदा भवेत् ।
अपि नीचकुले जातो राजा स्याद्धनपूरितः ।। ६६ ।।

अपने उच्च के समीप रहकर सूर्य यदि त्रिकोण में हो तो नीच कुलोत्पन्न भी राजा होता है ।। ६६ ।।

धनस्थाने यदा शुक्रो दशमे च बृहस्पतिः ।
षष्ठे च सिंहिकापुत्रो राजा भवति विक्रमी ।। ६७ ।।

द्वितीयस्थान में शुक्र, १० वें में गुरु और छठें में राहु हो तो राजा पराक्रमी होता है ।। ६७ ।।

चतुर्ग्रहा यदैकत्र स्थाने सौम्या भवन्ति हि ।
भ्रातृधीधर्मलग्ने वा राजयोगो भवेदयम् ।। ६८ ।।

किसी भी घर में चार शुभग्रह हों अथवा ३।५।९।१ इन स्थानों में अलग-अलग रहें तो भी राजयोग होता है ।। ६८ ।।

सर्वैर्ग्रहैर्यदा चन्द्रो विना हेलिं निरीक्ष्यते ।
षष्ठाऽष्टमे च यामित्रे स दीर्घायुर्नराधिपः ।। ६९ ।।

छठे, आठवें अथवा सातवें स्थान स्थित चन्द्रमा को सूर्य के विना यदि सब ग्रह देखते हों तो जातक दीर्घायु राजा होता है ।। ६९ ।।

नवमे पञ्चमे स्थाने चतुर्थे च यदा ग्रहाः ।
आदौ जातश्च नश्यन्ति पश्चाज्जातश्च जीवति ।। ७० ।।
विवाहितायामन्यस्यामेकपुत्रो भवेत्तदा ।
विख्यातो भुवने त्यागी स दीर्घायुर्महीपतिः ।। ७१ ।।

९।५।४ इन स्थानों में यदि सब ग्रह हों तो पहला पुत्र मर जाता है पिछला जीता है । फिर दूसरी शादी में एक पुत्र होता है, यह जगद्विख्यात, त्यागी, दीर्घायु, राजा के तुल्य होता है ।। ७०-७१ ।।

कन्यायां च यदा राहुः शुक्रो भौमः शनिस्तथा ।
तत्र जातस्य जायेत कुबेरादधिकं धनम् ।। ७२ ।।

कन्या में राहु, शुक्र, मंगल, शनि हों तो जातक कुबेर से भी अधिक धनवान् होता है ॥ ७२ ॥

लग्ने मीने जीव-शुक्रौ मेषेऽर्कौ मकरे कुजः ।
दासवंशेऽपि जातोऽसौ राजा छत्रधरो भवेत् ॥ ७३ ॥

मीन लग्न में गुरु-शुक्र, मेष में सूर्य, मकर में मंगल हो तो दास कुल में उत्पन्न होने पर भी छत्रधारी राजा होता है ॥ ७३ ॥

भ्रातृस्थाने यदा जीवो लाभस्थाने यदा शशी ।
स लोके गृहमध्यस्थो जायते कुलदीपकः ॥ ७४ ॥

तीसरे स्थान में गुरु, ११ वें में चन्द्रमा हो तो वह अपने घर में रहकर भी लोक में श्रेष्ठ होता है ॥ ७४ ॥

दशमस्थौ बुधाऽऽदित्यौ षष्ठे राहु-धरासुतौ ।
राजयोगोऽत्र यो जातः स पुमान्नायको भवेत् ॥ ७५ ॥

दशम में बुध-सूर्य, छठे में राहु-मंगल हो तो इस राजयोग में उत्पन्न मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है ॥ ७५ ॥

चतुर्ग्रहैरेकगृहे च संस्थैर्धीधर्मदुश्चिक्यतनुस्थितैर्वा ।
दासीषु जातः क्षितिपालतुल्यो भवेन्नरेन्द्रोऽम्बुधिपारयायी ॥७६॥

कोई भी चार ग्रह एक घर में हों वा क्रम से ५।९।३।१ इन स्थानों में हों तो दासी से उत्पन्न होने पर भी राजा होता है या उसके तुल्य होकर समुद्र पार जाता है ॥ ७६ ॥

सुरगुरुशशियुक्ते कर्कटे लग्नसंस्थे
भृगुतनयबलिष्ठः केन्द्रजातोऽथ शेषाः ।
शिवसहजरिपुस्था यस्य चेज्जन्मकाले
नियतमिति तदाऽयं चक्रवर्ती नरेशः ॥ ७७ ॥

गुरु से युत चन्द्रमा कर्क लग्न में हो तथा शुक्र बली होकर केन्द्र में हो और बाकी ग्रह ११।३।६ इन स्थानों में हो तो जातक चक्रवर्ती राजा होता है ॥ ७७ ॥

तुले मीन-मेषे वृषे दैत्यपूज्यो भवेद्राजमानी कलाकौतुकी च ।
त्रयं पुत्रवर्यं चिरं जीवितं च भवेद्वत्सरे वह्नियुग्मे च तस्य ॥७८॥

तुला, मीन, मेष, वृष इस किसी राशि में शुक्र हो तो राजमान्य, कला-कौतुक में प्रवीण, तीन पुत्र चिरजीवी हों और जातक २३ वर्ष तक जीता है ॥ ७८ ॥

लग्नाधिपतिः केन्द्रे बलपरिपूर्णः करोति नृपतुल्यम् ।
गोपालकुलेऽपि जातं किं पुनरिह नृपतिसम्भूतम् ॥ ७९ ॥

लग्नेश बलवान् होकर केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो गोप कुल में जन्म लेने पर भी राजा सदृश बनाता है। यदि राजकुल में उत्पन्न हो तो कहना ही क्या ? ॥ ७९ ॥

रविस्तृतीये भृगुनन्दनः सुखे बुधो द्वितीये यदि पञ्चमे स्थितः ।
न नीचराशौ न च खान्तवेश्मगो भवेन्नरेन्द्रस्त्रिसमुद्रपालकः ॥८०॥

सूर्य ३ रे में, चौथे में शुक्र, बुध पाँचवें या द्वितीय में हो और कोई ग्रह नीच में नहीं हो तथा १० वें, बारहवें घर में कोई ग्रह न हो तो जातक तीन समुद्र का राजा होता है ॥ ८० ॥

यदि भवति च केन्द्रे धर्मभे स्वोच्चसंस्थः
सुतभवनगतो वा वाक्पतिर्जन्मकाले ।
स भवति नरनाथः सार्वभौमो-जितारिः
शशि-बुध-भृगुपुत्रैरन्वितो वीक्षितो वा ॥ ८१ ॥

जन्म समय में गुरु केन्द्र (१।४।७।१०) इन स्थानों में अथवा ९ वें में या अपने उच्च में अथवा पाँचवें में हो तो जातक राजा होता है। वही गुरु यदि चन्द्रमा, बुध और शुक्र से युत दृष्ट हो तो शत्रु को हराने वाला सार्वभौम राजा होता है ॥ ८१ ॥

विलग्ननाथः सहजाऽस्तसंस्थः सुहृद्गृहे मित्रयुतो यदि स्थितः ।
करोति सर्वं पृथिवीतलस्य दुर्वारवैरिघ्नमहोदयं शुभम् ॥८२॥

लग्नेश तृतीय अथवा सप्तम स्थान में अपने मित्र से युत, मित्र के घर में हो तो शत्रु रहित पृथ्वीपति होता है ॥ ८२ ॥

लग्नं विहाय केन्द्रे सकलकलापूरितो निशानाथः ।
विदधाति महीपालं विक्रमबलवाहनोपेतम् ॥ ८३ ॥

पूर्ण बली चन्द्रमा लग्नातिरिक्त केन्द्र (४।७।१०) में हो तो उसको विक्रम, सेना तथा वाहन युक्त राजा बनाता है ॥ ८३ ॥

स्वोच्चे स्वकीयभवने क्षितिपालतुल्यो
लग्नेऽर्कजे भवति देशपुराधिनाथः ।
दारिद्र्यदुःखपरपीडित एव लोके
शेषेषु सर्वजननिन्द्यशरीरचेष्टः ॥ ८४ ॥

शनि अपने उच्च का केन्द्र या अपने घर (१०–११) में हो तो वह राजा के तुल्य होता है। और वही शनि लग्न में हो तो वह देश तथा पुर का स्वामी होता है। उक्त लक्षण हीन शनि होने से दारिद्रय, दुःख और शत्रु से पीड़ित, सर्वत्र निन्दा युक्त होता है ॥ ८४ ॥

लग्ने चोच्चपदं गते दिनपतौ चन्द्रे धनस्थे भृगौ
दुश्चिक्ये तमसा युते सुखगते जीवे व्ययस्थे बुधे।
लाभे सूर्यसुते हि शत्रुभवने जातः कुले भूपते-
र्जातोऽयं मनुजः सदा नृपगणे सम्राट्पदं गच्छति ॥ ८५ ॥

यदि उच्च का सूर्य होता हुआ जन्म लग्न में पड़े और चन्द्रमा दूसरे में हो, तृतीय में राहु युक्त शुक्र हो, चौथे में बृहस्पति, बारहवें में बुध और शनि, ग्यारहवें या छठें घर में हो तो इस योग में जन्म लेने वाला चक्रवर्ती राजा होता है ॥ ८५ ॥

उच्चाभिलाषी सविता त्रिकोणे शशी तथा जन्मनि यस्य जन्तोः।
भुनक्ति पृथ्वीं स हि रत्नपूर्णां बृहस्पतिः केन्द्रगतो यदि स्यात् ॥८६॥

उच्चाभिलाषी मीन राशि का होता हुआ सूर्य यदि जन्म लग्न से त्रिकोण में हो तथा चन्द्रमा लग्न में और बृहस्पति केन्द्रगत हो तो वह बहु रत्न पूर्ण पृथ्वी का पालन करता है ॥ ८६ ॥

सर्वेऽप्याकाशवासाः स्फटिकविमलताकाशकार्पादवेषा
लग्नं संवीक्ष्यमाणा नरपतितिलकं तं समुत्पादयन्ति।
नीयन्तेऽस्योपदार्थं जलनिधिसलिलोद्भूतरत्नानि भूपैः
बिभ्राणो नातिभीतिं बहुविधविभवो भद्रमालार्पितश्रीः ॥ ८७॥

सब प्रकार से शुद्ध सब ग्रह लग्न को देखते हों तो उसको बड़े-बड़े अन्य राजा रत्नों की भेंट करते हैं और वह निर्भय रहता है। प्रशस्ति युक्त जयमाल, लक्ष्मी से युक्त, राजाओं में श्रेष्ठ होता है ॥ ८७ ॥

सर्वैर्गगनभ्रमणैर्दृष्टे लग्ने भवेन्महीपालः।
बलिभिः सौख्यार्थयुतो विगतभयो दीर्घजीवी च ॥ ८८ ॥

सब ग्रह बली होकर लग्न को देखते हों तो वह भयरहित, दीर्घायु, सुख तथा धन से युक्त राजा होता है ॥ ८८ ॥

चतुर्थे भवने शुक्रो दशमे च धरासुतः।
रविः सौरियुतो यस्य राजा भवति निश्चितम् ॥ ८९ ॥

लग्न से चतुर्थ में शुक्र और दशम में मङ्गल सूर्य-शनैश्चर के साथ हों तो वह निश्चित राजा होता है ॥ ८९ ॥

मिथुनेऽजे वृषे मीने कुम्भे च मकरे ग्रहाः ।
यो योगेऽस्मिन्नरो जातो रक्षको गजवाजिनाम् ॥ ९० ॥

मिथुन, मेष, वृष, मीन, कुम्भ और मकर इन्हीं राशियों में सब ग्रह हों तो इस योग में जन्म लेनेवाला पुरुष हाथी-घोड़ों का पालन करनेवाला होता है ॥ ९० ॥

जीवनिशाकरसूर्याः पञ्चमनवमे तृतीयगा यस्य ।
लग्नाद्यदि भवति तदा कुवेरतुल्यो धनप्रसवैः ॥ ९१ ॥

लग्न से पञ्चम, नवम, तृतीय घर में बृहस्पति, चन्द्रमा और सूर्य हों तो वह मनुष्य धन में कुवेर के समान होता है ॥ ९१ ॥

सिंहे जीवस्तुलाकीटधनुर्मकरकेषु च ।
ग्रहाश्चाऽन्ये यदा जातो देशभोगी भवेन्नरः ॥ ९२ ॥

सिंह राशि में गुरु हो, शेष सब ग्रह तुला, वृश्चिक, धनु, मकर में हों तो इस योग में जन्म लेनेवाला देश को भोगने वाला होता है ॥ ९२ ॥

स्वगृहे च भवेत्सूर्यस्तुलायां च भवेत्सितः ।
सौरिर्मिथुनसंस्थः स्याद् राजयोगः प्रजायते ॥ ९३ ॥

अपने घर में सूर्य, तुला में शुक्र और मिथुन में शनि हो तो भी राज-योग होता है ॥ ९३ ॥

षष्ठे च पञ्चमे चैव नवमे द्वादशे तथा ।
सौम्यक्रूरग्रहा योगा राजमान्यः सकण्टकः ॥ ९४ ॥

छठे, पाँचवें, नवें तथा बारहवें घर में शुभाशुभ ग्रह हों तो वह राजाओं में मान्य होता है, लेकिन साथ ही उसे झगड़े भी बहुत लगे रहते हैं ॥ ९४ ॥

त्रिकोणसंस्था बुधजीवशुक्रास्त्रिषड्गते सोमसुतेऽर्कपुत्रे ।
जायास्थिते चेत्परिपूर्णचन्द्रे नूनं स जातो नृपतेः समानः ॥ ९५ ॥

त्रिकोण में बुध, बृहस्पति, शुक्र हों और बुध शनि क्रम से तीसरे, छठे हों और सप्तम में पूर्ण बली चन्द्रमा हो तो इस योग में जन्म लेने वाला राजा के समान होता है ॥ ९५ ॥

लग्ने सौरिस्तथा चन्द्रश्चाऽष्टमे भवने सिताः ।
राजमान्यो महाकामी भोग्यपत्नी जनस्तथा ॥ ९६ ॥

लग्न में शनि और चन्द्रमा हों, अष्टम में शुक्र हो तो वह राजमान्य तथा कामुक-भोग्यपत्नी जनों से युक्त होता है ॥ ९६ ॥

धने शुक्रश्च भौमश्च मीने जीवो घटे बुधः ।
नीचे चन्द्रः सूर्ययुक्तो राजयोगोऽभिधीयते ॥ ९७ ॥

अस्मिन् योगे नरो जातो राजा विभववर्जितः ।
दानभोगातिविख्यातः सामान्यः स भवेन्नरः ॥ ९८ ॥

लग्न से धनभाव में शुक्र और मङ्गल हों, मीन में गुरु, कुम्भ में बुध अथवा सूर्य के संग नीच का चन्द्रमा हो तो इसे राजयोग कहते हैं। इस योग में जन्म लेने वाला विभव रहित, राजा और दान, भोग में सामान्य विख्यात होता है ॥ ९७-९८ ॥

मीने शुक्रो बुधश्चाऽन्ते लग्ने सूर्यः शशी धने ।
सहजे च भवेद्राहु राजयोगः प्रचक्ष्यते ॥ ९९ ॥

मीन में शुक्र, बारहवें भाव में बुध, सूर्य लग्न में और द्वितीय भाव में चन्द्रमा तथा तीसरे घर में राहु हो तो इसे राजयोग कहते हैं ॥ ९९ ॥

मीने जीवस्तथा शुक्रश्चन्द्रमाश्च यदा भवेत् ।
तस्य जातस्य राज्यं स्यात् पत्नी च बहुपुत्रिका ॥ १०० ॥

बृहस्पति, शुक्र और चन्द्रमा ये तीनों मीन राशि के हों तो इस योग में जन्म लेनेवाले को राज्य प्राप्ति होती है और उसकी पत्नी अनेक पुत्र-वाली होती है ॥ १०० ॥

आयस्थाने यदा सौम्यः क्रूरस्थानीयचन्द्रमाः ।
कर्मस्थाने पुनः सौम्यस्तदा राज्यं विधीयते ॥ १०१ ॥

लग्न से ग्यारहवें स्थान में कोई शुभग्रह हो और क्रूर ग्रह की राशि का चन्द्रमा हो और लग्न से दशम घर में भी सौम्य ग्रह हो तो उसको राज्य प्राप्त होता है ॥ १०१ ॥

आदौ जीवः पञ्चमे च दशमे चन्द्रमा भवेत् ।
राजमान्यो महाबुद्धिस्तेजस्वी चाऽतिविक्रमः ॥ १०२ ॥

लग्न में बृहस्पति और दशम या पञ्चम में चन्द्रमा हो तो वह राज-मान्य, महाबुद्धिमान् और बड़ा तेजस्वी होता है ॥ १०२ ॥

अथाऽरिष्टकथनम्-

सूर्याच्च नवमे तातश्चन्द्रान्माता चतुर्थतः ।
तृतीये भौमतो भ्राता बुधात् तुर्ये च मातुलः ॥ १ ॥

सूर्य से नवम स्थान में क्रूर ग्रह हों तो पिता को, चन्द्रमा से चौथे घर में क्रूर ग्रह हों तो माता को, मङ्गल से तीसरे घर में क्रूर ग्रह हों तो उसके भाई को, बुध से चौथे घर में क्रूर ग्रह हों तो उसके मामा को कष्ट होता है ॥ १ ॥

गुरोः पञ्चमतः पुत्रो भृगोः सप्तमतः स्त्रियः।
शनेरष्टमतो मृत्युः क्रूरः कष्टं लभेत चेत् ॥ २ ॥

गुरु से पञ्चम घर में क्रूर ग्रह हों तो पुत्र को और शुक्र से सप्तम घर में क्रूर ग्रह हों तो स्त्री को और शनि से अष्टम घर में क्रूर ग्रह हों तो उसी की मृत्यु होती है ॥ २ ॥

द्वादशभवनाऽरिष्टविचारः-

सूर्यो भौमस्तथा राहुः शनिर्मूर्तौ यदा गतः।
सन्तापो रक्तपीडा च सौम्यः सर्वनिरोगता ॥ १ ॥

सूर्य, मङ्गल, राहु और शनि लग्न में हों तो सन्ताप और रक्त-विकार से पीड़ा होती है और सौम्य ग्रहों से शरीर सदा निरोग रहता है ॥ १ ॥

भौमक्षेत्रे यदा जीवो जीवक्षेत्रे च भूसुतः।
द्वादशे वत्सरे मृत्युर्बालकस्य न संशयः ॥ २ ॥

मङ्गल के घर में बृहस्पति और बृहस्पति के घर में मङ्गल हो तो उस बालक की बारहवें वर्ष में निःसन्देह मृत्यु होती है ॥ २ ॥

धनस्थाने यदा भौमः शनैश्चरसमन्वितः।
सहजे च भवेद्राहुर्वर्षमेकं स जीवति ॥ ३ ॥

शनि-मंगल लग्न से दूसरे घर में हों और तीसरे घर में राहु हो तो वह एक वर्ष जीता है ॥ ३ ॥

चतुर्थे च यदा राहुः षष्ठे चन्द्रोऽष्टमेऽपि वा।
सद्यश्चैन भवेन्मृत्युः शङ्करो यदि रक्षति ॥ ४ ॥

लग्न से चतुर्थ राहु हो और छठें या आठवें चन्द्रमा हो तो बालक की यदि महादेव भी रक्षा करें तब भी तत्काल मृत्यु होती है ॥ ४ ॥

अष्टमस्थो निशानाथः केन्द्रः पापेन संयुतः।
चतुर्थे च यदा राहुर्वर्षमेकं स जीवति ॥ ५ ॥

लग्न से अष्टम चन्द्रमा और केन्द्र में पापग्रह हों और चतुर्थ घर में राहु हो तो वह एक वर्ष जीता है ॥ ५ ॥

लग्ने व्यये धने क्रूरा यदा मृत्यौ च संस्थिताः ।
विष्ठावरोधतो दुःखं द्वादशाऽष्टमवर्षयोः ॥ ६ ॥

लग्न, धन और अष्टम तथा व्यय में क्रूर ग्रह हों तो उसको बारहवें या आठवें वर्ष में दस्त बन्द होने से पीड़ा होती है ॥ ६ ॥

सप्तमे भवने भौमश्चाऽष्टमे भार्गवो यदा ।
नवमे भवने सूर्यश्चाल्पायुस्तस्य कथ्यते ॥ ७ ॥

लग्न से सप्तम घर में मङ्गल, अष्टम में शुक्र और नवम में सूर्य हो तो उसकी अल्पायु होती है ॥ ७ ॥

धने क्रूरः स्वभवने क्रूरः पातालगो यदा ।
दशमे भवने क्रूरः कष्टं जीवति जातकः ॥ ८ ॥

लग्न से दूसरे घर में स्वराशि का होकर कोई क्रूरग्रह हो और चौथे घर में और दशम घर में भी क्रूर ग्रह हों तो वह बहुत कष्ट से जीता है ॥८॥

स्मरे व्यये च सहजे मध्ये क्रूरा यदा ग्रहाः ।
तदा जातस्य बालस्य शरीरे कष्टता दिशेत् ॥ ९ ॥

सातवें-बारहवें-तीसरे तथा दशवें घर में क्रूर ग्रह हों तो इस योग में जन्म लेनेवाले के शरीर में कष्ट कहना चाहिए ॥ ९ ॥

लग्नस्थाने यदा भौमो द्वादशे च यदा गुरुः ।
शुक्रः शत्रुगृहे यस्य मासमेकं स जीवति ॥ १० ॥

लग्न में मङ्गल, बारहवें घर में बृहस्पति और छठें घर में शुक्र हों तो वह बालक एक महीना जीता है ॥ १० ॥

क्षीणचन्द्रे गते लग्ने क्रूरग्रहनिरीक्षिते ।
द्वितीये द्वादशे भौमे मासमेकं स जीवति ॥ ११ ॥

लग्न में क्षीण चन्द्रमा को क्रूर ग्रह देखता हो और द्वितीय या द्वादश घर में मंगल हो तो वह बालक भी एक महीना जीता है ॥ ११ ॥

मूर्तिसप्तमयोः क्रूरा द्वितीयव्ययगामिनः ।
चतुर्थे च यदा राहुः सप्ताहान्म्रियते तथा ॥ १२ ॥

लग्न, सप्तम, द्वादश तथा द्वितीय घर में भी क्रूर ग्रह हों और चतुर्थ घर में राहु हो तो बालक सात दिन में ही मर जाता है ॥ १२ ॥

षष्ठाऽष्टमेऽपि चन्द्रः सद्यो मरणाय पापसंदृष्टः ।
अष्टाभिः शुभदृष्टो वर्षैर्मिश्रैस्तदर्द्धेन ॥१३॥ व. मि.

लग्न से छठे, आठवें में पापग्रह से दृष्ट चन्द्रमा हो तो बालक की तत्काल मृत्यु करता है। यदि शुभग्रहों से दृष्ट चन्द्रमा षष्ठाष्टम घर में स्थित हो तो उस बालक की अष्टम वर्ष में मृत्यु करता है। यदि शुभाशुभ ग्रहों से दृष्ट चन्द्रमा छठें, आठवें घर में हो तब उस बालक की मृत्यु चार वर्ष में होती है ॥ १३ ॥

द्वादशस्थो यदा सौरिर्लग्नसंस्थश्च भूसुतः।
चतुर्थः सैंहिकेयश्च ह्यष्टमासान् स जीवति ॥ १४ ॥

लग्न से बारहवें भाव में शनि, लग्न में मंगल और चतुर्थ घर में राहु हो तो वह बालक आठ महीना जीता है ॥ १४ ॥

शुभलग्ने यदा जीवो ह्यष्टमे च शनैश्चरः।
रन्ध्रसंस्थे च पापे च सद्यो मृत्युप्रदो भवेत् ॥ १५ ॥

शुभग्रह के लग्न में बृहस्पति हो, अष्टम घर में शनि हो और उसी घर में अन्य पापग्रह भी हों तो जल्दी मृत्यु देनेवाले होते हैं ॥ १५ ॥

चतुर्थे नवमे सूर्ये त्वष्टमे च बृहस्पतौ।
द्वादशे च शशाङ्के च सद्यो मृत्युकरो भवेत् ॥ १६ ॥

लग्न से चौथे या नवें घर में सूर्य, अष्टम बृहस्पति और बारहवें में चन्द्रमा हो तो उस मनुष्य की तत्काल मृत्यु होती है ॥ १६ ॥

शशिसूर्यसिते केन्द्रे संयुक्तः सोम आर्किणा।
हन्ति वर्षद्वयेनैव जातकं शिष्टभावितः ॥ १७ ॥

चन्द्रमा-सूर्य-शुक्र केन्द्र में हों और चन्द्रमा शनि से युक्त हो तो वह बालक शुभग्रहों से भी भावित क्यों न हो तथापि दो वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ १७ ॥

गुरुर्मन्दगृहे वक्री मन्दगौ बुधभास्करौ।
ईप्सितं कुरुते मृत्युं मन्दे चैकादशे ध्रुवम् ॥ १८ ॥

बृहस्पति वक्री होकर शनि के घर में हों और बुध-सूर्य सप्तम भाव में हो तो जातक वांछित मृत्यु को पाता है और एकादश में शनि हो तो शीघ्र ही मृत्यु पाता है ॥ १८ ॥

सूर्यमन्दगृहे शुक्रो गुरुणा च विलोकितः।
नवभिर्मारयत्येनं वर्षैर्जातं न संशयः ॥ १९ ॥

बृहस्पति से दृष्ट शुक्र, सूर्य या शनि के घर में हो तो इस योग में जन्म लेनेवाला नवें वर्ष में मर जाता है ॥ १९ ॥

सूर्ये सहितश्चन्द्रो बुधवेश्मगतः सदा ।
न वीक्षितश्च सौम्येन नववर्षेण मृत्युदः ॥ २० ॥

सूर्य-चन्द्रमा बुध के घर में हों और किसी सौम्यग्रह से नहीं देखे जाते हों तो वह नवें वर्ष में मृत्यु पाता है ॥ २० ॥

बुधः सूर्येन्दुसंयुक्तो वीक्षितोऽपि शुभैर्ग्रहैः ।
वर्षैरेकादशैस्तेन मारयत्येव निश्चितम् ॥ २१ ॥

सूर्य चन्द्रमा से युक्त बुध शुभग्रह से देखा जाता हो तो ग्यारहवें वर्ष की अवस्था में मृत्यु करता है ॥ २१ ॥

लग्नादष्टमगो राहुः शनि-सूर्यावलोकितः ।
निरीक्षितः शुभैः कुर्यादष्टद्वादशभिः क्षयम् ॥ २२ ॥

लग्न अष्टम घर में स्थित राहु यदि शनि सूर्य से देखा जाता हो तो अष्टम में और शुभग्रह दृष्ट हो तो बारहवे वर्ष मृत्यु होती है ॥ २२ ॥

धने राहुर्बुधः शुक्रः सौरिः सूर्यो यदा स्थितः ।
तत्र जातस्य मृत्युः स्यान्मृते पितरि जायते ॥ २३ ॥

लग्न से दूसरे घर में राहु, शुक्र, शनि, सूर्य हो तो वह पिता के मरने के पश्चात् जन्म लेता है और खुद भी थोड़े दिनों में मर जाता है ॥ २३ ॥

व्यये राहुः सौरिसौम्यो जीवो लग्ने च पञ्चमे ।
अत्र योगे च यो जातो जातमात्रः स नश्यति ॥ २४ ॥

लग्न से बारहवे में राहु शनि बुध हों, गुरु लग्न या पञ्चम में हो तो जन्म लेते ही मर जाता है ॥ २४ ॥

जीवार्कराहुभौमाः स्युश्चत्वारः क्रूरवेश्मगाः ।
सप्तमे च गृहे शुक्रो देहकष्टकराः सदा ॥ २५ ॥

बृहस्पति, सूर्य, राहु तथा मंगल ये चारों ग्रह क्रूरग्रह के घर में बैठे हों और लग्न से सप्तम घर में शुक्र हो तो ये सदा देह में कष्ट करने वाले होते हैं ॥ २५ ॥

गुह्यस्थाने यदा भौमो राहुसौरिसमन्वितः ।
नृपपीडा भवेत्तस्य स्वासने नैव तिष्ठति ॥ २६ ॥

छठे स्थान में राहु शनि से युक्त मंगल हो तो उसको राजपीडा होती है, इसी कारण मारा-मारा फिरता है, अपने स्थान पर कभी नहीं बैठता ॥ २६ ॥

चतुर्थे राहुसौरार्काः षष्ठे चन्द्रो बुधः कुजः।
भार्गवश्चाऽत्र यो जातः स गृहस्य क्षयङ्करः॥ २७॥

चतुर्थ घर में राहु-सूर्य तथा शनि हो और चन्द्र, बुध, मंगल, शुक्र छठे घर में स्थित हों तो जन्म लेने वाला अपने घर का नाश करता है॥ २७॥

एकः पापोऽष्टमस्थोऽपि शत्रुक्षेत्रे यदा भवेत्।
पापेन वीक्षितो वर्षान्मारयत्येव बालकम्॥ २८॥

एक भी पापग्रह शत्रुक्षेत्री होकर लग्न से अष्टम घर में बैठा हो तथा उसे पापग्रह देखते हों तो उसको एक वर्ष में मारता है॥ २८॥

भौमभास्करमन्दाश्च शत्रुक्षेत्रेऽष्टमे यदा।
यमेन रक्षितोऽप्येष वर्षमात्रं स जीवति॥ २९॥

मङ्गल, सूर्य तथा शनि शत्रुक्षेत्री होकर अष्टम घर में हों तो वह बालक यदि यमराज से भी रक्षित हो तो भी एक वर्ष जीता है॥ २९॥

वक्री शनिर्भौमगेहे केन्द्रे षष्ठेऽष्टमेऽपि वा।
कुजेन बलिना दृष्टो हन्ति वर्षद्वये शिशुम्॥ ३०॥

वक्री शनि मङ्गल के घर का होकर केन्द्र में या छठे, आठवें घर में हो और बली मङ्गल उसे देखता हो तो वह दो वर्ष में मरता है॥ ३०॥

लग्नस्थश्च यदा भानुः पञ्चमस्थो निशाकरः।
अष्टमस्था यदा पापास्तदा जातो न जीवति॥ ३१॥

लग्न में सूर्य, पञ्चम घर में चन्द्रमा हो और पापीग्रह सब अष्टम घर में हों तो जन्म लेने वाला नहीं जीता है॥ ३१॥

शनिराहुकुजैर्युक्तः सप्तमे नवमे शशी।
सप्तमे दिवसे हन्ति मासे वा सप्तमे शिशुम्॥ ३२॥

शनि-राहु तथा मंगल से युक्त चन्द्रमा सप्तम या नवम घर में हो तो वह सातवें दिन या सातवें मास में मर जाता है॥ ३२॥

लग्नपः पापसंयुक्तो लग्ने वा पापमध्यगे।
लग्नात्सप्तमगः पापस्तदा चात्महतिर्भवेत्॥ ३३॥

लग्नेश पापग्रह युक्त हो अथवा लग्न पापग्रहों के मध्य में हो और लग्न से सप्तम घर में पापग्रह हों तो वह आत्मघाती होता है॥ ३३॥

क्रूरक्षेत्रे यदा जीवो लग्नेशोऽस्तं गतो भवेत्।
अर्कमा च तदा जातः सप्तवर्षाणि जीवति॥ ३४॥

पापग्रह की राशि का बृहस्पति हो और लग्नेश अस्तगत हो तो वह कुकर्मी होता है और सात वर्ष जीता है ।। ३४ ।।

अष्टमे च यदा सौरिर्जन्मस्थाने च चन्द्रमाः ।
मन्दाग्न्युदररोगी च गात्रहीनश्च जायते ।। ३५ ।।

अष्टम घर में शनि हो और लग्न में चन्द्रमा हो तो वह मन्दाग्नि (उदर का) रोगी तथा किसी अंग से हीन होता है ।। ३५ ।।

शनिक्षेत्रे यदा भानुर्भानुक्षेत्रे यदा शनिः ।
द्वादशे वत्सरे मृत्युर्निश्चितं तस्य जायते ।। ३६ ।।

शनि के घर में सूर्य और सूर्य के घर में शनि हो तो इस योग में जन्म लेनेवाले की बारहवें वर्ष में मृत्यु होती है ।। ३६ ।।

बुधभौमौ यदा लग्ने षष्ठस्थानेऽथवा स्थितौ ।
तस्करश्चौर्यकर्मा स्याद्धस्तपादौ च नश्यतः ।। ३७ ।।

लग्न में या छठे घर में बुध और मंगल हो तब वह मनुष्य चोरी के काम करनेवाला होता है और उसके हाथ-पाँव नष्ट होते हैं ।। ३७ ।।

षष्ठेऽष्टमे वा मूर्तौ च शत्रुक्षेत्रे यदा बुधः ।
चतुर्वर्षे भवेन्मृत्युर्बालकस्य न संशयः ।। ३८ ।।

छठे घर में या लग्न में शत्रुक्षेत्री होकर बुध हो तो उस बालक की चौथे वर्ष में मृत्यु होती है ।। ३८ ।।

अष्टमस्थो यदा राहुः केन्द्रस्थाने च चन्द्रमा ।
सद्य एव भवेन्मृत्युर्बालकस्य न संशयः ।। ३९ ।।

लग्न से अष्टम घर में राहु और केन्द्र में चन्द्रमा हो तो उस बालक की तत्काल मृत्यु होती है ।। ३९ ।।

चतुर्थस्थो यदा राहुः षष्ठाऽष्टमगृहे शशी ।
त्रिंशत्या दिवसैर्मृत्युर्बालकस्य न संशयः ।। ४० ।।

चतुर्थ घर में राहु और छठे-आठवें घर में चन्द्रमा हो तो उसकी बीस दिन में मृत्यु हो जाती है ।। ४० ।।

सप्तमे नवमे राहुः शत्रुक्षेत्रे यदा भवेत् ।
षोडशे वत्सरे मृत्युर्बालकस्य न संशयः ।। ४१ ।।

लग्न से सप्तम या नवम घर में शत्रुक्षेत्री होकर राहु बैठा हो तो उसकी सोलह वर्ष में मृत्यु होती है ।। ४१ ।।

द्वादशस्थो यदा चन्द्रः पापः स्यादष्टमे गृहे ।
एकमासे भवेन्मृत्युस्तस्य बालस्य निश्चितम् ।। ४२ ।।

लग्न से बारहवें घर में चन्द्रमा हो और अष्टम घर में पापग्रह हों तो उस बालक की एक मास के भीतर मृत्यु होती है ।। ४२ ।।

जन्मस्थाने यदा राहुः षष्ठस्थाने च चन्द्रमाः ।
अपस्मारस्तदा रोगो बालकस्य हि जायते ।। ४३ ।।

लग्न में राहु और छठे घर में चन्द्रमा हो तो उस बालक को अपस्मार (मृगी) रोग होता है ।। ४३ ।।

भार्गवेण युतश्चन्द्रः षष्ठाऽष्टमगतो भवेत् ।
मन्दाग्न्युदररोगी च हीनाङ्गोऽपि च बालकः ।। ४४ ।।

शुक्र युत चन्द्रमा छठे-आठवें घर में बैठा हो तो वह बालक मन्दाग्नि रोग से युक्त और हीनांग होता है ।। ४४ ।।

षष्ठाऽष्टमे यदा चन्द्रो बुधयुक्तश्च तिष्ठति ।
विषदोषेण बालस्य तदा मरणमुच्यते ।। ४५ ।।

बुध युक्त चन्द्रमा छठे या आठवें घर में हो तो उस बालक की विष-दोष से मृत्यु होती है ।। ४५ ।।

भानुना संयुतश्चन्द्रः षष्ठाऽष्टमयुतो भवेत् ।
गजदोषेण मृत्युर्वा सिंहदोषेण वा भवेत् ।। ४६ ।।

सूर्य युक्त चन्द्रमा छठे, आठवें घर में हो तो वह बालक हाथी के दोष से या सिंह के निमित्त से मृत्यु पाता है ।। ४६ ।।

एकोऽपि यदि मूर्तौ स्याज्जन्मकाले यदा खलः ।
स्थानहीनो भवेद् बालो वृत्तिदुष्टा सदा पुनः ।। ४७ ।।

लग्न में एक भी दुष्टग्रह स्थित हो तो वह स्थान से हीन होकर दुष्ट जीविका करनेवाला होता है ।। ४७ ।।

लग्नेऽष्टमे यदा राहुश्चन्द्रेण यदि दृश्यते ।
दशाहैर्जायते तस्य बालस्य मरणं ध्रुवम् ।। ४८ ।।

राहु लग्न या अष्टम में हो और चन्द्रमा से दृष्ट हो तो उस बालक का दश दिन के भीतर मरण हो जाता है ।। ४८ ।।

लग्नाच्च नवमे सूर्यः सूर्यपुत्रे तथाऽष्टमे ।
एकादशे भार्गवे च मासमेकं स जीवति ।। ४९ ।।

जिसकी कुण्डली में लग्न से नवम में सूर्य हो और अष्टम में शनि हो और ११ में शुक्र हो तो वह बालक एक मास जीता है ॥ ४९ ॥

नवमे दशमे चन्द्रः सप्तमे च यदा सितः ।
पापे पातालसंस्थे च वंशच्छेदकरो नरः ॥ ५० ॥

लग्न से नवम या दशम में चन्द्रमा और सप्तम घर में शुक्र और चतुर्थ घर में कोई पापग्रह हो तो वह बालक अपने वंश का नाश करने वाला होता है ॥ ५० ॥

शत्रुक्षेत्रेऽष्टमे षष्ठे द्वितीये द्वादशे रविः ।
स जीवेद्रसवर्षाणि बालको नाऽत्र संशयः ॥ ५१ ॥

लग्न से छठे या आठवें अथवा द्वितीय, द्वादश घर में शत्रुक्षेत्री होकर सूर्य हो तो वह बालक निःसन्देह छः वर्ष जीता है ॥ ५१ ॥

शत्रुक्षेत्रेऽष्टमे सूतौ बुधः षष्ठे प्रजायते ।
बालो जीवति वर्षाणि चत्वार्यत्र न संशयः ॥ ५२ ॥

लग्न से छठे या आठवें घर में शत्रुक्षेत्री होकर बुध हो तो वह बालक निःसन्देह चार ही वर्ष जीता है ॥ ५२ ॥

एकादशे तृतीये च नवमे पञ्चमे गुरौ ।
शत्रुक्षेत्रेऽष्टपञ्चाशदायुर्भवति निश्चितम् ॥ ५३ ॥

लग्न से ग्यारहवें, तीसरे, नवें, पाँचवें घर में शत्रुक्षेत्री होकर बृहस्पति हो तो उसकी अट्ठावन वर्ष की आयु होती है ॥ ५३ ॥

नवमे पञ्चमे वाऽपि रिपुक्षेत्रे बृहस्पतिः ।
तदा नरस्य षट्त्रिंशद्वर्षाण्यायुर्न संशयः ॥ ५४ ॥

नवम या पञ्चम घर में शत्रुक्षेत्री होकर बृहस्पति हो तो वह निःसन्देह छत्तीस वर्ष जीता है ॥ ५४ ॥

शत्रुक्षेत्रे यदा शुक्रो द्वितीये द्वादशे भवेत् ।
एकविंशतिवर्षायुर्जायते बालको ध्रुवम् ॥ ५५ ॥

शत्रुक्षेत्री होकर द्वितीय या द्वादश घर में शुक्र हो तो उस बालक की इक्कीस वर्ष की आयु होती है ॥ ५५ ॥

शत्रुक्षेत्रेऽष्टमे षष्ठे द्वितीये द्वादशे शनिः ।
अष्टौ दिनान्यष्टमासानष्टवर्षाणि जीवति ॥ ५६ ॥

शत्रुक्षेत्री होकर छठें, आठवें या द्वितीय, द्वादश घर में शनि हो तो उसकी आठ दिन, आठ मास या आठ वर्ष की आयु होती है ॥ ५६ ॥

चन्द्रक्षेत्रे यदा भौमो जायते मनुजः सदा ।
रक्तपित्तेन हीनाङ्गो नानाव्याधिसमन्वितः ॥ ५७ ॥

चन्द्र क्षेत्र में मंगल बैठा हो तो वह मनुष्य रक्त-पित्त के विकार से हीन अंग और नाना प्रकार की व्याधियों से युक्त होता है ॥ ५७ ॥

चन्द्रक्षेत्रे यदा चान्द्रिर्जायते यस्य जन्मनि ।
स जातः क्षयरोगी स्यात् कुष्ठादिभिरुपद्रुतः ॥ ५८ ॥

चन्द्रमा के घर में यदि बुध हो तो वह क्षयरोग से और कुष्ठ के उपद्रव से युक्त होता है ॥ ५८ ॥

राहौ च केन्द्रगे मृत्युः पापानां दृष्टिसंयुते ।
संवत्सरे तु दशमे षोडशे तु विशेषतः ॥ ५९ ॥

पापग्रह से दृष्ट-युक्त राहु केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो उसकी दशम वर्ष या षोडश वर्ष में तो अवश्य ही मृत्यु हो जाती है ॥ ५९ ॥

चन्द्रः सप्तमभावे शनिभौमराहुयुतो भवति ।
सप्तमदिवसे मृत्युः सप्तममासे न सन्देहः ॥ ६० ॥

लग्न से सप्तम घर में शनि-मंगल और राहु से संयुक्त चन्द्रमा हो तो सप्तम दिन या सप्तम मास में अवश्य मृत्यु होती है ॥ ६० ॥

भौमे क्षेत्रे यदा जीवो षष्ठे वाऽप्यष्टमे विधुः ।
षष्ठेऽष्टमे भवेन्मृत्यू रक्षको यदि शङ्करः ॥ ६१ ॥

मंगल के क्षेत्र का बृहस्पति हो और छठे, आठवें घर में चन्द्रमा हो तो उसकी शिव जी भी रक्षा करें तो भी छठे-आठवें वर्ष में मृत्यु हो जाती है ॥ ६१ ॥

जन्मसप्तमभे सौरिरष्टमे यदि चन्द्रमाः ।
ब्रह्मपुत्रो यदा जातः सोऽपि बालो न जीवति ॥ ६२ ॥

लग्न या सप्तम घर में शनि हो और अष्टम घर में चन्द्रमा हो तो ब्रह्मा का पुत्र भी होवे तो भी नहीं जीता है ॥ ६२ ॥

षष्ठाऽष्टमे यदा चन्द्रो रविर्भवति सप्तमः ।
पितृमातृधनं हन्ति मासमेकं स जीवति ॥ ६३ ॥

लग्न से छठे, आठवें घर में चन्द्रमा और सप्तम घर में सूर्य हो तो वह माता-पिता के धन का नाश कर केवल एक मास भर जीता है ॥ ६३ ॥

द्वादशे जीवशुक्रौ च जन्मतो राहुरेव च ।
सप्तमे च यदा सौरिर्वर्षमेकं स जीवति ॥ ६४ ॥

लग्न से बारहवें में गुरु-शुक्र और राहु हो तथा लग्न से सप्तम में शनि हो तो वह एक वर्ष जीता है ॥ ६४ ॥

भौमे दिवाकरे छिद्रे जातः शत्रुगृहे यदि ।
स नरो म्रियतेऽवश्यं यमो मासेन रक्षकः ॥ ६५ ॥

शत्रुघर के होकर मंगल या सूर्य अष्टम में बैठे हों तो यदि यम भी रक्षा करें तो भी एक मास में मर जाता है ॥ ६५ ॥

यदा लग्ने ग्रहः क्रूरो षष्ठे वाऽप्यष्टमे विधुः ।
तदा सद्यो भवेन्मृत्युर्जातकस्य न संशयः ॥ ६६ ॥

लग्न में क्रूरग्रह हों और छठे या आठवें में चन्द्रमा हो तो इस योग में जन्म लेनेवाले की तत्काल मृत्यु होती है ॥ ६६ ॥

चतुर्थेऽपि यदा राहुः केन्द्रे भवति चन्द्रमाः ।
विंशद्वर्षे भवेन्मृत्युर्जातकस्य न संशयः ॥ ६७ ॥

चतुर्थ घर में राहु और केन्द्र में चन्द्रमा हो तो इस योग में जन्म लेने वाला वीस वर्ष जीता है ॥ ६७ ॥

सप्तमस्थो यदा राहुर्जन्मकाले यदा तदा ।
दशवर्षैर्भवेन्मृत्युरमृतं यदि पीयते ॥ ६८ ॥

जन्म समय में सप्तम में राहु हो तो यदि अमृत भी पिये तो भी दश वर्ष में मृत्यु पाता है ॥ ६८ ॥

लग्नेऽष्टमे यदा राहुश्चन्द्रो वा यदि पश्यति ।
जातकस्य तदा मृत्युर्यदि शक्रेण रक्षितः ॥ ६९ ॥

लग्न में या अष्टम में चन्द्रमा से दृष्ट राहु हो तो उसकी यदि इन्द्र भी रक्षा करें तो भी नहीं जीता है ॥ ६९ ॥

दशमेऽपि यदा भौम उच्चशत्रुगृहे स्थितः ।
जातकस्य भवेन्मृत्युर्मातुश्चैव न संशयः ॥ ७० ॥

जन्म लग्न से दशम में उच्च का या शत्रुक्षेत्री मंगल हो तो उसकी और उसकी माता की अवश्य मृत्यु होती है ॥ ७० ॥

लग्नस्थितो यदा भानुः पञ्चमस्थो निशापतिः ।
लग्नेऽष्टमे स्थिताः पापास्तदा जातो न जीवति ॥ ७१ ॥

लग्न में सूर्य और पञ्चम में चन्द्रमा हो तथा पापग्रह लग्न या अष्टम में हों तो वह बालक नहीं जीता है ॥ ७१ ॥

लग्नात्सप्तमशीतांशुः पापोऽष्टमगतो ग्रहः ।
लग्नस्थितो यदा भानुर्मासेन म्रियते शिशुः ॥ ७२ ॥

लग्न से सप्तम में चन्द्रमा और लग्न में सूर्य, अष्टम में पापग्रह हों तो इस योग में जन्म लेनेवाला एक मास में मृत्यु पाता है ॥ ७२ ॥

धने गुरुः सैंहिकेयो भौमः शुक्रश्च सप्तमे ।
अष्टमे रविचन्द्रौ च म्लेच्छः स्याद्यवने स्थितः ॥ ७३ ॥

लग्न से द्वितीय घर में राहु तथा बृहस्पति और सप्तम में मङ्गल और शुक्र हो तथा अष्टम में सूर्य और चन्द्रमा हो तो वह यवन हो जाता है ॥७३॥

लग्नस्थाने यदा भौमो अष्टमे च दिवाकरः ।
सौरिश्चतुर्थभवने तदा कुष्ठी भवेन्नरः ॥ ७४ ॥

लग्न में मङ्गल, अष्टम में सूर्य तथा चौथे में शनि हो तो वह कुष्ठी होता है ॥ ७४ ॥

धर्मस्थाने यदा पापो लग्नात्पापश्चतुर्थगः ।
कर्मस्थानगतो राहुस्तदा म्लेच्छो भवेद् ध्रुवम् ॥ ७५ ॥

लग्न से नवम तथा चतुर्थ में पापग्रह हो और दशम में राहु हो तो वह अवश्य ही म्लेच्छ जाति का होता है ॥ ७५ ॥

व्ययस्थानस्थिते चन्द्रे वामचक्षुर्विनश्यति ।
यदा सूर्यो द्वितीयस्थस्तदा ह्यन्धं समादिशेत् ॥ ७६ ॥

लग्न से व्यय (१२) में चन्द्रमा हो तब वह मनुष्य वाम नेत्र से काना होता है और द्वितीय में सूर्य हो तो वह मनुष्य अन्धा होता है ॥ ७६ ॥

सिंहलग्ने यदा जन्म शनिर्मूर्तौ यदा भवेत् ।
चक्षुर्हीनो भवेद् बालः शुक्रे जन्मान्धको भवेत् ॥ ७७ ॥

सिंह लग्न में जन्म हो और उसमें शनि हो तो वह नेत्रहीन होता है। यदि शुक्र हो तो वह मनुष्य जन्मान्ध होता है ॥ ७७ ॥

होरायां द्वादशे राशौ स्थितो यदि दिवाकरः ।
करोति दक्षिणे काणं वामनेत्रे च चन्द्रमाः ॥ ७८ ॥

लग्न से १२ वें स्थान में सूर्य स्थित हो तो वह मनुष्य दाहिने नेत्र से

काना होता है। और जो चन्द्रमा १२ में हो तो वाम नेत्र से काना होता है ॥ ७८ ॥

स्वस्थाने लग्नतः क्रूरः क्रूरः पातालगः पुनः ।
दशमे भवने क्रूरः कष्टं जीवति जातकः ॥ ७९ ॥
अस्मिन् योगे हि यो जातो मातुर्दुःखकरो भवेत् ।
यदि जीवेदसौ जातो मातृपक्षक्षयङ्करः ॥ ८० ॥

लग्न में क्रूरग्रह अपने घर के हों और चौथे तथा दशवें में भी क्रूरग्रह हों तो इस योग में कठिनता से जीता है। यदि जीता भी है तो माता को दुःख देनेवाला और माता के पक्ष का क्षय करने वाला होता है ॥७९-८०॥

क्रूरे क्षेत्रे भवेत्सूर्यः कन्यायां क्रूरसंस्थितः ।
क्रूरक्षेत्रे भवेद्राहुः कष्टं जीवति जातकः ॥ ८१ ॥

क्रूरग्रह के घर में सूर्य हो और क्रूरग्रह कन्या राशि में भी हो तथा क्रूर-क्षेत्र में राहु हो तो इस योग में जन्मा मनुष्य कठिनता से जीता है ॥८१॥

शुक्रे च वाक्पतौ सौम्ये नीचे राहुसमन्विते ।
न दृश्यते च चन्द्रेण सोऽपि बालो न जीवति ॥ ८२ ॥

बृहस्पति-शुक्र-बुध इन तीनों में-से कोई ग्रह राहु युक्त नीच के हों और उन्हें चन्द्रमा न देखता हो तो वह भी नहीं जीता है ॥ ८२ ॥

षष्ठाऽष्टमे यदा चन्द्रो द्वादशे रविमङ्गलौ ।
सोऽपि जातो न जीवेत रक्षते यदि शङ्करः ॥ ८३ ॥

छठे-आठवें घर में चन्द्रमा और बारहवें घर में सूर्य-मंगल हों तो इस योग में जन्म लेनेवाले की शिवजी भी रक्षा करें तो भी मृत्यु का भागी होता है ॥ ८३ ॥

षष्ठाऽष्टमे यदा केतुः केन्द्री भवति चन्द्रमाः ।
सद्यो बालकमृत्युः स्याद्रक्षिता यदि शङ्करः ॥ ८४ ॥

छठे-आठवें में केतु और केन्द्र (१।४।७।१०) में चन्द्रमा हो तो शंकर के रक्षा करने पर भी बालक मर जाता है ॥ ८४ ॥

चन्द्रो बुधस्तथा सूर्यः शनिश्चान्ते यदा भवेत् ।
मध्यस्थाने यदा भौमो हीनदृष्टिस्तदा भवेत् ॥ ८५ ॥

चन्द्रमा-बुध-सूर्य-शनि द्वादश भाव में हों और मंगल मध्य अर्थात् केन्द्र में हो तो बालक कम देखता है ॥ ८५ ॥

अर्कः सौरिस्तथा भौमः स्वर्भानुः केतुसंयुतः ।
नीचस्थानस्थितो यस्य स जातो मातृघातकः ॥ ८६ ॥

सूर्य, शनि, मंगल इनमें-से कोई ग्रह यदि राहु-केतु से युत होकर नीच में हो तो जातक मातृघातक होता है ॥ ८६ ॥

रवि-राहू सौरि-भौमौ जीवो लग्ने च पञ्चमे ।
योगेऽस्मिन्नपि यो जातो जातमात्रो विनश्यति ॥ ८७ ॥

रवि, राहु, शनि, मंगल, गुरु लग्न अथवा पाँचवें स्थान में हो तो जातक तुरन्त मर जाता है ॥ ८७ ॥

क्रूरे क्षेत्रे गतो जीवो रवि राहु-धरासुतः ।
सप्तमे भवने शुक्रो देही कष्टं प्रयाति च ॥ ८८ ॥

गुरु, सूर्य, राहु, मंगल पापग्रह के घर में हों और सातवें स्थान में शुक्र हो तो जातक को कष्ट होता है ॥ ८८ ॥

क्रूरे लग्ने भवेज्जातः स्वामी क्रूरराशिगः ।
आत्मघाती भवेत्तस्य शरीरे कष्टमादिशेत् ॥ ८९ ॥

लग्न में क्रूरग्रह हो और लग्नेश क्रूरग्रह की राशि में हो तो कष्ट से ऊबकर जातक आत्महत्या कर लेता है ॥ ८९ ॥

सप्तमे भवने भौमः पञ्चमे च दिवाकरः ।
अरण्ये च भवेज्जन्म वृक्षवृन्दे न संशयः ॥ ९० ॥

सातवें घर में मंगल, पाँचवें में सूर्य हो तो जंगल अथवा किसी वृक्ष के नीचे मनुष्य का जन्म होता है ॥ ९० ॥

एकः पापो यदा लग्ने लग्नेशो वा न पश्यति ।
सूर्यः पश्यति नो लग्नमन्यजातस्तदा भवेत् ॥ ९१ ॥

लग्न में एक पापग्रह हो और लग्नेश लग्न को नहीं देखता हो तथा सूर्य भी लग्न को नहीं देखता हो तो दूसरे का जन्मा हुआ होता है ॥ ९१ ॥

तिथिप्रान्ते दिनान्ते च लग्नस्याऽन्ते तथैव च ।
चरान्तांशे च यो जातः सोऽन्यजातः शिशुर्भवेत् ॥ ९२ ॥

तिथि के अन्त, दिन के अन्त, लग्न के अन्त और चरराशि के अन्तिम नवांश-ये सब योग जिसकी कुण्डली में हों उसको दूसरे से जन्मा हुआ समझना चाहिए ॥ ९२ ॥

न पश्यति शशीलग्नं मध्यस्थः सौम्य-शुक्रयोः ।
पितुः परोक्षे जन्म स्याद्भौमेऽस्ते वा तनौ यमे ॥ ९३ ॥

बुध, शुक्र के बीच में रहकर चन्द्रमा यदि लग्न को नहीं देखता हो तथा सप्तम में मंगल और लग्न में शनि हो तो पिता के परोक्ष में जन्म समझना चाहिए ॥ ९३ ॥

जीवक्षेत्रे गते चन्द्रे शुक्रे वेतरराशिगे ।
द्रेष्काणे च तदंशे वा न परैर्जात इष्यते ॥ ९४ ॥

चन्द्रमा गुरु के घर में हो और शुक्र अपना घर छोड़कर कहीं भी हो अथवा द्रेष्काण वा गुरु के नवांश में हो तो अपने पिता से जन्म समझना चाहिये ॥ ९४ ॥

न लग्नमिन्दुं न गुरुर्निरीक्षते न वा शशाङ्कं रविणा समागतम् ।
सपापकोऽर्केण युतश्च वा शशी परेण जातं प्रवदन्ति सूरयः ॥९५॥

गुरु चन्द्रमा और लग्न को नहीं देखता हो अथवा सूर्य से चन्द्रमा युत न हो अथवा सूर्य और चन्द्रमा पापग्रह से युत हो तो उसको दूसरे से जन्मा हुआ समझना चाहिये, ऐसा विद्वानों ने कहा है ॥ ९५ ॥

लग्नं पश्यति नो गुरुर्न च भृगुर्जारेण जातः शिशुः
क्षोणीजः समवेक्षते शशधरं सूर्यश्च वा आरजः ।
चन्द्रः पापयुतो दिनेशसहितः स्यादेवमप्यन्यजः
प्रोक्तं प्राङ्मुनिपुङ्गवैः स्फुटमिदं योगत्रयं जायते ॥ ९६ ॥

यदि लग्न को गुरु-शुक्र नहीं देखता हो और मंगल-चन्द्रमा को सूर्य नहीं देखता हो तथा चन्द्रमा सूर्य सहित पापग्रह से युत हो तो इन तीनों योग में उत्पन्न मनुष्य दूसरे का जन्मा हुआ होता है, ऐसा मुनियों ने कहा है ॥ ९६ ॥

यदि वाऽपि भवेच्चन्द्रोज स्माऽष्टमद्वितीयगः ।
द्वादशैकादशस्थो वा पश्चाज्जातस्तदा शिशुः ॥ ९७ ॥

यदि चन्द्रमा लग्न, अष्टम, दूसरे, बारहवें, ग्यारहवें इनमें-से किसी एक में स्थित हो तो पिता के परोक्ष में जन्म समझना चाहिए ॥ ९७ ॥

क्षपाकरः पश्यति नैव लग्नं विदेशसंस्थे जनके प्रसूतः ।
कुजार्किसंसर्गगते विलग्ने कवीज्यकेन्द्रांशविहीनके वा ॥९८॥

चन्द्रमा यदि लग्न को न देखता हो यो मंगल-शनि लग्न में हो, गुरु-शुक्र केन्द्र (१।४।७।१०) इन स्थानों से रहित हों तो पिता के परदेश जाने पर बालक का जन्म समझना चाहिए ।। ९८ ।।

रविशशियुते सिंहे लग्ने कुजार्किनिरीक्षिते
नयनरहितः सौम्याऽसौम्यैः स बुद्बुदलोचनः ।
व्ययगृहगतश्चन्द्रो वामं हिनस्त्यपरं रवि-
र्न शुभा गदिता योगा याप्या भवन्ति शुभेक्षिताः ।।९९।।

सूर्य-चन्द्रमा सिंह लग्न में हों और मंगल, शनि से देखा जाता हो तो जातक अन्धा हो तथा सब शुभ और अशुभ ग्रह लग्न को देखें तो आँख की दृष्टि कमजोर हो, बारहवें स्थान में चन्द्रमा हो तो बायें आँख से काना होता है और सूर्य यदि बारहवें भाव में हो तो दाहिने आँख का काना होता है। शुभ ग्रह की दृष्टि से इस फल में कुछ परिवर्तन हो जाता है ।। ९९ ।।

धनभावविचारः-

पापाः सर्वे धनस्थाने धनहानिकरा मताः ।
अन्यैः सौम्यैः शुभं सर्वसमृद्धिवृद्धिधनादिकम् ।। १ ।।

द्वितीय भाव में सब पापग्रह हों तो दरिद्र बनाता है और यदि द्वितीय भाव में सब शुभग्रह हों तो धन-धान्य की वृद्धि करते हैं ।। १ ।।

क्रूराश्चतुर्षु केन्द्रेषु तथा क्रूरा धनेऽपि च ।
दरिद्रयोगं जानीयात्स्वपक्षस्य भयङ्करः ।। २ ।।

क्रूरग्रह केन्द्र में हों और दूसरे भाव में भी क्रूरग्रह हों तो दरिद्र बना देता है ।। २ ।।

अष्टमस्थो यदा भौमस्त्रिकोणनीचगो रविः ।
स शीघ्रमेव जातस्याद्भिक्षाजीवी च दुःखितः ।। ३ ।।

लग्न से आठवें भाव में मंगल हो, त्रिकोण (९।५) स्थित सूर्य नीच का हो तो जन्म लेते ही भिक्षाटन करने वाला होता है ।। ३ ।।

कन्यायां च यदा राहुः शुक्रो भौमः शनिस्तथा ।
यत्र जातस्य जायेत कुबेरादधिकं धनम् ।। ४ ।।

कन्या राशि में राहु, शुक्र, मंगल, शनि चारों ग्रह हों तो जातक कुबेर से भी अधिक धनी होता है ।। ४ ।।

अर्कः केन्द्रे यदा चन्द्रो मित्रांशे गुरुणेक्षितः ।
वित्तवान् ज्ञानसम्पन्नो जायते च तदा नरः ॥ ५ ॥

केन्द्र में सूर्य अपने मित्र के नवमांश का चन्द्रमा-गुरु से देखा जाता हो तो धनवान्, ज्ञान से सम्पन्न होता है ॥ ५ ॥

स्वक्षेत्रस्थो यदा जीवो बुधः सौरिस्तथैव च ।
तदा जातः स दीर्घायुः सम्पत्तिश्च पदे पदे ॥ ६ ॥

गुरु अपने घर का हो तथा बुध, शनि भी अपने घर का हो तो जातक दीर्घायु और उसको पद-पद पर धन मिलता है ॥ ६ ॥

लग्नं लग्नेशसंयुक्तं यस्य जन्मनि जायते ।
न मुञ्चन्ति गृहं तस्य कुलस्त्रिय इव श्रियः ॥ ७ ॥

लग्नेश लग्न में हो तो लक्ष्मी स्त्री की तरह जातक के घर में रहती हैं ॥७॥

चन्द्रेण मङ्गलो युक्तो जन्मकाले यदा भवेत् ।
तस्य जातस्य गेहं तु लक्ष्मी नैव विमुञ्चति ॥ ८ ॥

जन्म काल में चन्द्रमा से युत मंगल हो तो उस जातक के घर से लक्ष्मी कहीं नहीं जाती हैं ॥ ८ ॥

मासमध्ये तु यत्सङ्ख्यदिवसैर्जायते पुमान् ।
तत्सङ्ख्यवर्षभुक्तौ तु लक्ष्मीर्भवति निश्चितम् ॥ ९ ॥

उपरोक्त योग में महीने के जितने दिनपर जन्म हो उतने ही वर्ष व्यतीत होनेपर उसको धन मिलता है ॥ ९ ॥

सहजभावविचारः-

पापैस्तृतीयगैः सर्वैर्बान्धवै रहितो भवेत् ।
सौम्यैश्च भ्रातृसंयुक्तः कीर्तियुक्तो धनप्रियः ॥ १ ॥

सब पापग्रह तृतीयस्थान में हों तो वह सोदर से रहित होता है। और यदि शुभग्रह तृतीयभाव में हों तो भाई तथा कीर्ति से युत और धनप्रिय होता है ॥ १ ॥

लग्नात्तृतीयभवने शिखिना सह चन्द्रमाः ।
लक्ष्मीवाञ्जायते बालो भ्रातृहीनो न संशयः ॥ २ ॥

लग्न से तृतीयभाव में केतु सहित चन्द्रमा हो तो बालक धनवान् होगा परन्तु उसके भाई नहीं होंगे ॥ २ ॥

आदौ जातान् रविर्हन्ति पश्चाद्भौम-शनैश्चरौ।
राहुसंज्ञौ द्युभौ हन्ति केतुः सर्वनिवारकः॥ ३॥

तृतीय स्थान में सूर्य हो तो बड़े भाई को, मङ्गल-शनि हों तो छोटे भाई को और राहु हो तो अपने से बड़े और अपने से छोटे दोनों का नाश कारक होता है। परन्तु यदि केतु हो तो शुभफल देता है अर्थात् वह सबका निवारण करता है॥ ३॥

स्वक्षेत्रस्थो यदा राहुर्धनस्थाने बृहस्पतिः।
बुधेन च समायुक्तस्तस्य बन्धुत्रयं भवेत्॥ ४॥

राहु अपने घर का होकर और द्वितीय स्थान में गुरु-बुध से युत हो तो उसको तीन भाई होते हैं॥ ४॥

लग्ने चन्द्रे धने शुक्रो व्यये च बुध-भास्करौ।
राहुश्चेत्पञ्चमे बालः स भवेद् बन्धुबन्धकृत्॥ ५॥

लग्न में चन्द्रमा, २ रे में शुक्र, १२ में बुध-सूर्य, पाँचवें में राहु हो तो भाई को बन्धन दिलाने वाला होता है॥ ५॥

धनस्थाने यदा क्रूरो भौमः सौरिसमन्वितः।
सहजे च भवेद्राहुर्भ्राता तस्य न जीवति॥ ६॥

द्वितीय स्थान में क्रूरग्रह हो, शनि से युत मङ्गल कहीं भी हो और राहु तृतीयभाव में हो तो उसका भाई नहीं जीता है॥ ६॥

षष्ठे च भवने भौमः सप्तमे राहुसम्भवः।
अष्टमे च यदा सौरिर्भ्राता तस्य न जीवति॥ ७॥

छठे भाव में मङ्गल, सातवें में राहु और आठवें में शनि हो तो उसका भाई नहीं जीता है॥ ७॥

विलग्नस्थो यदा जीवो धने सौरिर्यदा भवेत्।
राहुश्च सहजे स्थाने भ्राता तस्य न जीवति॥ ८॥

लग्न में गुरु, द्वितीय भाव में शनि, तृतीय में राहु हो तो उसका भाई नहीं जीता है॥ ८॥

सप्तमे भवने भौमश्चाऽष्टमेऽपि सितो यदि।
नवमे च भवेत्सूर्यः स्वल्पायुश्च समूर्जितः॥ ९॥

सातवें स्थान में मङ्गल, आठवें में शुक्र, नवें में सूर्य हो तो धनी होता है, परन्तु अल्पायु भी होता है॥ ९॥

पुंग्रहो यस्य दुश्चिक्ये ह्युच्चस्थानस्थितो भवेत् ।
भ्रातरः षट् प्रजायन्ते चाऽन्यथा भगिनी भवेत् ॥ १० ॥

तृतीय स्थान स्थित पुरुष ग्रह अपने उच्च का हो तो उसके छह भाई होते हैं, अगर स्त्रीग्रह तृतीय स्थान स्थित अपने उच्च के हों तो छह बहनें होती हैं ॥ १० ॥

सुखभावविचारः-

तुर्यस्थाने स्थिताः पापा बालत्वे मातृकष्टदाः ।
सौख्यं सौम्याः प्रकुर्वन्ति राजसम्मानदायकाः ॥ १ ॥

चतुर्थ स्थान में पापग्रह हों तो बाल्यावस्था में माता को कष्ट देते हैं और यदि शुभग्रह हों तो सुख एवं राज्य सम्मान देते हैं ॥ १ ॥

लग्नाच्चतुर्थगः पापो यदि स्याद् बलवत्तरः ।
तदा मातृवधं कुर्यात्केन्द्रे वा न परो यदि ॥ २ ॥

लग्न से चतुर्थ भाव में बली होकर पापग्रह हों तो जातक की माता मर जाती है, किन्तु केन्द्र में कोई ग्रह हो तो माता नहीं मरती है ॥ २ ॥

द्वितीये द्वादशे स्थाने यदा पापो व्यवस्थितः ।
तदा मातुर्भयं विन्द्याच्चतुर्थे दशमे पितुः ॥ ३ ॥

दूसरे-बारहवें भाव में पापग्रह हों तो माता को डराने वाला होता है, और चौथे-दशवें में पापग्रह हों तो पिता को डराने वाला होता है ॥ ३ ॥

पापमध्यगते लग्ने चन्द्रे वा पापसंयुते ।
सौम्ये निधनगे पापे मातृहा सप्तवासरे ॥ ४ ॥

दूसरे-बारहवें भाव में पापग्रह हों अथवा लग्न में पापग्रह से युत चन्द्रमा हो और आठवें भाव में शुभग्रह पाप से युत हो तो जातक की माता सात दिन में मर जाती है ॥ ४ ॥

चतुर्थे हन्यते माता दशमे च तथा पिता ।
सप्तमे भवने क्रूरास्तस्य भार्या न जीवति ॥ ५ ॥

चौथे भाव में क्रूरग्रह हो तो माता, दशवें में क्रूरग्रह हो तो पिता तथा सातवें में क्रूरग्रह हो तो स्त्री नहीं जीती है ॥ ५ ॥

शन्यङ्गारकमध्यस्थः सूर्यः कुर्यात्पितुर्वधम् ।
मध्ये वा रजनीनाथो मातुर्मृत्युर्न संशयः ॥ ६ ॥

शनि-मंगल के बीच में सूर्य हो तो पिता और यदि शनि-मंगल के बीच में चन्द्रमा हो तो माता को मारता है ॥ ६ ॥

चन्द्रादष्टमगे पापे चन्द्रे पापसमन्विते ।
पापैर्बलिष्ठैः संदृष्टे सद्यो भवति मातृहा ॥ ७ ॥

चन्द्रमा से आठवें भाव में पापग्रह हो और चन्द्रमा भी पाप से युत हो या बली पापग्रह से दृष्ट हो तो जातक की माता मर जाती है ॥ ७ ॥

लग्नस्थाने यदा जीवो धनस्थाने शनैश्वरः ।
राहुश्च सहजे स्थाने माता तस्य न जीवति ॥ ८ ॥

लग्न में गुरु, द्वितीय भाव में शनि, तृतीय में राहु हो तो जातक की माता नहीं जीती है ॥ ८ ॥

सिंहे भौमस्तुले सौरिः कन्यायां वा सितो भवेत् ।
मिथुने च यदा राहुर्जननी तस्य नश्यति ॥ ९ ॥

सिंह में मंगल, तुला में शनि, कन्या में शुक्र, मिथुन में राहु हो तो जातक की माता मर जाती है ॥ ९ ॥

चन्द्रः पापग्रहैर्युक्तश्चन्द्रो वा पापमध्यगः ।
चन्द्रात्सप्तमगः पापस्तदा मातृवधो भवेत् ॥ १० ॥

चन्द्रमा पाप से युत हो या पापग्रह के बीच हो अथवा चन्द्रमा से सातवें भाव में पापग्रह हो तो जातक की माता मर जाती है ॥ १० ॥

एकादशे यदा क्रूरः पञ्चमे शुक्रशीतगू ।
प्रथमं कन्यका जाता माता तस्यास्तु कष्टगा ॥ ११ ॥

ग्यारहवें भाव में क्रूरग्रह हो तथा पाँचवें भाव में शुक्र-चन्द्र हो तो जातक की माता को पहली सन्तान कन्या हुई होगी और जातक की माता को बहुत कष्ट हुआ होगा ॥ ११ ॥

धने राहुर्बुधः शुक्रः सौरिः सूर्यो यदा ग्रहाः ।
तदा मातुर्भवेन्मृत्युर्मृतोऽयं परिजायते ॥ १२ ॥

द्वितीय भाव में राहु, बुध, शुक्र, शनि, सूर्य ये पाँचों ग्रह हों तो बालक की माता मर जाती है और बालक मरा हुआ ही पैदा होता है ॥ १२ ॥

नीचस्थानगते चन्द्रे तिष्ठेद्वै भार्गवात्मजः ।
पापासक्तो महाक्रोधी माता तस्य न जीवति ॥ १३ ॥

चन्द्रमा नीच का होकर शुक्र के साथ हो तो जातक पाप में आसक्त,

महाक्रोधी हो और उसकी माता नहीं जीती है ।। १३ ।।

द्वादशे रिपुभावे च यदा पापग्रहो भवेत् ।
तदा मातुर्भयं विन्द्याच्चतुर्थे दशमे पितुः ।। १४ ।।

बारहवें, छठें में पापग्रह हो तो माता और दशवें, चौथे में पापग्रह हो तो पिता को भय होता है ।। १४ ।।

त्रिसप्तस्थो दिवानाथो जन्मस्थश्च महीसुतः ।
तस्य माता न जीवेत वर्षमेकं पलद्वयम् ।। १५ ।।

तीसरे अथवा सातवें घर में सूर्य हो, लग्न में मंगल हो तो जातक की माता एक वर्ष से ज्यादा नहीं जीती है ।। १५ ।।

द्यूनाष्टमगते पापे क्रूरग्रहनिरीक्षिते ।
जनन्या सह मृत्युः स्याद् बालकस्य न संशयः ।। १६ ।।

सातवें, आठवें स्थित पापग्रह को क्रूरग्रह देखता हो तो माता के साथ ही बालक मर जाता है ।। १६ ।।

सुतभावविचारः-

पञ्चमस्थाः शुभाः सर्वे पुत्रसन्तानकारकाः ।
क्रूराः सन्ततिमृत्युं च कुपुत्रं च धरासुतः ।। १ ।।

सब शुभग्रह पञ्चमभाव में हों तो सन्तान देते हैं और सब क्रूरग्रह होने से मर जाती है एवं मंगल पञ्चमभाव में हो तो कुपुत्र होता है ।। १ ।।

बालस्य जन्मकाले तु पञ्चमे धरणीसुतः ।
अपुत्रश्च भवेद् बालो नारी चैव विशेषतः ।। २ ।।

जन्म समय में पाँचवें भाव में मंगल होने से पुरुष पुत्रहीन होता है, परन्तु स्त्री विशेष कर पुत्रहीना होती है ।। २ ।।

अपुत्रं कुरुते भानुः पुत्रमेकं निशाकरः ।
स-शोकं पुत्रहीनं च पञ्चमो धरणीसुतः ।। ३ ।।

पाँचवें में सूर्य हो तो सन्तानहीन, चन्द्रमा हो तो एक सन्तान, मंगल हो तो शोक सहित सन्तानहीन होता है ।। ३ ।।

उच्चो वा यदि वा नीचः पञ्चमं केतुराश्रितः ।
हाहाकारं च कुरुते पुत्रशोकेन पीडितः ।। ४ ।।

उच्च अथवा नीच का होकर केतु पाँचवें भाव में हो तो पुत्र-शोक से हाहाकार करता है ।। ४ ।।

ऋतुरेतोऽप्यदृष्टः स्याद् यदि चैको न पश्यति ।
अप्रसूतो भवेन्मर्त्यो बहुस्त्रीपरिणेतृकः ॥ ५ ॥

यदि जातक के चन्द्रमा या शुक्र को भौम किसी भी स्थान में बैठकर न देखता हो अथवा भौम को चन्द्रमा या शुक्र न देखता हो या परस्पर दृष्टि सम्बन्ध न होने पर भी अनेक विवाह करने पर सन्तति नहीं होती। अर्थात् स्त्रियों को मासिक धर्म नहीं होता या गर्भाशय में कोई गड़बड़ी हो जाती है जिससे सन्तति नहीं होती ॥ ५ ॥

पापः पञ्चमराशौ जातं जातं शिशुं विनाशयति ।
सप्तमराशौ पापा द्वे भार्ये बादरायणेनोक्तम् ॥ ६ ॥

पापग्रह पाँचवें भाव में हो तो जो भी सन्तान हो तुरन्त मर जाती है, और यदि सप्तम भाव में पापग्रह हो तो दो स्त्री होती है ॥ ६ ॥

एकः पुत्रो रवौ वाच्यश्चन्द्रे चैव सुताद्वयम् ।
भौमे पुत्रास्त्रयो वाच्या बुधे पुत्रीचतुष्टयम् ॥ ७ ॥

पाँचवें में सूर्य हो तो १ बालक, चन्द्रमा हो तो दो कन्या, मंगल हो तो तीन पुत्र, बुध हो तो चार कन्या होती है ॥ ७ ॥

गुरौ गर्भे सुताः पञ्च षट् पुत्र्यो भृगुनन्दने ।
शनौ च गर्भपातः स्याद्राहौ गर्भो भवेन्न हि ॥ ८ ॥

गुरु हो तो पाँच पुत्र, शुक्र हो तो छह कन्या, शनि हो तो गर्भपात तथा राहु हो तो गर्भ ही नहीं ठहरता है ॥ ८ ॥

सुतस्थाने द्विपापो वा त्रिपापाश्चाऽत्र संस्थिताः ।
तदा स्त्री-पुरुषौ वन्ध्यौ विज्ञेयौ पापवीक्षिते ॥ ९ ॥

पञ्चमभाव में दो अथवा तीन पापग्रह हों या देखते हों तो स्त्री-पुरुष दोनों बाँझ होते हैं ॥ ९ ॥

ऋतुश्च कथितः शुक्रो रेतो भौमः प्रकीर्तितः ।
भौमः पश्यति तद्वर्षे यद्वर्षे गर्भसंस्थितिः ॥ १० ॥

शुक्र को ऋतु और मंगल को रेत कहते हैं। इसलिये जिस वर्ष मंगल सन्तान भाव को देखे उस वर्ष गर्भ स्थिति होती है ॥ १० ॥

पुंराशौ लग्नपतिः सुताधिपं वीक्षते वाऽपि ।
सन्ततिबाधां कुरुते केन्द्रे पापान्विते चन्द्रे ॥ ११ ॥

लग्नेश पुरुष ग्रह होकर पञ्चम भावेश (सुत भावेश) को देखता हो तथा यदि पापग्रह से युत चन्द्रमा केन्द्र में हो तो सन्तान बाधक होता है ॥ ११ ॥

लग्नात्पुत्रकलत्रभे शुभपतिप्राप्तेऽथवाऽऽलोकिते
चन्द्राद्वा यदि सम्पदस्ति हि तयोर्ज्ञेयोऽन्यथाऽसम्भवः ।
पाथोनोदयगे रवौ रविसुते मीनस्थिते दारहा
पुत्रस्थानगतश्च पुत्रमरणं पुत्रोऽवनेर्यच्छति ॥१२॥

लग्न से पाँचवें और सातवें भाव शुभ राशीश से युत अथवा दृष्ट हों अथवा चन्द्रमा से पाँचवें और सातवें भाव शुभ राशीश से युत अथवा दृष्ट हों तो जातक को पुत्र एवं स्त्री होगी । इससे भिन्न होने पर न पुत्र होगा और न स्त्री होगी । एवं यदि जन्मलग्न कन्या में सूर्य, सप्तम में मीन का शनि हो तो स्त्री घातक योग होता है । यदि पञ्चम में मंगल हो तो पुत्र का मरण करता है ॥ १२ ॥

लग्ने द्वितीये यदि वा तृतीये विलग्ननाथे प्रथमः सुतः स्यात् ।
तुर्यस्थितेऽस्मिंश्च सुता द्वितीयः पुत्रः सुता वेति पुरः प्रकल्प्यम् ॥१३॥

लग्न, द्वितीय, तृतीय इनमें से किसी भी घर में लग्नेश हो तो पहली सन्तान पुत्र होती है, यदि लग्नेश चतुर्थ भाव में हो तो पहले कन्या होती है । इसी प्रकार और विचार करना चाहिए ॥ १३ ॥

धनस्थाने यदा क्रूरः क्रूरग्रहसमन्वितः ।
न पश्यति निजक्षेत्रमल्पपुत्रस्तदा भवेत् ॥ १४ ॥

द्वितीय भाव में एक क्रूरग्रह दूसरे क्रूरग्रह के साथ हो और अपने-अपने घर को न देखता हो तो अल्प सन्तान वाला होता है ॥ १४ ॥

सहजे सहजाधीशो लग्ने वाऽथ धने भवेत् ।
जायते न तदा बालो यदि जातो न जीवति ॥ १५ ॥

तृतीयेश तृतीय भाव या लग्न अथवा द्वितीय भाव में हो तो बालक नहीं होता है । यदि होता भी है तो मर जाता है ॥ १५ ॥

झषधनुर्धरपञ्चमभावगे प्रसवसौख्यफलं न च दृश्यते ।
मृतप्रजः खलु पञ्चमगे गुरौ तदिह दृष्टिफलं शुभमश्नुते ॥१६॥

धनु और मीन पाँचवें भाव में हों तो उसकी स्त्री सन्तान सुख नहीं देखती अर्थात् बाँझ होती है । और यदि पाँचवें भाव में गुरु हो तो मृतवत्सा होती है, यदि गुरु पञ्चम भाव को देखता हो तो सन्तान भी होती है ॥ १६ ॥

लाभे सुतो वा शुक्रेन्दुसुतौ भौमोऽथवा क्रमात् ।
शुक्रेन्दू पश्यतः पुत्रं वर्षेऽस्मिन् सन्ततिस्तदा ॥ १७ ॥

एकादश भाव में शुक्र और बुध हों, पाँचवें में मङ्गल हो तो जिस वर्ष पुत्र भाव को शुक्र और चन्द्रमा देखें उस वर्ष में उसको पुत्र होता है ॥ १७ ॥

यत्र चैकादशे राहुः पञ्चमे च शिखी स्थितः ।
सुताननं न दृश्येत यदीन्द्रोऽपि च सेव्यते ॥ १८ ॥

एकादश भाव में राहु और पञ्चम में केतु हो तो इन्द्र की सेवा करने पर भी पुत्र का मुख नहीं देखता है ॥ १८ ॥

रिपुभावविचारः-

षष्ठे क्रूरा नरं कुर्युः शत्रुपक्षविवर्जितम् ।
सौम्याः षष्ठे महारोगान् षष्ठश्चन्द्रश्च मृत्युदः ॥ १ ॥

षष्ठभाव में पापग्रह हों तो शत्रु और रोग को नाश करने वाला और शुभग्रह हो तो रोग करनेवाला तथा चन्द्रमा छठे हो तो मृत्यु कारक होता है ॥ १ ॥

अथ विशेषफलं (पराशरोक्तम्)-

षष्ठाधिपः स्वगेहे वा देहे वाऽप्यष्टमे स्थितः ।
तदा व्रणो भवेद् देहे षष्ठराशिसमाश्रिते ॥ २ ॥

स्वराशि में षष्ठेश यदि लग्न या ८ भाव में हो तो षष्ठराशि सम्बन्धी अङ्ग में व्रण कहना चाहिए ॥ २ ॥

उक्तस्थानस्थितेनैवमादित्येन शिरोव्रणम् ।
इन्दुना च मुखे कण्ठे भौमेन ज्ञेन नाभिषु ॥ ३ ॥
गुरुणा नासिकायां च भृगुणा नयने पदे ।
शनिना राहुणा कुक्षौ केतुना च तथा भवेत् ॥ ४ ॥

यदि षष्ठेश होकर सूर्य उक्त स्थान में हो तो मस्तक में, चन्द्रमा हो तो मुख में, मङ्गल हो तो कण्ठ में, बुध हो तो नाभि में, गुरु हो तो नासिका में, शुक्र हो तो आँख में, शनि हो तो पैर में, राहु हो तो पेट में, केतु हो तो भी पेट में रोग कहना चाहिए ॥ ३-४ ॥

लग्नाधिपः कुजक्षेत्रे बुधभे यदि संस्थितः ।
यत्र तत्र स्थितो ज्ञेन वीक्षितो मुखरुक्प्रदः ॥ ५ ॥

लग्नेश यदि मङ्गल या बुध की राशि में हो और बुध से दृष्ट हो तो मुख में रोग कारक होता है ॥ ५ ॥

सप्तमभावविचारः-

कुभार्या सप्तमे पापाः सौम्याः सर्वजनप्रियम् ।
गुरु-शुक्रौ शचीतुल्यां रूपलावण्यशालिनीम् ॥ १ ॥

सप्तमभाव में पापग्रह हो तो उसकी स्त्री कुचरित्रा-दुःशीला होती है। शुभग्रह सप्तमभाव में हो तो सब गुणों से युक्त, सबका हित करने वाली स्त्री होती है। यदि ७ वें में गुरु-शुक्र हो तो उसकी पत्नी इन्द्राणी तुल्य धनवती और अत्यन्त सुन्दरी होती है ॥ १ ॥

षष्ठे च भवने भौमः सप्तमे सिंहिकासुतः ।
अष्टमे च यदा सौरिर्भार्या तस्य न जीवति ॥ २ ॥

छठे भाव में मङ्गल, सातवें में राहु और आठवें में शनि हो तो उसकी स्त्री मर जाती है ॥ २ ॥

जायागृहे सौरिशशी च राहुर्जायापतिः पश्यति सप्तमश्चेत् ।
तस्यालये सम्भवतीह नारी श्यामा च गौरी बहुपुत्रिणी च ॥ ३ ॥

सप्तमभाव में शनि-चन्द्रमा और राहु हो तथा सप्तमेश की उस पर दृष्टि हो तो उस जातक की अत्यन्त सुन्दरी, सुशीला, बहुत पुत्रवती स्त्री होती है ॥ ३ ॥

लग्ने व्यये च पाताले यामित्रे चाऽष्टमे कुजः ।
कन्या भर्तुर्विनाशाय भर्ता कन्यां विनाशयेत् ॥ ४ ॥

कन्या की कुण्डली में लग्न, १२, ४, ७, ८ इन घरों में यदि मङ्गल हो तो उसका पति मर जाता है। और यदि उक्त योग पुरुष की कुण्डली में हो तो स्त्री के लिए घातक रहता है ॥ ४ ॥

लग्ने पापग्रहे गौरो दुर्बलः शत्रुपीडितः ।
भवेद् दुर्वाच्यतायुक्तो तथा परवधूरतः ॥ ५ ॥

लग्न में पापग्रह हो तो वह जातक गौरवर्ण, शत्रुओं से पीड़ित, कटु-भाषी तथा परस्त्रीगामी होता है ॥ ५ ॥

लग्नाद् व्यये वा रिपुमन्दिरे वा दिवाकरेन्दू भवतस्तदानीम् ।
स्यान्मानवस्यात्मज एक एव भार्याऽपि वैकेति वदन्ति सन्तः ॥ ६ ॥

लग्न से बारहवें या छठें स्थान में सूर्य और चन्द्रमा हो तो उस मनुष्य को एक ही पुत्र और एक ही पत्नी होती है ॥ ६ ॥

गण्डान्तकाले च कलत्रभावे भृगोः सुते लग्नगतेऽर्कजाते ।
वन्ध्यापतिः स्यान्मनुजस्तदानीं शुभेक्षितं नो भवनं खलस्य ॥ ७ ॥

त्रिविध गण्डान्त में कोई भी गण्डान्त हो तथा सप्तम में शुक्र, लग्न में शनि, सप्तम भाव में पाप राशि हो और उस पर शुभग्रह की दृष्टि न हो तो उसकी स्त्री वन्ध्या होती है ॥ ७ ॥

व्ययालये वा मदनालये वा खलेषु बुद्ध्यालयगे हिमांशौ ।
कलत्रहीनो मनुजस्तनूजैर्विवर्जितः स्यादिति वेदितव्यम् ॥ ८ ॥

बारहवें या सातवें में पापग्रह हों तथा पाँचवें भाव में चन्द्रमा हो तो वह मनुष्य स्त्री और पुत्रों से रहित होता है ॥ ८ ॥

प्रसूतिकाले च कलत्रभावे यमे च भूमेस्तनयस्य वर्गे ।
ताभ्यां प्रदृष्टे व्यभिचारिणी स्याद्भार्या स्वयं च व्यभिचारकर्त्ता ॥९॥

जिसके जन्म समय में मंगल के वर्ग (राश्यादि) स्थित होकर शनि सप्तम भाव में हो या दोनों सप्तम को देखते हों तो उसकी स्त्री व्यभिचारिणी और वह स्वयं व्यभिचारी होता है ॥ ९ ॥

शुक्रेन्दुपुत्रौ च कलत्रसंस्थौ कलत्रहीनं कुरुते नरं तौ ।
शुभेक्षितौ वा वयसो विरामे कामां च रामां लभते मनुष्यः ॥१०॥

यदि शुक्र-बुध दोनों सप्तम भाव में हों तो जातक स्त्रीहीन होता है। यदि उस पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो अन्तिम वयस में सुन्दरी स्त्री की प्राप्ति होती है ॥ १० ॥

चन्द्राद्विलग्नाच्च खलाः कलत्रं हन्युः कलत्रं च लयं गतौ तौ ।
चन्द्रार्कपुत्रौ च कलत्रसंस्थौ पुनर्भवास्त्रीपरिलब्धिदौ स्तः ॥११॥

चन्द्रमा अथवा लग्न से सातवें भाव में पापग्रह हों या आठवें में पापग्रह हों तो स्त्रीनाश कारक होते हैं और यदि चन्द्रमा-शनि दोनों सातवें भाव में हों तो विधवा से विवाह होता है ॥ ११ ॥

महीसुते सप्तमभावयाते कान्तावियुक्तः पुरुषस्तदा स्यात् ।
मन्देन दृष्टे म्रियतेऽचिरात्तदा सूर्येण दृष्टे बहुदुःखपीडितः ॥१२॥

मंगल सप्तम भाव में हो तो पुरुष स्त्री से रहित होता है। यदि सप्तम स्थित मङ्गल को शनि देखता हो तो पुरुष अपने मर जाता है और यदि सूर्य देखता हो तो बहुत दुःख होता है ॥ १२ ॥

षष्ठे च भवने भौमः सप्तमे राहुसम्भवः ।
अष्टमे च यदा सौरिस्तस्य भार्या न जीवति ॥ १३ ॥

षष्ठ भाव में मंगल, सप्तम में राहु, अष्टम में शनि हो तो स्त्री नहीं जीती है ॥ १३ ॥

अष्टमभावफलम्, अरिष्टभङ्गयोगाश्च-

पूर्वमायुः परीक्षेत पश्चाल्लक्षणमादिशेत् ।
आयुर्हीननराणां च लक्षणैः किं प्रयोजनम् ॥ १ ॥

पहले आयु की परीक्षा कर पश्चात् लक्षण कहना चाहिए, क्योंकि आयुहीन के लिये लक्षण कहने का प्रयोजन ही नहीं है ॥ १ ॥

खेटाः सर्वे महादुष्टा अष्टमस्थानमाश्रिताः ।
शशाङ्कस्तु विशेषेण जन्मकाले च मृत्युदः ॥ २ ॥

सब ग्रह अष्टमभाव में स्थित होने से मृत्यु देते हैं; लेकिन विशेषकर आठवें भाव में चन्द्रमा हो तो मृत्युकारक होता है ॥ २ ॥

कृष्णपक्षे दिवा जातः शुक्लपक्षे यदा निशि ।
तदा षष्ठाऽष्टमश्चन्द्रो मातृवत्परिपालकः ॥ ३ ॥

कृष्णपक्ष में दिन में और शुक्लपक्ष में रात्रि में जन्म हो तो अष्टम भाव तथा षष्ठभावस्थित चन्द्रमा भी माता के समान पालन करनेवाला होता है ॥ ३ ॥

पञ्चमस्थो निशानाथस्त्रिकोणे च बृहस्पतिः ।
दशमे च महीसूनुः शतवर्षं स जीवति ॥ ४ ॥

पञ्चम भाव में चन्द्रमा, त्रिकोण (९।५) में गुरु, दशम स्थान में मंगल हो तो जातक १०० वर्ष जीता है ॥ ४ ॥

शनैश्चरस्तुलाकुम्भमकरे यदि वा भवेत् ।
लग्ने षष्ठे तृतीये वा तदाऽरिष्टं न जायते ॥ ५ ॥

शनि यदि तुला, मकर, कुम्भ इनमें-से किसी राशि में हो अथवा लग्न, छठे, तीसरे किसी भाव में हो तो अरिष्ट नहीं होता ॥ ५ ॥

केन्द्रे शुभो यदेकोऽपि बली विश्वप्रकाशकः ।
सर्वे दोषाः क्षयं यान्ति दीर्घायुश्च भवेन्नरः ॥ ६ ॥

केन्द्र में बली एक भी शुभग्रह हो तो सब दोष को नाश कर दीर्घायु बनाता है ॥ ६ ॥

एकोऽपि केन्द्रे बुधजीवशुक्राः क्रूराः सहस्राणि विरुद्धयुक्ताः ।
तथाऽपि सर्वाण्यपि यान्ति नाशं यथा मृगाः केसरिदर्शनेन ॥ ७॥

बुध, गुरु, शुक्र इनमें-से एक भी केन्द्र में हो और सब क्रूरग्रह विरुद्ध

भी हों तो भी सब दोष को नाश करता है, जिस प्रकार सिंह को देखकर मृग भाग जाता है, उसी प्रकार सब दोष भाग जाते हैं ॥ ७ ॥

पाताले चाऽम्बरे लग्ने सुते धर्मे तथाऽऽयगे।
देवपूज्यस्तथा शुक्रो नाशयेद् दुरितं मुहुः ॥ ८ ॥

चौथे, दशवें, लग्न, पञ्चम, नवम अथवा ग्यारहवें घर में बृहस्पति या शुक्र हो तो अनेक दोषों को नाश करते हैं ॥ ८ ॥

एकोऽपि केन्द्रे यदि तुङ्गसंस्थः सर्वे ग्रहा भावगुणेन तुल्यम्।
सर्वेऽप्यरिष्टं च विनाशयन्ति तमो यथा भास्करदर्शनेन ॥ ९ ॥

एक भी ग्रह उच्च का होकर केन्द्र में हो और सब ग्रह अपने भाव के गुणों के अनुसार भी हों तो भी सूर्य के सामने अन्धकार की तरह अन्य ग्रहकृत सर्वारिष्ट नष्ट होते हैं ॥ ९ ॥

शुक्रो दशसहस्राणि बुधो दशशतानि च।
लक्षमेकं तु दोषाणां गुरुर्लग्ने व्यपोहति ॥ १० ॥

शुक्र लग्न में हो तो दश हजार दोष, बुध के लग्न में होने से हजार दोष और बृहस्पति लग्न में हो तो एक लक्ष दोष शान्त होते हैं ॥ १० ॥

केन्द्रत्रिकोणगो जीवः शुक्रो वा चन्द्रनन्दनः।
तस्य मर्त्यस्य दीर्घायुः स भवेद्राजवल्लभः ॥ ११ ॥

केन्द्र (१।४।७।१०) या त्रिकोण (९।५) में बृहस्पति, शुक्र अथवा बुध हो तो वह पुरुष दीर्घायु और राजप्रिय होता है ॥ ११ ॥

गुरुर्धनुषि मीने वा तथा कर्कटकेऽपि वा।
लग्नात्त्रिकोणे केन्द्रे वा तदाऽरिष्टं न जायते ॥ १२ ॥

बृहस्पति धनु, मीन अथवा कर्क में होकर त्रिकोण या केन्द्र में हो तो उस पुरुष को कभी अरिष्ट नहीं होता है ॥ १२ ॥

अज-वृष-कर्कटलग्ने रक्षति राहुः समग्रपीडाभ्यः।
पृथ्वीपतिः प्रसन्नः कृतापराधं यथा पुरुषम् ॥ १३ ॥

जन्म लग्न में मेष, वृष या कर्क हो और उसमें राहु हो तो कृतापराध पुरुष की भी जिस प्रकार प्रसन्न राजा रक्षा करता है उसी प्रकार उसकी सब पीड़ाओं से रक्षा करता है ॥ १३ ॥

राहुस्त्रिषष्ठलाभे लग्नात्सौम्यैर्निरीक्षितः सद्यः।
नाशयति सर्वदुरितं मारुत इव तूलसङ्घातम् ॥ १४ ॥

यदि राहु तीसरे, छठें, ग्यारहवें घर में हो एवं कोई शुभग्रह देखता हो तो रुईपुञ्ज को जैसे पवन उड़ा देता है, उसी प्रकार सब दोषों को उड़ा देता हैं ॥ १४ ॥

विलग्नपो यत्र बलेन युक्तो लाभे तृतीये यदि कण्टके वा ।
सर्वाण्यरिष्टानि प्रयान्ति दूरं दीर्घायुरारोग्यतनुं करोति ॥ १५ ॥

यदि लग्नेश बली होकर लाभ (११) में या तीसरे अथवा केन्द्र में हो तो मनुष्य के सर्वारिष्टों को दूर करके दीर्घायु और शरीर को आरोग्य करने वाला होता है ॥ १५ ॥

एकोऽपि यदि केन्द्रस्थो भार्गवोऽथ गिरांपतिः ।
नवमे वा सुतस्थाने सर्वाऽरिष्टं निवारयेत् ॥ १६ ॥

गुरु-शुक्र में-से कोई एक भी ग्रह केन्द्र अथवा नवम, पञ्चम में हो तो वह सर्वारिष्टों का नाश करता है ॥ १६ ॥

बुधभार्गवजीवानामेकतमः केन्द्रमाश्रितो बलवान् ।
क्रूरः सहायो यद्यपि सद्योऽरिष्टप्रशमनाय ॥ १७ ॥

बुध, शुक्र, बृहस्पति इनमें-से एक भी ग्रह बलवान् होकर केन्द्र में हो और वह चाहे क्रूरग्रह से संयुक्त भी हो तो भी शीघ्र ही अरिष्टों को नाश करता है ॥ १७ ॥

स्वस्थानगोऽधिकबलः सुरराजमन्त्री
केन्द्रोपगः प्रशमयेत्स्फुरदंशुजालः ।
एको बहूनि दुरितानि सुदुस्तराणि
भक्त्या प्रयुक्त इव शूलधरे प्रणामः ॥ १८ ॥

केवल एक पूर्ण बलवान् बृहस्पति भी यदि स्वक्षेत्री होकर केन्द्र में हो तो वह अनेक दुस्तर दोषों को नाश करता है, जैसे भक्ति पूर्वक शिवजी को किया हुआ एक भी प्रणाम पापों को दूर कर देता है ॥ १८ ॥

लग्नाधिपोऽतिबलवानशुभैरदृष्टः
केन्द्रस्थितैः शुभखगैरथ वीक्ष्यमाणः ।
मृत्युं विहाय विदधाति सुदीर्घमायुः
सम्पूर्यते निजगृहं परया च लक्ष्म्या ॥ १९ ॥

यदि लग्नेश पूर्ण बली क्रूरग्रहों से अदृष्ट तथा केन्द्रस्थित शुभग्रहों से दृष्ट हो तो वह मृत्यु से बचाकर दीर्घायु देता है और उसके घर को सब सम्पत्ति से परिपूर्ण करता है ॥ १९ ॥

लग्नादष्टमसंस्थो गुरुबुधशुक्रद्रेष्काणगश्चन्द्रः ।
मृत्युं प्राप्तमपि नरं परिरक्षत्येव निर्व्याजम् ॥ २० ॥

लग्न से अष्टम घर में चन्द्रमा यदि गुरु, शुक्र, बुध के द्रेष्काण का हो तो वही चन्द्रमा मृत्यु पाते हुए को भी निष्कपट रक्षा करता है ॥ २० ॥

चन्द्रः सम्पूर्णतनुः सौम्यर्क्षगतोऽथवा शुभस्यान्तः ।
प्रकरोत्यरिष्टभङ्गं विशेषतः शुक्रसंदृष्टः ॥ २१ ॥

सम्पूर्ण कलाओं से युत चन्द्रमा शुभग्रह की राशि में हो, अथवा शुभ ग्रहान्तर्गत हो तो अरिष्टों को नाश करता है। यदि शुक्र से दृष्ट हो तो विशेष करके अरिष्ट नाशक होता है ॥ २१ ॥

रिपुगः शुभद्रेष्काणे स्थितः शशी सौम्यखेचराः सबलाः ।
कुर्वन्त्यरिष्टभङ्गं यच्छन्तो भूरिभव्यततिम् ॥ २२ ॥

यदि शुभग्रह के द्रेष्काणस्थ चन्द्रमा छठे घर में हो और शुभग्रह सब बली हों तो कल्याण का विस्तार करते हुए अरिष्टों को दूर करते हैं ॥२२॥

सौम्यद्वयान्तरगतः सम्पूर्णः स्निग्धमण्डलश्चन्द्रः ।
निहन्त्यशेषारिष्टान् भुजङ्गलोकान् गरुड इव सः ॥ २३ ॥

दो सौम्यग्रहों के बीच में पूर्ण बली चन्द्रमा बैठा हो तो नागों को जिस तरह गरुड़ नाश करता है, उसी तरह सर्वारिष्टों को नाश करता है ॥२३॥

प्रस्फुरितकिरणजाले स्निग्धामलमण्डले बलोपेते ।
सुरमन्त्रिणि केन्द्रगते सर्वारिष्टं क्षयं याति ॥ २४ ॥

पूर्णबली तथा उदयी गुरु केन्द्र में हो तो सर्वारिष्टों को दूर कर देता है ॥ २४ ॥

सौम्यभवनोपयाताः सौम्यांशकसौम्यद्रेष्काणस्थाः ।
गुरुचन्द्रकाव्यशशिजाः सर्वेऽरिष्टस्य हन्तारः ॥ २५ ॥

शुभग्रह के घर के अथवा शुभ नवांशों के या शुभग्रहों के द्रेष्काण के गुरु, शुक्र, चन्द्र, बुध हों तो मनुष्य के सर्वारिष्टों को नाश करते हैं ॥ २५ ॥

चन्द्राध्यासितराशेरधिपः केन्द्रे शुभग्रहो वाऽपि ।
प्रकरोत्यरिष्टभङ्गं पापानि यथा शिवस्मरणम् ॥ २६ ॥

यदि चन्द्राधिष्ठित राशि का स्वामी या शुभग्रह केन्द्र में हो तो शिव-स्मरण से जिस प्रकार पापनाश होता है, उसी तरह अरिष्टों का नाश होता है ॥ २६ ॥

पापा यदि शुभवर्गे सौम्यैर्दृष्टाः शुभांशवर्गस्थैः ।
निघ्नन्ति सदाऽरिष्टं पतिं विरक्ता यथा युवतिः ॥ २७ ॥

पापग्रह शुभग्रहों के वर्ग में एवं शुभवर्ग स्थित शुभग्रह से देखे जाते हों तो अरिष्ट नाश करते हैं। यथा विरक्ता (कुलटा) स्त्री पति का नाश करती है ॥ २७ ॥

शीर्षोदयेषु[1] राशिषु सर्वे गगनाधिवासिनोऽधिगताः ।
निघ्नन्ति सर्वदुरितं यथा घृतं वाऽग्निसंयोगात् ॥ २८ ॥

यदि सब ग्रह शीर्षोदय राशि में ही हों तो वे घृत को अग्नि की तरह सर्वारिष्टों को नाश करते हैं ॥ २८ ॥

तत्कालयुद्धविजयी शुभग्रहः शुभनिरीक्षितश्चापि ।
नाशयति रिष्टनिवहं वात्या इव पादपं सकलम् ॥ २९ ॥

जन्मकाल में तत्काल युद्ध में जीतने वाले शुभग्रह पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो वह मनुष्य के सर्वारिष्टों को वायु की तरह वृक्षों को नष्ट करता है ॥ २९ ॥

गगनविभूषणसौम्यैर्दृष्टो नाशयति सर्वदुरितानि ।
सम्पूर्णमूर्तिरुडुपो दुर्नयतः स्वं यथा नाशम् ॥ ३० ॥

यदि पूर्ण बली चन्द्रमा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो वह धनों को अनीति की तरह सर्वारिष्टों को नाश करता है ॥ ३० ॥

मूर्तेस्तु राहुस्त्रिषडायवर्तीरिष्टं हरत्येव शुभैः प्रदृष्टः ।
शीर्षोदयस्थैर्विकृतिं न याति समस्तखेटैः खलु रिष्टभङ्गः ॥ ३१ ॥

यदि तीसरे, छठें या ग्यारहवें घर में राहु हो तथा उस पर शुभग्रहों की दृष्टि पड़ती हो तो वह सर्वारिष्टों को नाश करता है। और यदि शुभ या पापग्रह सब शीर्षोदय राशियों में रहते हुए राहु को देखते हों तो भी अरिष्टों का नाश होता है ॥ ३१ ॥

तत्र व्यये लाभरिपुत्रिसंस्थः केतुस्तु हेतुर्निधनोपशान्त्यै ।
परस्परं भार्गवजीवसौम्यास्त्रिकोणगास्तेऽपि हरन्त्यरिष्टम् ॥ ३२ ॥

यदि १२।११।६।३ इन किसी में केतु हो तो मृत्यु भय की शान्ति करने वाला होता है। और परस्पर त्रिकोण (९।५) में शुक्र, बृहस्पति और बुध हों तो भी अरिष्टों को शान्त करते हैं ॥ ३२ ॥

---

१. राशीनां शीर्षोदयादिसंज्ञाः—"मेषाद्याश्चत्वारः सधन्विमकराः क्षपाबलाज्ञेयाः । पृष्ठोदया विमिथुनाः शिरसाऽन्ये ह्युभयतो मीनः ॥" इति ।

सन्ध्याभवा वैधृतिपातभद्रगण्डान्तयुक्ता यदि जन्मकाले।
भवन्त्यरिष्टस्य विनाशनार्थं निरन्तरा दृश्यदले च सर्वे॥ ३३॥

जिसकी उत्पत्ति सन्ध्या समय, वैधृति योग और व्यतीपात योग या भद्रा या गण्डान्त में हो तथा समस्त ग्रह दृश्य भाग (७।८।९।१०।११।१२।१) में हों तो अरिष्टों का नाश होता है॥ ३३॥

चतुष्टये श्रेष्ठबलाधिशाली शुभो नभोगोऽष्टमगो न कश्चित्।
विंशन्मितायुः प्रकरोति नूनं दशान्वितं तच्छुभखेटदृष्टः॥ ३४॥

स्थानादि बलों से परिपूर्ण शुभग्रह केन्द्र में हों और लग्न से अष्टम घर में कोई ग्रह नहीं हो तो उस मनुष्य की बीस वर्ष की आयु होती है। यदि केन्द्रगत ग्रह शुभग्रह से दृष्ट हो तो दश वर्ष युक्त बीस वर्ष (अर्थात् ३० वर्ष की) आयु होती है॥ ३४॥

निजत्रिभागे स्वगृहे गुरुश्चेदायुर्गतिः स्यात्खलु विंशविंशत्।
बृहस्पतिस्तुङ्गगतो विलग्ने भृगोः सुतः केन्द्रगतः शतायुः॥ ३५॥

यदि बृहस्पति अपने द्रेष्काण में एवं स्वगेही हो तो उस पुरुष की चालीस वर्ष की आयु होती है। और यदि उच्च का बृहस्पति लग्न में हो और उच्च का शुक्र केन्द्र में हो तो वह पुरुष सौ वर्ष जीता है॥ ३५॥

लग्ने स्वतुङ्गे बलशालिनीन्दौ सौम्याः स्वभस्थाः खलु षष्टिरायुः।
मूलत्रिकोणेषु शुभेषु तुङ्गे लग्ने गुरावायुरशीतिरेव॥३६॥

उच्चस्थ पूर्ण बलवान् चन्द्रमा लग्न में हो और सौम्यग्रह सब अपनी-अपनी राशि के हों तो उसकी ६० वर्ष की आयु होती है। यदि सब शुभ ग्रह अपने मूलत्रिकोण में तथा अपने उच्च का बृहस्पति लग्न में हो तो उस मनुष्य की आयु ८० वर्ष की होती है॥ ३६॥

लग्नाऽष्टमारीन्दुयुतिर्न चेत्स्युः क्रूराः स्वभस्था अपि खेचरौ द्वौ।
बलान्वितावम्बरगौ भवेतां जातः शतायुः कथितो मुनीन्द्रैः॥३७॥

यदि लग्न, अष्टम तथा छठें घर में चन्द्रमा न हो और क्रूर ग्रह अपने क्षेत्र के हों और बली दो ग्रह दशम भाव में बैठे हों तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य शतायु होता है, ऐसा मुनीन्द्रों ने कहा है॥ ३७॥

शुद्धे रन्ध्रे केन्द्रगैः सौम्यखेटैर्लग्ने जीवे नैधनेन्दूदयश्चेत्।
नो संदृष्टाः पापखेटैस्तदा स्यादायुर्मानं सप्ततिर्वत्सराणाम्॥ ३८॥

यदि शुभग्रह केन्द्र में हों और अष्टम घर में कोई भी ग्रह न हो

तथा लग्न में बृहस्पति और नवम घर में चन्द्रमा हो तथा उन्हें पापग्रह न देखते हों तो उस मनुष्य की ७० वर्ष की आयु होती है ॥ ३८ ॥

भानौ वायुसखाच्छशाङ्क उदकाद्भौमे मृतिश्चायुधात्
सौम्ये कष्टतराज्ज्वराच्च कठिनाद् दुःसाध्यरोगाद् गुरौ ।
शुक्रे क्षुद्वमिकारणाद्रविसुते लग्नात्पिपासाज्वरान्
मृत्युः स्यान्मनुजस्य चेद् दिविचरे स्थानं गते चाऽष्टमम् ॥ ३९ ॥

यदि लग्न से अष्टम घर में सूर्य हो तो अग्नि के निमित्त से, चन्द्रमा हो तो जल से, मङ्गल हो तो शस्त्र से, बुध हो तो घोर ज्वर से, बृहस्पति हो तो दुःसाध्य किसी रोग से, शुक्र हो तो अत्यन्त क्षुधा वा वमन और शनि हो तो तृषा के निमित्त से उस मनुष्य की मृत्यु होती है ॥ ३९ ॥

दशमे पञ्चमे जीवो बुधश्चन्द्रश्च भार्गवः ।
शतञ्जीवी भवेज्जातो धनाढ्यो वेदपारगः ॥ ४० ॥

यदि लग्न से दशम या पञ्चम में गुरु, बुध, चन्द्रमा और शुक्र हों तो वह मनुष्य धनपरिपूर्ण, वेद में पारंगत और पूर्ण शतायु होता है ॥ ४० ॥

नवमे पञ्चमे जीवो बुधो भवति सप्तमे ।
लग्ने भार्गवचन्द्रौ च शतञ्जीवी भवेन्नरः ॥ ४१ ॥

यदि नवम, पञ्चम बृहस्पति हो, सप्तम घर में बुध और लग्न में शुक्र और चन्द्र हो तो वह मनुष्य १०० वर्ष तक जीता है ॥ ४१ ॥

लघुजातकोक्तनिर्णयः–

सूर्यादिभिर्निधनगैर्हुतवहसलिलायुधज्वरामयजः ।
क्षुत्तृट्कृतश्च मृत्युः परदेशे नैधने चरभे ॥ ४२ ॥

सूर्यादि सप्त ग्रह अष्टम घर में हों तो उस मनुष्य की क्रम से अग्नि, जल, ज्वर, जीर्णज्वर और क्षुधा, तृषा के निमित्त से मृत्यु होती है। यदि लग्न से अष्टम भाव में चरराशि हो तो परदेश में मृत्यु जानना ॥ ४२ ॥

यो वा बलवान्निधनं पश्यति तद्धातुकोपजो मृत्युः ।
लग्नात् त्र्यंशपतिर्वा द्वाविंशः कारणः मृत्योः ॥ ४३ ॥

अथवा जो ग्रह बलवान् होकर अष्टम घर को देखता हो उसी के अनुसार नियमित धातु प्रकोप से उसकी मृत्यु होती है। और लग्न में जो द्रेष्काण हो उससे २२ वाँ द्रेष्काण मरण का होता है ॥ ४३ ॥

सुरपतितिर्यङ्नरकान् गुरुरिन्दु-सितौ वसृग्रवी ज्ञ-यमौ ।
रिपुरन्ध्रत्र्यंशकेपा नयन्ति चास्तारिनिधनस्थाः ॥ ४४ ॥

जन्म समय में जो ग्रह अष्टम में स्थित हो उसी ग्रह के लोक को प्राणी प्रयाण करता है अथवा ६-८ इन दोनों में जिसका द्रेष्काण उदय हो और इन दोनों द्रेष्काण में से जो ग्रह बली हो उसी लोक को जाता है। जैसे बृहस्पति होवे तो देवलोक को, चन्द्र-शुक्र हों तो पितृलोक को, मङ्गल-सूर्य हों तो मर्त्यलोक को और बुध-शनि हों तो उस पुरुष को नरक में प्राप्त कराते हैं ॥ ४४ ॥

षष्ठाऽष्टमकण्टकगो गुरुरुच्चे भवति मीनलग्ने वा ।
शेषैरबलैर्जन्मनि मरणे वा मोक्षगतिमाहुः ॥४५॥

जिसके जन्मकालिक छठें-आठवें और केन्द्र में बृहस्पति उच्च का होकर बैठा हो अथवा बली होकर जन्मलग्न मीन में बैठा हो और सब ग्रह निर्बल हों तो वह मनुष्य मुक्ति को प्राप्त होता है ॥ ४५ ॥

गुरुरुडुपतिशुक्रौ सूर्य-भौमौ यमज्ञौ
विबुधपतितिरश्चो नारकीयांश्च कुर्युः ।
दिनकरशशिवीर्याधिष्ठितत्र्यंशनाथात्
प्रवरसमनिकृष्टास्तुङ्गह्रासादनूके ॥ ४६ ॥

जन्मकाल में सूर्य और चन्द्रमा इन दोनों में-से जो बली हो वह जिस द्रेष्काण में पड़े उसका अधिपति, अगर बृहस्पति हो तो देवलोक से, चन्द्रमा या शुक्र हो तो पितृलोक से, सूर्य या मङ्गल हो तो पशुयोनि से और शनि-बुध हो तो नरक से आया हुआ जातक को समझो ॥ ४६ ॥

स्थिरचरद्वन्द्वसमाह्वयश्च राशिर्यदा जन्मनि चाऽष्टमस्थः ।
स्वकीयदेशे त्रिपयान्तरे वा मार्गे प्रकुर्यान्मरणं क्रमेण ॥ ४७ ॥

लग्न से अष्टम स्थान में चरराशि हो तो विदेश में, स्थिर हो तो स्वदेश में तथा द्विस्वभाव हो तो मार्ग में मृत्यु कहना ॥ ४७ ॥

आयुर्गृहं खेटविवर्जितं चेद्विलोकयेत्तद्बलवान् ग्रहेन्द्रः ।
तद्धेतुजातं प्रवदन्ति मृत्युं बहुप्रकारं बहवो मुनीशाः ॥ ४८ ॥

यदि अष्टम घर में कोई ग्रह न हो और उसे बलवान् कोई ग्रह देखता हो तो उसकी मृत्यु उसी ग्रह के धातुकोप के अनुसार कहनी चाहिए ॥४८॥

पित्तं कफः पित्तमथ त्रिदोषं श्लेष्मानिलो वाऽप्यनिलः क्रमेण ।
सूर्यादिकेभ्यो मरणस्य हेतुः प्रकल्पितः प्राक्तनजातकज्ञैः ॥४९॥

पित्त, कफ, पित्त, त्रिदोष, कफ, वायु और वायु इस प्रकार क्रमशः

सूर्यादि ग्रहों के धातु विकार से मृत्यु के कारण प्राक्तन जातकज्ञों ने कहे हैं। यथा सूर्य के निमित्त से मृत्यु हो तो पित्त से, चन्द्रमा हो तो कफ से, इसी क्रम से और भी ग्रहों के धातु विकार जानना ॥ ४९ ॥

नवमभावविचारः-

विहाय सर्वं गणकैर्विचिन्त्यो भाग्यालयः केवलमत्र यत्नात् ।
आयुश्च माता च पिता च बन्धुर्भाग्यान्वितैनैव भवन्ति धन्याः ॥१॥

सब भावों को छोड़कर प्रथम ज्योतिषियों को नवम घर का ही फल विचार करना चाहिए, क्योंकि नवम घर का नाम भाग्य है। आयु, माता, पिता, भाई और धन आदि सब भाग्य युक्त मनुष्यों से ही धन्य होते हैं, भाग्य विना कुछ नहीं होता ॥ १ ॥

यस्याऽस्ति भाग्यं स नरः कुलीनः
स पण्डितः स श्रुतिमान् गुणज्ञः ।
स एव वक्ता स च दर्शनीयो
भाग्यान्वितः सर्वगुणैरुपेतः ॥ २ ॥

वही व्यक्ति कुलीन है, वही पण्डित है, वही श्रुतिमान् है, वही वक्ता है, वही दर्शनीय है, वही सब गुणों से युक्त है--जो भाग्यवान् है, क्योंकि सब कुछ भाग्य से ही होता है ॥ २ ॥

भाग्यभावफलम्—

अब्दे द्विद्विमिते रवौ च गदितं चन्द्रे चतुर्विंशतौ
ह्यष्टाविंशतिमे कुजे च कथितं दन्तैर्मिते चन्द्रजे ।
जीवे षोडशके भृगौ नवयुते सौरे च षट्त्रिंशके
भाग्यस्थे खलु भाग्यवृद्धिरुदिता विज्ञैश्च गर्गादिभिः ॥ १ ॥

भाग्यभाव में सूर्य हो तो २२वें वर्ष में, चन्द्रमा हो तो २४वें वर्ष में, मङ्गल हो तो २८ वें वर्ष में, बुध हो तो ३२ वें वर्ष में, गुरु हो तो १६ वें वर्ष में, शुक्र हो तो २१ वें वर्ष में भाग्योदय होता है। ऐसा गर्गादि मुनियों ने कहा है ॥ १ ॥

भाग्ययोगकरं सौरे स्थिते भाग्ये च जन्मनि ।
लग्नपे तु विशेषेण यावज्जीवं समृद्धिमान् ॥ २ ॥

यदि शनि भाग्येश होकर भाग्यभाव में हो अथवा लग्नेश यदि भाग्य में हो तो जातक जीवनपर्यन्त भाग्यशाली होता है ॥ २ ॥

मूर्तेश्चाऽपि निशापतेश्च नवमं भाग्यालयं कीर्तितं
तत्स्वस्वामियुतेक्षितं प्रकुरुते भाग्यं स्वदेशोद्भवम्।
चेदन्यैर्विषयान्तरेऽत्र शुभदाः स्वोच्चादिगाः सर्वदाः
कुर्युर्भाग्यमसाध्वो न च बलाद् दुःखोपलब्धिं पराम्॥३॥

लग्न तथा चन्द्रमा से ९ वाँ स्थान भाग्यभाव कहलाता है। वह यदि अपने स्वामी से युत-दृष्ट हो तो अपने देश में ही भाग्यफल को पाता है। अन्य शुभग्रहों से युत-दृष्ट हो तो अन्य देश में भाग्यफल का लाभ होता है। यदि भाग्य स्थान से उच्चस्थ शुभग्रह का योग आदि हो तो सर्वदा और सब देश में उसे भाग्यफल प्राप्त होता है। यदि पापग्रह की दृष्टि या योग हो तो वह भाग्यहीन होता है। उसे सर्वदा दुःख का ही लाभ होता है॥ ३॥

भाग्येश्वरो भाग्यगतोऽस्ति किं वा स्वस्थानगः सारविराजमानः।
भाग्याश्रितः कोऽस्ति विचार्य सर्वमनल्पमल्पं परिकल्पनीयम्॥४॥

इसलिए देखना चाहिये कि, भाग्येश भाग्यस्थान में है या अपनी राशि में या अन्यत्र बली या निर्बल है। तथा भाग्यस्थान में किस प्रकार के ग्रह के योग हैं, इत्यादि सब बातों का विचार करके भाग्य की उत्तमता या अधमता आदि फल समझकर कहना॥ ४॥

तनुत्रिसूनूपगतो ग्रहश्चेद्यो वाऽधिवीर्यो नवमं प्रपश्येत्।
यस्य प्रसूतौ स तु भाग्यशाली विलासशीली बहुलार्थयुक्तः॥ ५॥

लग्न, ३,५ वें स्थान में बली ग्रह होकर वा कहीं से बली ग्रह भाग्य स्थान को देखता हो तो वह भाग्यशाली, सुखी और धनवान् होता है॥ ५॥

चेद्भाग्यगामी खचरः स्वगेहे सौम्येक्षितो यस्य नरस्य सूतौ।
भाग्याधिशाली स्वकुलावतंसी हंसो यथा मानसराजमानः॥ ६॥

जन्मसमय में भाग्येश भाग्यस्थान में शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो भाग्यशाली कुल में मुख्य होता है–जैसे मानसरोवर में हंस होता है॥ ६॥

पूर्णेन्दुयुक्तौ रविभूमिपुत्रौ भाग्यस्थितौ सत्त्वसमन्वितौ च।
वंशानुमानात् सचिवं नृपं वा कुर्वन्ति ते सौम्यदशाविशेषात्॥ ७॥

बली रवि और मङ्गल यदि चन्द्रमा से युक्त होकर भाग्यस्थान में हो तो वह कुल के अनुसार शुभग्रहकी दशासमयमें राजा या राजमन्त्री होता है॥७॥

स्वोच्चोपगो भाग्यगृहे नभोगो नरस्य योगं कुरुते च लक्ष्म्या।
सौम्येक्षितोऽसौ यदि भूमिपालं दन्तीबलोत्कृष्टविलासलाभम्॥ ८॥

भाग्य स्थान में यदि स्वोच्चस्थ ग्रह हों तो वह मनुष्य अधिक सम्पत्ति-वाला होता है। यदि उस पर शुभग्रह की दृष्टि हो तब तो वह हाथी आदि वाहनों से युक्त भूपति होता ही है ॥ ८ ॥

दशमभावविचारः–

समुदितमृषिवर्यैर्मानवानां प्रयत्ना-
दिह हि दशमभावे सर्वकर्म प्रकामम् ।
गगनगपरिदृष्ट्या राशिखेटस्वभावैः
सकलमपि विचिन्त्यं सत्त्वयोगात्सुधीभिः ॥ १ ॥

दशमभाव से ऋषियों ने सब कर्मों के फल की प्राप्ति का विचार कहा है। वह शुभ, अशुभ ग्रहों की दृष्टियोग तथा राशि और ग्रहों के स्वभाव तथा बल के अनुसार ही समझना चाहिए ॥ १ ॥

तनोः सकाशाद् दशमे शशाङ्के वृत्तिर्भवेत्तस्य नरस्य नित्यम् ।
नानाकलाकौशलवाग्विलासैः सर्वोद्यमैः साहसकर्मभिश्च ॥ २ ॥

लग्न से १० वें भाव में चन्द्रमा हो तो उस मनुष्य को अनेक कला-कौशल से, वाक्य की चतुरता से और साहस से सब कार्य में सफलता होती है ॥ २ ॥

तनोः शशाङ्काद् दशमे बलीयान् स्याज्जीवनं तस्य खगस्य वृत्त्या ।
बलान्विताद्वर्गपतेस्तु यद्वा वृत्तिर्भवेत्तस्य खगस्य पाके ॥ ३ ॥

लग्न या चन्द्रमा से दशवें स्थान में जो ग्रह हों उन ग्रहों की वृत्ति के अनुसार उसकी आजीविका से द्रव्य लाभ होना है। उन ग्रहों में भी जो बलवान् हो उसकी वृत्ति से विशेष लाभ होता है। वह भी उसकी दशा समय में समझना ॥ ३ ॥

दिवामणिः कर्मणि चन्द्रतन्वोर्द्रव्याप्यनेकोद्यमवृत्तियोगात् ।
सत्त्वाधिकत्वं च सदा सुरम्यं पुष्टत्वमङ्गे मनसः प्रसादः ॥४॥

लग्न या चन्द्रमा से १० वें स्थान में सूर्य हो तो अनेक उद्यम से धन लाभ, बल और शरीर में पुष्टि एवं सर्वदा मन में प्रसन्नता रहती है ॥ ४ ॥

लग्नेन्दुतः कर्मणि चेन्महीजः स्यात्साहसाच्चौर्यनिषादवृत्तिः ।
नूनं नराणां विषयातिशक्तिर्दूरे निवासः सहसा कदाचित् ॥५॥

लग्न या चन्द्रमा से १० वें भाव में मङ्गल हो तो चोरी, हिंसा और साहस (परिश्रम) से धन की प्राप्ति, विषयों में आसक्ति और विदेश में वास होता है ॥ ५ ॥

लग्नेन्दुभ्यां कर्मगो रौहिणेयः कुर्याद् द्रव्यं नायकत्वं बहूनाम् ।
शिल्पेऽभ्यासः साहसं सर्वकार्ये विद्वद्-वृत्त्या जीवनं मानवानाम् ॥६॥

दशमभाव में बुध हो तो जातक बहुतों का नेता, शिल्पकला में कुशल, लेखन और विद्या से आजीविका करने वाला होता है ॥ ६ ॥

त्रिलग्नतः शीतमयूखतो वाऽऽशाख्ये मघोनः सचिवो यदि स्यात् ।
नानाधनान्यागमनानि पुंसां विचित्रवृत्त्या नृपगौरवं च ॥७॥

लग्न या चन्द्र से १० वें भाव में यदि गुरु हो तो अनेकों प्रकार की वृत्ति से धनलाभ और राजा से आदर होता है ॥ ७ ॥

होरायाश्च निशाकराद् भृगुसुतो मेषूरणे संस्थितो
नानाशास्त्रकलाकलापविलसद्वृत्त्याऽऽदिशेज्जीवनम् ।
दाने साधुजने यथा विनयतां कामं धनाभ्यागमं
नानामानवनायकादिविरलं शीलं विशालं यशः ॥ ८ ॥

लग्न या चन्द्र से १० वें स्थान में शुक्र हो तो उसकी शास्त्रीय विचार (अध्यापन, वकालत, न्यायाधीशता आदि विद्या कार्य) से जीविका होती है। साधुजनों की सेवा, दान करने वाला, विनीत, धनवान्, नेता और विख्यात यश वाला होता है ॥ ८ ॥

होरायाश्च सुधाकराद्रविसुतः शैलूषमध्यस्थिता
वृत्तिं हीनतरां नरस्य कुरुते कार्श्यं शरीरे सदा ।
खेदं वादभयञ्च धान्यधनयोर्हानिं स्वमुच्चैर्मन-
श्चिन्तोद्वेगसमुद्भवेन चपलं शीलं च नो निर्मलम् ॥ ९ ॥

लग्न या चन्द्रमा से दशमभाव में शनि हो तो वह मनुष्य निन्द्य कर्मों से आजीविका करने वाला होता है, शरीर में दुर्बलता, वाद (कलह) का भय, धन की हानि, चिन्ता होती है। उसका स्वभाव भी अच्छा नहीं होता है ॥ ९ ॥

ग्रन्थान्तरात्-

जीवो द्विजात्माकरदेवधर्मैः शुक्रो महिष्यादिक-रौप्य-रत्नैः ।
शनैश्चरो नीचतरप्रकारैः कुर्यान्नराणां खलु कर्मवृत्तिम् ॥ १० ॥

दशम भाव में गुरु हो तो ब्राह्मणों की वृत्ति से, खान से, धर्म कार्य से, देवता की उपासना से धन लाभ होता है। शुक्र दशम भाव में हो तो गो-भैंस,

चाँदी और रत्नों के व्यापार से तथा शनि दशम भाव में हो तो परिश्रम (भार ढोने आदि नीच कर्म) से जीविका करने वाला होता है ॥१०॥

कर्मस्वामी ग्रहो यस्य नवांशे परिवर्तने ।
तत्तुल्यकर्मणां वृत्तिं निदिशन्ति मनीषिणः ॥ ११ ॥

दशमेश जिस ग्रह के नवमांश में हो उस ग्रह के कहे हुए कर्म से उस मनुष्य की आजीविका होती है ॥ ११ ॥

तत्र वैशिष्टयम्––

मित्रारिगेहोपगतैर्नभोगैस्ततस्ततोऽर्थः परिकल्पनीयः ।
तुङ्गे पतङ्गे स्वगृहे त्रिकोणे स्यादर्थसिद्धिर्निजबाहुवीर्यात् ॥ १२ ॥

उक्त दशमेश मित्र, शत्रु, सम आदि जिस ग्रह के घर में हो तो मित्र, शत्रु या सम (उदासीन) जनों की सहायता से आजीविका होती है। यदि सूर्य अपने उच्च या स्वगृह में हो तो वह जातक अपने बाहुबल से धनोपार्जन करता है ॥ १२ ॥

बुधभार्गवजीवार्कियुक्तो राहुश्चतुष्टये ।
कुरुते कमलारोग्यपुत्रमानादिकं फलम् ॥ १३ ॥

दशम भाव में या किसी केन्द्र में बुध, शुक्र, गुरु, शनि और राहु हो तो उस मनुष्य को धन, आरोग्य, पुत्र और लोक में आदर होता है ॥ १३ ॥

कर्मस्थाने निजक्षेत्रे भौमशुक्रबुधैर्युतः ।
यदि राहुर्भवेत्तस्य क्षणे वृद्धिः क्षणे क्षयः ॥ १४ ॥

लग्न से दशम स्थान में स्वक्षेत्री राहु यदि मङ्गल, बुध, शुक्र से युत हो तो उसके कभी धन में वृद्धि, कभी हानि होती रहती है ॥ १४ ॥

पाताले चाम्बरे पापो द्वादशे च यदा स्थितः ।
पितरं मातरं हन्ति देशाद् देशान्तरं व्रजेत् ॥ १५ ॥

जिसके लग्न से ४।१०।१२ स्थान में पापग्रह हो तो उसके पिता-माता को क्लेश होता है। तथा वह स्वयं देश-विदेश घूमकर समय बिताता है ॥ १५ ॥

चापे सूर्यः शनिः कुम्भे मेषे भवति चन्द्रमाः ।
मकरे च यदा शुक्रो भुङ्क्ते नासौ पितुर्धनम् ॥ १६ ॥

धनु में सूर्य, कुम्भ में शनि, मेष में चन्द्रमा और मकर में शुक्र हो तो व जातक पित का धन नहीं भोग करता है ॥ १६ ॥

सप्तमे भवने भानुर्मध्यस्थो भूमिनन्दनः।
राहुश्चान्ते च तस्यैव पिता कष्टेन जीवति ॥ १७ ॥

सप्तम भाव में सूर्य, १० वें में मङ्गल, १२ वें में राहु हो तो उसका पिता कष्ट से जीवित रहता है ॥ १७ ॥

तत्र शुभफलम्–

कन्यायां मिथुने राहुः केन्द्रे षष्ठे व्यये भवेत्।
त्रिकोणे च तदा जातो दाता भोक्ता निरामयः ॥ १८ ॥

कन्या या मिथुन का राहु यदि केन्द्र (१।४।७।१०), ६, १२ या त्रिकोण (५।९) में हो तो वह जातक धनी, दाता, भोगी और नीरोग होता है ॥१८॥

अशुभफलम्–

सूर्यः पापेन संयुक्तः सूर्यश्च पापमध्यगः।
सूर्यात्सप्तमगः पापस्तदा पितृवधो भवेत् ॥ १९ ॥

सूर्य पापग्रह से युत हो या २ पापग्रहों के मध्य में हो या सूर्य से ७ वें स्थान में पापग्रह हों तो उसका पिता मर जाता है ॥ १९ ॥

दशमस्थो यदा भौमः शत्रुक्षेत्रस्थितो यदि।
म्रियते तस्य बालस्य पिता शीघ्रं न संशयः ॥ २० ॥

दशमभाव में मङ्गल शत्रु राशि का हो तो भी उस जातक का पिता जल्दी मर जाता है ॥ २० ॥

लग्ने जीवो धने मन्दो रविर्भौमस्तथा बुधः।
विवाहसमये तस्य बालस्य म्रियते पिता ॥ २१ ॥

लग्न में गुरु, द्वितीय में शनि, सूर्य, मङ्गल और बुध हो तो उसके विवाह समय में पिता का मरण होता है ॥ २१ ॥

पुनः शुभफलम्–

भ्रातृस्थाने यदा जीवो लाभस्थाने यदा शशी।
स लोके गृहमध्यस्थो जायते कुलदीपकः ॥ २२ ॥

तृतीयभाव में गुरु और ११ वें भाव में चन्द्रमा हो तो वह लोक में मान्य और अपने कुल में दीपक समान होता है ॥ २२ ॥

सिंहलग्ने यदा भौमः पञ्चमे च निशाकरः।
व्ययस्थाने यदा राहुः स जातः कुलदीपकः ॥ २३ ॥

जन्म समय में यदि सिंह लग्न में मङ्गल, ५ वें भाव में चन्द्रमा और १२ वें राहु हो तो वह जातक कुलदीपक होता है ।। २३ ।।

एकः पापो यदा लग्ने पापश्चैको रसातले ।
जायते च द्विनाली स्यात् स जातः कुलदीपकः ।। २४ ।।

एक पापग्रह लग्न में तथा १ पापग्रह चतुर्थ भाव में हो तो वह दोनाल में जन्म लेनेवाला तथा कुलको प्रकाश करने वाला होता है ।। २४ ।।

लग्ने वा सप्तमे भौमः पञ्चमे वा दिवाकरः ।
व्ययस्थाने यदा राहुर्विख्यातः स न संशयः ।। २५ ।।

लग्न या ७ वें भाव में मङ्गल, ५ वें में सूर्य और १२ वें स्थान में राहु हो तो भी वह जातक लोक में विख्यात होता है ।। २५ ।।

केन्द्रे शुभो यदैकोऽपि बली विश्वप्रकाशकः ।
सर्वे दोषाः क्षयं यान्ति दीर्घायुश्च भवेन्नरः ।। २६ ।।

एक भी बलवान् (स्वोच्चादिस्थ) शुभग्रह केन्द्र में हो तो वह जातक विश्व में विख्यात होता है। उसके अन्य ग्रहों के सब दोष नष्ट हो जाते हैं और वह दीर्घायु होता है ।। २६ ।।

एकादशभावविचारः–

लाभस्थाने ग्रहाः सर्वे राज्यलाभफलप्रदाः ।
गजाश्वपतिमीशं च सौम्याः कुर्वन्ति निश्चितम् ।। १ ।।

लाभस्थान में सब ग्रह राज्य लाभ कारक उपलक्षण से शुभफल कारक होते हैं। यदि शुभग्रह लाभ भाव में हों तो निश्चय जातक को हाथी, घोड़े आदि सवारी रखने वाला ईश (राजा) बना देते हैं ।। १ ।।

सूर्येण युक्तस्त्ववलोकितो वा लाभालये तस्य गणोऽत्र चेत्स्यात् ।
भूपालतश्चोरकुलात्कलेर्वा चतुष्पदादेर्बहुधा धनाप्तिः ।।२।।

यदि लाभ (११) भाव सूर्य से युत या दृष्ट हो या लाभभाव में सूर्य के राश्यादि वर्ग हों तो उस जातक को राजा से, चोरों से, या विवाद से तथा चतुष्पदों से धन का लाभ होता है ।। २ ।।

चन्द्रेण युक्तं च विलोकितं वा लाभालयं चन्द्रगणाश्रितं चेत् ।
जलाशयं स्त्रीगजवाजिवृद्धिः पूर्णे भवेत्क्षीणतरे विलोमात् ।।३।।

लाभ भाव यदि चन्द्रमा से युत-दृष्ट हो या उसमें चन्द्रमा का षड्वर्ग हो तो वह जातक बहुत जलाशय बनवाने वाला, स्त्री तथा हाथी आदि सवारी के सुख से युक्त होता है। चन्द्रमा पूर्ण हो तो पूर्णसुख, क्षीण हो तो अल्प सुख समझना चाहिए ।। ३ ।।

लाभालये मङ्गलयुक्तदृष्टे प्रकृष्टभूषामणिहेमलब्धिः ।
विचित्रयानो बहुसाहसी स्यान्नानाकलानिर्मलबुद्धियुक्तः ॥ ४ ॥

यदि ११ वाँ भाव मङ्गल से युत दृष्ट हो तो उत्तमोत्तम आभूषण, रत्न आदि का लाभ होता है। साहसी और विचित्र यान से युक्त, अनेक कलाओं का ज्ञाता तथा निर्मल बुद्धि वाला होता है ॥ ४ ॥

लाभे सौम्यगणाश्रिते शशिसुते सौम्ये च सद्वीक्षिते
नानाकाव्यकलाकलापविधिना शिल्पेन लिप्या सुखम् ।
युक्तिर्द्रव्यमयी भवेद्धनचयः सत्साहसैरुद्यमैः
सख्यं चापि वणिग्जनैर्बहुतरं क्लीबैर्नृणां कीर्तितम् ॥ ५ ॥

११वें भाव में बुध का वर्ग हो, बुध से युत या दृष्ट हो तो काव्य, कला, शिल्प और लेख के द्वारा धन से सुख लाभ होता है। यत्न और साहस के द्वारा काँसा, पित्तलादिसे धन, व्यापारियों और हिंजड़ोंसे मैत्री होती है ॥५॥

यज्ञक्रियासाधुजनानुयातो राजाश्रितोत्कृष्टकृपो नरः स्यात् ।
द्रव्येण हेमप्रचुरेण युक्तो लाभे गुरोर्वर्गनिरीक्षणं चेत् ॥ ६ ॥

११वें भाव में गुरु के वर्ग या गुरु का योग या दृष्ट हो तो यज्ञादि कार्य, साधुओं की सेवा, राजा के आश्रय तथा कृपासे अधिक धनलाभ होता है॥६॥

लाभालये भार्गववर्गयाते युक्तेक्षिते वा यदि भार्गवेण ।
वेश्याजनैर्वापि गमागमैर्वा सद्रौप्यमुक्ताप्रचुरस्य लब्धिः ॥ ७ ॥

लाभ भाव में शुक्र के राश्यादि वर्ग हों वा शुक्र से युत-दृष्ट हों तो उस जातक को वेश्या के द्वारा, देशान्तर गमनागमन से, चाँदी, मोती आदि धन का लाभ होता है ॥ ७ ॥

लाभवेश्मनि शनीक्षितयुक्ते तद्गणेन सहिते सति पुंसाम् ।
नीललौहमहिषीगजलाभो ग्रामवृन्दपुरगौरवमिश्रम् ॥ ८ ॥

११ वें भाव में शनि का योग या दृष्टि अथवा राश्यादि वर्ग हो तो नीलम, रत्न, लोह, महिषी, हाथी आदि का लाभ तथा गाँव और जनसमूहों के द्वारा आदर होता है ॥ ८ ॥

युक्तेक्षिते लाभगृहे शुभाख्ये वर्गे शुभानां समवस्थिते च ।
लाभो नराणां बहुधाथवास्मिन् सर्वैर्ग्रहैर्युक्तनिरीक्ष्यमाणे ॥ ९ ॥

लाभ भाव में यदि शुभग्रह के वर्ग हों और शुभग्रह से ही युत-दृष्ट हो तो उस मनुष्य को अनेकों प्रकार से धन का लाभ होता रहता है ॥ ९ ॥

व्ययभावविचारः–

कुशीलं च तथा काणं पापिनं दुःखितं नरम् ।
महाव्ययं महादुष्टं व्ययभावे यदा ग्रहाः ॥ १ ॥

लग्न से १२वें भाव में कोई भी ग्रह हो तो जातक दुष्ट स्वभाव वाला, पापी, दुःखी, बहुत खर्च करने वाला एवं महादुष्ट होता है ॥ १ ॥

व्ययालये क्षीणकरः कलानां सूर्योऽथवा द्वावपि तत्र संस्थौ ।
द्रव्यं हरेद् भूमिपतिस्तु तस्य व्ययालये क्षोणिजदृष्टियुक्ते ॥ २ ॥

१२वे स्थान में चन्द्रमा या सूर्य अथवा दोनों साथ हों और यदि उस पर मङ्गल की दृष्टि हो तो उस जातक का धन राजा ले लेता है। अर्थात् शुभग्रह की दृष्टि भी हो तो यह फल नहीं समझना ॥ २ ॥

पूर्णेन्दुसौम्येज्यसिता व्ययस्थाः कुर्वन्ति संस्थां धनसञ्चयस्य ।
प्रान्त्यस्थिते सूर्यसुते कुजेन युक्तेक्षिते वित्तविनाशनं स्यात् ॥ ३ ॥

द्वादश भाव में पूर्ण चन्द्र, बुध गुरु और शुक्र हो तो धन का संग्रह कराते हैं। १२ वें भाव में शनि, मङ्गल से युत-दृष्ट हो तो धन नाश का कारक होता है ॥ ३ ॥

उच्चाभिलाषी ग्रहाणां लक्षणम्–

रविर्मीने शशी मेषे भौमो धनुषि चाश्रितः ।
सिंहे बुधो गुरुर्युग्मे शुक्रः कुम्भे तथैव च ॥ १ ॥
शनिः कन्यास्थितो ह्युच्चाभिलाषी समुदाहृतः ॥ २ ॥

मीनान्त में सूर्य, मेषान्त में चन्द्रमा एवं धनु में मंगल, सिंह में बुध, मिथुन में गुरु, कुम्भ में शुक्र और कन्या में शनि हो तो ये ग्रह इस स्थिति में उच्चाभिलाषी कहलाते हैं ॥ १–२ ॥

उच्चाभिलाषिणः ग्रहाणां फलम्–

उच्चाभिलाषिणः खेटा जन्मकाले पतन्ति चेत् ।
स नरो भूपपूज्यः स्याद्वंशस्य नृपतिर्भवेत् ॥ ३ ॥

जन्म जमय में ग्रह यदि उच्चाभिलाषी हों तो वह मनुष्य राजमान्य तथा अपने कुल में श्रेष्ठ होता है ॥ ३ ॥

बलीग्रहस्य लक्षणम्–

उदितः स्वगृहस्थश्च मित्रगेहे च तुङ्गगः ।
मित्रवर्गेण दृष्टश्च स ग्रहः सबलः स्मृतः ॥ ४ ॥

जो ग्रह उदित, अपने घर में, मित्र के घर में, अपने उच्च में और मित्र से दृष्ट हो तो वह बली कहलाता है ॥ ४ ॥

सबलभावस्य लक्षणम्–

स्वामिना बलिना दृष्टः सबलैश्च शुभैर्ग्रहैः ।
न दृष्टो न युतः पापैः स भावः सबलः स्मृतः ॥ ५ ॥

जो भाव अपने बली स्वामी से तथा शुभग्रह से युत-दृष्ट हो तथा उस पर पापग्रह की दृष्टि नहीं हो वह बली कहलाता है ॥ ५ ॥

मतान्तरेण ग्रहाणां दृष्टिः–

ज्ञाऽर्केन्दुशुक्रास्त्रिदशं त्रिकोणं तुर्याष्टमं द्यूनमथांशवृद्ध्या ।
पश्यन्ति तुर्याष्टमसप्तमत्रिदशं त्रिकोणं च गुरुः क्रमेण ॥ १ ॥

बुध, रवि, चन्द्र और शुक्र ये चारों ग्रह अपने आश्रित स्थान से ३।१० को १ चरण से, ५।९ को २ चरण से, ४।८ को ३ चरण से और ७ को चारों चरण से देखते हैं। गुरु ४।८ को १ चरण से, ७ को २ चरण से, ३।१० को ३ चरण से और ५।९ को ४ चरण से देखता है ॥ १ ॥

त्रिकोणं चतुरस्रं च सप्तमं त्रिदशं शनिः ।
अस्तं त्रिखं त्रिकोणं च चतुरस्रं क्रमात्कुजः ॥ २ ॥

शनि अपने स्थान से ९।५ को १ चरण से, ४।८ को २ चरण से, ७ को ३ चरण से और ३।१० को ४ चरण से देखता है। मङ्गल ७ को १ चरण से, ३।१० को २ चरण से, ५।९ को ३ चरण से और ४।८ को ४ चरण से देखता है ॥ २ ॥

आये व्यये न पश्यन्ति न पश्यन्ति द्वितीयके ।
आद्यं षष्ठे न पश्यन्ति तत्रान्धाः कथिता ग्रहाः ॥ ३ ॥

अपने आश्रित स्थान से, ११, १२, २, १, ६ इन स्थानों को कोई ग्रह नहीं देखता है, क्योंकि इन स्थानों के हेतु ग्रह अन्ध होते हैं ॥ ३ ॥

जन्मपत्रनिर्माणकाले नामनिर्देशः–

तिथि-वारं च नक्षत्रं नामाक्षरसमन्वितम् ।
वेदैश्च विहितं शेषं पत्रीनाम तदुच्यते ॥ १ ॥
व्योमा द्योमा च मूर्द्धा च पद्मा चैव चतुर्थकम् ।
जन्मपत्रीस्थितं नाम ज्ञात्वा पत्रीं समारभेत् ॥ २ ॥

जिस समय जन्मपत्र बनाना आरम्भ करे, उस समय की तिथि, वार और नक्षत्र की संख्या के योग में जन्मपत्री वाले का नामाक्षर जोड़कर ४ के भाग देने से १ शेष में व्योमा, २ में द्योमा, ३ में मूर्द्धा और ४ (०) शेष में पद्मा नाम की जन्मपत्री समझे। इस प्रकार पत्री का नाम समझकर पत्री बनाना (लिखना) आरम्भ करना चाहिए ॥ १-२ ॥

जन्मपत्र्याः नामानुसारेण फलम्-

व्योमायां पितृहानिः स्याद् द्योमा मातृक्षयङ्करी ।
मूर्द्धा ह्यायुःकरी ज्ञेया पद्मा बलविधायिनी ॥ ३ ॥

व्योमा नाम की पत्री जातक के पिता की, द्योमा पत्री माता की हानि करने वाली होती है। मूर्द्धा में आयु की वृद्धि और पद्मा नामक पत्री से बल की पुष्टि होती है। इसलिए मूर्द्धा और पद्मा नाम देखकर ही अच्छे समय में जन्मपत्री लिखना आरम्भ करना चाहिये। किसी ने जन्मकाल के तिथि, वार ग्रहण करना अर्थ किया है, वह असङ्गत और प्रत्यक्ष विरुद्ध है ॥ ३ ॥

सशब्द-अशब्दराशीनां निर्देशः-

सशब्दोऽजो वृषः सिंहो मकरश्च तुलाधरः ।
सर्द्धशब्दो घटः कन्या शेषाः शब्दविवर्जिताः ॥ १ ॥

मेष, वृष, सिंह, मकर और तुला ये शब्दयुत राशि हैं। कुम्भ और कन्या ये दोनों अर्ध शब्द हैं। शेष (मिथुन, कर्क, वृश्चिक, धनु, मीन) ये शब्दहीन हैं। इसका प्रयोजन यह है कि-सशब्द लग्न में जातक जन्मकाल में जोरों से रोता है। अर्द्ध शब्द लग्न में थोड़ा-सा और अशब्द लग्नों में नहीं रोता है ॥ १ ॥

नालवेष्टितजन्मज्ञानम्-

छागे सिंहे वृषे लग्ने वृश्चिके नालवेष्टितः ।
नृलग्ने दक्षिणे पार्श्वे स्त्रीलग्ने वामपार्श्वगः ॥ २ ॥

मेष, सिंह, वृष और वृश्चिक लग्न में, नाल में लिपटे हुए का जन्म होता है, पुरुष राशि हो तो दाहिने अंग में, स्त्री राशि हो तो वाम अंग में नाल वेष्टित समझना ॥ २ ॥

मस्तकचरणाभ्यां जन्मज्ञानम्-

शीर्षोदये विलग्ने मूर्द्धाप्रसवोऽन्यथोदये चरणौ ।
उभयोदये च हस्तौ शुभदृष्टः शोभनोऽन्यथा कष्टम् ॥ ३ ॥

जन्म समय में पीछे कहे हुए शीर्षोदय लग्न में मस्तक से, पृष्ठोदय लग्न में पैर से तथा उभयोदय लग्न में हाथ से प्रसव (अर्थात् गर्भ से प्रथम निकलना) समझना चाहिये ।। ३ ।।

यमलजन्मज्ञानम्–

सूर्यश्चतुष्पदस्थः शेषा द्विशरीरसंस्थिता बलिनः ।
कोशैर्वेष्टितदेहौ यमलौ खलु तौ प्रसूयेते ।। ४ ।।

सूर्य चतुष्पद राशि में हो, शेष ग्रह यदि बलवान् होकर द्विस्वभाव राशि में हों तो जरायु में दो (जोड़ा) का जन्म समझना ।। ४ ।।

मूकजन्मज्ञानम्–

क्रूरखगे सन्धिगते शशिनि वृषे भौमसौरिसंदृष्टे ।
मूकः सौम्यैर्दृष्टे वाचं कालान्तरे वदति ।। ५ ।।

पापग्रह राशि सन्धि में और चन्द्रमा वृष में हो, उन पर मंगल और शनि की दृष्टि हो तो जातक गूँगा होता है। यदि शुभग्रह की भी दृष्टि हो तो अधिक समय में बोलता है ।। ५ ।।

विशिष्टयोगः–

दक्षिणांशे ग्रहाः सर्वे दीप्तानस्तमितेक्षणाः ।
तस्य त्रिंशत्तमे वर्षे गजो द्वारेऽवतिष्ठते ।। ६ ।।

जन्म समय में लग्न से सप्तमभाव पर्यन्त सब ग्रह हों तो उस जातक के घर में ३० वें वर्ष में हाथी बाँधे जाते हैं और उसका ३० वें वर्ष में भाग्योदय होता है ।। ६ ।।

विशिष्टराजयोगः–

चतुष्टयगते चन्द्रे कोणे चैव दिवाकरे ।
अपि दासकुले जातः सोऽपि राजा भविष्यति ।। ७ ।।

यदि केन्द्र में चन्द्रमा और त्रिकोण में सूर्य हो तो नीच कुलोत्पन्न भी राजा होता है ।। ७ ।।

त्रिभिः स्वस्थैर्भवेन्मन्त्री त्रिभिरुच्चैर्नराधिपः ।
त्रिभिर्नीचैर्भवेद् दासस्त्रिभिरस्तं गतैर्जडः ।। ८ ।।

३ ग्रह यदि अपने घर के हों तो जातक राजमन्त्री और यदि ३ ग्रह उच्च के हों तो राजा होता है। यदि ३ ग्रह नीच के हों तो उच्च कुलोत्पन्न भी दास होता है एवं ३ ग्रह अस्त हों तो जातक महामूर्ख होता है ।। ८ ।।

अथ नवग्रहाणां पुरुषाकारचक्रम्

सूर्यपुरुषाकारचक्रम्—

लिखित्वा नरचक्रं च यत्र सूर्यो व्यवस्थितः ।
तन्नक्षत्रादिकं कृत्वा त्रयं दद्याच्च मस्तके ॥ १ ॥
वदने च त्रयं दद्यादेकैकं स्कन्धयोर्द्वयोः ।
बाहुद्वये तथैकैकं पाण्योश्चैकैकमेव च ॥ २ ॥
ऋक्षाणि हृदये पञ्च नाभौ स्यादेकमेव हि ।
ऋक्षं गुह्ये भवेदेकमेकैकं जानुनोर्द्वयोः ॥ ३ ॥
नक्षत्राणि षडन्यानि दद्यात्पादद्वये बुधः ।

एक मनुष्य के आकार का चक्र बनाकर जिस नक्षत्र में सूर्य हो उस नक्षत्र से आरम्भ करके ३ नक्षत्र उस चक्र के मस्तक में, ३ मुख में, १, १ दोनों कन्धे में, १, १ दोनों बाहु में, १, १ दोनों हाथ में, ५ हृदय में, १ नाभि में, १ गुद स्थान में, १, १ दोनों घुटने में, अन्य शेष ६ नक्षत्र पैर में न्यास करे ॥ १–३ ॥

सूर्यपुरुषाकारनक्षत्रचक्रे फलम्–

पादस्थिते च नक्षत्रे निर्धनोऽल्पायुरेव च ॥ ४ ॥
विदेशगमनो जातो गुह्ये स्यात्पारदारिकः ।
अल्पतोषी भवेन्नाभौ हृदये चेश्वरस्तथा ॥ ५ ॥
तस्करः पाणियुग्मे च बाहौ स्थानच्युतो भवेत् ।
स्कन्धे गजस्कन्धगामी मुखे मिष्टान्नभोजनः ॥ ६ ॥
मस्तकस्थे च नक्षत्रे पट्टबन्धो भवेन्नरः ।
सूर्यनक्षत्रतो जन्म नक्षत्रमिति गण्यते ॥ ७ ॥

इस प्रकार जन्मनक्षत्र सूर्यपुरुषाकार चक्र के पैर में पड़े तो जातक निर्धन, अल्पायु और विदेशगामी होता है। गुह्यस्थान में पड़े तो परस्त्रीगामी, नाभि में पड़े तो थोड़े में सन्तोष करने वाला, हृदय में पड़े तो राजा होता है। हाथ में पड़े तो चोर, बाहु में पड़े तो स्थानभ्रष्ट, कन्धे में पड़े तो हाथी पर चलने वाला, मुख में पड़े तो मिष्टान्नभोजी, मस्तक में पड़े तो राजा होता है। उक्त प्रकार से सूर्य नक्षत्र न्यासकर फल समझना चाहिए ॥ ४–७ ॥

अनेनैवायुर्दायज्ञानम्—

शतवर्षाणि जीवेत शिरो जातो न संशयः ।
मुखेनाऽशीतिवर्षाणि स्कन्धाभ्यां च तथैव च ॥ ८ ॥
हस्ताभ्यां बाहुयुग्मे च जीवेत सप्तसप्ततिः ।
अष्टषष्टिर्हृदि ज्ञेया नाभौ चाऽपि तथैव च ॥ ९ ॥
गुह्ये च षष्टिवर्षाणि चाऽष्टौ वर्षाणि जानुनि ।
पादयोः षट् च वर्षाणि रविचक्रे क्रमेण च ॥ १० ॥

इस प्रकार जन्मनक्षत्र मस्तक में पड़े तो १०० वर्ष, मुख में पड़े तो ८० वर्ष, कन्धे में भी ८० वर्ष, दोनों हाथ एवं दोनों बाहु में पड़े तो ७० वर्ष, हृदय और नाभि में भी पड़े तो ६८ वर्ष, गुह्यस्थान में पड़े तो ६० वर्ष और दोनों जंघाओं में पड़े तो ८ वर्ष एवं दोनों पैर में पड़े तो ६ वर्ष जातक की आयु होती है ॥ ८-१० ॥

चन्द्रपुरुषाकारचक्रं तत्फलञ्च—

पूर्णिमायां तु यदृक्षं तदादौ त्रीणि मस्तके ।
मुखे त्रीणि भुजे षट्कं हृदि त्रीण्युदरे त्रयम् ॥ ११ ॥
गुह्ये त्रीणि पदे षट्कं न्यसेच्चन्द्रस्य सर्वदा ।
यावांस्तु जन्मनक्षत्रं गणनीयमिति क्रमात् ॥ १२ ॥
अर्थसिद्धिर्नृवृत्तश्रीः कुशलं चाऽद्भुतं शुभम् ।
मार्गमृत्युं श्रियं क्षेत्रमिति चन्द्रफलं वदेत् ॥ १३ ॥

जन्मकाल में गत पूर्णिमा के नक्षत्र से आरम्भ करके ३ नक्षत्र मस्तक में, ३ मुख में, ६ दोनों बाहु में, ३ हृदय में, ३ पेट में, ३ गुह्येन्द्रिय में, ६ पैर में न्यास करके देखें। यदि जन्मनक्षत्र मस्तक में हो तो अर्थसिद्धि, मुख में हो तो लक्ष्मी, भुज में हो तो कुशल, हृदय में हो तो अति शुभ, उदर में हो तो कल्याण होता है ॥ ११-१३ ॥

मंगलपुरुषाकारचक्रं तत्फलञ्च—

यस्मिन्नृक्षे भवेद्भौमस्तदादौ त्रीणि मस्तके ।
मुखे त्रीणि त्रयं नेत्रे कण्ठे द्वे च चतुष्करे ॥ १४ ॥
पश्चोदरे त्रीणि गुह्ये पादे चत्वारि दापयेत् ।
जन्म-ऋक्षं स्थितं यत्र फलं तत्र वदेत् पुमान् ॥ १५ ॥

मुखे रोगं सुखं नेत्रे शिरो राज्यं रुजा करे।
कण्ठे रोगी धनी वृक्षे गुह्ये पादे च विभ्रमः ॥ १६ ॥

जिस नक्षत्र में मंगल हो उससे आरम्भ करके ३ नक्षत्र मस्तक में, ३ मुख में, ३ नेत्र में, २ कण्ठ में, ४ हाथ में, ५ पेट में, ३ गुह्यस्थान में, ४ पैर में न्यास करके देखें। यदि जन्मनक्षत्र मुख में पड़े तो रोग, नेत्र में सुख, मस्तक में राज्यलाभ, हाथ में पड़े तो रोग, कण्ठ में भी रोग, हृदय में पड़े तो धनलाभ और गुह्यस्थान में तथा पैर में जन्म नक्षत्र पड़े तो भ्रमण होता है॥ १४-१६ ॥

बुधपुरुषाकारचक्रं तत्फलञ्च-

यस्मिन्नृक्षे भवेत्सौम्यस्तदादौ शीर्षके चतुः।
मुखे त्रीणि चतुर्वामे करे दक्षिणके चतुः ॥ १७ ॥
हृदये षट् तथा गुह्ये चत्वारि द्वे पदे न्यसेत्।
जन्म-ऋक्षं स्थितं यत्र फलं तत्र वदेत्पुमान् ॥ १८ ॥
मुखेष्टभुक्छिरो राज्यं कष्टं वामकरे तथा।
वक्षस्यन्यकरे सौख्यं गुह्ये रोगी पदे भ्रमः ॥ १९ ॥

बुध जिस नक्षत्र में हो उससे आरम्भ करके ४ मस्तक में, ३ मुख में, ४ वाम हाथ में, ४ दाहिने हाथ में, ६ हृदय में, ४ गुह्यस्थान में और २ पैर में न्यास करके देखें। यदि जन्मनक्षत्र में पड़े तो अभीष्ट भोजन, मस्तक में पड़े तो राज्यलाभ, वाम हाथ में कष्ट, दाहिने हाथ तथा हृदय में पड़े तो सुख, गुह्येन्द्रिय में पड़े तो रोग और पैर में जन्मनक्षत्र पड़े तो भ्रमण होता है॥ १७-१९ ॥

गुरुपुरुषाकारचक्रं तत्फलञ्च-

शीर्षे चत्वारि राज्यं युगपरिगणितं स्कन्धयुग्मे च लक्ष्मी-
रेकं कण्ठे विभूतिर्मदनपरिमितं वक्षसि प्रीतिलाभम्।
षड्भिः पीडाङ्घ्रियुग्मे जलधिपरिमितं वामहस्ते च मृत्यु-
र्दृग्युग्मे त्रीणि कुर्यान्नृपतिसमसुखं वाक्पतेश्चक्रमेतत् ॥ २० ॥

जिस नक्षत्र में बृहस्पति हो उससे आरम्भ कर ४ नक्षत्र शीर्ष के होते हैं, उनमें जन्मनक्षत्र पड़े तो राज्यलाभ, दोनों कन्धे के ४ नक्षत्रों में सम्पत्ति, १ कण्ठ के नक्षत्र में ऐश्वर्य, ७ हृदय के नक्षत्रों में प्रीतिलाभ, ६ दोनों पैर के नक्षत्रों में पीड़ा, ४ वाम हाथ के नक्षत्रों में मृत्यु, ३ नेत्र के नक्षत्रों में जन्मनक्षत्र पड़े तो राजा के समान सुख होता है॥ २० ॥

शुक्रपुरुषाकारचक्रं तत्फलञ्च–

यस्मिन्नृक्षे भवेच्छुक्रस्तदादौ च चतुःशिरे ।
कण्ठे वक्षःस्थले पञ्च त्रिगुह्यके पञ्च जङ्घयोः ॥ २१ ॥
त्रीणि द्वे पदयोर्द्वयात्फलं जन्मर्क्षमानतः ।
शिरो राज्यं धनं कण्ठे हृदये सौख्यमेव च ॥ २२ ॥
शत्रुभीतिर्भवेद् गुह्यके जङ्घायां मिष्टभोजनम् ।
पादे च सुखसम्प्राप्तिः शुक्रचक्रे क्रमेण च ॥ २३ ॥

जिस नक्षत्र में शुक्र हो उससे आरम्भ कर ४ नक्षत्र मस्तक में, कण्ठ और हृदय में ५, ३ गुह्येन्द्रिय में, ५ दोनों जाँघ में, ३ और २ दोनों पैर में न्यास करके फल समझे । यदि मस्तक में नक्षत्र पड़े तो राज्यलाभ, कण्ठ में धनलाभ, हृदय में सुख, गुह्यस्थान में पड़े तो शत्रु भय, जाँघ में पड़े तो मिष्टान्न भोजन और पैर में जन्म नक्षत्र पड़े तो सुख लाभ होता है ॥ २१-२३ ॥

मार्गिशनिचक्रम्–

शनि-चक्रं नराकारं लिखित्वा सौरिभादितः ।
नाम-ऋक्षं भवेद्यत्र ज्ञेयं तत्र शुभाऽशुभम् ॥ २४ ॥

पुरुषाकार शनिचक्र लिखकर शनि जिस नक्षत्र में हो उससे आरम्भ करके आगे कहे अनुसार मस्तक आदि में नक्षत्रों का न्यास करके जन्म नक्षत्र जहाँ पड़े तदनुसार फल समझे ॥ २४ ॥

नक्षत्राणां न्यासः–

नक्षत्रमेकं च शिरोविभागे तथा मुखे त्रीणि युगं च गुह्ये ।
नेत्रे च नक्षत्रयुगं हृदिस्थं त्रयं तथा वामकरे चतुष्कम् ॥२५॥
वामे च पादे त्रितयं च भानां भानां त्रयं दक्षिणपादसंस्थम् ।
चत्वारि ऋक्षाणि च दक्षिणे करे चक्रं प्रणीतं मुनिनारदेन ॥२६॥

१ नक्षत्र मस्तक में, ३ मुख में, ४ गुप्तेन्द्रिय में, २ नेत्र में, ३ हृदय में, ४ वाम कर में, ३ वाम पैर में, ३ दाहिने पैर में, ४ नक्षत्र दाहिने कर में न्यास करे, ऐसा नारद ने कहा है ॥ २५-२६ ॥

क्रमात् फलम्–

रोगो लाभो हानिराप्तिश्च सौख्यं बन्धः पीडा सत्प्रयाणं च लाभः ।
मान्दे चक्रे मार्गगे कल्पनीयं तद्वैलोम्याद्वक्रगे स्युः फलानि ॥२७॥

जन्मनक्षत्र मस्तक में पड़े तो रोग, मुख में पड़े तो लाभ, गुप्तेन्द्रिय में पड़े तो हानि, नेत्र में लाभ, हृदय में सुख, वाम कर में बन्धन, वाम पैर में पीड़ा, दाहिने पैर में यात्रा और दाहिने हाथ में जन्मनक्षत्र पड़े तो धनलाभ होता है। इस प्रकार शनि यदि मार्ग गति हो तो उक्त फल समझना, यदि वक्र गति हो तो इसी फल को विपरीत समझना ॥ २७ ॥

वक्रगतिशनिचक्रम्-

यस्मिञ्छनिश्चरति वक्रगतिस्तदृक्षात्

चत्वारि दक्षिणकरे पादयुगे च षट्कम् ।

चत्वारि वामकरणे ह्युदरे च पञ्च

मूर्ध्नि त्रयं नयनोर्द्वितयं त्रिगुह्ये ॥ २८ ॥

रोगो लाभस्तथा द्रव्यलाभो बन्धनमेव च ।

पूजा च जनसौभाग्य-मल्पमृत्युः क्रमात् फलम् ॥ २९ ॥

वक्री शनि जिस नक्षत्र में हो उससे आरम्भ करके ४ नक्षत्र दाहिने कर में, ६ दोनों पैर में, ४ वाम कर में, ५ उदर में, ३ मस्तक में, २ आँखों में और ३ गुप्तेन्द्रिय में न्यास करे। इस प्रकार यदि जन्मनक्षत्र दाहिने हाथ में पड़े तो रोग, पैर में लाभ, वाम कर में धनलाभ, उदर में बन्धन, मस्तक में आदर, आँख में परिवार सुख, गुप्तेन्द्रिय में जन्मनक्षत्र पड़े तो अल्पमृत्यु आदि क्रम से समझना ॥ २८-२९ ॥

राहुचक्रम्-

यस्मिन्नृक्षे भवेद्राहुस्तदादौ सप्त पादयोः ।

दक्षिणे च भुजे पञ्च शिरसि त्रीणि दापयेत् ॥ ३० ॥

द्वे ऋक्षे हृदये न्यस्य मुखे चैकं नियोजयेत् ।

भपञ्चकं करे वामे ऋक्षमेकं च नाभिगम् ।

तथैव त्रीणि गुह्ये च राहुचक्रं विधीयते ॥ ३१ ॥

जिस नक्षत्र में राहु हो उससे आरम्भ करके ७ नक्षत्र पैर में, ५ दाहिने हाथ में, ३ मस्तक में, २ हृदय में, १ मुख में, ५ वामकर में, १ नाभि में और ३ गुह्यस्थान में न्यास करे ॥ ३०-३१ ॥

राहुचक्रफलम्-

धनहानिर्भवेत्पादे सन्तापो दक्षिणे करे ।

शीर्षे शत्रुभयं विद्याद् हृदये दुर्जनप्रियम् ॥ ३२ ॥

मुखे दुर्जनसंहारो मृत्युर्वामे करे भवेत्।
नाभिस्थं सर्वनाशाय गुह्ये प्राणविनाशनम् ॥ ३३ ॥

जन्मनक्षत्र पैर में पड़े तो धनहानि, दाहिने हाथ में सन्ताप, मस्तक में शत्रुभय, हृदय में शत्रुओं का हित, मुख में शत्रुओं की हानि, वाम कर में मृत्यु, नाभि में सर्वनाश तथा गुप्तेन्द्रिय में जन्मनक्षत्र पड़े तो प्राण हानि समझना ॥ ३२-३३ ॥

केतुचक्रम्–

शीर्षे पञ्च द्वे मुखे पञ्च कर्णे द्वे वै वक्षस्यब्धिसंख्यानि हस्ते।
अङ्घ्रौ देयाः पञ्च चत्वारि वस्तौ केतोश्चक्रं प्रोदितं बुद्धिमद्भिः ॥३४॥

केतु जिस नक्षत्र में हो उससे आरम्भ करके ५ नक्षत्र मस्तक में, कान में २, हृदय में २, मुख में ५, हाथ में ४, पैर में ५, ४ वस्ति (गुह्य) स्थान में न्यास करे ॥ ३४ ॥

केतुचक्रफलम्–

मुखे भयं मूर्ध्नि जयं करोति कर्णे भयं पाणियुगे च सौख्यम्।
पादे सुखं वक्षसि शोकमेव गुह्ये भ्रमं दुःखविकारहेतुम् ॥३५॥

जन्मनक्षत्र मुख में पड़े तो भय, मस्तक में विजय, कान में भय, हाथ में सुख, पैर में सुख, हृदय में शोक और वस्ति में पड़े तो भ्रम होता है ॥ ३५ ॥

अवस्थाकृतग्रहफलम्

अवस्थानां नामानि–

दीप्तः स्वस्थो मुदितः शान्तः शक्तः प्रपीडितो दीनः।
विकलः खलश्च कथितो नवप्रकारो ग्रहो हरिणा ॥ १ ॥

दीप्त १, स्वस्थ २, मुदित ३, शान्त ४, शक्त ५, प्रपीडित ६, दीन ७, विकल ८ और खल ९ ये नव अवस्था ग्रहों की होती है ॥ १ ॥

दीप्ताद्यवस्थालक्षणम्–

दीप्तस्तुङ्गगतः खगो निजगृहे स्वस्थो हिते हर्षितः
शान्तः शोभनवर्गगश्च खचरः शक्तः स्फुरद्रश्मिभाक्।
लुप्तः स्याद्विकलः स्वनीचगृहगो दीनः खलः पापयुक्
खेटो यः परपीडितश्च खचरैः स प्रोच्यते पीडितः ॥ २ ॥

स्वोच्चस्थित ग्रह दीप्त, अपने घर में स्वस्थ, मित्र की राशि में मुदित,

शुभग्रह के घर में शान्त, देदीप्यमान किरण वाला शक्त, अस्त ग्रह विकल, स्वनीचराशिस्थ दीन, पाप से युत खल और दूसरे ग्रह से पराजित होने पर पीड़ित अवस्था में समझा जाता है ॥ २ ॥

दीप्तादिषु ग्रहाणां फलानि–

दीप्ते प्रतापादतितापितारिर्गलन्मदालङ्कृतकुञ्जरेशः ।
नरो भवेत्तन्निलयं सलीलं पद्मालयाऽलङ्कुरुते विलासम् ॥ ३ ॥

जन्मकाल में जो ग्रह दीप्त अवस्था में हो तो उसके दशादि समय में प्रताप वृद्धि, शत्रुओं का नाश, मदमत्त हाथी आदि सवारी से सुख, घर में सब प्रकार से लक्ष्मी की कृपा होती है ॥ ३ ॥

स्वस्थे महद्वाहन-धान्य-रत्नविशालशालाबहुलेन युक्तः ।
सेनापतिः स्यान्मनुजो महौजा वैरिव्रजावाप्तजयाधिशाली ॥ ४ ॥

स्वस्थ ग्रह के दशादि समय में वाहन-धन-धान्य-रत्न, मकान आदि का लाभ, राजा से सेनापति आदि पद का लाभ और शत्रुओं से विजय होती है ॥ ४ ॥

हर्षिते भवति कामिनीजनात्यन्तभूषणमणिप्रजाप्तिः ।
धर्मकर्मकरणैकमानसो मानसोद्भवचयो हतशत्रुः ॥ ५ ॥

हर्षित ग्रह के समय में स्त्री, भूषण, रत्नादि लाभ से सुख, धर्म-कर्म में प्रवृत्ति, मन की प्रसन्नता और शत्रुओं का नाश होता है ॥ ५ ॥

शान्तेऽतिशान्तो हि महीपतीनां मन्त्री स्वतन्त्रो बहुमित्रपुत्रः ।
शास्त्राधिकारी सुतरां नरः स्यात्परोपकारी सुकृतैकचित्तः ॥ ६ ॥

शान्त ग्रह के समय हृदय में शान्ति, राजगृह में मन्त्रि आदि पद का लाभ, स्वच्छन्दता, बहुत पुत्र और मित्रों से सुख, शास्त्र में रुचि, परोपकारादि पुण्य कार्य में प्रवृत्ति होती है ॥ ६ ॥

शक्तेऽतिशक्तः पुरुषो विशेषात्सुगन्धमाल्याभिरुचिः सुविद्यः ।
विख्यातकीर्तिः सुजनः प्रसन्नो जनोपकर्ताऽरिजनप्रहर्ता ॥ ७ ॥

शक्त ग्रह की दशा में शक्ति की वृद्धि, सुगन्धादि द्रव्य की प्राप्ति, विद्या की वृद्धि, सुयश, सुजनता, प्रसन्नता, परोपकारिता और शत्रुओं का नाश होता है ॥ ७ ॥

हतबलो विकलो मलिनः सदा रिपुकुलप्रबलत्वगलन्मतिः ।
खलसखः स्थलसञ्चरणो नरः कृशतरः परकार्यगतादरः ॥ ८ ॥

विकल ग्रह के समय में बल की हानि, विकलता, मलिनता, शत्रुओं से भय, बुद्धि की हानि, दुर्जनों से मैत्री, भ्रमण, ह्रासता और दूसरों की आज्ञा से कार्य करना आदि फल होते हैं ॥ ८ ॥

दीनेऽतिदीनोऽपचयेन तप्तः सम्प्राप्तभूमिपतिशत्रुभीतिः ।
सन्त्यक्तनीतिः खलु हीनकान्तिः स्वजातिवैरं हि नरः प्रयाति ॥९॥

दीनग्रह की दशा में दीनता, धन की हानि से चिन्ता, राजा और शत्रु का भय, अनीति में प्रवृत्ति, कान्ति हीन और अपने सजातीय जनों से शत्रुता होती है ॥ ९ ॥

खलाभिधाने हि खलैः कलिः स्यात्कान्ताऽतिचिन्तापरितप्तचित्तः ।
विदेशयानं धनहीनतान्तःकोपो भवेल्लुब्धमतिप्रकाशः ॥ १० ॥

खल ग्रह की दशा में दुर्जनों से कलह, स्त्री की चिन्ता से सन्ताप, विदेश भ्रमण, धन हानि से क्रोध और लोभ की विपुलता होती है ॥ १० ॥

पीडिते भवति पीडितः सदा व्याधिभिर्व्यसनतोऽपि निन्दितः ।
याति सस्खलनतां निजस्थलाद् व्याकुलत्वमपि बन्धुचिन्तया ॥११॥

पीड़ित ग्रह की दशा में रोग से पीड़ा, व्यसन में आसक्ति से निन्दा, अन्यस्थान में भ्रमण और बन्धुओं की चिन्ता से व्याकुलता होती है ॥ ११ ॥

अथ गजचक्रम्–

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चक्रं मातङ्गनायकम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण यात्रा-युद्धे जयो भवेत् ॥ १ ॥

अब मैं मातङ्गनामक गजचक्र को कहता हूँ, जिसके ज्ञान से यात्रा-युद्ध में विजय (सफलता) होती है ॥ १ ॥

गजाकारं लिखेच्चक्रं सर्वावयवसंयुतम् ।
अष्टाविंशति ऋक्षाणि देयानि सृष्टिमार्गतः ॥ २ ॥

हाथी के आकार का चक्र बनाकर–उसके मुख आदि सब अवयवों में अभिजित् सहित अश्विनी आदि २८ नक्षत्रों को क्रम से न्यास करे ॥ २ ॥

नक्षत्राणां न्यासक्रमः–

मुखशुण्डाग्रनेत्रे च कर्णशीर्षाङ्घ्रिपुच्छके ।
द्विकं द्विकं च दातव्यं चतुःपृष्ठे तथोदरे ॥ ३ ॥
द्विरदव्ययभान्यादौ वदनाद् गण्यते बुधैः ।
यत्र ऋक्षे स्थितः सौरिर्ज्ञेयं तत्र शुभाऽशुभम् ॥ ४ ॥

अश्विनी से आरम्भ करके २ नक्षत्र मुख में, शुण्ड (दोनों नासिका) में, २ नेत्र में, २ कान में, २ मस्तक पर, २ नक्षत्र चारों पैर में, २ पुच्छ में, ४ पृष्ठ में और ४ पेट में न्यास करे। फिर इस गजचक्र में मुखस्थ नक्षत्र से जिसमें शनि हो उस नक्षत्र तक गिने। शनि का नक्षत्र जिस अङ्ग में पड़े तदनुसार आगे के फल समझे ॥ ३-४ ॥

तत्र फलम्-

मुखशुण्डाग्रनेत्रेषु सौरिभं मस्तकोदरे।
युद्धकाले गते यस्य जयस्तस्य न संशयः ॥ ५ ॥
पृष्ठे पदे च पुच्छे च कर्णसंस्थे शनैश्चरे।
मृत्युर्भङ्गो रणे तस्य ऐरावतसमो यदि ॥ ६ ॥

मुख, सूँड़, नेत्र, मस्तक, उदर में यदि शनि का नक्षत्र पड़े तो उस समय युद्ध-यात्रा करने से अवश्य विजयी होता है। पीठ, पैर, पुच्छ और कान में शनि का नक्षत्र पड़े तो मृत्यु और पराजय होती है ॥ ५-६ ॥

एतेषां दुष्टभङ्गानां तत्काले संस्थितः शनिः।
तत्काले पट्टबन्धोऽपि वर्जनीयः प्रयत्नतः ॥ ७ ॥
पृथिव्या भूषणं मेरुः शर्वर्या भूषणं शशी।
नराणां भूषणं विद्या सैन्यानां भूषणं गजः ॥ ८ ॥

इस प्रकार जिस समय में शनि दुष्ट स्थान में हो उस समय में पटबन्ध, अभिषेक, युद्ध-यात्रा त्याग देनी चाहिये। जिस प्रकार पृथिवी का भूषण मेरु, रात्रि का भूषण चन्द्रमा है, उसी प्रकार मनुष्यों का भूषण विद्या एवं सेना का भूषण गज है ॥ ७-८ ॥

अथाऽश्वचक्रम्

अश्वाकारं लिखेच्चक्रमश्वधिष्ण्यादितारकाः।
वदनात्खुण्टिगा देया अष्टाविंशतिसङ्ख्यया ॥ १ ॥
मुखाक्षिकर्णशीर्षेषु पुच्छाङ्घ्र्योर्युग्मसङ्ख्यया।
पञ्च पञ्चोदरे पृष्ठे सौरिर्यत्र फलं ततः ॥ २ ॥

घोड़े के आकार का एक चक्र लिखकर, उसमें मुख से पैर तक अश्विनी आदि अभिजित् सहित २८ नक्षत्रों का न्यास करे। यथा-२ मुख में, २ नेत्र में, २ कान में, २ मस्तक में, २ पुच्छ में और दो-दो नक्षत्र चारों पैरों में, ५ उदर में और ५ पृष्ठ में न्यास करके देखे कि शनि किस अङ्ग पर है तदनुसार फल कहना चाहिये ॥ १-२ ॥

तत्फलम्–

मुखाक्षिकर्णशीर्षस्थो यदा सौरिस्तुरङ्गमे ।
तदाऽरिर्भङ्गमायाति रणे शत्रुर्वशं गतः ॥ ३ ॥
कुक्ष्यङ्‌घ्रिपृष्ठे पुच्छस्थे अश्वाङ्गेष्वर्कनन्दने ।
विभ्रमं भङ्गहानिं च कुरुतेऽसौ महाहवे ॥ ४ ॥

अश्वचक्र में यदि शनि का नक्षत्र मुख, नेत्र, कर्ण और मस्तक में हो तो शत्रु-सेना का नाश होता है और शत्रु वश में हो जाता है। पेट, पैर, पृष्ठ और पुच्छ में शनि पड़े तो उस समय युद्ध-यात्रादि से भ्रम, पराजय और हानि होती है ॥ ३–४ ॥

विशेषादेशस्तत्र–

एतत्स्थानस्थितः सौरिः यदा काले हयस्य च ।
पट्टबन्धे गमे युद्धे वर्जयेत्तं हयं नृपः ॥ ५ ॥
देशान्तरस्थितः सौरिः रिपवः सन्ति शङ्किताः ।
तुरङ्गा यस्य भूपस्य विचरन्ति महीतले ॥ ६ ॥

इस प्रकार जिस समय में शनि अनिष्ट स्थान में हो उस समय में पट्ट-बन्ध, युद्ध-यात्रादि कार्य छोड़ देना चाहिये। जो राजा अश्वचक्र निरीक्षण करके कार्य करता है, उसके देश-देशान्तर स्थित शत्रु गण डरते रहते हैं ॥ ५-६ ॥

अथ शतपदचक्रम्–

चक्रं शतपदं वक्ष्ये ऋक्षांशाऽक्षरसम्भवम् ।
नामादिवर्णतो ज्ञेयमृक्षराश्यंशकं तथा ॥ १ ॥

अब नक्षत्र और उनके चरणों से उत्पन्न शतपद नामक चक्र को कहता हूँ। जिसके नाम के आदि अक्षर से नक्षत्र और उसके चरण का ज्ञान होता है ॥ १ ॥

तत्र चक्रलेखनप्रकारः–

तिर्यगूर्ध्वगता रेखा रुद्रसङ्‌ख्या लिखेद् बुधः ।
जायते कोष्ठकं तत्र शतमेकं न संशयः ॥ २ ॥

११ तिरछी और ११ सीधी रेखा लिखने से १०० कोष्ठक का चक्र बनता है, इसलिए इसे 'शतपद' चक्र कहते हैं ॥ २ ॥

अक्षरन्यासविधिः–

न्यस्याऽवकहडादीनि रुद्रादिविदिशः क्रमात् ।
पञ्च पञ्च क्रमेणैव विंशद्वर्णान्प्रयोजयेत् ॥ ३ ॥

पञ्चस्वरसमायोग एकैकं पञ्चधा कुरु ।
कुर्यात्कुपुभुदुस्थानि त्रीणि त्रीण्यक्षराणि च ॥ ४ ॥

कु-घ-ङ-छा भवेत्स्तम्भो रौद्र ईशानगोचरे ।
पु-ष-ण-ठा भवेत्स्तम्भो हस्तमाग्नेयसंज्ञके ॥ ५ ॥

भू-ध-फ-ढा भवेत्पूर्वे दु-थ-झ-ञास्तथोत्तरे ।
एवं स्तम्भचतुष्कं च ज्ञातव्यं स्वरवेदिभिः ॥ ६ ॥

उस शतपद चक्र के (ऊपर भाग को पूर्व दिशा मानकर) ईशान कोण से 'अ व क ह ड' आदि अ व क ह डाः । म ह प र ताः । त य भ ज खाः । ग श द च लाः । ये ४ 'अ व क ह ड' आदि सूत्र कहलाते हैं । ५, ५, वर्णों को लिखे । फिर उसमें ५ स्वरों (अ, इ, उ, ए, ओ) के प्रत्येक अक्षरों से संयोग कर ५, ५ प्रकार से लिखे । जहाँ 'कु. पु. भु. दु' ये ४ वर्ण हों उन चारों स्थान में क्रम से कु. घ. ङ. छ. । पु. ष. ण. ठ. । भु. ध. फ. ढ । दु. थ. झ. ञ. । इन चार-चार वर्णों को लिखे । इस चक्र में इन चारों स्थान को ४ स्तम्भ समझना चाहिए ॥ ३-६ ॥

नक्षत्राणां न्यासः-

धिष्ण्यानि कृत्तिकादीनि प्रत्येकं चतुरक्षरैः ।
साऽभिजित्यंशकास्तस्य शतकं द्वादशाधिकम् ॥ ७ ॥

यद्दक्षांशककोष्ठस्थः क्रूरः सौम्योऽपि वा ग्रहः ।
ततस्तद्वर्जयेन्नित्यं पुंसो नामाद्यमक्षरम् ॥ ८ ॥

इस प्रकार चक्र में अक्षरों के न्यास करने से कुल ११२ अक्षर होते हैं । उनमें प्रति ४, ४ अक्षरों में कृत्तिकादि अभिजित् सहित २८ नक्षत्रों को लिखे । जिस नक्षत्र के जिस चरण में क्रूर वा सौम्य ग्रह पड़े तो पुरुष के नाम का आदि अक्षर छोड़ दे ॥ ७-८ ॥

सौम्यैर्विद्धे शुभं ज्ञेयमशुभं पापखेचरैः ।
मिश्रैर्मिश्रफलं तत्र निर्वेधेन शुभाऽशुभम् ॥ ९ ॥

यदुक्तं सर्वतोभद्रे ग्रहोपग्रहवेधतः ।
शुभाऽशुभफलं सर्वं तदिहाऽपि विचिन्तयेत् ॥ १० ॥

शुभग्रह से वेध हो तो शुभफल,अशुभग्रह से वेध होने से अशुभ फल होता है । और शुभ-अशुभ दोनों से वेध होने से मिश्रित फल देता है, निर्वेध होने से शुभ-अशुभ दोनों होते हैं । सर्वतोभद्र में और उपग्रह के वेध से जो फल कहे गये हैं उसका विचार यहाँ करे ॥ ९-१० ॥

शतपदचक्रम्–

अ	व	क	ह	ड	म	ट	प	र	त
इ	वि	कि	हि	डि	मि	टि	पि	रि	ति
उ	वु	कु घ ङ.छ.	हु	डु	मु	टु	पु.ष. ण.ठ.	रु	तु
ए	वे	के	हे	डे	मे	टे	पे	रे	ते
ओ	वो	को	हो	डो	मो	टो	पो	रो	तो
न	य	भ	ज	ख	ग	स	द	च	ल
नि	यि	भि	जि	खि	गि	सि	दि	चि	लि
नु	यु	भु.ध. फ.ढ.	जु	खु	गु	सु	दु.थ. झ.ञ.	चु	लु
ने	ये	भे	जे	खे	गे	से	दे	चे	ले
नो	यो	भो	जो	खो	गो	सो	दो	चो	लो

अथ सूर्यकालानलचक्रन्यासः–

सूर्यकालानलं चक्रं स्वरशास्त्रोदितं महत् ।
तदहं विशदं वक्ष्ये चमत्कृतिकरं परम् ॥ १ ॥

अब स्वरशास्त्र में कहे हुए सूर्यकालानल चक्र को कहता हूँ, जो परम चमत्कृत है ॥ १ ॥

त्रिशूलकाग्राः सरलाश्च तिस्रः किलोर्ध्वरेखाः परिकल्पनीयाः ।
रेखात्रयं मध्यगतं च तत्र द्वे द्वे च कोणोपरिगे विधेये ॥ २ ॥
त्रिशूलकोणान्तरगान्यरेखा तदग्रयोः शृङ्गयुगं विधेयम् ।
मध्ये त्रिशूलस्य च दण्डमूलात्सव्येन भान्यर्कभतोऽभिजिच्च ॥ ३ ॥

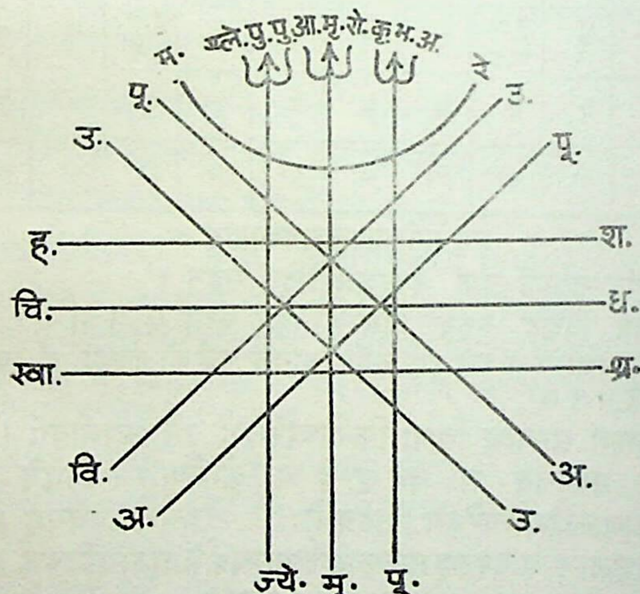
जिनके अग्र में त्रिशूल हों ऐसी ३ सीधी रेखा लिखकर उन पर ३ तिरछी रेखा खींचे, पुनः २, २ रेखा कोण में बनावे, फिर त्रिशूल और कोण वाली रेखा के मध्य में १ टेढ़ी शृङ्गाकार रेखा बनावे। इस प्रकार सूर्य कालानल नामक चक्र में त्रिशूल वाली रेखा मूल में सूर्याश्रित नक्षत्र से आरम्भ करके अभिजित् सहित २८ नक्षत्रों को क्रम से चक्र में विन्यास

करे। जैसे-सूर्य मृगशिरा नक्षत्र में है तो बीचवाली रेखा के मूल में मृगशिरा नक्षत्र लिखकर क्रम से २८ नक्षत्र लिखे गये हैं ॥ २-३ ॥

स्वनामभं यत्र गतं च तत्र प्रकल्पनीयं सदसत्फलं हि।
तलस्थ ऋक्षत्रितये क्रमेण चिन्ता वधश्च प्रतिबन्धनानि ॥ ४ ॥
शृङ्गद्वये रुक् च भवेच्च भङ्गं शूलेषु मृत्युं सदसत्फलं हि।
शेषेषु धिष्ण्येषु जयश्च लाभोऽभीष्टार्थसिद्धिर्विविधा नराणाम् ॥ ५ ॥

इस प्रकार नक्षत्रों का न्यास करके देखना चाहिये कि नाम नक्षत्र कहाँ पड़ा है, तदनुसार शुभ या अशुभ फल समझना चाहिये। जैसे-त्रिशूल वाली रेखाओं के नीचे नाम या जन्म का नक्षत्र पड़े तो क्रम से चिन्ता, वेध और बन्धन समझना। दोनों शृङ्ग में पड़े तो रोग, तीनों त्रिशूल में पड़े तो पराजय और मृत्यु फल समझें। अन्य स्थान में पड़े तो विजय, धनलाभ, सब अभीष्ट की सिद्धि होती है ॥ ४-५ ॥

सूर्यकालानलचक्रम्-



श्रीसूर्यकालानलचक्रमेतद् गदे च वादे च रणे-प्रयाणे।
प्रयत्नपूर्वं परिचिन्तनीयं पुरातनानां वचनं प्रमाणम् ॥ ६ ॥

प्राचीन मुनियों का कहना है कि-रोग, विवाद, युद्ध, यात्रा में इस सूर्यकालानल चक्र का यत्न पूर्वक विचार करना चाहिये ॥ ६ ॥

ग्रहवेधफलम्–

रवेर्वेधे मनस्तापो द्रव्यहानिश्च भूसुते ।
रोगपीडाकरो मन्दो राहुः केतुश्च मृत्युदः ।। ७ ।।
गुरोर्वेधे भवेल्लाभो रत्नलाभश्च भार्गवे ।
स्त्रीलाभश्चन्द्रवेधे च सुखं स्याद् बुधवेधतः ।।
जन्मराशेश्च वेधेन फलमेतत्प्रकीर्तितम् ।। ८ ।।

सूर्यकालानल चक्र में नाम (या जन्म) के नक्षत्र पर सूर्य का वेध हो तो[1] सन्ताप, मंगल का वेध हो तो धन हानि, शनि का वेध हो तो रोग पीड़ा, राहु और केतु का वेध हो तो मरण, गुरु का वेध हो तो धन लाभ, शुक्र के वेध से रत्न लाभ, चन्द्रमा के वेध से स्त्री का सुख, बुध के वेध से सब सुखलाभ होता है । यह फल जन्मनक्षत्र के वेध से ही समझना ।। ७-८ ।।

अथ चन्द्रकालानलचक्रन्यासः–

चन्द्रकालानलं चक्रं व्योमाकारं लिखेत् बुधः ।
चतुर्दिक्षु त्रिशूलानि मध्यत्र्यस्राणि कारयेत् ।। १ ।।
पूर्वं त्रिशूलमध्यस्थं दिनसर्क्षं समालिखेत् ।
त्रिशूले च वहिर्मध्ये मध्ये वहिस्त्रिशूलके ।। २ ।।
एवमृक्षाणि सर्वाणि साभिजिच्च लिखेद् बुधः ।
नामर्क्षं च स्थितं यत्र ज्ञेयं तत्र शुभाऽशुभम् ।। ३ ।।

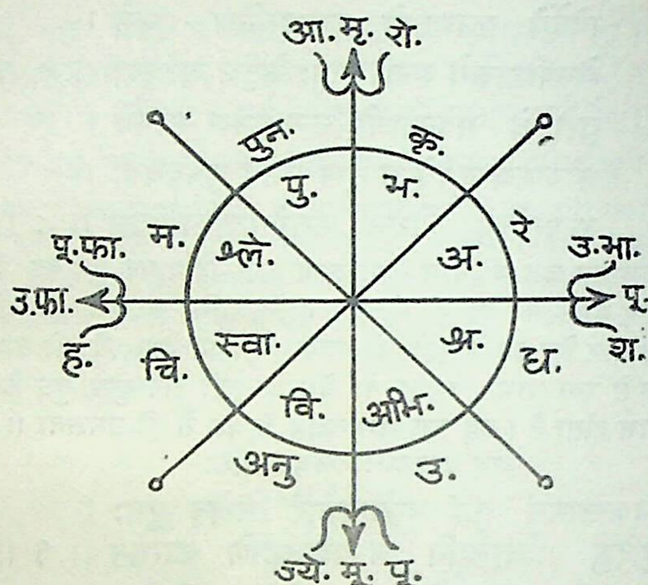
एक वृत्त (वर्तुल गोल) लिखकर उसके केन्द्र (मध्य) स्थान से पूर्वापर और दक्षिणोत्तर रेखा लिखकर चारों दिशाओं में त्रिशूल बनावें और केन्द्र से ही विदिशाओं की सीधी रेखा लिखे । पूर्व (सामने) की रेखा स्थित त्रिशूल के बीच में दिन का नक्षत्र (चन्द्रर्क्ष) लिखकर क्रम से आगे के अभिजित् सहित २८ नक्षत्रों को इस प्रकार लिखे, जैसे–त्रिशूल में, फिर वृत्त के बाहर, वृत्त के बीच में, फिर वृत्त के बीच में, फिर वृत्त के बाहर, फिर त्रिशूल में, पुनः उक्त क्रम से लिखे । नाम का नक्षत्र जहाँ हो तदनुसार शुभ-अशुभ फल समझना चाहिए ।। १-३ ।।

---

१. जिस रेखा में नाम के नक्षत्र हों तो उसके दूसरे भाग के नक्षत्र में ग्रह हो तो वेध समझा जाता है ।

उदाहरण—जैसे–जन्म नक्षत्र मघा है तो शुभ फल हुआ । और रेवती में वह होगा तो वेध समझा जायेगा । उस हालत में शुभफल नहीं होगा ।

अथ चन्द्रकालानलचक्रम्-



इस चन्द्रकालानल चक्र का प्रयोजन यात्रा, विवाह, युद्ध आदि में होता है।

उदाहरण—जैसे, प्रश्नकाल या यात्रा या शुभ कार्य करने के समय का नक्षत्र मृगशिरा है और नाम (या जन्म) नक्षत्र मघा है तो चक्र के ऊपर त्रिशूल के बीच में दिन नक्षत्र मृगशिरा को लिख कर क्रम से अभिजित् सहित २८ नक्षत्र चक्र में लिखे गये हैं। इस प्रकार जन्मनक्षत्र मघा त्रिशूल और मध्य से बाहर में पड़ा इसलिये मध्यम फल हुआ। त्रिशूल में पड़ता तो अशुभ और वृत्त के मध्य में पड़ता तो शुभ समझा जाता तथा यदि रेवती नक्षत्र में पापग्रह होता तो भी वेध होने के कारण अशुभ समझा जाता है ॥ १-३ ॥

नामभात्फलम्-

त्रिशूले च भवेन्मृत्युर्मध्यमं बहिरष्टके।
आयुः प्रजा जयो लाभश्चन्द्रगर्भे न संशयः ॥ ४ ॥

यदि नाम नक्षत्र त्रिशूल में पड़े तो उस समय युद्ध-यात्रा करने से मृत्यु, बाहर के ८ स्थान में पड़े तो मध्यम और वृत्त के मध्य में नाम नक्षत्र पड़े तो आयु और प्रजा की वृद्धि, विजय और लाभ होता है ॥ ४ ॥

अथ यमदंष्ट्राचक्रम्-

नवोर्ध्वगानि धिष्ण्यानि नव तिर्यग्गतानि च।
अधोगतानि धिष्ण्यानि नव चैव विनिर्दिशेत् ॥ १ ॥

चतुर्नाडीकृतो वेधो जन्मनक्षत्रयोगतः ।
सर्पाकारश्च वक्रश्च कालचक्रं प्रजायते ॥ २ ॥
त्रीणि मध्यगतर्क्षाणि तानि कालमुखानि च ।
कोणस्थिते च द्वे धिष्ण्ये तच्चण दंष्ट्राद्वयं मतम् ॥ ३ ॥
दिनर्क्षमादितः कृत्वा नामर्क्षं यत्र संस्थितम् ।
मुखदंष्ट्रागते मृत्युः शुभमन्यत्र संस्थिते ॥ ४ ॥
ज्वरे च नष्टदंष्ट्रे च विवादे विग्रहे रणे ।
कालदंष्ट्रास्यगं नाम यस्य तस्य महद्भयम् ॥ ५ ॥

९ नक्षत्र ऊपर, ९ नक्षत्र तिरछे और ९ नक्षत्र नीचे लिखे, इस प्रकार जन्म नक्षत्र पर वेध विचार के लिये सर्पाकार चक्र का स्वरूप कालचक्र कहलाता है, बीच के ३ नक्षत्र (१३, १४, १५ वें) काल का मुख कहलाता है तथा कोण के २ नक्षत्र (१०, ११ वें) दंष्ट्रा कहलाते हैं। दिन के नक्षत्र से आरम्भ कर क्रम से २७ नक्षत्र लिखे और देखें कि नाम का नक्षत्र कहाँ पड़ा है। यदि नाम नक्षत्र मुख या दंष्ट्रा में पड़े तो मृत्यु और अन्यत्र पड़े तो शुभफल समझना चाहिये। इस चक्र से ज्वर आरम्भ, नष्ट वस्तु, विवाद (झगड़ा) और रण का विचार करना चाहिये। कालचक्र के मुख और दंष्ट्रा में नाम नक्षत्र पड़े तो महाभय कहना चाहिये ॥ १-५ ॥

त्रिनाडीचक्रम्—

आर्द्राद्यं विलिखेच्चक्रं मृगान्तं च त्रिनाडिकम् ।
भुजङ्गसदृशाकारं मध्ये मूलं प्रतिष्ठितम् ॥ १ ॥
यद्दिने एकनाडीस्थाश्चन्द्रनामर्क्षभास्कराः ।
तद्दिनं वर्जयेत्तस्य विवादे विग्रहे रणे ॥ २ ॥

सर्पाकार त्रिनाडी चक्र लिखकर उसमें आर्द्रा से आरम्भ कर मृगशिरा पर्यन्त नक्षत्र का न्यास करे, इस प्रकार मूल नक्षत्र मध्य में पड़ता है। इस चक्र में जिस दिन १ नाडी में सूर्य, चन्द्र और नाम के नक्षत्र तीनों पड़ें उस दिन विवाद, विग्रह और रण का त्याग करना चाहिए ॥ १-२ ॥

रोगिणो जन्मऋक्षस्य एकनाड्यां यदा शशी ।
तदा पीडां विजानीयादष्टप्राहरिकी ध्रुवम् ॥ ३ ॥
रोगिणो जन्मऋक्षस्य एकनाड्यां यदा रविः ।
यावदृक्षं भवेद्भोग्यं तावत्पीडां विनिर्दिशेत् ॥ ४ ॥

रोग अवस्था में जिस दिन जन्म नक्षत्र और चन्द्रमा १ नाड़ी में पड़े उस दिन आठों प्रहर पीडा की वृद्धि होती है। एवं रोगी का जन्म नक्षत्र और सूर्य जब तक एक नाडी में रहते हैं तब तक पीड़ा रहती है ॥ ३-४ ॥

रोगिणां जन्मऋक्षस्य एकनाड्यां यदा भवेत् ।
जन्मऋक्षं रविश्चन्द्रस्तदा मृत्युं समादिशेत् ॥ ५ ॥

जन्मऋक्षं रविश्चन्द्रो भवेद्यदि कथञ्चन ।
अन्यास्वन्यासु नाडीषु तदा नीरोगतो भवेत् ॥ ६ ॥

जिस समय रोगी के जन्म नक्षत्र, रवि और चन्द्र तीनों १ नाड़ी में पड़ें उस समय रोगी का मरण होता है। जब जन्म नक्षत्र, रवि और चन्द्र भिन्न-भिन्न नाड़ी में होते हैं तो रोगी रोग से मुक्त (नीरोग) हो जाता है ॥५-६॥

अथ सर्वतोभद्रचक्रम्-

अथाऽतः सम्प्रवक्ष्यामि चक्रं त्रैलोक्यदीपकम् ।
विख्यातं सर्वतोभद्रं सद्यः प्रत्ययकारकम् ॥ १ ॥
एकवेधे भवेद्युद्धं युग्मवेधे धनक्षयः ।
त्रिवेधेन भवेद्भङ्गो मृत्युश्चैव चतुर्ग्रहैः ॥ २ ॥
एकादिक्रूरवेधे च फलं पुंसां प्रजायते ।
उद्वेगश्च तथा हानिः रोगो मृत्युः क्रमेण च ॥ ३ ॥

अब मैं सर्वतोभद्र नामक त्रैलोक्यदीपक चक्र को कहता हूँ, जो शीघ्र विश्वास दिलाने वाला, लोक में विख्यात है। जिसमें एक वेध से युद्ध, २ वेध से धननाश, ३ वेध से पराजय और ४ वेध से मृत्यु होती है। १ पापग्रह के वेध से उद्वेग, २ से हानि, ३ से रोग और ४ पापवेध से मृत्युरूप फल होते हैं ॥ १-३ ॥

भ्रम ऋक्षेऽक्षरे हानिः स्वरे व्याधिर्भयं तिथौ ।
राशिवेधे महाविघ्नं पञ्चवेधे न जीवति ॥ ४ ॥

सर्वतोभद्रचक्र में जन्म के नक्षत्र में वेध हो तो भ्रमण, अक्षर वेध से हानि, स्वरवेध से रोग, तिथि वेध से भय, राशि वेध से महाविघ्न एवं यदि पाँचों वेध हों तो मृत्यु होती है ॥ ४ ॥

ग्रहवेधफलम्-

अर्कवेधे मनस्तापो द्रव्यहानिस्तु भूसुते ।
रोगपीडाकरः सौरी राहुः केतुश्च विघ्नदौ ॥ ५ ॥

चन्द्रो मिश्रफलं पुंसां रिपुश्चैव तु भार्गवे।
बुधवेधे भवेत्प्रज्ञा जीवः सर्वफलप्रदः ॥ ६ ॥

रवि वेध से सन्ताप, मङ्गल वेध से धनहानि, शनि वेध से रोग पीड़ा, राहु और केतु वेध से विघ्न, चन्द्र वेध से शुभ-अशुभ दोनों फल, शुक्र वेध से शत्रुभय, बुध वेध से बुद्धि की वृद्धि और गुरु का वेध हो तो सर्वथा शुभ-फल होते हैं। विस्तृत विधान परिशिष्ट में देखें ॥ ५-६ ॥

प्रश्नादौ बाल्यादिपञ्चस्वरविचारः-

अथाऽब्दोदयो यस्मात्तिथेर्भुक्तिप्रमाणतः।
बालस्वरादिके प्रश्ने फलं तस्य वदाम्यहम् ॥ १ ॥

अब तिथि भोग (आरम्भ से अन्त तक तिथि घटीपल) के प्रमाण से इष्ट समय में जिस स्वर का उदय हो तदनुसार फल को कहता हूँ ॥ १ ॥

वर्तमानस्वरपरिज्ञानम्-

तिथिभुक्तघटीसङ्ख्यां कृत्वा पलमयीं ततः।
एवं बाणहते शेषः स्वरस्तत्कालसम्भवः ॥ २ ॥

तिथि के भुक्त (आरम्भ से इष्टकाल तक की घटीपल संख्या) को पलमय बनाकर ५ का भाग देकर लब्धि गत तथा उससे अगला वर्त्तमान बाल आदि स्वर समझना चाहिये ॥ २ ॥

उदाहरण — तिथि भुक्त घटीपल १२।२१ है तो इसके पल बनाने से ७४१ इसमें ५ का भाग देने से १४८ गत स्वर संख्या हुई, अतः १४९ वर्तमान स्वर संख्या हुई, इसमें फिर ५ का भाग देकर शेष ३ तीसरा कुमार स्वर हुआ, क्योंकि तिथि के आरम्भ से ५, ५ पल में एक-एक स्वर का उदय माना गया है ॥ २ ॥

तत्र लाभरोगयात्रायुद्धेषु फलादेशः-

यमुद्दिश्य कृतः प्रश्नः फलं तस्य वदाम्यहम्।
यत्र नो दृश्यते किञ्चित्तत्र प्रश्नं शुभाऽशुभम् ॥ ३ ॥

जिसके जन्म नक्षत्रादि का कुछ ज्ञान नहीं हो उसके प्रश्न समय से जो प्रश्न पूछे उसका फल बाल आदि अवस्था के अनुसार कहना चाहिये ॥ ३ ॥

बालोदये यदा पृच्छा लाभार्थे स्वल्पलाभदाः।
रुजार्ते चिररोगं च गमे हानिं क्षयं रणे ॥ ४ ॥

बालस्वर में लाभ का प्रश्न हो तो थोड़ा लाभ, रोग का प्रश्न हो तो रोग अधिक दिन रहे, यात्रा के प्रश्न में हानि और युद्ध सम्बन्धी प्रश्न हो तो पराजय फल कहना ॥ ४ ॥

कुमारोदयवेलायां लाभो भवति पुष्कलः ।
रोगनाशो जयो युद्धे यात्रा सर्वार्थसिद्धिदा ॥ ५ ॥

कुमार स्वर में, लाभ के प्रश्न में लाभ, रोग प्रश्न में रोग का नाश, युद्ध में जय और यात्रा में सर्वसिद्धि फल होता है ॥ ५ ॥

युवोदये लभेद्राज्यं क्लेशच्छेदं च तत्क्षणात् ।
सङ्ग्रामे शत्रुहन्ता च यात्रायां सफलं भवेत् ॥ ६ ॥

युवा अवस्था में, लाभ के प्रश्न में राज्य लाभ, रोग के प्रश्न में रोग का शीघ्र नाश, रण में शत्रुओं पर शीघ्र विजय, यात्रा में इष्टफल लाभ होता है ॥ ६ ॥

वृद्धोदये न लाभः स्यात् क्लेशनात् क्लेशवर्द्धनम् ।
सङ्ग्रामे भङ्गमायाति यात्रायां न निवर्तते ॥ ७ ॥

वृद्धस्वर हो तो, लाभ के प्रश्न में लाभ नहीं, रोग प्रश्न में रोग की वृद्धि, रणप्रश्न में पराजय, यात्रा प्रश्न में फिर नहीं लौटेगा ऐसा फल समझना ॥ ७ ॥

मृत्यूदये यदा प्रष्टा पृच्छति स्वप्रयोजनम् ।
तत्सर्वं मृत्युदं ज्ञेयं युद्धे मृत्युः स भङ्गदः ॥ ८ ॥

मृत्युस्वर के उदय में जो प्रश्न हो उसमें सर्वथा हानि ही होती है। युद्ध के प्रश्न में पराजय और मृत्यु दोनों फल समझना चाहिये ॥ ८ ॥

किञ्चिल्लाभकरो बालः कुमारस्त्वर्द्धलाभदः ।
सर्वसिद्धिं युवा दत्ते वृद्धे हानिमृते क्षयः ॥ ९ ॥

किसी भी प्रश्न में बालस्वर हो तो स्वल्प लाभ, कुमार हो तो आधा, युवा हो तो पूर्ण सिद्धि, वृद्ध हो तो हानि और मृत्यु स्वर हो तो कार्य का नाश होता है ॥ ९ ॥

मृत्युर्बालस्तथा वृद्धः कुमारस्तरुणः स्वरः ।
यो यस्य पञ्चमस्थाने स स्वरो मृत्युदायकः ॥ १० ॥

मृत्यु, बाल, वृद्ध, कुमार और युवा इन स्वरों में अपने-अपने से पाँचवाँ स्वर (शत्रु) मृत्यु कारक होता है ॥ १० ॥

नरनामादिमो वर्णो यस्मात्स्वरादधः स्थितः ।
स स्वरस्तस्य वर्णस्य वर्णस्वर इहोच्यते ॥ ११ ॥

नाम के आदि का अक्षर (वर्णस्वर चक्र में) जिस स्वर के नीचे हो वही उस नाम वाले का वर्णस्वर समझना चाहिये, चक्र परिशिष्ट में देखें ॥ ११ ॥

अथ जन्मकर्माद्यनक्षत्रसंज्ञा तत्फलञ्च–

जन्मभं जन्मनक्षत्रं दशमं कर्मसंज्ञकम्।
एकोनविंशमाधानं त्रयोविंशं विनाशकम्॥ १॥
अष्टादशं च नक्षत्रं सामुदायिकसंज्ञितम्।
साङ्घातिकं च विज्ञेयमृक्षं षोडशसंख्यकम्॥ २॥

जिस नक्षत्र में जिसका जन्म होता है वह जन्म तथा उससे दसवाँ कर्म, इक्कीसवाँ आधान, तेईसवाँ विनाश, अट्ठारहवाँ सामुदायिक और सोलहवाँ नक्षत्र सांघातिक संज्ञक होता है॥ १-२॥

एवं षड्भो जनः सर्वो जातिदेशाभिषेकभैः।
नवभो नृपतिर्ज्ञेयो नाडीताराः स्मृता अमूः॥ ३॥

इस प्रकार सर्व-साधारण के ६ नक्षत्र होते हैं। राजा के लिये जाति, देश, और अभिषेक ये तीन नक्षत्र और अधिक होने से उसके नौ नक्षत्र होते हैं, ये नाडी नक्षत्र कहलाते हैं॥ ३॥

मृत्युः स्याज्जन्मभे विद्धे कर्मभे क्लेशमेव च।
आधानर्क्षेऽप्रकाशः स्याद्विनाशे बन्धुविग्रहः॥ ४॥
सामुदायिकनक्षेत्रे कष्टं हानिः सुघातिके।
जातिभे कुलनाशश्च बन्धनश्चाभिषेकभे॥ ५॥

यात्रा या शुभ कार्यादि में जन्म नक्षत्र में वेध हो तो मरण, कर्म नक्षत्र में वेध हो तो कष्ट, आधान नक्षत्र में वेध हो तो बुद्धि हानि, विनाश नक्षत्र में वेध होने से बन्धु में कलह, सामुदायिक में वेध से कष्ट, सांघातिक में वेध से हानि, जाति में वेध से कुल का नाश और अभिषेक नक्षत्र में वेध होने से बन्धन होता है॥ ४-५॥

अथ फलज्ञानाय ग्रहरश्मिसाधनम्–

नीचोनखेटेऽभ्यधिके च षट्काच्चक्राच्च्युते सप्तहते विभक्तम्।
तर्कैस्तु राश्यादिकमेव लब्धं सूर्यादिकानामिह रश्मिजञ्च॥ १॥

राश्यादि ग्रह में अपने नीच राशि अंश को घटाने से शेष ६ राशि से कम हो तो उसी को, यदि ६ राशि से अधिक हो तो उसको १२ राशि में घटाकर शेष राश्यादि को ७ से गुनाकर ६ का भाग देने से लब्धि, उस ग्रह की रश्मि (किरण) संख्या होती है॥ १॥

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य राश्यादि ११।१५।२०।२५ है, तो इसमें सूर्य के नीच राश्यादि ६।१० को घटाने से शेष ५।५।२०।२५ यह ६ से कम है इसलिए शेष

राश्यादि को ७ से गुणा करने से ३६।७।२२।५५ इसमें ६ के भाग देने से लब्धि ६।१।१३।४९ यह सूर्य की रश्मि हुई ॥ १ ॥

स्पष्ट-ज्ञानार्थ-भागक्रिया-

६) ३६।७।२२।५५ (६।१।१३।४९
३६
०×६०
=+७
६
१×६०
६०+२२=८२
७८
४×६०
२४०+५५=२९५
२९४
=१

अथ रश्मिसंस्कारमाह-

स्वोच्चस्थितस्य त्रिगुणं निरुक्तं स्वे द्वादशे मित्रगृहे द्विनिघ्नम् ।
नृपांशको १६ नाः कथितास्तु नीचे शत्रोः पुनश्चद् द्विदशांशके च ॥
वक्री पुनः स तद्वद्द्विगुणं ददाति तस्यागकालेऽष्टमभागहीनः ॥२॥

जो ग्रह स्वोच्च में हो उसकी रश्मि को त्रिगुणित करना, अपनी राशि, अपने द्वादशांश या अधिमित्र के घर में हो तो द्विगुणित करना। नीच में हो तो १६वाँ भाग घटाना और शत्रु राशिस्थ हो तो द्वादशवाँ भाग घटावे, वक्री हो तो द्विगुणित करना और वक्र त्याग समय में अष्टमांशोन करना तो संस्कृतरश्मि स्पष्टरश्मि होती है। इनसे भिन्न स्थान में यथागत स्पष्टरश्मि समझना चाहिये ॥ २ ॥

द्रष्टव्य—यह रश्मि-संस्कार संक्षिप्त है। विशेष बृहत्पाराशरहोरा में देखिये ॥ २ ॥

ग्रहरश्मिफलम्-

एकादिपञ्च यावद्रश्मिभिरतिदुःखिताः कुलविहीनाः ।
पतिता दुष्टदरिद्रा नीचरताः सम्भवन्ति नराः ॥ १ ॥

सब ग्रहों की रश्मि का योग १ से ५ तक हो तो जातक दुःखी, कुलहीन, पतित, दुष्ट, दरिद्र, नीच आचरण होता है ॥ १ ॥

परतो दशकं यावत्परिजनहीना विदेशगमनरताः ।
जायन्ते तत्र पराः सौभाग्यपरिच्युता मलिनाः ॥ २ ॥

६ से १० पर्यन्त रश्मि का योग हो तो मनुष्य परिजन हीन, विदेशवासी, भाग्यहीन और मलिन होता है ॥ २ ॥

दशभ्यो जातास्तत्र प्रधानपूज्यरताः ।
धर्मारम्भाः सुसुखाः कुलतुल्यनराः प्रजायन्ते ॥ ३ ॥

११ से १५ तक रश्मि योग हो तो जातक लोक में प्रधान, माननीय, धर्मात्मा, सुखी एवं अपने कुल में मुख्य होता है ॥ ३ ॥

आविंशतेः कुलश्रेष्ठो धनकाञ्चनपूजितः ।
भवेत्कीर्तिकरः शश्वत्स्वजनैः परिपूरितः ॥ ४ ॥

१६ से २० तक रश्मि संख्या हो तो जातक कुल में श्रेष्ठ, धनी, पूजित, यशस्वी और परिजनों से पूर्ण होता है ॥ ४ ॥

पूज्याः सुभगा धीराः कृतिनो वीराश्च शरकृतिं यावत् ।
परतो भवन्ति मनुजाः संसाराधत्तसकलकरणीयाः ॥ ५ ॥

२१ से २५ तक रश्मि संख्या हो तो लोक में पूज्य, सुन्दर, घोर, विद्वान्, वीर तथा सब कार्य सम्पादन करने में समर्थ होता है ॥ ५ ॥

अत उत्तरेण चण्डा नृपाश्रिता नृपतिलब्धधनसौख्याः ।
त्रिंशद्यावत्सचिवाः पूज्याश्च भवन्ति भूतानाम् ॥ ६ ॥

इस (२५) के बाद ३० तक रश्मि संख्या हो तो राजा का आश्रित, राजा से धन-सुख पानेवाला, राजमन्त्री और सब का पूज्य होता है ॥ ६ ॥

एकत्रिंशद्भिरथ प्रचुराः ख्याता महीभुजो निपुणाः ।
द्वात्रिंशद्भिः पुरुषाः पञ्चशतग्रामपतयः स्युः ॥ ७ ॥

३१ रश्मि से विख्यात, निपुण राजा होता है। ३२ रश्मि हो तो ५०० ग्राम का अधिपति होता है ॥ ७ ॥

ग्रामसहस्राधिपतिमधिकात्करोति रश्मीनाम् ।
त्रिसहस्रग्रामाणां पुरुषं सूते चतुस्त्रिंशत् ॥ ८ ॥

३३ रश्मि हों तो १००० ग्राम का अधिपति, ३४ रश्मि हों तो ३ हजार ग्राम का पालक होता है ॥ ८ ॥

परतो मण्डलभाजो बहुकोशपरिग्रहा महत्सत्त्वाः ।
प्रख्यातकीर्तियशसो भवन्ति सुभगाश्च लोकानाम् ॥ ९ ॥

३५ रश्मि हों तो महाधनी, महाबली, मण्डलों (अनेक ग्राम-जिलों) का मालिक, यशस्वी और सुन्दर होता है ॥ ९ ॥

त्रिंशत्षड्भिः सहिता रश्मीनां यस्य जन्मसमये स्यात् ।
सार्द्धं भुनक्ति लक्षं ग्रामाणं स तु प्रमान्नियतम् ॥१०॥

३६ रश्मि से जातक लाखों गाम का पालन करने वाला होता है ॥१०॥

त्रिंशत्सप्तकसहिता रश्मीनां सञ्चयो भवेद् देवम् ।
लक्षत्रितयपतित्वं ग्रामाणां जायते पुंसाम् ॥ ११ ॥

३७ रश्मि हों तो ३ लाख ग्रामों का अधिपति होता है ॥ ११ ॥

त्रिंशद्वसुभिः सहिता अस्रा येषां भवन्ति पुरुषाणाम् ।
मुनिसम्मतलक्षाणां ग्रामाणां तेऽधिपा ज्ञेयाः ॥ १२ ॥

३८ रश्मि संख्या हो तो वह मनुष्य ७ लाख ग्रामों का पालन करने वाला होता है ॥ १२ ॥

त्रिंशत्सनवकसंख्या जन्मनि येषां गृहे स्थिताः सन्ति ।
ते तोषितसकलजना भवन्ति पृथिवीश्वराः पुरुषाः ॥ १३ ॥

३९ रश्मि संख्या हो तो वह मनुष्य जनवर्ग को प्रसन्न करने वाला, समस्त पृथ्वी का अधिपति होता है ॥ १३ ॥

खाऽब्धिप्रमाणैः किरणैः प्रसूतः क्षोणीपतिस्तद्विजयप्रयाणे ।
भवन्ति सेनागजगर्जितानां प्रतिस्वनाः खे घनगर्जितानि ॥ १४ ॥

जिसके ४० रश्मि संख्या होती है उसकी विजय-यात्रा में संस्थित हाथियों की गर्जना से, आकाश में मेघ के गर्जन के समान प्रतिध्वनि होती है ॥ १४ ॥

शशिजलनिधिसङ्ख्यैः (४१) रश्मिभिः सूर्यतेजा
जलनिधिसहितायाः पार्थिवः स्यात्सुभूमेः ।
द्विजलधिरसनायाः पक्षवेदाख्यसङ्ख्यै-
स्त्रिजलधिरसनाया रामवेदैस्तथैव ॥१५॥

४१ रश्मि संख्या हो तो सूर्य के समान तेजस्वी और समुद्र पर्यन्त पृथ्वी का पालक होता है। ४२ रश्मि हों तो दो समुद्रों के बीच की पृथ्वी का पालक होता है और ४३ रश्मि हों तो तीन समुद्र के बीच की पृथ्वी का अधिपति होता है ॥ १५ ॥

वेदाऽब्धितुल्यैश्च मयूखजालैर्जाता नरेन्द्राः खलु सार्वभौमाः।
सौम्याः सुरब्राह्मणभक्तियुक्ता दीर्घायुषः सत्त्वयुता भवन्ति ॥१६॥

४४ रश्मि संख्या हो तो वह मनुष्य सार्वभौम (चक्रवर्ती) राजा, अत्यन्त सौम्य, देव-ब्राह्मणों का भक्त, दीर्घायु और बलिष्ठ होता है ॥ १६ ॥

परतः किरणैर्द्वीपान्तरपालकाः पुरुषसर्वगुणयुक्ताः।
सर्वनमस्याः सुभगा महेन्द्रतुल्यप्रतापाश्च ॥ १७ ॥

४५ रश्मि संख्या हो तो वह पृथ्वी का पति होकर द्वीपान्तर का भी पालक होता है तथा सबका प्रणम्य, सुन्दर और इन्द्र के समान प्रतापी होता है ॥ १७ ॥

चत्वारिंशद्युक्ताः किरणाः षड्भिश्चैवं प्रसूतौ स्युः।
तस्य स्यात्सन्दिष्टं सर्वक्षितिपालकं मुक्त्वा ॥ १८ ॥

४६ रश्मि संख्या हो तो विश्व के सब राजाओं पर उसका आदेश रहता है ॥ १८ ॥

भुवनभरसहिष्णोः सर्वतः क्षीणशत्रो-
त्रिदशपतिसमेतः सर्वलोकस्तु तस्य।
विदधति विहगानां रश्मयो जन्मकाले
तुरगकृतिसमानाश्चक्रवर्तित्वमेवम् ॥१९॥

४७ रश्मि हों तो समस्त भुवन का पालक, निश्शत्रु इन्द्र के समान समस्त लोक का मान्य चक्रवर्ती राजा होता है ॥ १९ ॥

अभिमुखकरप्रवाहैः फलं प्रयच्छन्ति पुष्टतरमाशु।
तद्विपरीतं पुंसां पराङ्मुखस्थग्रहेन्द्राणाम् ॥ २० ॥

रश्मि सन्मुख निकलती हो तो कहे हुए फल अति पुष्ट होंते हैं, अन्यथा फल में कुछ अल्पता समझनी चाहिये ॥ २० ॥

जन्मसमये ग्रहाणां रश्मीनां संक्षये क्षयो भवति।
वृद्धे वृद्धिर्नृणामेवं मोक्षेऽपि तत् क्रमेणैव ॥ २१ ॥

जन्म समय में रश्मि की वृद्धि से तदनुसार श्रेष्ठता और रश्मि की क्षीणता से हीनता समझनी चाहिये। इसी प्रकार मरण काल में भी ग्रहों की रश्मि के अनुसार उत्तम, मध्यम और अधम गति समझना ॥ २१ ॥

अथ ग्रहबलविचारः-

बलावबोधेन विना दशादिक्रमावबोधो न भवेद्यतोऽतः ।
तत्स्थानदिक्कालनिसर्गचेष्टा-दृग्भेदभिन्नं कथयाम्यशेषम् ॥ १ ॥

ग्रहों के बल के ज्ञान के बिना तत्-तद् ग्रहकी दशाके फल आदि समझना असम्भव होता है। इसलिए अब ग्रहों के स्थानबल, दिग्बल, कामबल, निसर्गबल, चेष्टाबल आदि चौबीस बलों को भिन्न-भिन्न क्रम से कहते हैं ॥१॥

प्रथमस्थानबलम्-

स्वोच्चे सुहृद्भे स्वनवांशकेऽपि स्वर्क्षे दृकाणे द्विरसांशकेऽपि ।
कलांशकाद्यंशयुतेऽपि चैवमुपैति तत्स्थानबलं ग्रहेन्द्रः ॥ २ ॥

अपने उच्च में, मित्र राशि में, स्वनवमांश में, स्वराशि में, स्वद्रेष्काण में, स्वद्वादशांश में स्वषोडशांशादि में, ग्रह हो तो स्थानबली कहलाता है ॥२॥

द्रष्टव्य—ग्रहों के उक्त षड्बल जानने के लिए सबसे सरल प्रकार महर्षि पराशरोक्त विधि लिखता हूँ, उसमें प्रथम स्थानबलों में—

अथ उच्चबलसाधनम्-

नीचोनं खचरं भार्धाधिकं चक्राद् विशोधयेत् ।
भागीकृत्य त्रिभिर्भक्तं लब्धमुच्चबलं भवेत् ॥ ३ ॥

राश्यादि ग्रह में अपने नीच राशि अंश को घटाकर शेष ६ राशि से अल्प हो तो उसी के, यदि ६ राशि से अधिक हो तो उसको १२ राशि में घटाकर शेष को अंशात्मक बनाकर ३ का भाग देने से लब्धि उच्चबल होती है ॥३॥

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य ९।२९।३६।५३ इसमें सूर्य के नीच राशि अंश ६।१० को घटाने से शेष ३।१९।३६।५३ इसको अंशात्मक बनाकर १०९।३६।५३, इसमें तीन का भाग देने से लब्धि कलादि बल ३६।३२ यह उच्चबल हुआ ॥ ३ ॥

[1]ग्रहबलम्

स्वत्रिकोणस्वगेहाधिमित्र-मित्र-समारिषु ।
अधिशत्रुगृहे चापि स्थितानां क्रमशो बलम् ॥ ४ ॥
भूताब्धयः खाग्नि-नखास्तिथ्यो दश युगाः करौ ।

ग्रह अपने मूल-त्रिकोण में हो तो ४५, स्वगृह में ३०, अधिमित्र के घर

---

१. मूलत्रिकोणे विषमाब्धयः स्युः, स्वर्क्षे रदाः सार्धकराशिसंख्याः ।
मित्रेऽधिके पञ्चदश स्वमित्रे, समे स-खण्डा गिरिमानतुल्याः ॥ ४ ॥
अंघ्र्यूनवेदाश्च रिपौ तथापि शत्रौ कलैका विकला द्विबाणाः ।
दैवज्ञवर्यैर्गणितागमज्ञैः, प्रोक्तं बलं जन्मिशुभाऽशुभार्थम् ॥ ५ ॥

में २०, मित्र के घर में १५, सम के गृह में १०, शत्रु के गृह में ४ और अधिशत्रु के गृह में हो तो २ कलामात्र बल होता है ॥ ४½ ॥

उदाहरण—सूर्य अपने सम के गृह में है, इसलिए गृहबल १० कला हुआ ॥ ४½ ॥

होरादिषड्वर्गबलकथनम्—

एवं होराद्दकाणाद्रिभागाङ्कद्वादशांशजम् ॥ ५ ॥
त्रिंशांशजं तदैक्यं च सप्तवर्गसमुद्भवम् ।

इसी प्रकार—होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवमांश, द्वादशांश, त्रिंशांश सम्बन्धी बल समझना—इन सातों वर्गों के बल का योग सप्तवर्गज बल कहलाता है ॥ ५½ ॥

युग्मायुग्मभांशबलम्—

शुक्रेन्दू समभांशेऽन्ये विषमेऽङ्घ्रिमितं बलम् ॥ ६ ॥

शुक्र और चन्द्रमा सम राशि और सम नवमांश में हो तो चरण (१५) बल होता है। विषम राशि, विषम नवमांश में हों तो बल का अभाव समझना। इसी से यह भी सिद्ध है कि–यदि सम राशि या सम नवांश किसी एक में हो तो ७॥ साढ़े सात (आधा चरण) बल होता है, एवं अन्य ग्रह विषम राशि, विषम नवमांश में हो तो १ चरण (१५) बल होता है ॥ ६ ॥

[1]केन्द्रादिबलम्—

केन्द्रादिषु स्थिताः खेटाः पूर्णार्धाङ्घ्रिमितं क्रमात् ॥ ६½ ॥

केन्द्र में रहने वाला पूर्ण (६०′), पणफर में ३०′ और आपोक्लिम में स्थित ग्रह १ चरण (१५′) बल देता है ॥ ६½ ॥

[2]विशिष्टद्रेष्काणबलम्—

आदि-मध्यावसानेषु द्रेष्काणेषु स्थिताः क्रमात् ।
पुं-नपुंसक-योषाख्या दद्युरङ्घ्रिमितं बलम् ॥ ७½ ॥

पुरुष ग्रह प्रथम द्रेष्काण में, नपुंसक ग्रह मध्य द्रेष्काण में और स्त्रीग्रह तृतीय द्रेष्काण में एक-एक चरण (१५′) बल देते हैं ॥ ७½ ॥

वि०–पुरुष ग्रह र. मं. बृ.। नपुंसक ग्रह–बु. श.। स्त्रीग्रह–चं. शु. हैं।

---

१. कण्टकाद्युपगतेषु विधेया रूप (१) कार्द्ध (३०) चरणा (१५) निजवीर्यें। ½।
२. आन्तमध्यमुखगेषु च पादः स्त्रीनपुंसकनरेषु निनेयः ॥ १ ॥
स्थानवीर्यमिदमेवमिहोक्तं दिग्बलं तु शृणु पूर्वनिशातः।

[1]दिग्बलकथनम्–

सूर्यात् कुजात् सुखं जीवाज्ज्ञाच्चास्तं लग्नमार्कितः ॥ ८ ॥
दशमं च भृगोश्चन्द्रात् प्रोज्झ्य षड्भाधिके सति ।
चक्राद्विशोध्य तद्भागास्त्रिभिर्भक्ताश्च दिग्बलम् ॥ ९ ॥

सूर्य और मङ्गल में चतुर्थ भावको, गुरु और बुध में सप्तम भावको, शनि में लग्नको और शुक्र चन्द्र में दशमभाव को घटावे, ६ से अधिक शेष बचे तो उसको १२ राशि में घटाकर जो बचे उसको अंशात्मक बनाकर ३ का भाग देने से लब्धि दिग्वल होती है ॥ ८½-९ ॥

उदाहरण—जैसे सूर्य ९।२९।३६।५३ में चतुर्थ भाव २।०।१६।५२ को घटाने से ७।२९।२०।१ यह ६ से अधिक है, अतः १२ राशि में घटाने से शेष ४।०।३९।५९ इसके अंश १२०।३९।५९ इसमें ३ से भाग देने से लब्धि ४०।१३ यह सूर्य का दिग्वल हुआ। एवं अन्य ग्रहों का भी समझना ॥ ८½-९ ॥

(कालबलनिरूपणे)[2] नतोन्नतबलम्–

इष्टावधि निशीथात्तून्नतं त्रिंशच्च्युतं नतम् ।
चन्द्रभौमशनीनां च नतं द्विघ्नं कलादिकम् ॥ १० ॥
षष्टिशुद्धं तदन्येषां सदा पूर्णा बुधस्य हि ।

मध्य रात्रि और इष्टकाल का अन्तर उन्नतकाल होता है। उसको ३० घटी में घटाने से नतकाल होता है। पिछली मध्यरात्रि से दिनके मध्य तक पूर्व तथा दिन के मध्य से अगली मध्य रात्रि तक पश्चिम नत या उन्नत समझना चाहिये। इस प्रकार नत और उन्नत काल समझ कर नत घटी को २ से गुना करने से कलादिचक्र चन्द्र, मङ्गल और शनि का नतोन्नत बल होता है। उसी को ६० घटी में घटाने से जो शेष बचे वह रवि, बृहस्पति और शुक्र का बल तथा बुध का नतोन्नत बल सदा पूर्ण (६० कला) होता है ॥ १०½ ॥

---

१. विद्गुरू रविकुजौ रविसूनुः शुक्रशीतकिरणौ बलिनौ स्तः ॥ १ ॥
अर्कात्कुजात्स्वाम्बुगृहं विशोध्य जीवाद् बुधाच्चापि कलत्रभावम् ।
मेषूरणं भार्गवचन्द्रभोग्यां प्राग्लग्नमुष्णांशुजतोऽवशेषम् ॥ १ ॥
षड्भाधिकश्चेद् रवितो विशोध्यं लिप्तीकृतं खाभ्रगजाभ्रभूमिः ।
१०८०० भजेत्तदाप्तं हि ककुद्बलं स्यादतः परं कालबलं गदामि ॥ २ ॥

२. नक्तं बला भौमशशाङ्कमन्दा गुर्वर्कशुक्रादिननक्तपाः स्युः ।
सौम्याः सदा वासरनक्तभाजो ग्राह्यो बुधैरुन्नतसंज्ञकालः ॥ १ ॥
नतस्त्वमी वीर्यवतां पलीकृताः खखाष्टचन्द्रै १८०० र्विहृतो बलं भवेत् ।
बुधस्य रात्रौ च दिवा च रूपं विधेयमेतत्समयोद्भवं बलम् ॥ २ ॥

[1]पक्षबलम्–

अथ पक्षबलं वक्ष्ये सूर्यं चन्द्राद्विशोध्य हि ॥ ११ ॥
षड्भाधिके विशोध्यार्कात् भागीकृत्य त्रिभिर्भजेत् ।
पक्षजं बलमिन्दुज्ञशुक्रेज्यानां तु षष्टितः ॥ १२ ॥
विशोध्यं तद्बलं ज्ञेयं पापानां पक्षसम्भवम् ।

सूर्य को चन्द्रमा में घटावे, शेष ६ राशि से कम हो तो उसी के, यदि ६ राशि से अधिक हो तो उसको १२ राशि में घटाकर शेष के अंशादि में ३ का भाग देने से लब्धि चन्द्र, बुध, शुक्र और गुरु का बल समझें। उसी बल को ६० में घटाकर जो शेष बचे, वह पाप (सू० मं० श०) के बल होते हैं ॥ ११–१२½ ॥

[2]दिवारात्रिबलम्

दिनत्र्यंशेषु सौम्यार्कशनीनां निट्त्रिभागके ॥ १३ ॥
चन्द्र-शुक्र-कुजानां च बलं पूर्णं सदा गुरोः ।

दिन के प्रथम तृतीयांश में बुध का, द्वितीय तृतीयांश में सूर्य का और तृतीय तृतीयांश में शनि का पूर्ण बल होता है। एवं रात्रि के प्रथम तृतीयांश में चन्द्र का, द्वितीय तृतीयांश में शुक्र का और तृतीय तृतीयांश में मङ्गल का तथा दिन और रात्रि में सर्वदा गुरु का बल पूर्ण होता है। यह द्युरात्रज बल कहलाता है ॥ १३½ ॥

वर्ष-मास-दिन-होराधिपानां बलम्–

वर्षमासदिनेशानां तिथ्यस्त्रिंशच्छरार्णवाः ॥ १४ ॥
होरेशस्य बलं षष्टिरुक्तं नैसर्गिकं परम् ।

वर्षपतिका १५, मासपतिका ३०, दिनपतिका ४५ और वर्तमान होरापतिका ६० बल होता है। इससे भिन्न नैसर्गिक बल भी होता है ॥ १४½ ॥

---

१. व्यर्कः शशी षड्भवनाधिकश्चेच्चक्राद्विशोध्योऽथ कलीकृतोऽसौ ।
चक्रार्द्धलिप्ता १०८०० विहृतो बलक्षपक्षे बलं स्यादथ कृष्णपक्षे ॥ १ ॥
तदेव रूपाच्च्युतमेव कृत्वा जगुर्बुधाः पक्षबलं ग्रहाणाम् ।
बलक्षपक्षे शुभखेचराणां पापा ग्रहाणामसिते च पक्षे ॥ २ ॥

२. अह्नि त्रिभागेषु बलं क्रमेण सौम्यार्कितिग्मांशुनभोगतानाम् ।
रात्रौ तुषारांशुसितासृजाश्च रूपं सदैवामरपूजितस्य ॥ १ ॥

नैसर्गिकबलम्–

तन्मानं सप्तहृत्षष्टिरेकाद्येकोत्तरैर्हता ॥ १५ ॥
श-मं-बु-गु-शु-चं-रादि खेटानां क्रमतो द्विज ! ।

६० कला में ७ का भाग देकर लब्धि को १ आदि ७ अंकों से क्रम से गुणा करने से क्रम से शनि, मङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र और रवि का नैसर्गिक बल होता है ॥ १५½ ॥

उदाहरण—जैसे शनि का ६०/७=८।३, इसी को दूना करने से मंगल का, त्रिगुणित करने से बुध का एवं आगे समझना ॥ १५½ ॥

[1]वर्षेशादीनां ज्ञानम्—

सावनो द्युगणः सूर्याद् दिनमासाब्दपास्ततः ॥ १६ ॥
सप्तभिः क्षयितः शेषः सूर्याद्यो वासरेश्वरः ।
मासाब्ददिनसंख्याप्तं द्वित्रिघ्नं रूपसंयुतम् ॥ १७ ॥
सप्तोद्धृतावशेषौ तु विज्ञेयौ मासवर्षपौ ।

सृष्टयादि से अहर्गण साधन कर उसमें ७ से भाग देकर १ आदि शेष में रवि आदि वारेश होते हैं। तथा अहर्गण में ३० का भाग देकर लब्धि मास-संख्या को २ से गुणाकर १ जोड़कर ७ का भाग देने से १ आदि शेष में सूर्य आदि मासेश समझना। एवं अहर्गण में ३६० का भाग देकर लब्धि वर्ष-संख्या को ३ से गुणा कर ७ का भाग देने से १ आदि शेष में सूर्य आदि ग्रह वर्षेश समझना चाहिए।

विशेष—अहर्गण यदि कलियुगादि का हो तो १ आदि शेष में शुक्र आदि क्रम से गिनकर वारेश समझे ॥ १६-१७½ ॥

अथ होरेशज्ञानम् (मु. चि०)

वारादेर्घटिका द्विघ्नाः स्वाक्षहृच्छेपवर्जिताः ॥ १८ ॥
सैकास्तष्टानगैः कालहोरेशा दिनपात् क्रमात् ।

वार प्रवेश काल से इष्टकाल तक घटीपल को दूना करके जो गुणनफल हो उसमें ५ का भाग देकर जो शेष बचे उसको गुणनफल में घटाकर शेष में १ जोड़कर ७ का भाग देने से १ आदि शेष में वारेश से आरम्भ कर वर्तमान होरेश समझना चाहिए ॥ १८½ ॥

---

१. शश्यविश्वभव ११२१ विहीनो द्युगणः खरसाग्नि ३६० भाजितस्त्रिघ्नः ।
सैकः सप्तविभक्तः सावनवर्षाधिपोऽर्कादिः ॥ १ ॥
शशिमुनि ७१ हीनः खचरैस्त्रिंशद्भक्तः फलं द्विगुणम् ।
सैकं सप्तविभक्तं सावनमासाधिपोऽर्कादिः ॥ २ ॥

उदाहरण—जैसे सोमवार को प्रवृत्तिकाल से इष्ट घटी है तो इसको दूना करने से गुणनफल ३२ हुआ, इसमें ५ के भाग देने से शेष २ को गुणनफल ३२ में घटाने से ३० रहा, इसमें १ जोड़कर ७ का भाग देने से ३ शेष बचे इसलिए सोम से तीसरा बुध होराधिप हुआ ॥ १८½ ॥

अयनबलम्–

पञ्चाब्धयः सुराः सूर्याः खण्डकांशाः क्रमादमी ॥ १९ ॥
सायनग्रहदोराशितुल्यखण्डयुतिश्च सा ।
भागादिकहतादेष्यात् त्रिंशल्लब्धयुता लवाः ॥ २० ॥
स्वमृणं तुलमेषादौ शचीन्द्रोश्च त्रिराशिषु ।
तथाऽऽरार्केज्यशुक्राणां व्यस्तं ज्ञस्य सदा धनम् ॥ २१ ॥
तद्भागाश्च त्रिभिर्भक्ता ज्ञेयमायनजं बलम् ।

४५।३३।१२ ये ३ खण्डांश हैं। जिस ग्रह का अयन बल बनाना हो उसमें अयनांश जोड़कर भुज बनावे। भुज में जितनी राशि संख्या हो उतने खण्ड का योग करे, तथा अंश का अगले खण्ड से गुणाकर ३० का भाग देकर जो लब्धि हो उसका खण्ड के योग में जोड़े फिर शनि, चन्द्रमा का तुलादि केन्द्र हो तो ३ राशि में धन, मेषादि केन्द्र हो तो ऋण करे तथा मं., रवि, गुरु, शुक्र का विपरीत (मेषादि में धन, तुलादि में ऋण) करे और बुध का सदा धन ही करे एवं जो हो उसके अंश बनाकर ३ का भाग देने से अयनबल होता है ॥ १९–२१½ ॥

उदाहरण—जैसे, सायन सूर्य १०।२१।१।५६ इसका भुज १।८।५८।४ इसमें राशि १ है इसलिए प्रथम खण्ड ४५ हुआ। अंशादि ८।५८।४ को अगले खण्ड ३३ से गुणाकर ३० के भाग देने से लब्धि ९।५१।५२ को खण्ड ४५ में जोड़ने से ५४।५१।५२ अंश हुए, इसको राश्यादि बनाकर १।२४।५१।५२ इसे सूर्य के तुलादि केन्द्र में होने से ३ राशि में घटाने से १।५।८।८ हुआ, इसके अंश बनाकर ३५।८।८ में ३ का भाग देने से लब्धि ११।४२।४३ यह सूर्य का अयनबल हुआ ॥ १९–२१½ ॥

दृग्बलम्–

पापदृक्पादहीनं स्याच्छुभदृक्पादयुक् तथा ॥ २२ ॥
बलैक्यं ज्ञेज्यदृक्युक्तमेवं खेटबलं भवेत् ।

इस प्रकार बलों के योग में ग्रह पर जितने पापग्रह की दृष्टि हो उसका चतुर्थांश घटाने तथा शुभग्रह की दृष्टि के चतुर्थांश को जोड़ने से ग्रह का दृग्बल होता है ॥ २२½ ॥

युद्धबलम्-

अथ ताराग्रहाणां तु युध्यतोश्च द्वयोर्मिथः ॥ २३ ॥
बलान्तरं विजेतुः स्वं निर्जितस्य बलादृणम् ।

दृष्टव्य–मङ्गलादि ५ ग्रहों में जिन दो के राशि अंश कला तुल्य हों उन दोनों में युद्ध समझा जाता है। उनमें जो उत्तर दिशा में रहता है— वह विजयी, दक्षिण दिशा वाला पराजित समझा जाता है।

इस प्रकार जिन दो ग्रहों में युद्ध हो उन दोनों के बलों का अन्तर करके शेष जो हो उसको विजयी के बल में जोड़ने और पराजित के बलयोग में घटाने से वास्तव बल होता है। ग्रह की दिशा का ज्ञान सूर्य-सिद्धान्त या ग्रहलाघ आदि ग्रन्थों से करना चाहिये ॥ २३½ ॥

[1]रविशशिनोश्चेष्टाबलम्-

यद्रवेदायनं वीर्यं चेष्टाख्यं तावदेव हि ॥ २४ ॥
विधोः पक्षबलं यावत् तावच्चेष्टाबलं स्मृतम् ।

सूर्य का जितना अयन बल हो उतना ही चेष्टा बल और चन्द्रमा का जितना पक्षबल हो वही चेष्टा बल भी होता है ॥ २४½ ॥

कुलादिग्रहाणां चेष्टाबलज्ञानाय चेष्टाकेन्द्रम्-

मध्यमस्फुटयोगार्धहीनं स्वस्वचलोच्चकम् ॥ २५ ॥
षड्भाधिकं च्युतं चक्राच्चेष्टाकेन्द्रं स्मृतं कुजात् ।

मङ्गलादि ५ ग्रहों के मध्यम और स्पष्ट के योगार्ध को अपने-अपने शीघ्रोच्च में घटाने से शीघ्र केन्द्र होता है ॥ २५½ ॥

---

१. परमापक्रमज्या तु सप्तरन्ध्रगुणेन्दवः ।
तद्गुणज्या त्रिजीवाप्ता तच्चापं क्रान्तिरुच्यते ॥ १ ॥
क्रान्तिः सौम्या स्वमिह परमापक्रमे दक्षिणार्थं
शुक्रादित्यक्षितिसुतमरुत्पूजितानां विधेया ।
व्यस्ता शीतद्युतिरविजयोस्तस्य नित्यं विधेया
चान्द्रेश्चैव तदनु परमापक्रमेणाभ्युपेता ॥ २ ॥
ग्राह्यं राशिप्रभृति च फलं तत्कलीभूतमेतद्–
व्योमाकाशद्विरदखुकुभि १०८०० र्भजयेदायनं स्यात् ।
द्विघ्नं भानोरयनजबलं पक्षवीर्यं तथेन्दो-
र्युद्धे बाणान्तरसुविहृतं खेटवीर्यान्तरं हि ॥ ३ ॥

कुजादीनां चेष्टाबलम्–

भागीकृतं त्रिभिर्भक्तं चेष्टाकेन्द्रं च तद्बलम् ॥ २६ ॥

स्थानदिक्काल-दृक्चेष्टानिसर्गोत्थं च षड्विधम्।

चेष्टा केन्द्र को अंशात्मक बनाकर उसमें ३ का भाग देने से लब्धि चेष्टाबल होती है। इस प्रकार स्थानबल, दिग्बल, कालबल, दृष्टिबल, चेष्टाबल और [1]निसर्गबल ये षड्विध बल होते हैं ॥ २६½ ॥

भावबलम्–(जातकपद्धतौ)

भावानां बलमीशजं च नृचतुष्पादाख्यकीटाम्बुजाः ॥

जायाम्ब्वाद्यखभोनिताः खलु ततो दिग्वीर्यवत्तद्युतम्।

सद्दृष्टयङ्घ्रियुगुग्रदृष्टिचरणोनं ज्ञेज्यदृग्युक् पुनः ॥ २७ ॥

अपने-अपने स्वामी का बल, भाव का बल होता है तथा द्विपद राशि भाव को सप्तमभाव में, चतुष्पद को चतुर्थभाव में, कीटराशि को लग्न में और जलचर राशि को दशमभाव में घटाकर शेष पर से दिग्बल बनाने की विधि से जो बल आवे वह अपने-अपने स्वामी के षड्बलैक्य में तथा शुभग्रह की दृष्टि के चतुर्थांश को भी जोड़े और पापग्रह की दृष्टि के चतुर्थांश को घटावे तो भाव का स्पष्ट बल होता है ॥ २७ ॥

ग्रहबलप्रयोजनम्–

एवं कृत्वा बलैक्यञ्च ततश्चिन्त्यं फलं बुधैः।

भावस्थानग्रहैः प्रोक्तं योगे ये योगहेतवः ॥ २८ ॥

तेषां मध्ये बली कर्ता स एवास्य फलप्रदः।

योगेष्वाप्तेषु बहुषु नीतिरेवं प्रकीर्तिता ॥ २९ ॥

इस प्रकार षड्बलों का योग करके ग्रहों के भाव स्थानानुसार फल का विचार करे। जितने ग्रहयोग कारक हों उनमें सबसे बली, योग फलके देने

---

१. मन्दावनीसूनुशशाङ्कपुत्रवागीशशुक्रेन्दुदिवाकराणाम्।
एकोत्तरं रूपनगैर्विभक्तं नैसर्गिकं वीर्यमुदाहरन्ति ॥ १ ॥

उक्तानि यस्माद् बहुधा फलानि व्योमौकसां दृष्टिसमुद्भवानि।
तस्मात्प्रवक्ष्यानयनं हि दृष्टेर्होराविदां दृक्फलनिर्णयार्थम् ॥ २ ॥
खैकाग्निद्विखवेदरामयमभूखाभ्राभ्रमेकादिभे
द्रष्टा वर्जितदृश्यकस्य गुरुणा चेदष्टवेदे कृताः।
मन्देनाङ्कयमेऽसृजा नगगुणेङ्का भादिजाः संस्कृता
भागघ्नक्षयवृद्धिखानललवेनाब्ध्युदधृतो दृग् भवेत् ॥ ३ ॥

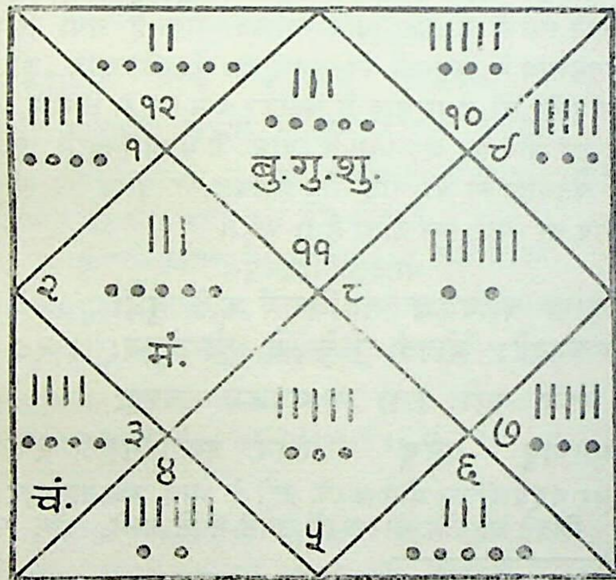
वाला होता है। इस प्रकार बहुत योग प्राप्त होने पर बलानुसार ही फल कहना चाहिये ॥ २८-२९ ॥

अथाष्टकवर्गविचारः-

सूर्यः सौरिश्च जीवश्च शुक्रो भौमो बुधस्तथा।
चन्द्रो लग्नं क्रमात्स्थाप्या अष्टवर्गे बुधैर्ग्रहाः ॥ १ ॥

सूर्य, शनि, गुरु, शुक्र, मङ्गल, बुध, चन्द्र और लग्न इन आठों को क्रम से १ पंक्ति में लिखे, तथा इनके आगे लग्नादि द्वादश भावों को रखे। फिर प्रत्येक ग्रह के अष्टक वर्ग सिद्धयर्थं पृथक् जन्म लग्न कुण्डली लिखकर उनमें जिसके अष्टक वर्ग में जिस ग्रह और लग्न से जो शुभ स्थान कहे गये हैं उनमें रेखा, बाकी स्थान में बिन्दु से चिह्नित करे ॥ १ ॥

सूर्याष्टकवर्गचक्रम्-



इस चक्र में अशुभ के स्थान में बिन्दु (०) और शुभ के स्थान में रेखा (।) दी गई है। जिस स्थान में अधिक रेखा हैं उस स्थान में संचारवश सूर्य के जाने से सूर्य शुभप्रद समझा जायेगा। तथा जिस स्थान में बिन्दु अधिक हैं उस स्थान में जाने से अशुभप्रद समझा जायेगा। इस अष्टकवर्ग से जन्मपत्री का फल कहने में ग्रहों के विशेष बलाबल का ज्ञान होता है। विवाहादि कार्य में भी शुद्धि देखी जाती है। क्योंकि यदि गोचर से ग्रहशुद्धि नहीं होती हो और अष्टकवर्ग से शुद्धि हो तो गोचर से अशुभ भी शुभप्रद

समझा जाता है। अतः सब ग्रहों के अष्टकवर्ग चक्र बनाकर शुभाशुभ फल समझना चाहिये ।

उदाहरण—जैसे सूर्याष्टकवर्ग में अपने स्थान से १।२।४।७।८।९।१०।११ इन स्थानों में शुभ है, इसलिए सूर्य से इन स्थानों में रेखा तथा शेष (३।५।६।१२) स्थान में बिन्दु लिखना। इस प्रकार सूर्य जिससे जिस स्थान में शुभ है उसमें रेखा और बाकी स्थान में शून्य (बिन्दु) लगाने से चक्र बना। अब इस प्रकार कुम्भ में ५ विन्दु और ३ रेखा हैं, दोनों के अन्तर करने से २ विन्दु बचे, इसलिये कुम्भ बिन्दु युक्त भाव हुआ। अतः कुम्भ में जब चारवश सूर्य जायेगा तब जातक को अशुभफल देगा तथा मेष में रेखा और विन्दु बराबर हैं, इसलिए मेष का सूर्य मध्यम फलप्रद होगा। तथा कर्क, सिंह, वृश्चिक, मकर में अधिक रेखायें हैं इसलिए इन राशियों में सूर्य के रहने से शुभप्रद समझना। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रहों के अपने-अपने अष्टक वर्ग से फल समझे ॥ १ ॥ प्रत्येक ग्रह की अष्टकवर्ग कुण्डली बनाने के लिए नीचे आठ चक्र दिये गये हैं, अतः चक्रोक्त अंकों से ग्रहों के शुभस्थान जानकर रेखा रखी जायेगी।

रवेरष्टकवर्ग· ४८

सू.	सो.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
१	३	१	३	५	६	१	३
२	६	२	५	६	७	२	४
४	१०	४	६	९	१२	४	६
७	११	७	९	११		७	१०
८		८	१०			८	११
९		९	११			९	१२
१०		१०	१२			१०	
११		११				११	

चन्द्रस्याष्टकवर्गः ४९

सो.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	सू.	ल.
१	२	१	१	३	३	३	३
३	३	३	४	४	५	६	६
६	५	४	७	५	६	७	१०
७	६	५	८	७	११	८	११
१०	९	७	१०	९		१०	
११	१०	८	११	१०		११	
	११	१०	१२	११			
		११					

बुधस्याष्टकवर्गः ४५

बु.	गु.	शु.	श.	सू.	सो.	मं	ल.
१	६	१	१	५	२	१	१
३	८	२	२	६	४	२	२
५	११	३	४	९	६	४	४
६	१२	४	७	११	८	७	६
९		५	८	१२	१०	८	८
१०		८	९		११	९	१०
११		९	१०			१०	११
१२		११	११			११	

गुरोरष्टकवर्गः ५६

गु.	शु.	श.	सू.	सो.	म.	बु.	ल.
१	२	३	१	२	१	१	१
२	५	५	२	५	२	२	२
३	६	६	३	७	४	४	४
४	९	१२	४	९	७	५	५
७	१०		७	११	८	६	६
८	११		८		१०	९	७
१०			९		११	१०	९
११			१०			११	१०
			११				११

भौमाष्टकवर्गः ३९

मं.	बु.	गु.	शु.	श.	सू.	सो.	ल.
१	३	६	६	१	३	३	१
२	५	१०	८	४	५	६	३
४	६	११	११	७	६	११	६
७	११	१२	१२	८	१०		१०
८				९	११		११
१०				१०			
११				११			

शुक्रस्याष्टकवर्गः ५२

शु.	श.	सू.	सो.	मं.	बु.	गु.	ल.
१	३	८	१	३	३	५	१
२	४	११	२	५	५	८	२
३	५	१२	३	६	६	९	३
४	८		४	९	९	१०	४
५	९		५	११	११	११	५
८	१०		८	१२			८
९	११		९				९
१०			११				११
११			१२				

शनेरष्टकवर्गः ३९

श.	सू.	सो.	मं.	बु.	गु.	शु.	ल.
३	१	३	३	६	५	६	१
५	२	६	५	८	६	११	३
६	४	११	६	९	११	१२	४
११	७		१०	१०	१२		६
	८		११	११			१०
	१०		१२	१२			११
	११						

लग्नस्याष्टकवर्गः ५२

ल.	सू.	सो.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
१	३	३	१	१	१	१	१
३	४	८	३	२	२	२	३
४	६	१०	६	४	४	३	४
५	१०	११	१०	६	५	४	६
७	१२		११	८	६	५	१०
९				१०	७	८	११
१०				११	९	९	
११					१०	११	
					११		

शंभुहोरामतेन ४८ रेखा ज्ञेया

सूर्यरेखाफलम्-

वर्त्तते रविरेखा च शत्रूणां च पराजयम् ।
सहसा सिद्धिरेवाऽत्र भावजे यमुपस्थिता ॥ २ ॥

सूर्याष्टकवर्ग में जिस भाव में रेखा हो उसमें सूर्य के ग्रहचारवश जाने से शत्रुओं का नाश, कार्य की सिद्धि, विशेषकर उस भाव-सम्बन्धी सब कार्यों की सिद्धि होती है ॥ २ ॥

सूर्यविन्दुफलम्-

विन्दुः सकष्टफलदो महाव्यसनकारकः ।
रोगशोकप्रदाता च नृपोद्वेगमकारणात् ॥ ३ ॥

जिस भाव में बिन्दु बचे उस भाव में गोचरवश सूर्य के जाने पर कष्ट, व्यसन, रोग, शोक और अकारण राजक्रोध आदि अशुभफल होते हैं ॥ ३ ॥

चन्द्ररेखाफलम्–

ददाति शशिरेखा च वस्त्राभरणभूषणम् ।
लभते प्रभुसम्मानं कर्मप्राप्तिमिवाऽम्बरम् ॥ ४ ॥

चन्द्राष्टकवर्ग में जिस भाव में रेखा हो उसमें चन्द्रमा के रहने पर नवीन वस्त्र, भूषण, राजा से आदर और कार्यों की सिद्धि होती है ॥ ४ ॥

चन्द्रविन्दुफलम्–

विन्दुः कष्टफलं चैव कलहं वैरिभिः सह ।
दुःस्वप्नदर्शनं नित्यं धननाशमवाप्नुयात् ॥ ५ ॥

जिस भाव में बिन्दु अधिक हों उस भाव में चन्द्रमा के जाने पर कष्ट, शत्रुओं से कलह, दुःस्वप्न दर्शन और धन की हानि होती है ॥ ५ ॥

भौमरेखाफलम्–

ददाति भौमजा रेखा अर्थप्राप्तिं सदैव हि ।
आरोग्यमायुर्वृद्धिञ्च कायकान्तिं प्रदापयेत् ॥ ६ ॥

भौम अपने अष्टकवर्गगत रेखावाले स्थान में धन, आरोग्य, आयु और कान्ति की वृद्धि करता है ॥ ६ ॥

भौमविन्दुफलम्–

विन्दुस्तस्य फलं शश्वदुदराग्निरुजः सदा ।
शिरःशूलं प्रजायेत रक्तपित्तरुजा भवेत् ॥ ७ ॥

मङ्गल, बिन्दुवाले स्थान में जाने से सर्वदा उदर और मस्तक में रोग तथा रक्त और पित्त विकार से पीड़ा करने वाला होता है ॥ ७ ॥

बुधरेखाफलम्–

बुधस्य रेखया सौख्यं मिष्टान्नं लभते सदा ।
दानधर्मरतश्चैव द्विजदेवाग्निपूजकः ॥ ८ ॥

बुध के अपने अष्टकवर्गगत अधिक रेखावाले स्थान में जाने से मिष्टान्न भोजन, दान-धर्म में रुचि, देव और ब्राह्मणों में भक्ति देने वाला होता है ॥ ८ ॥

बुधविन्दुफलम्–

विन्दुर्भङ्गप्रदश्चैव कलहं वैरिभिः सह ।
दुःस्वप्नदर्शनं नित्यमवेलाभोजनं तथा ॥ ९ ॥

बुध, अधिक विन्दुवाले स्थान में जाने से शत्रु से कलह, दुःस्वप्न दर्शन और असमय में भोजन दिलाने वाला होता है ॥ ९ ॥

गुरुरेखाफलम्-

रेखा जैवी जनयति सदा चित्तसौख्यादि पुष्टिं
जायाभोगं जनयतितरां शत्रुहन्त्री च नित्यम् ।
मानोत्साहौ विभवमतुलं वस्त्रहेमादिवृद्धिं
प्राप्यं सौख्यं सकलमतुलं बन्धुवर्गोपहारम् ॥ १० ॥

गुरु अपने अष्टकवर्गगत रेखावाले स्थान में जब जाता है, तो धनवृद्धि, सभी सुख, शत्रुओं का नाश, लोक में आदर, उत्साह, ऐश्वर्य, वस्त्र-सुवर्णादि लाभ और बन्धुओं में आदर होता है ॥ १० ॥

गुरुविन्दुफलम्-

विन्दुः कष्टं विगतधनधीर्मानसे वित्तचिन्तां
मार्गे भङ्गं जनयति सदा पातनं वाहनाद्वा ।
लोकाद्दिष्टं भवति कलहं वाङ्मयेनाऽपमानं
शत्रुद्वेषं व्ययमपि सदा साहसात्कार्यहानिः ॥ ११ ॥

गुरु अधिक विन्दुवाले स्थान में रहने से धन और बुद्धि की हानि, मन में चिन्ता, मार्ग में चलने से वाहनादि से गिरना, लोगों से कलह, अपमान, शत्रुओं से द्वेष की वृद्धि, व्यर्थ खर्च, साहस से कार्य की हानि करता है ॥११॥

शुक्ररेखाफलम्-

शौक्री रेखा जनयति नरं राज्यसम्मानवृद्धिं
कन्यालाभं सुसुखवपुपं दीर्घमायुश्च धत्ते ।
कैश्चित्क्रीडा भवति बहुधा ज्ञानमेकार्थसिद्धिं
लक्ष्मीलाभं जनयति सुखं सौख्यसम्पत्तिवृद्धिम् ॥ १२ ॥

शुक्र अपने अष्टकवर्गगत रेखाधिक भाववाली राशि में जाने पर राजा से आदर, कन्या सन्तानोत्पत्ति, शारीरिक सुख, आयु की वृद्धि, क्रीड़ा, ज्ञान की वृद्धि, कार्य की सिद्धि तथा सुख-सम्पत्ति की वृद्धि करता है ॥ १२ ॥

शुक्रविन्दुफलम्-

विन्दुः कष्टं भवति हि रिपोर्वित्तनाशप्रदाता
जायापीडा कलहमतुलं भूमिनाशं च कष्टम् ।

बुद्धिभ्रंशं व्ययमपि सदा पातनं वाजिभिर्वा ।
मार्गे भङ्गं जनयति सदा सर्वकालं जनानाम् ।। १३ ।।

शुक्र बिन्दु वाले स्थान में जानेपर शत्रुओं के द्वारा धन नाश, स्त्री को कष्ट, कलह, भूमि की हानि, बुद्धि का नाश, व्यर्थ खर्च, वाहनादि से गिरने का भय तथा यात्रा में विघ्न देनेवाला होता है ।। १३ ।।

शनिरेखाफलम्–

सौरी रेखा जनयति फलं भृत्यहेत्वर्थसम्पत्
कार्ये सिद्धिं नृपतिसचिवं साधुसम्पर्कदात्री ।
भूमिप्राप्तिं कितवजयिता स्नानदानार्चनेषु
मिष्टान्नं स्यान्नृपतिवरदं धान्यसस्येषु वृद्धिः ।। १४ ।।

शनि अपने अष्टकवर्गगत अधिक रेखावाले स्थान में जाता है तो उस समय नौकरों के द्वारा धन-सम्पत्ति की वृद्धि, कार्य में सिद्धि, राजा से मन्त्रि-पद का लाभ, साधुओं की सङ्गति, भूमि लाभ, धूर्तों से विजय, स्नान-पूजा-दानादि में रुचि, मिष्टान्न भोजन और धन-धान्य की वृद्धि होती है ।। १४ ।।

शनिविन्दुफलम्–

विन्दुः कष्टं नृपतिभयदो बन्धुपीडाविवृद्ध्यै
घातः शस्त्रैर्विषमपतितैर्वित्तसंहारकर्ता ।
चित्तोद्वेगो भवति बहुधा भूमिनाशः कलिर्वा
बुद्धिभ्रंशो भवति च सदा वाहने हानिरेव ।। १५ ।।

अधिक बिन्दु वाली राशि में शनि के रहने पर जातक को राजभय, बन्धुओं से पीड़ा, शस्त्रों के आघात का भय, धन हानि, मन में उद्वेग, भूमि का नाश, कलह, बुद्धि हानि और वाहनों की क्षति होती है ।। १५ ।।

समुदायाष्टकवर्गः– (पाराशरः)

द्वादशारं लिखेच्चक्रं जन्मलग्नादिभिर्युतम् ।
सर्वाष्टकफलान्यत्र संयोज्य प्रतिभं न्यसेत् ।। १६ ।।
समुदायाभिधानोऽयमष्टवर्गः प्रकथ्यते ।
अतः फलानि जातानां विज्ञेयानि द्विजोत्तम ! ।। १७ ।।

द्वादशकोष्ठ की जन्मलग्न कुण्डली लिखकर लग्नादि द्वादश भावों को पूर्व विधि से लग्न सहित सब ग्रहों के अष्टक वर्ग में जिन-जिन राशियों में जितनी रेखाएँ हों उन सबों को जोड़कर जो संख्या हो वह उस समुदा-

याष्टक कुण्डली में पृथक्-पृथक् लिखे। प्रति राशि में सब अष्टक वर्ग का रेखा योग लिखने के कारण यह समुदायाष्टक वर्ग कहलाता है। इस पर से आगे कहे अनुसार शुभ-अशुभ फल समझे ।। १६-१७ ।।

समुदायाष्टकरेखाफलम्-

त्रिंशाधिकफला ये स्यु राशयस्ते शुभप्रदाः ।
पञ्चविंशादित्रिंशान्तफला मध्यफलाः स्मृताः ।। १८ ।।

अतः क्षीणफला ये ते राशयः कष्टदुःखदाः ।
शुभे श्रेष्ठफलान् भावान् योजयेत् मतिमान्नरः ।। १९ ।।

कष्टराशीन् सुकार्येषु वर्जयेद् द्विजसत्तम ! ।
श्रेष्ठराशिगतः खेटः शुभोऽन्यत्राशुभप्रदः ।। २० ।।

इस प्रकार समुदायाष्टक वर्ग में जिस राशि में ३० से अधिक रेखा हों तो वह शुभप्रद, २५ से ३० तक रेखा हों तो मध्यफल, २५ से कम रेखा जिसमें हों, वह कष्ट और दुःखप्रद होता है। इसलिये अधिक रेखा वाली राशि (लग्नगत-चन्द्रगत) में शुभकार्य करना। अल्प रेखा वाली राशि को शुभकार्य में त्याग करना चाहिये। कोई भी ग्रह अधिक रेखा वाले स्थान में जाने से शुभफल और अल्प रेखा वाले स्थान में जाने से अशुभ फल देता है ।। १८-२० ।।

समुदायाष्टके १४-४५रेखामध्ये फलम्-

मरणं चतुर्दशभिः सक्रूरैः पञ्चदशभिर्वा ।
षोडशभिरङ्गपीडा भवति शरीरे महाव्याधिः ।। २१ ।।

१४ रेखा हों तो मरण, १५ हों तो उसमें पापग्रह के जाने से मरण होता है। १६ हों तो शरीर में पीड़ा एवं रोग होता है ।। २१ ।।

सप्तदशभिर्दुःखमष्टादशभिर्धनक्षयः प्रोक्तः ।
बान्धवपीडा बह्वी भवति तथैकोनविंशत्या ।। २२ ।।

१७ रेखा वाले स्थान में दुःख, १८ रेखा से धननाश, १९ से बान्धव पीड़ा होती है ।। २२ ।।

व्ययकलहो विंशतिभिर्गदो दुःखं तथैकविंशत्या ।
कुमतिर्द्वाविंशतिभिर्दैन्यं च पराभवो विफलम् ।। २३ ।।

२० रेखा से व्यर्थ खर्च और कलह, २१ से रोग, दुःखी, २२ से कुबुद्धि, दरिद्रता और पराजय होती है ।। २३ ।।

नूनं त्रिवर्गहानिर्भवति नराणां त्रिविंशतिर्नित्यम्।
द्रव्यक्षयस्त्वकस्माद्विंशतिभिश्चतुर्भिरधिकाभिः ॥ २४ ॥

२३ रेखा से भी त्रिवर्ग (अर्थ, धर्म, काम) की हानि, २४ से अचानक धननाश होता है ॥ २४ ॥

करतलगतमपि च धनं नश्यति नराणां पञ्चविंशतिभिः।
षड्विंशतिभिः क्लेशः समता स्यात्सप्तविंशतिभिः ॥२५॥

२५ रेखा से हाथ में आये हुए भी धन का नाश हो, २६ से क्लेश और २७ से मध्यफल होता है ॥ २५ ॥

अष्टाधिकविंशत्या द्रव्यागमनं यथासुखं भवति।
एकोनत्रिंशतिभिर्लोकेषु नरः पूज्यतामेति ॥ २६ ॥

२८ रेखा से धन और सुख का लाभ, २९ रेखा से लोक में आदर-सत्कार होता है ॥ २६ ॥

मानं सकृतव्याप्तिस्त्रिंशत्या नास्ति सन्देहमानम्।
सुकृतिं सौख्यं नृणामेकाभिरधिकाभिः स्यात् ॥ २७ ॥

३० रेखा हों तो लोक में आदर और कीर्ति की वृद्धि, ३१ हों तो कीर्ति के साथ सुख होता है ॥ २७ ॥

राज्यादिफलप्राप्तिः कथिता शरकृतिं यावत् ॥ २८ ॥

इससे ऊपर ४५ तक रेखा हों तो राज्यादि लाभ, अतिशय शुभफल प्राप्त होता है ॥ २८ ॥

मतान्तरेण रेखाणां फलम्–

कष्टं स्याच्चैकरेखायां द्वाभ्यामर्थक्षयो भवेत्।
त्रिभिः क्लेशं विजानीयाच्चतुर्भिः समता मता ॥ २९ ॥

एक रेखा में कष्ट, २ में धननाश, ३ में क्लेश और ४ रेखा में मध्यम (शुभ-अशुभ दोनों) फल होता है ॥ २९ ॥

पञ्चभिः क्षेममारोग्यं षड्भिरर्थागमो भवेत्।
सप्तभिः परमानन्दमष्टाभिः सर्वकामदम् ॥ ३० ॥

५ रेखा से कल्याण और आरोग्य, ६ से धन का लाभ, ७ रेखा से अतिशय आनन्द, ८ रेखा से सब सुख प्राप्त होता है ॥ ३० ॥

रेखाविन्दु-प्रयोजनम्–

रेखास्थाने तु सम्प्राप्ते यदा पापशुभग्रहाः।
शुभास्ते च विजानीयाद्बिन्दुस्थाने च दुःखदाः ॥ ३१ ॥

जिस स्थान में अधिक रेखा हों उस स्थान में पाप या शुभग्रह कोई भी जब जाता है तो शुभफल को ही देता है तथा जिसमें अधिक बिन्दु हों उस स्थान में जाने से पाप या शुभ दोनों ही अशुभ फल देते हैं ॥ ३१ ॥

शुभा च कथिता रेखा विन्दुश्च कथितोऽशुभः ।
समे समफलं ज्ञेयं गोचरे यदि नाऽन्तरम् ॥ ३२ ॥

आचार्यों ने शुभस्थान के लिये रेखा और पाप स्थान के लिये बिन्दुरूप चिह्न कहा है । जहाँ रेखा और बिन्दु दोनों बराबर हों, वहाँ मध्यम फल होता है ॥ ३२ ॥

यदि संस्थितरेखायां फलं पुंसां प्रजायते ।
लक्ष्मीभोगस्तथा सौख्यं सार्वभौमजनेशता ॥ ३३ ॥

रेखाधिक स्थान में सुख-सम्पत्ति की प्राप्तिरूप फल तथा राज्यादि लाभ होता है ॥ ३३ ॥

यदि संस्थितविन्दूनां फलं पुंसां प्रजायते ।
उद्वेगो हानि रोगश्च मृत्युश्चाऽस्य क्रमेण च ॥ ३४ ॥

बिन्दु स्थानमें उद्वेग, हानि, रोग और मृत्यु फल क्रम से होता है ॥३४॥

यो ग्रहो गोचरे श्रेष्ठस्त्वष्टवर्गेषु मध्यमः ।
अधमस्तु दशायां हि स ग्रहो ह्यधमाधमः ॥ ३५ ॥

जो ग्रह गोचर में श्रेष्ठ और अष्टकवर्ग में मध्यम हो वह दशाकाल में मध्यम होता है । जो गोचर और अष्टकवर्ग दोनों स्थान में अधम हो वह दशाफल में अधमाधम फल देने वाला हो जाता है ॥ ३५ ॥

अथ आयुर्दायविचारः–

पिण्डायुः प्रमाणम्–

नन्देन्दवो वाणयमाः शरक्ष्मा दिवाकरः पञ्चभुवः कुपक्षाः ।
नखाश्च भास्वत्प्रमुखग्रहाणां पिण्डायुपाऽब्दा निजतुङ्गगानाम् ॥ १ ॥

सूर्य आदि ग्रह अपने-अपने परमोच्चस्थान में हों तो क्रम से १९, २५, १५, १२, १५, २१, २० ये सूर्य आदि सातों ग्रह के पिण्डायु में वर्ष प्रमाण होते हैं ॥ १ ॥

आयुर्दायसाधनम्–

निजोच्चशुद्धः खचरो विशोध्यो भमण्डलात्षड्भवनोनकश्चेत् ।
यथास्थितः षड्भवनाधिकश्चेल्लिप्तीकृतः संगुणितो निजाऽब्दैः ॥२॥

तत्र खाभ्ररसचन्द्रलोचनै २१६०० रुद्धृते सति यदाप्यते फलम् ।
वर्ष-मास-दिन-नाडिकादिकं तद्धि पिण्डभवमायुरुच्यते ॥३॥

जिस ग्रह का आयुर्दाय बनाना हो उस ग्रह में उसी के उच्च राशिअंश को घटावे। शेष यदि ६ राशि से कम हो तो उसको १२ राशि में घटाकर शेष को, यदि ६ राशि से कम हो तो उसी की कला बनाकर उसको उस ग्रह के ऊपर कथित आयु प्रमाण से गुणाकर २१६०० का भाग देने से वर्ष आयुर्दाय का मान होता है, वह पिण्डायुर्दाय कहलाता है ॥ २-३ ॥

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य ९।२९।३६।५३ इसमें सूर्य के उच्च राशि-अंश घटाने से शेष ९।१९।३६।५३ इसकी कला १७३४०'।५३=१७३४१' (स्वल्पान्तर से) इसका सूर्य के वर्ष प्रमाण १९ से गुणा करने से ३२९४७९ इसमें २१६०० का भाग देने से लब्धि वर्षादि १५।३।१।१९।० यह सूर्यायुर्दाय हुआ। स्पष्ट बोध के लिए—

२१६००)३२९४७९(१५ वर्ष
२१६००
११३४७९
१०८०००
०५४७९
×१२
२१६००)६५७४८'३ मास
६४८००
९४८
×३०
२१६००)२८४४०(१ दिन
२१६००
६८४०
×६०
२१६००)४१०४००(१९ घटी
२१६००
१९४४००
१९४४००

इसी प्रकार सब ग्रहों का आयुर्दाय साधन करे ॥ २-३ ॥

गणितागतायुर्दायस्य भोक्ता–

ये धर्मकर्मनिरता विजितेन्द्रिया ये
ये पथ्यभोजनरता द्विजदेवभक्ताः ।

लोके नरा दधति ये कुलशीललीला-
स्तेषामिदं कथितमायुरुदारधीभिः ॥ ४ ॥

जो मनुष्य बचपन से ही जितेन्द्रिय, धर्म-कर्म में निरत, पथ्य भोजी, सदाचारी, ब्राह्मण और देवता का भक्त, अपने कुलाचार का पालन करने वाला होता है, वही मनुष्य गणितागत आयु या उससे भी अधिक आयु पर्यन्त जीता है, ऐसा महर्षियों ने कहा है ॥ ४ ॥

अल्पायुलक्षणम्-

ये पापलुब्धाश्चौराश्च देवब्राह्मणनिन्दकाः ।
परदाररता ये च ह्यकाले मरणं भवेत् ॥ ५ ॥

जो पापाचरण करने वाला होता है वह लोभी, चोर, देव और ब्राह्मण का निन्दक, परस्त्रीगामी होता है, उसकी अकाल मृत्यु होती है ॥ ५ ॥

आयुर्दायग्रहणविचारः-

अंशोद्भवं लग्नबलात्प्रसाध्यमायुश्च कर्मोद्भवमर्कवीर्यात् ।
नैसर्गिकं चन्द्रबलाधिकत्वादायुर्निरुक्तं हि मया विचार्य ॥ ६ ॥

जन्म समय में लग्न बली हो तो अंशायु, रवि बली हो तो कर्मायु (पिण्ड) और चन्द्र बली हो तो निसर्गायु ग्रहण करनी चाहिये ॥ ६ ॥

निसर्गायु-

विंशतिरेकं द्वावथ नवधृतिर्विंशच्च पञ्चाशत् ।
अब्दाः क्रमशो ज्ञेयाः सूर्यादीनां निसर्गभवाः ॥ ७ ॥

२०, १, २, ९, १८, २० और ५० सूर्य से आदि शनि पर्यन्त सातों ग्रहों का क्रम से निसर्गायुर्दाय प्रमाण है ॥ ७ ॥

विशेष—निसर्गायुर्दाय माने स्वभावसिद्ध आयुर्दाय है, इसमें न्यूनाधिक नहीं होता है। वास्तव में ग्रहायुर्दाय का अर्थ है, ग्रहों का दशा विभाग समय। पिण्डायुर्दाय और अंशायुर्दाय ग्रह के राश्यादि द्वारा स्पष्ट बनाया जाता है। परन्च निसर्गायु यथावत् पूरा-पूरा ही रहता है। यह आयुर्दाय सबके लिये अपने-अपने जन्मकाल से समान ही रहता है। किसी-किसी ने इसको पिण्डायु के समान उच्च द्वारा स्पष्ट क्रिया करने को कहा है, वह अयुक्त है। इसमें दशा का क्रम वराहमिहिरादि ने कहा है। यथा जन्मकाल में क्रम से—

चं.	मं.	बु.	शु.	बृ.	सू.	श.	दशाक्रमः
१	२	९	२०	१८	२०	५०	

विशेष जानकारी के लिए बृहज्जातक देखिये ॥ ७ ॥

मतान्तरेणांशायुर्दाय:—

लब्धादयो ग्रहाः स्थाप्यास्तत्रांशे दिग् (१०) विहीनता ।
शेषं त्रयं त्रिभिर्गुण्यं खाङ्कमध्ये पुनस्त्यजेत् ॥ ८ ॥
विंशोत्तरीदशावर्षैः स्वकीयैर्गुणयेद् तदा ।
भागो नवत्या (९०) दातव्यो लब्धाङ्को वर्षसंज्ञकः ॥ ९ ॥

राशि को त्याग कर ग्रह के अंशादि ग्रहण कर अंश में १० घटावे (अंश १० से कम हो तो उसमें ३० जोड़कर १० घटावे) शेष अंश, कला, विकला तीनों को ३ से गुणा करके गुणनफल को ९० में घटावे, जो शेष बचे उसको अपनी विंशोत्तरीदशावर्ष प्रमाण से गुणा करके ९० के भाग देने से लब्धि वर्षादि अंशायुर्दाय मान होता है ॥ ८-९ ॥

उदाहरण—यथा स्पष्ट सूर्य राश्यादि ९।२९।३६।५३ इसमें राशि को छोड़कर अंशादि में १० घटाकर शेष १९।३६।५३ इसको ३ से गुणा करने से ५८।५०।३९ इसको ९० में घटाने से ३१।९।२१ इसको विंशोत्तरी सूर्य दशामान ६ से गुणा करने से १८६।५६।६ इसमें ९० का भाग देने से लब्धि २।०।२७।४८।२४ वर्षादि सूर्य का अंशायुर्दाय मान हुआ ॥ ८-९ ॥

वराहमिहिरादिकथित-अंशायुर्दाय:—

"राश्यंशकला गुणिता द्वादश नवभिर्ग्रहस्य भगणेभ्यः ।
द्वादशहृतावशेषेऽब्दमासदिननाडिकाः क्रमशः" ॥ १० ॥

ग्रह की राशि, अंश, कला, विकला सबको १२ से गुणा कर फिर गुणनफल को ९ से गुणा करे, विकलादि को सवर्णन करके भगणादि बनावे, भगण १२ से अधिक हो तो उसमें १२ का भाग देकर शेष वर्षादि उस ग्रह का अंशायुर्दाय मान समझे ॥ १० ॥

उदाहरण—स्पष्टग्रह ३।१५।१४।१० इसको १२ से गुणा करने से ४२।२।५०।० इसको फिर ९ से गुणा करने से राश्यादि ३७८।२५।३०।० में केवल राशि स्थान को १२ से भाग देकर भगणादि ३१।६।२५।३०।० को पुनः भगण (१२) से भाग देने से ७।६।२५।३०।० यह वर्षादि ग्रह का आयुर्दाय हुआ ॥ १० ॥

लग्नायुर्दाये विशेष:-

होरादायोऽप्येवं बलयुक्ताऽन्यानि राशितुल्यानि ।
वर्षाणि संप्रयच्छन्त्यनुपाताच्चांशकादिफलम् ॥ ११ ॥

इसी प्रकार राश्यादि लग्न से लग्न का भी आयुर्दाय बनावे, यदि लग्न बली (स्वामी बुध-गुरु से दृष्ट-युत) हो तो राशि तुल्य और भी वर्ष होते

हैं, तथा लग्न भुक्त अंश पर त्रैराशिक द्वारा अनुपात से मासादि साधन करना चाहिये ॥ ११ ॥

अंश से मासादि अनुपात इस प्रकार है कि, ३० अंश में १२ मास तो लग्न भुक्तांशादि में क्या ?

$$\text{लब्धि मासादि} = \frac{१२ \times \text{लग्नांश}}{३०} = \frac{२ \times \text{लग्न भुक्तांश}}{५}$$

इसीलिये जातक पद्धति में कहा गया है कि--

"द्विनिघ्नशरहृद्भागादितो मासयुक् ।"

भागादि को २ से गुणाकर ५ का भाग देकर लब्धि मासादि समझना। अथवा भुक्तांशादि को कला बनाकर १५० के भाग देने से मासादि होता है ॥ ११ ॥

आयुर्दाये विशेषसंस्कारः-

वर्गोत्तमस्वराशिद्रेष्काणनवांशके सकृद्द्विगुणम् ।
वक्रोच्चयोस्त्रिगुणितं द्वित्रिगुणत्वे सकृत्त्रिगुणम् ॥ १२ ॥

जो ग्रह वर्गोत्तम नवमांश, स्वराशि, स्वद्रेष्काण इनमें किसी एक या अनेक वर्ग में हो तथापि आयुर्दाय को केवल एक बार दूना कर देना चाहिये। तथा जो वक्र या अपने उच्च में (एक में या दोनों में) हो तो उसके आयुर्दाय को एक बार त्रिगुणित कर देना चाहिये, इस प्रकार उसका आयुर्दाय स्पष्ट होता है ॥ १२ ॥

अन्यसंस्कारः-

शत्रुक्षेत्रे त्र्यंशं नीचेऽर्धं सूर्यलुप्तकिरणाश्च ।
क्षेप्यर्यान्त स्वाद्दायान्नस्तं यातौ रविज-शुक्रौ ॥ १३ ॥

जो ग्रह शत्रुराशि में हो उसके गणितागत आयुर्दाय में तृतीयांश घटा देना तथा जो नीच में हो या शनि-शुक्र से भिन्न (अन्य) ग्रह अस्त हो उसके आयुर्दाय में आधा घटा देने से स्पष्ट होता है, अन्यथा गणितागत ही रहता है। शनि-शुक्र अस्त भी हों तो उससे हानि नही होती है ॥१३॥

इति आयुर्दाय-निरूपणम् ।

अथ पञ्चमोऽध्यायः [५]

दशाविचारः–

प्रणम्य सर्वज्ञमनन्यचेतसं लसत्तमं ज्ञानमणिं महोदधिम् ।
दशाफलं वच्मि महर्षिभाषितं स्वबोधरूपं स्वगुरूपदेशात् ॥१॥

जो सर्वज्ञ, स्वतन्त्र, प्रकाश रूप, ज्ञानमय, अपार है ऐसे परमेश्वर को प्रणाम करके गुरुओं के उपदेश से मुनियों से कहे हुए ग्रहों के दशाफल को कहता हूँ ॥ १ ॥

युगानुसारदशा निरूपणम्–

कृते नैसर्गिकायुः स्यात् त्रेतायां पैण्डमेव च ।
अंशायुर्द्वापरे प्रोक्तं नक्षत्रायुः कलौ युगे ॥ २ ॥

कृत (सत्य) युग में निसर्गदशा, त्रेता में पिण्डायुर्दशा, द्वापर में अंशायुर्दशा और कलियुग में नक्षत्रदशा फलप्रद कही गयी है ॥ २ ॥

विंशोत्तरीयां ग्रहदशामानम्–

सूर्ये विंशतिमो भागः शशिनि द्वादशः (१२) स्मृतः ।
सूर्यषड्भागयुग्भौमदशा चाऽन्तर्दशा भवेत् ॥ ३ ॥
आदित्यात् त्रिगुणो राहौ रविचन्द्रयुतो गुरौ ।
सूर्यस्य द्विगुणो भौमे मिलितस्तु शनौ भवेत् ॥ ४ ॥
बुधे चन्द्रयुतो भौमः केतौ मङ्गलवत् सदा ।
चन्द्रस्य द्विगुणः शुक्रो दशामानं प्रकीर्तितम् ॥ ५ ॥

परमायुर्दाय (१२०) वर्ष का २० वाँ भाग (६ वर्ष) सूर्य की, परमायु का १२ वाँ भाग (१०) वर्ष चन्द्रमा की, सूर्य के दशामान के षष्ठांश १ वर्ष सूर्य में जोड़ने से (७ वर्ष) मङ्गल की दशा होती है। सूर्य की दशा त्रिगुणित = (१८ वर्ष) राहु की, सूर्य और चन्द्र की दशा के योग तुल्य (१६ वर्ष) गुरु की, सूर्य दशा को दूना कर मङ्गल दशा में जोड़ने से (१९ वर्ष) शनि की, चन्द्र और मङ्गल की दशा जोड़ने से (१७ वर्ष) बुध की, मङ्गल की दशा तुल्य केतु की और चन्द्र दशा द्विगुणित करने से शुक्र की दशा होती है। इसी प्रकार दशा के भाग करके अन्तर्दशादि भी समझनी चाहिये ॥ ३-५ ॥

सिद्धग्रहाणां दशामानम्-

षड् दश सप्ताष्टादश षोडश नन्देन्दवो मुनिशशाङ्काः ।
सप्त नखा वर्षाणि हि रव्यादीनां यथाक्रमतः ॥ ६ ॥

सूर्य की दशा ६ वर्ष, चन्द्रमा की १०, मंगल की ७, राहु की १८, बृहस्पति की १६, शनि की १९, बुध की १७, केतु की ७ और शुक्र की २० वर्ष दशा होती है ॥ ६ ॥

जन्मसमये ग्रहदशाज्ञानम्-

कृत्तिकामवधिं कृत्वा भरण्यवधि गण्यते ।
विंशोत्तरीदशाचक्रं षट्त्रिंशद्भिश्च कोष्ठकैः ॥ ७ ॥

कृत्तिका से आरम्भ करके भरणी तक ९, ९ नक्षत्र ३ आवृत्ति करके ३६ कोष्ठ के चक्र में (अर्थात् ९, ९ कोष्ठ की पंक्ति में एक में ग्रह और ३ पंक्ति नक्षत्र) रखने से दशापति का ज्ञान होता है ।

यथा चक्रम्-

सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.
कृ.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	पु.	श्ले.	म.	पू.फा.
उ. फा.	ह.	चि.	स्वा	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू.षा.
उ. षा.	श्र.	ध.	श.	पू. भा.	उ.भा.	रे.	अ.	भ
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०

जन्म समय में जो नक्षत्र हो वह जिस ग्रह के नीचे हो उसी ग्रह की प्रथम दशा होती है ॥ ७ ॥

जन्मादौ दशाभुक्तभोग्यनिर्णयः-

दशाब्दमानेन हतं भयातं भभोगमानेन हृतं फलं यत् ।
वर्षादिकं भुक्तमुशन्ति धीरा भोग्यं दशाब्दान्तरितं दशायाः ॥

जिस नक्षत्र में जन्म हो उस नक्षत्र के पलमय भयात् को उस ग्रह के दशामान से गुणा करके भभोग घटी से भाग देकर लब्धि वर्षादि दशा का भुक्त होता है। उसको दशामान में घटाने से दशा का भोग्य वर्षादि समझना। अर्थात् जन्मकाल के आगे उतने वर्षादि उस ग्रह की दशा तुल्य, उससे आगे अगले ग्रहों की, क्रम से अपने-अपने वर्ष के तुल्य दशा होती है ॥

उदाहरण–जैसे किसी का जन्म भरणी नक्षत्र में हुआ हो, तो उपरोक्त चक्रानुसार शुक्र की महादशा हुई। यदि भरणी का भयात् १४।१५ घटी-पल है और भभोग घटी ५७ है तो पलमय भयात् ८५५ को शुक्र के दशावर्ष मान २० से गुणा करने से १७००० इसमें पलमय भभोग ३४२० के भाग देने से लब्धि वर्ष ५ हुआ। यह जन्म-काल में शुक्र के भुक्त वर्ष में घटाने से जन्म से आगे शुक्र का भोग्य दशावर्ष मान हुआ।

जन्मनक्षत्राद्दशाज्ञानाय सरलप्रकारः–

दास्रादितो जन्मभसंख्यका या द्व्यूनिता साङ्कहतावशेषात् ।
सू-चं-कु-रा-जी-श-बु-के-शु पूर्वाः दशाधिपाः संकथिता मुनीन्द्रैः ॥

अश्विनी से जन्मनक्षत्र तक जो संख्या हो, उसमें २ घटाकर शेष में ९ का भाग देने से १ आदि शेष में क्रम से सू (सूर्य), चं (चन्द्र), कु (कुज), रा (राहु)), जी (गुरु), श (शनि), बु (बुध), के (केतु), शु, (शुक्र) ये दशाधिप होते हैं।

इसका स्पष्ट उदाहरण––जैसे किसी का सं० १९८३ में मृगशिरा में जन्म है। भयात् ५८।१५ भभोग ५१।३१ तथा स्पष्ट सूर्य ९।२९।३६।५३ है। वहाँ जन्म नक्षत्र (मृगशिरा) तक संख्या ५ में २ घटाने से शेष ३ है, अतः (सू० चं. कु० इत्यादि गणना से) तीसरी कुज (मंगल) की दशा हुई।

अब मंगल की दशा-संख्या ७ से पलमय भयात् ३४९५ को गुणा करने से २४४६५ इसमें पलमय भभोग ३५७१ का भाग देने से लब्धि वर्षादि ६।१०।६।२२।५ भुक्त दशामान हुआ। इसको दशामान ७ में घटाने से भोग्यदशामान वर्षादि ०।१।२३।३७।५५ हुआ। इसको जन्म के संवत् को वर्ष और सूर्य-राश्यादि को मासादि मान कर जोड़ना, फिर आगे राहु आदि ग्रहों के क्रम से वर्ष मान जोड़ कर दशाचक्र बनाना चाहिए।

यथा महादशाचक्रम्–

मंगलभुक्त	मं.	रा.	गु.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.
६	०	१८	१६	१९	१७	७	२०	६	१०
१०	१								
६	२३								
२२	३७								
५	५५								
जन्मसंवत् १९८३	१९८३	२००१	२०१७	२०३६	२०५३	२०६०	२०८०	२०८६	२०९३
सूर्य									
९	११	११	११	११	११	११	११	११	११
२९	२३	२३	२३	२३	२३	२३	२३	२३	२३
३६	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
५३	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८

दशायां अन्तर्दशासाधनम्-

दशा दशा हता कार्या दशभिर्भागमाहरेत् ।
यल्लब्धं स भवेन्मासस्त्रिघ्नं शेषं दिनं भवेत् ॥ ८ ॥

ग्रह के दशामान को प्रत्येक ग्रह के दशामान से पृथक्-पृथक् गुणाकर गुणनफल में १० का भाग देने से लब्धि मास और शेष भाग को ३ से गुणा कर दिनादि अन्तर्दशा का मान होता है ॥ ८ ॥

उदाहरण--जैसे सूर्य की दशा में सूर्य आदि सब ग्रहों की अन्तर्दशा का मान जानना है, तो सूर्य दशा वर्ष ६ को सूर्य दशामान से गुणा करने से ३।६ इसमें १० के भाग देने से लब्धि ३ मास, शेष ६ को ३ से गुणा करने से १८ दिन हुए। अतः सूर्य की दशा में सूर्य की अन्तर्दशा मासादि ३।१८ हुई एवं अन्य ग्रहों की दशा से भी अन्य ग्रहों की अन्तर्दशा समझें ॥ ८ ॥

सूर्य की दशा में सब ग्रहों की अन्तर्दशा-

ध्रुव	सू.	चं.	मं.	रा.	गु.	श.	बु.	के.	शु.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१
०	३	६	४	१०	९	११	१०	४	०
१८	१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०

चन्द्र की दशा में अन्तर्दशा

ध्रुव	चं.	मं.	रा.	गु.	श.	बु.	के.	शु.	सू.
०	०	०	१	१	१	१	०	१	०
१	१०	७	६	४	७	५	७	८	६

मङ्गल की दशा में अन्तर्दशा-

ध्रुव	मं.	रा.	गु.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.
०	०	१	०	१	०	०	१	०	०
०	४	०	११	१	११	४	२	४	७
२१	२७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०

राहु की दशा में अन्तर्दशा-

ध्रुव	रा.	गु.	श.	बु.	के.	शु.	सू,	च.	मं.
१	२	२	२	२	१	३	०	१	१
१	८	४	१०	६	०	०	१०	६	०
२४	१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८

बृहस्पति की दशा में अन्तर्दशा-

ध्रुव	गु.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.
०	२	२	२	०	२	०	१	०	२
१	१	६	३	११	८	९	४	११	४
१८	१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४

शनि की दशा में अन्तर्दशा-

ध्रुव	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	गु.
०	३	२	१	३	०	१	१	२	२
१	०	८	१	२	११	७	१	१०	६
१८	३	९	९	०	१२	०	९	६	१२

बुध की दशा में अन्तर्दशा-

ध्रुव	बु.	के.	शु,	सू.	चं.	मं.	रा.	गु.	श.
०	२	०	२	०	१	०	२	२	२
१	४	११	१०	१०	५	११	६	३	८
२१	२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९

केतु की दशा में अन्तर्दशा-

ध्रुव	के.	शु	सू.	चं.	म.	रा.	गु.	श.	बु.
०	०	१	०	०	०	१	०	१	०
०	४	२	४	७	४	०	११	५	११
२१	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७

शुक्र की दशा में अन्तर्दशा-

ध्रुव	शु.	सू.	चं.	मं	रा.	गु.	श	बु.	के.
०	३	१	१	१	३	२	३	२	१
२	४	०	८	२	०	८	२	१०	२

अन्तर्दशायां प्रत्यन्तर्दशासाधनम्-

स्वान्तर्दशाद्युवृन्दं च हन्यात्स्वाब्दैर्ग्रहस्य च।
त्रिंशोत्तरशतेनाप्तं (१२०) घस्रा घट्योऽवशेषकम् ॥ ९ ॥

जिस अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा जाननी हो उसको दिनात्मक बनाकर फिर उसको पृथक्-पृथक् ग्रहों के दशामान से गुणाकर १२० के भाग देने से लब्धि दिन और शेष ६० से गुणा कर १२० के भाग देने से लब्धि घटी होती है ॥ ९ ॥

उदाहरण--यथा सूर्य की दशा में सूर्य की अन्तर्दशा मासादि ३।१८ है तो इसको दिनात्मक बनाने से १०८ हुआ। इसको सूर्य के दशामान से गुणा करने से ६४८, इसमें १२० का भाग देने से लब्धि ५ दिन, शेष ४८ को ६० से गुणा कर १२० का भाग देने से लब्धि घटी २४ हुई। इस प्रकार अन्य ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा साधन करे ॥ ९ ॥

अथ विंशोत्तरी सूर्यमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.
र.	०	०	५	२४	सो.	०	०	१५	०	मं.	०	०	७	२१
सो.	०	०	९	०	मं.	०	०	१०	३०	रा.	०	०	१८	५४
मं.	०	०	६	१८	रा.	०	०	२७	०	गु.	०	०	१६	४८
रा.	०	०	१६	१२	गु.	०	०	२४	०	श.	०	०	१९	५७
गु.	०	०	१४	२४	श.	०	०	२८	३०	बु.	०	०	१७	५१
श.	०	०	१७	६	बु.	०	०	२५	३०	के.	०	०	७	२१
बु.	०	०	१५	१८	के.	०	०	१०	३०	शु.	०	०	२१	०
के.	०	०	६	१८	शु.	०	१	०	०	र.	०	०	६	१८
शु.	०	०	१८	०	र.	०	०	९	०	सो.	०	०	१०	०

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.
रा.	०	१	१८	३६	गु.	०	१	८	२४	श.	०	१	२४	९
गु.	०	१	१३	१२	श.	०	१	१५	३६	बु.	०	१	१८	२७
श.	०	१	२१	१८	बु.	०	१	१०	४८	के.	०	०	१९	५७
बु.	०	१	१५	५४	के.	०	०	१६	४८	शु.	०	१	२७	०
के.	०	०	१८	५४	शु.	०	१	१८	०	र.	०	०	१७	६
शु.	०	१	२४	०	र.	०	०	१४	२४	सो.	०	०	२८	२०
र.	०	०	१६	१२	सो.	०	०	२४	०	मं.	०	०	१९	५७
सो.	०	०	२७	०	मं.	०	०	१६	४८	रा.	०	१	२१	१८
मं.	०	०	१८	५४	रा.	०	१	१३	१२	गु.	०	१	१५	३६

अथ विंशोत्तरी सूर्यमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
बु.	०	१	१३	२१
के.	०	०	१७	५१
शु.	०	१	२१	०
र.	०	०	१५	१८
सो.	०	०	२५	३०
मं.	०	०	१७	५
रा.	०	१	१५	५
गु.	०	१	१०	४८
श.	०	१	१८	२७

अथ केत्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
के.	०	०	७	२१
शु.	०	०	२१	०
र.	०	०	६	१८
सो.	०	०	१०	३०
मं.	०	०	७	२१
रा.	०	०	१८	५४
गु.	०	०	१६	४८
श.	०	०	१९	५७
बु.	०	०	१७	५१

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा	दि.	घ.
शु.	०	२	०	०
र.	०	०	१८	०
सो.	०	१	०	०
मं.	०	०	२१	०
रा.	०	१	२४	०
गु.	०	१	१८	०
श.	०	१	२७	०
बु.	०	१	२१	०
के.	०	०	२१	०

अथ विंशोत्तरी चन्द्रमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
सो.	०	०	२५	०
मं.	०	०	१७	३०
रा.	०	१	१५	०
गु.	०	१	१०	०
श.	०	१	१७	३०
बु.	०	१	१२	३०
के.	०	०	१७	३०
शु.	०	१	२०	०
र.	०	०	१५	०

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
मं.	०	०	१२	१५
रा.	०	१	१	३०
गु.	०	०	२८	०
श.	०	१	३	१५
बु.	०	०	२९	५
के.	०	०	१२	१५
शु.	०	१	५	०
र.	०	०	१०	३०
सो.	०	०	१७	३०

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
रा.	०	२	२१	०
गु.	०	२	१२	०
श.	०	२	२५	३०
बु.	०	२	१६	३०
के.	०	१	१	३०
शु.	०	३	०	०
र.	०	०	२७	०
सो.	०	१	१५	०
मं.	०	१	१	३०

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
गु.	०	२	४	०
श.	०	२	१६	०
बु.	०	२	८	०
के.	०	०	२८	०
शु.	०	२	२०	०
र.	०	०	२४	०
सो.	०	१	१०	०
मं.	०	०	२८	०
रा.	०	२	१२	०

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
श.	०	३	०	१५
बु.	०	२	२०	४५
के.	०	१	३	१५
शु.	०	३	५	०
र.	०	०	२८	३०
सो.	०	१	१७	३०
मं.	०	१	३	१५
रा.	०	२	२५	३०
गु.	०	२	१६	०

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
बु.	०	२	१२	१५
के.	०	०	२९	४५
शु.	०	२	२५	०
र.	०	०	२५	३०
सो.	०	१	१२	३०
मं.	०	०	२९	४५
रा.	०	२	१६	३०
गु.	०	२	८	०
श.	०	२	२०	४५

अथ विंशोत्तरी चन्द्रमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ केत्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
के.	०	०	१२	१५
शु.	०	१	५	०
र.	०	०	१०	३०
सो.	०	०	१७	३०
मं.	०	०	१२	१५
रा.	०	१	१	३०
गु.	०	०	२८	०
श.	०	१	३	१५
बु.	०	०	२९	४५

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
शु.	०	३	१०	०
र.	०	१	०	०
सो.	०	१	२०	०
मं.	०	१	५	०
रा.	०	३	०	०
गु.	०	२	२०	०
श.	०	३	५	०
बु.	०	२	२५	०
के.	०	१	५	०

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
र.	०	०	९	०
सो.	०	०	१५	०
मं.	०	०	१०	३०
रा.	०	०	२७	०
गु.	०	०	२४	०
श.	०	०	२८	३०
बु.	०	०	२५	३०
के.	०	०	१०	३०
शु.	०	१	०	०

अथ विंशोत्तरी भौममहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
मं.	०	०	८	३४
रा.	०	०	२२	२
गु.	०	०	१९	३६
श.	०	०	२३	१६
बु.	०	०	२०	४९
के.	०	०	८	३४
शु.	०	०	२४	३०
र.	०	०	७	२१
सो.	०	०	१२	१५

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
रा.	०	१	२६	४२
गु.	०	१	२०	२४
श.	०	१	२९	५१
बु.	०	१	२३	३३
के.	०	०	२२	३
शु.	०	२	३	०
र.	०	०	१८	५४
सो.	०	१	१	३०
मं.	०	०	२२	३

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

	व.	मा.	दि.	घ.
गु.	०	१	१४	४८
श.	०	१	२३	१२
बु.	०	१	१७	३६
के.	०	०	१९	३६
शु.	०	१	२६	०
र.	०	०	१६	४८
सो.	०	०	२८	०
मं.	०	०	१९	३६
रा.	०	१	२०	२४

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि

	मा.	दि.	घ.	प.
श.	२	३	१०	३०
बु.	१	२६	३१	३०
के.	०	२३	१६	३०
शु.	२	६	३०	०
र.	०	१९	५७	०
सो.	१	३	१५	०
मं.	०	२३	१६	०
रा.	१	२९	५१	०
गु.	१	२३	१२	०

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि

	मा.	दि.	घ.	प.
बु.	१	२०	३४	३०
के.	०	२०	४९	३०
शु.	१	२९	३०	०
र.	०	१७	५१	०
सो.	०	२९	४५	०
मं.	०	२०	४९	३०
रा.	१	२३	३३	०
गु.	१	१७	३६	०
श.	१	२६	३१	३०

अथ केत्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

	मा.	दि.	घ.	प.
के.	०	८	३४	३०
शु.	०	२४	३०	०
र.	०	७	२१	०
सो.	०	१२	१५	०
मं.	०	८	३४	३०
रा.	०	२२	३	०
गु.	०	१९	३६	०
श.	०	२३	१६	३०
बु.	०	२०	४९	३०

अथ विंशोत्तरी भौममहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.
शु.	०	२	१०	०	र.	०	०	६	१८	सो.	०	०	१७	३०
र.	०	०	२१	०	सो.	०	०	१०	३०	मं.	०	०	१२	१५
सो.	०	१	५	०	मं.	०	०	७	२१	रा.	०	१	१	३०
मं.	०	०	२४	३०	रा.	०	०	१८	५४	गु.	०	०	२८	०
रा.	०	२	३	०	गु.	०	०	१६	४८	श.	०	१	३	१५
गु.	०	१	२६	०	श.	०	०	१९	५७	बु.	०	०	२९	४५
श.	०	२	६	३०	बु.	०	०	१७	५१	के.	०	०	१२	१५
बु.	०	१	२९	३०	के.	०	०	७	२१	शु.	०	१	५	०
के.	०	०	२४	३०	शु.	०	०	२१	०	र.	०	०	१०	३०

अथ विंशोत्तरी राहुमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.
रा.	०	४	२५	४८	गु.	०	३	२५	१२	श.	०	५	१२	२७
गु.	०	४	९	३६	श.	०	४	१६	४८	बु.	०	४	२५	२१
श.	०	५	३	५४	बु.	०	४	२	२४	के.	०	१	२९	५१
बु.	०	४	१७	४२	के.	०	१	२०	२४	शु.	०	५	२१	०
के.	०	१	२६	४२	शु.	०	४	२४	०	र.	०	१	२१	१८
शु.	०	५	१२	०	र.	०	१	१३	१२	सो.	०	२	२५	३०
र.	०	१	१८	३६	सो.	०	२	१२	०	मं.	०	१	२९	५१
सो.	०	२	२१	०	मं.	०	१	२०	२४	रा.	०	५	३	५४
मं.	०	१	२६	४२	रा.	०	४	९	३६	गु.	०	४	१६	४८

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ केत्वन्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.		व	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.
बु.	०	४	१०	३	के.	०	०	२२	३	शु.	०	६	०	०
के.	०	१	२३	३३	शु.	०	२	३	०	र.	०	१	२४	०
शु.	०	५	३	०	र.	०	०	१८	५४	सो.	०	३	०	०
र.	०	१	१५	५४	सो.	०	१	१	३०	मं.	०	२	३	०
सो.	०	२	१६	३०	मं.	०	०	२२	३	रा.	०	५	१२	०
म.	०	१	२३	३३	रा.	०	१	२६	४२	बु.	०	४	२४	०
रा.	०	४	१७	४२	गु.	०	१	२०	२०	श.	०	५	२१	०
गु.	०	४	२	२४	श.	०	१	२९	५१	बु.	०	५	३	०
श.	०	४	२५	२१	बु.	०	१	२३	३३	के.	०	२	३	०

अथ विंशोत्तरी राहुमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.
र.	०	०	१६	१२	सो.	०	१	१५	०	मं.	०	०	२२	३
सो.	०	०	२७	०	मं.	०	१	१	३०	रा.	०	१	२६	४२
मं.	०	०	१८	५	रा.	०	२	२१	०	गु.	०	१	२०	२४
रा.	०	१	१८	३६	गु.	०	२	१९	०	श.	०	१	२९	५१
गु.	०	१	१३	१२	श.	०	२	२५	३०	बु.	०	१	२३	३३
श.	०	१	२१	१८	बु.	०	२	१६	३०	के.	०	०	२२	३
बु,	०	१	१५	५४	के.	०	१	१	३०	शु.	०	२	३	०
के.	०	०	१८	५४	शु.	०	३	०	०	र.	०	०	१८	५४
शु.	०	१	२४	०	र.	०	०	२७	०	सो.	०	१	१	३०

अथ विंशोत्तरी गुरुमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ		व	मा.	दि.	घ.
गु.	०	२	१२	२४	श.	०	४	२४	२	बु.	०	३	२५	३६
श.	०	४	१	३६	बु.	०	४	९	१२	के.	०	१	१३	३६
बु.	०	३	१८	४८	के.	०	१	२३	१२	शु.	०	४	१६	०
के.	०	१	१४	४८	शु.	०	५	२	०	र.	०	१	१०	४८
शु.	०	४	८	०	र.	०	१	१५	३६	सो.	०	२	८	०
र.	०	१	८	२४	सो.	०	२	१६	०	मं.	०	१	१७	३६
सो.	०	२	४	०	मं.	०	१	२३	१२	रा.	०	४	२	२
मं.	०	१	१४	४८	रा.	०	४	१६	४८	गु.	०	३	१८	४८
रा	०	३	२५	१२	गु.	०	४	१	३६	श.	०	४	९	१२

अथ केत्वन्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.
के.	०	०	१९	३६	शु.	०	५	१०	०	र.	०	०	१४	२४
शु.	०	१	२६	०	र.	०	१	१८	०	सो.	०	०	२४	०
र.	०	०	१६	४८	सो.	०	२	२०	०	मं.	०	०	१६	४८
सो.	०	०	२८	०	मं.	०	१	२५	०	रा.	०	१	१३	१२
मं	०	०	१९	३६	रा.	०	४	२४	०	गु.	०	१	८	२४
रा.	०	१	२०	२४	गु.	०	४	८	०	श.	०	१	१५	३६
गु.	०	१	१४	४८	श.	०	५	२	०	बु.	०	१	१०	४८
श.	०	१	२३	१२	बु.	०	४	१५	०	के.	०	०	१६	४८
बु.	०	१	१७	३६	के.	०	१	२६	०	शु.	०	१	१८	०

अथ विंशोत्तरी गुरुमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा	दि.	घ.	अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.	अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.
सो	०	१	१०	०	मं	०	०	१९	३६	रा.	०	४	९	३६
मं.	०	०	२८	०	रा.	०	१	२०	२४	गु.	०	३	२५	१२
रा.	०	२	१२	०	गु	०	१	१४	४८	श.	०	४	१६	४८
गु.	०	२	४	०	श.	०	१	२३	१२	बु.	०	४	२	२४
श.	०	२	१६	०	बु	०	१	१७	३६	के.	०	१	२०	२४
बु.	०	२	८	०	के.	०	०	१९	३६	शु.	०	४	२४	०
के.	०	०	२८	०	शु.	०	१	२६	०	र.	०	१	१३	१२
शु.	०	२	२०	०	र.	०	०	१६	४८	सो.	०	२	१२	०
र.	०	०	२४	०	सो.	०	०	२८	०	मं.	०	१	२०	२४

अथ विंशोत्तरी शनिमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.	प.	अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.	प.	अथ केत्वन्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.	प.
श.	०	५	२१	१८	३०	बु.	०	४	१७	१६	३०	के.	०	०	२३	१६	३०
बु.	०	५	३	२५	३०	के.	०	१	२६	३१	३०	शु.	०	२	६	३०	०
के.	०	२	३	१०	३०	शु.	०	५	११	३०	०	र.	०	०	१९	५७	०
शु.	०	६	०	३०	०	र.	०	१	१८	२७	०	सो.	०	१	३	१५	०
र.	०	१	२४	९	०	सो.	०	२	२०	४५	०	मं.	०	०	२३	१६	३०
सो.	०	३	०	११	०	मं.	०	१	२६	३१	३०	रा.	०	१	२९	५१	०
मं.	०	२	३	१०	३०	रा.	०	४	२५	३१	०	गु.	०	१	२३	१२	०
रा.	०	५	१२	२७	०	गु.	०	४	९	१२	०	श.	०	२	३	१०	३०
गु.	०	४	२४	२४	०	श.	०	५	३	२५	३०	बु.	०	१	२६	३१	३०

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.	अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.	अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.
शु.	०	६	१०	०	र.	०	०	१७	६	सो.	०	१	१७	३०
र.	०	१	२७	०	सो.	०	०	२८	३०	मं.	०	१	३	१५
सो.	०	३	५	०	मं.	०	०	१९	५७	रा.	०	२	२५	३०
मं.	०	२	६	३०	रा.	०	१	२१	१८	गु.	०	२	१६	०
रा.	०	५	२१	०	गु	०	१	१५	३६	श.	०	३	०	१५
गु.	०	५	२	०	श.	०	१	२४	९	बु.	०	२	२०	४५
श.	०	६	०	३०	बु.	०	१	१८	२७	के.	०	१	३	१५
बु.	०	५	११	३०	के	०	०	१९	५७	शु.	०	३	५	०
के.	०	२	६	३०	श.	०	१	२७	०	र.	०	०	२८	३०

अथ विंशोत्तरी शनिमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि						अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.	प		व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि	घ.
मं.	०	०	२३	१६	३०	रा.	०	५	३	५४	गु.	०	४	१	३६
रा.	०	१	२९	५१	०	गु.	०	४	१६	४८	श.	०	४	२४	२४
गु.	०	१	२३	१२	०	श.	०	५	१२	२७	बु.	०	४	९	१२
शु.	०	२	३	१०	०	बु.	०	४	२५	२१	के.	०	१	२३	१२
बु.	०	१	२६	३१	३०	के.	०	१	२९	५१	शु.	०	५	२	०
के.	०	०	२३	१६	३०	शु.	०	५	२१	०	र,	०	१	१५	३६
शु.	०	२	६	३०	०	र.	०	१	२१	१०	सो.	०	२	१६	०
र.	०	०	१९	५७	०	सो.	०	२	२५	३०	मं.	०	१	२३	१२
सो.	०	१	३	१५	०	मं.	०	१	२९	५१	रा.	०	४	१६	४८

अथ विंशोत्तरी बुधमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि						अथ केत्वन्तरे प्रत्यन्तराणि						अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.	प.		व.	का.	दि.	घ.	प.		व.	मा.	दि.	घ.
बु.	०	४	२	४९	३०	के.	०	०	२०	४९	३०	शु.	०	५	२०	०
के.	०	१	२०	३४	३०	शु.	०	१	२९	३०	०	र.	०	१	२१	०
शु.	०	४	२४	३०	०	र.	०	०	१७	५१	०	सो.	०	२	२५	०
र.	०	१	१३	२१	०	सो.	०	०	२९	४५	०	मं.	०	१	२९	३०
सो.	०	२	१२	१५	०	मं.	०	०	२०	४९	३०	रा.	०	५	३	०
मं.	०	१	२०	३४	३०	रा	०	१	२३	३३	०	गु.	०	४	१६	०
रा.	०	४	१०	३	०	गु.	०	१	१७	३६	०	श.	०	५	११	३०
गु.	०	३	२५	३६	०	श.	०	१	२६	३१	३०	बु.	०	४	२४	३०
श.	०	४	१७	१६	३०	बु.	०	१	२०	३४	३०	के,	०	१	२३	३०

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि					
	व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.	प.
र.	०	०	१५	१८	सो.	०	१	१२	३०	मं.	०	०	२०	४९	३०
सो.	०	०	२५	३०	मं.	०	०	२९	४५	रा.	०	१	२३	३३	०
मं.	०	०	१७	५१	रा.	०	२	१६	३०	गु.	०	१	१७	३६	०
रा.	०	१	१५	५४	गु.	०	२	८	०	श.	०	१	२६	३१	३०
गु.	०	१	१०	४८	श.	०	२	२०	४५	बु.	०	१	२०	३४	३०
श.	०	१	१८	२७	बु.	०	२	१२	१५	के.	०	०	२०	४९	३०
बु.	०	१	१३	२१	के.	०	०	२९	४५	शु.	०	१	२९	३०	०
के.	०	०	१७	५१	शु.	०	२	२५	०	र.	०	०	१७	५१	०
शु.	०	१	२१	०	र.	०	०	२५	३०	सो.	०	०	२९	४५	०

अथ विंशोत्तरी बुधमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.
रा.	०	४	१७	४२
गु.	०	४	२	२४
श.	०	४	२५	२१
बु.	०	४	१०	३
के.	०	१	२३	३३
शु.	०	५	३	०
र.	०	१	१५	५१
सो.	०	२	१६	३०
मं.	०	२	२३	३३

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि	घ.
गु.	०	३	१८	४०
श.	०	४	९	१२
बु.	०	३	२५	३६
के.	०	१	१७	३६
शु	०	४	१६	०
र.	०	१	१०	४८
सो.	०	२	८	०
मं.	०	१	१७	३६
रा.	०	४	२	२४

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.	प.
श.	०	५	३	२५	३०
बु.	०	४	१७	१६	३०
के.	०	१	२६	३१	३०
शु.	०	५	११	३०	०
र.	०	१	१८	२७	०
सो.	०	२	२०	४५	०
म.	०	१	२६	३१	३०
रा.	०	४	२५	२१	०
गु.	०	४	९	१२	०

अथ विंशोत्तरी केतुमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ केत्वन्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.	प.
के.	०	०	८	३४	३०
शु.	०	०	२४	३०	०
र.	०	०	७	२१	०
सो.	०	०	१२	१५	०
मं.	०	०	८	३४	३०
रा	०	०	२२	३	०
गु.	०	०	१९	३६	०
श.	०	०	२३	१६	३०
बु.	०	०	२०	४९	३०

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ
शु.	०	२	१०	०
र.	०	०	२१	०
सो	०	१	५	०
मं.	०	०	२४	३०
रा.	०	२	३	०
गु.	०	१	२६	०
श.	०	२	६	३०
बु.	०	१	२९	३०
के.	०	०	२४	३०

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.
र.	०	०	६	१८
सो.	०	०	१०	३०
मं.	०	०	७	२१
रा.	०	०	१८	५४
गु.	०	०	१६	४८
श.	०	०	१९	५७
बु.	०	०	१७	५१
के	०	०	७	२१
शु.	०	०	२१	०

अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.
सो.	०	०	१७	३०
मं.	०	०	१२	१५
रा.	०	१	१	३०
गु.	०	०	२८	०
श.	०	१	३	१५
बु.	०	०	२९	४५
के.	०	०	१२	१५
शु.	०	१	५	०
र.	०	०	१०	३०

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.	प
मं.	०	०	८	३४	३०
रा.	०	०	२२	३	०
गु.	०	०	१९	३६	०
श.	०	०	२३	१६	३०
बु.	०	०	२०	४९	३०
के.	०	०	८	३४	३०
शु	०	०	२४	३०	०
र.	०	०	७	२१	०
सो.	०	०	२१	१५	०

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि	व.	मा.	दि.	घ.
रा.	०	१	२६	४२
गु.	०	१	२०	२४
श.	०	१	२९	५१
बु.	०	१	२३	३३
के.	०	०	२२	३
शु.	०	२	३	०
र.	०	०	१८	५४
सो.	०	१	१	३०
मं.	०	०	२२	३

अथ विंशोत्तरी केतुमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा	दि	घ.
गु.	०	१	१४	४८
श.	०	१	२३	१२
बु.	०	१	१७	३६
के.	०	०	१९	३६
शु.	०	१	२६	०
र.	०	०	१६	४८
सो	०	०	२८	०
मं.	०	०	१९	३६
रा.	०	१	२०	२४

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि					
	व.	मा.	दि.	घ.	प.
श.	०	२	३	१०	३०
बु.	०	१	२६	३१	३०
के.	०	०	२३	१६	३०
शु.	०	२	६	३०	०
र.	०	०	१९	५७	०
सो.	०	१	३	१५	०
मं.	०	०	२३	१६	३०
रा.	०	१	२९	५१	०
गु.	०	१	२४	१२	०

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि					
	व.	मा.	दि.	घ.	प
बु	०	१	२०	३४	३०
के.	०	०	२०	४९	३०
शु.	०	१	२९	३०	०
र.	०	०	१७	५१	०
सो.	०	०	२९	४५	०
मं.	०	०	२०	४९	३०
रा.	०	१	२३	३३	०
गु	०	१	१७	३६	०
श.	०	१	२६	३१	३०

अथ विंशोत्तरी शुक्रमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि	घ.
शु.	०	६	२०	०
र.	०	२	०	०
सो.	०	३	१०	०
मं.	०	२	१०	०
रा.	०	६	०	०
गु..	०	५	१०	०
श.	०	६	१०	०
बु.	०	५	२०	०
के.	०	२	१०	०

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.
र.	०	०	१८	०
सो.	०	१	०	०
म.	०	०	२१	०
रा.	०	१	२४	०
गु.	०	१	१८	०
श	०	१	२७	०
बु.	०	१	२१	०
के.	०	०	२१	०
शु.	०	२	०	०

अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.
सो.	०	१	२०	०
मं	०	१	५	०
रा.	०	३	०	०
गु.	०	२	२०	०
श.	०	३	५	०
बु.	०	२	२५	०
के.	०	१	५	०
शु.	०	३	१०	०
र.	०	१	०	०

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.
मं.	०	०	२४	३०
रा.	०	२	३	०
गु.	०	१	२६	०
श.	०	२	६	३०
बु.	०	१	२९	३०
के.	०	०	२४	३०
शु.	०	२	१०	०
र.	०	०	२१	०
सो.	०	१	५	०

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.
रा.	०	५	१२	०
गु.	०	४	२४	०
श.	०	५	२१	०
बु.	०	५	३	०
के.	०	२	३	०
शु.	०	६	०	०
र.	०	१	१४	०
पो	०	३	०	०
मं.	०	३	३	०

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा.	दि.	घ.
गु.	०	४	८	०
श.	०	५	२	०
बु	०	४	१६	०
के.	०	१	२६	०
शु.	०	५	१०	०
र.	०	१	१८	०
सो.	०	२	२०	०
मं.	०	१	२६	०
रा.	०	४	२४	०

अथ विंशोत्तरी शुक्रमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि					अथ केत्वन्तरे प्रत्यन्तराणि				
	व.	मा	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.		व.	मा.	दि.	घ.
श.	०	६	०	३०	बु.	०	४	२४	३०	के.	०	०	२४	३०
बु.	०	५	११	३०	के.	०	१	२९	३०	शु.	०	२	१०	०
के.	०	२	६	३०	शु.	०	५	२०	०	र.	०	०	२१	०
शु.	०	६	१०	०	र.	०	१	२१	०	सो.	०	१	५	०
र.	०	१	२७	०	सो.	०	२	२५	०	मं.	०	०	२४	३०
सो	०	३	५	०	मं.	०	१	२९	३०	रा	०	२	३	०
मं.	०	२	६	३०	रा.	०	५	३	०	गु	०	१	२६	०
रा.	०	५	२१	०	गु.	०	४	१६	०	श.	०	२	६	३०
गु.	०	५	२	०	श.	०	५	११	३०	बु.	०	१	२९	३०

प्रत्यन्तरे-उपदशासाधनम्—

स्वदशाया घटीवृन्दं हतं स्वाऽब्दैर्ग्रहस्य च ।
विंशोत्तरशतेनाऽऽप्तं (१२०) घट्यः शेषं पलादिकम् ॥ १० ॥

प्रत्यन्तर मान को घटचात्मक बनाकर उसको प्रत्येक ग्रह के दशामान से पृथक् गुणाकर, १२० का भाग देने से लब्धि घटी, शेष पर से पूर्ववत् पल साधन कर उपदशा मान समझना ॥ १० ॥

उदाहरण—जैसे सूर्य का प्रत्यन्तर मान ५ दिन २४ घटी है। इसको घटी बनाने से ३२४ हुआ इसको सूर्य के दशामान ६ से गुणाकर १२० का भाग देने से लब्धि १६ घटी, शेष को ६० से गुणा कर १२० का भाग देने से लब्धि १२ पल यह सूर्य की उपदशा हुई ॥ १० ॥

कदा कस्मै का दशा प्रयोज्या ?

कृष्णपक्षे दिवा जन्म शुक्लपक्षे यदा निशि ।
विंशोत्तरीदशा तस्य शुभाऽशुभफलप्रदा ॥ ११ ॥

जिसका जन्म कृष्णपक्ष और दिन में, अथवा शुक्लपक्ष और रात्रि में हो, उसके लिए विंशोत्तरी दशा फलप्रद है। (अर्थात् इससे विपरीत हो तो उसके लिए अष्टोत्तरी फलप्रद होती है) ॥ ११ ॥

भयात्वशात्-दशास्पष्टीकरणम्-

जन्मर्क्षगतनाडिकागणो त्रिंशताधिकशतेन (१२०) गुण्यते ।
भज्यते नवति(९०)सङ्ख्यया ततो लब्धशुद्धपरमायुषः स्फुटम् ॥१२॥

नक्षत्र की गत (भयात्) घटी को १२० से गुणा करके गुणनफल में ९० का भाग देने से जो लब्धि वर्षादि हो उसको १२० वर्ष में घटाने से स्पष्ट आयुर्दाय प्रमाण होता है। इसको लोग नक्षत्रायु भी कहते हैं ॥ १२ ॥

दृष्टव्य––इस आयुर्दाय पर से श्लोक ३, ४, ५ के अनुसार सब ग्रहों का दशामान और उस पर उक्त प्रकार से दशामान साधन करना चाहिए।

ध्रुवाङ्कानयनम्––

दशभिर्वर्षैर्मासो मासचतुष्केण लभ्यते दिवसः।
दिवसद्वयेन घटिकायुग्मेन पलमेकम् ॥ १३ ॥

१० वर्ष में १ मास और ४ मास में १ दिन, २ दिन में १ घटी तथा २ घटी में १ पल। इस प्रकार १ वर्ष सम्वन्धी अन्तर ध्रुवाङ्क होता है। अतः उसको अपने-अपने दशामान से गुणा करने से अन्तर-प्रत्यन्तरादि मान होते हैं ॥ १३ ॥

दृष्टव्य––इसका सीधा अर्थ यह हुआ कि–वर्ष का दशमांश मास और मास का चतुर्थांश दिन, दिन का आधा घटी और घटी-संख्या का आधा पल–१ वर्ष सम्वन्धी ध्रुवाङ्क होता है।

उदाहरण––जैसे सूर्य के दशामान ६ शेष को मास बनाकर ७२ इसका चतुर्थांश १८ दिन। यह सूर्य का १ वर्ष सम्बन्धी अन्तर्दशा का ध्रुवाङ्क हुआ। इसको प्रत्येक ग्रह के दशामान से गुणा करने से पृथक्-पृथक् अन्तर्दशामान होते हैं ॥ १३ ॥

अथाष्टोत्तरी दशावर्षाणि–

अष्टादशांशः क्रियतेंऽशुमाली लब्धं द्विसार्द्धं क्रियते हिमांशुः।
सूरस्त्रिभागः सकलश्च भौमस्तस्य त्रिभागः स-शशी बुधः स्यात् ॥१॥
भानोस्त्रिभागः कुजयुक् च सौरिरर्द्धं कुजस्येन्दुयुतः गुरुश्च।
भानोर्द्विगुण्यः क्रियते च राहुर्हिमांशुभानू सहितौ च शुक्रः ॥२॥

यह दशा १०८ वर्ष परमायु प्रमाण की अष्टोत्तरी दशा कहलाती है, अतः परमायु प्रमाण १०८ का १८ वाँ भाग ६ वर्ष सूर्य की दशा, सूर्य दशामान का ढाई गुना (१५ वर्ष) चन्द्र की, तृतीयांश सहित सूर्य दशा तुल्य (८ वर्ष) मङ्गल की, सूर्य के तृतीयांश सहित चन्द्रदशा तुल्य (१५+२=१७ वर्ष) बुध की, सूर्य के तृतीयांशयुत मङ्गल दशा तुल्य (८+२=१० वर्ष) शनि की, मङ्गल के आधा और चन्द्रमा की दशा के योगतुल्य (४+१५=१९ वर्ष) गुरु की, द्विगुणित सूर्यदशा तुल्य (१२ वर्ष) राहु की और चन्द्र और सूर्य की दशा के योग तुल्य (६+१५=२१ वर्ष) शुक्र की दशा होती है ॥ १–२ ॥

नक्षत्राद्दशाधिपानां ज्ञानम्–

चतुष्कं त्रितयं तस्माच्चतुष्कं त्रितयं पुनः।
यावत्स्वजन्मभं तावद् गणयेद्रौद्रभादितः ॥ ३ ॥

आर्द्रा से आरम्भ कर ४, ३, ४, ३, ४, ३, ४, ३, जन्म नक्षत्र तक क्रम से सूर्य, मङ्गल, बुध, शनि, गुरु, राहु और शुक्र की दशा होती है, गणना में अभिजित् सहित २८ नक्षत्र गिनना चाहिए ॥ ३ ॥

दृष्टव्य—पापग्रह की दशा सूर्य के चतुर्थांश और शुभग्रह की दशा के तृतीयांश एक-एक नक्षत्र में दशा प्रमाण होता है। उस पर से वर्तमान नक्षत्र के भयात् और भभोग द्वारा विंशोत्तरीवत् दशा के भुक्त और भोग्य वर्षादि लाना चाहिए।

अष्टोत्तरीदशायां सक्रमदशामानञ्च—

षडादित्ये च वर्षाणि चन्द्रे पञ्चदशैव च।
मङ्गले चाष्टवर्षाणि बुधे सप्तदशैव च ॥ ४ ॥
शनौ च दशवर्षाणि गुरावेकोनविंशतिः।
राहोर्द्वादशवर्षाणि शुक्रस्याऽप्येकविंशतिः ॥ ५ ॥

अष्टोत्तरीदशा सूर्य के ६, चन्द्र के १५, मङ्गल के ८, बुध के १७, शनि के १०, बृहस्पति के १९, राहु के १२ और शुक्र के २१ वर्ष दशा होती है ॥ ४-५ ॥

अष्टोत्तरीदशायामन्तर्दशासाधनम्—

दशा दशाहता कार्या नवभिर्भागमाहरेत्।
यल्लब्धं तद्भवेन्मासस्त्रिंशद्भिर्गुणितं दिनम् ॥ ६ ॥

जिसकी दशा में अन्तर्दशा जाननी हो, उस दशामान को पृथक्-पृथक् ग्रहों की दशावर्ष संख्या से गुणा कर ९ का भाग देने से लब्धि मास, शेष को ३० से गुणा कर ९ का भाग देने से दिन एवं पुनः शेष को ६० से गुणा कर भाग देने से घटी-पल समझना ॥ ६ ॥

उदाहरण—जैसे सूर्य की दशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा जाननी है तो सूर्यदशा-वर्ष ६ को चन्द्र दशावर्ष १५ से गुणा करने से ९०, इसमे ९ का भाग देने से लब्धि १० मास चन्द्रमा की अन्तर्दशा हुई। इसी प्रकार सब ग्रहों के अपने-अपने वर्ष से समझें ॥ ६ ॥

प्रत्यन्तर्दशासाधनम्—

अन्तर्दशाऽहर्गण एत्र गुण्यः स्वभूलवर्षैर्गजखेन्दुभक्तः (१०८)।
पुनः पुनः षष्टि(६०)गुणावशेषे दिनादयश्चोपदशाक्रमोऽयम् ॥७॥

अन्तर्दशामान को दिनात्मक बनाकर उसको पृथक्-पृथक् प्रत्येक ग्रह के दशामान से गुणा करके १०८ का भाग देकर लब्धि दिनादि ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा होती है ॥ ७ ॥

उपदशासाधनम्—

उपदशादिवसाः खरसा(६०)हता निजघटीसहिताः स्वदशाहताः ।
वसुखचन्द्रहृता घटिकादयः फलदशाक्रम एव पुनः पुनः ॥८॥

प्रत्यन्तर्दशा दिन को ६० से गुणा कर घटी को जोड़कर घट्यात्मक बनावे, उसको पृथक्-पृथक् अपने-अपने दशामान से गुणाकर १०८ का भाग देकर लब्धि घट्यादि ग्रहों की उपदशा होती है ॥ ८ ॥

अष्टोत्तर्यां क्रमाद्दशाधिपाः—

सूर्यश्चन्द्रः कुजः सौम्यः शनिर्जीवस्तमो भृगुः ।
एते दशाऽधिपाः प्रोक्ता विना केतुं क्रमाद् ग्रहाः ॥ ९ ॥

अष्टोत्तरी में सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, बुध, शनि, गुरु, राहु, शुक्र ये ८ ग्रह क्रम से दशाधिप होते हैं, इसमें केतु की दशा नहीं होती है ॥ ९ ॥

दशावर्षादि ज्ञानार्थं चक्रम्—

दशेशाः	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु	रा.	शु.
नक्षत्राणि	आ. पुन. पु. श्लेषा	म. पू.फा. उ फा.	ह. चि. स्वाती. वि.	अनु. ज्ये. मू.	पू.षा. उ.षा. अभि. श्र.	ध. श. पू.भा.	उ भा. रे. अश्वि. भ.	कृ. रो. मृ.
वर्षाणि	६	१५	८	१७	१०	१९	१२	१२

दशाग्रहणे वैशिष्ट्यम्-

दशाऽप्यष्टोत्तरी शुक्ले कृष्णे विंशोत्तरी मता ।
गणनीया दशा सुज्ञैस्तदुमेश्वरसम्मतम् ॥ १० ॥

शुक्लपक्ष में जन्म हो तो अष्टोत्तरी और कृष्णपक्ष में जन्म हो तो विंशोत्तरी दशा ग्रहण करनी चाहिए, ऐसा उमेश्वर का मत है ॥ १० ॥

अष्टोत्तर्यामन्तर्दशादिध्रुवानयनम्-

नवभिर्वर्षैर्मासः शेषमर्कगुणं कुरु ।
मासान् क्षिप्त्वा ततस्त्रिंशद्गुणं तत्र दिनं क्षिपेत् ॥ ११ ॥
अष्टोत्तरशतेनाप्तं(१०८)दिनं तद्ध्रुवका बुधाः ।
तच्च षष्टिगुणं कृत्वा तन्मध्ये घटिकाः क्षिपेत् ॥ १२ ॥

अष्टोत्तरशतै(१०८)र्भागं लब्धाङ्के घटिका वदेत् ।
शेषं षष्टि(६०)गुणं कृत्वा स्वहरैर्भागमाहरेत् ॥ १३ ॥
लब्धाङ्के च पलं ज्ञेयं शेषं षष्टि(६०) गुणं कुरु ।
अष्टोत्तरशतैर्भागं लब्धं तद्विपलं वदेत् ॥ १४ ॥

दशा में जितने वर्ष हों, उसके नवमांश तुल्य मास १ वर्ष सम्बन्धि ध्रुवाङ्क होता है। एवं मासादि ध्रुवाङ्क बनाकर प्रत्येक ग्रह के अष्टोत्तरी दशामान से गुणा करने से अन्तर्दशादि मान होते हैं। एवं अन्तर्दशा में जो वर्षादि हों उसमें वर्ष को १२ से गुणाकर मास जोड़े, फिर उस मास को ३० से गुणाकर दिन संख्या जोड़े, उस दिन संख्या में १०८ का भाग देने से लब्धि दिन १ वर्ष सम्बन्धी ध्रुवाङ्क होता है। दिन को ६० से गुणाकर उसमें घटी जोड़कर १०८ का भाग देकर लब्धि घटी, एवं घटी शेष को ६० से गुणाकर पल जोड़ कर १०८ का भाग देकर लब्धि पल होगा तथा शेष को ६० से गुणा कर १०८ का भाग देकर लब्धि विपल ग्रहण कर ध्रुवाङ्क जाने ॥ ११-१४ ॥

उदाहरण—जैसे चन्द्रमा के दशामान १५ वर्ष में ध्रुवाङ्क बनाना है तो वर्ष में ९ का भाग देने से लब्धि १ मास फिर शेष ६ को १२ से गुणा करने से ७२ मास हुए, इसको ३० से गुणा करने से दिन २१६० इसमें १०८ का भाग देने से लब्धि २० दिन शेष ० हो गया, इसलिए चन्द्रदशा में ध्रुवाङ्क १ मास २० दिन हुआ।

अथाष्टोत्तरी महादशायामन्तर्दशाचक्रम्

अथ सूर्यान्तरम्

ग्र.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
व.	०	०	०	०	०	१	०	१
मा.	४	१०	५	११	६	०	८	२
दि.	०	०	१०	१०	२०	२०	०	०
घ.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ चन्द्रान्तरम्

ग्र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.
व.	२	१	२	१	२	१	२	०
मा.	१	१	४	४	७	८	११	१०
दि.	०	१०	१०	२०	२०	०	०	०
घ.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ भौमान्तरम्

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.
व.	०	१	०	१	०	१	०	१
मा.	७	३	८	४	१०	६	५	१
दि.	३	३	२६	२६	२०	२०	१०	१०
घ.	२०	२०	०	४०	०	०	०	०

अथ बुधान्तरम्

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	चं.	मं.
व.	२	१	२	१	२	०	२	१
मा.	८	६	११	१०	३	११	४	३
दि.	३	२६	२६	२०	२०	१०	१०	३
घ.	२०	४०	४०	०	०	०	०	२०

अथाष्टोत्तरी महादशायामन्तर्दशाचक्रम्

अथ शन्यन्तरम्									अथ गुर्वन्तरम्								
ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	ग्र.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.
व.	०	१	१	१	०	१	०	१	व.	३	२	३	१	२	१	२	१
मा.	११	९	१	११	६	४	८	६	मा.	४	१	८	०	७	४	११	९
दि.	३	३	१०	१०	२०	२०	२६	२६	दि.	३	१०	१०	२०	२०	२६	२६	३
घ.	२०	२०	०	०	०	०	४०	४०	घ.	२०	०	०	०	०	४०	४०	२०

अथ राह्वन्तरम्									अथ शुक्रान्तरम्								
ग्र.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	ग्र.	शु.	र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
व.	१	२	०	१	०	१	१	२	व.	४	१	२	१	३	१	३	२
मा.	४	४	८	८	१०	१०	१	१	मा.	१	२	११	६	३	११	८	४
दि.	०	०	०	०	२०	२०	१०	१०	दि.	०	०	०	२०	२०	१०	१०	०
घ.	०	०	०	०	०	०	०	०	घ.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथाष्टोत्तरी सूर्यमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि									अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि								
ग्र.	र.	सो.	मं	बु.	श.	गु.	रा.	शु	ग्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.
मा.	०	०	०	०	०	०	०	०	मा.	१	०	१	०	१	१	१	०
दि.	६	१६	८	१८	११	२१	१३	२३	दि.	११	२२	१७	२७	२२	३	२८	१६
घ.	४०	४०	५३	५३	६	६	२०	२०	घ.	४०	१३	१३	४६	४६	२०	२०	४०
प.	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०	प.	०	२०	२०	४०	४०	०	०	०

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि									अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि								
ग्र.	म.	बु	श	बु.	रा.	शु	र.	सो.	ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	म.
मा.	०	०	०	०	०	१	०	०	मा.	१	१	१	१	२	०	१	०
दि.	११	२५	१४	२८	१७	१	८	२२	दि	२३	१	२१	०	६	१८	१७	२५
घ.	५१	११	४८	८	४६	६	५३	१३	घ.	३१	२८	४८	४६	६	५३	१३	११
प.	६	६	५३	५३	४०	४०	२०	२०	प.	६	५३	५३	४०	४०	२०	२०	६
वि.	४०	४०	२०	२०	०	०	०	०	वि	४०	२०	२०	०	०	०	०	४०

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि									अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि								
ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	ग्र.	गु.	रा	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.
मा.	०	१	०	१	०	०	०	१	मा.	२	१	२	०	१	०	१	१
दि.	१८	५	२२	८	११	२७	१४	१	दि.	६	१२	१३	२१	२२	२८	२९	५
घ.	३१	११	१३	५३	६	४६	४८	२८	घ.	५१	१३	५३	६	४६	८	४०	११
प.	६	६	२०	२०	४०	४०	५३	५३	प.	६	२०	२०	४०	४०	५३	५३	६
वि.	४०	४०	०	०	०	०	२०	२०	वि.	४०	०	०	०	०	२०	२०	४०

अथाष्टोत्तरी सूर्यमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	०	१	०	०	०	१	०	१
दि.	२६	१६	१३	१	१७	७	२२	१२
घ.	४०	४०	२०	३	४६	४६	१३	१३
प.	०	०	०	२०	४०	४०	२०	२०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	२	०	१	१	२	१	२	१
दि.	२१	२३	३०	१	६	८	१३	१६
घ.	४०	२०	२०	६	६	५३	५३	४०
प.	०	०	०	४०	४०	२०	२०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथाष्टोत्तरी चन्द्रमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.
मा.	३	१	३	२	४	२	४	१
दि.	१४	२५	२८	९	११	२३	२५	११
घ.	१०	३३	३	२६	५६	२०	५०	४०
प.	०	२०	२०	४०	४०	०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.
मा.	०	२	१	२	१	२	०	
दि.	२९	२	७	१०	१४	१७	२२	२५
घ.	३७	५७	२	२२	२६	४६	१३	३३
प.	४६	४६	१३	१३	४०	४०	२०	२०
वि.	४०	४०	०	२०	०	०	०	०

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.
मा.	०	२	४	३	५	१	३	२
दि.	१३	१८	२९	४	१५	१७	२८	७
घ.	४७	४२	३२	२६	१६	१३	३	५७
प.	४६	१३	१३	४०	४०	२०	२०	४६
वि.	४०	२०	२०	०	०	०	०	४०

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.
मा.	१	२	१	०	०	२	१	२
दि.	१६	१७	२१	७	२७	९	९	[illegible]
घ.	१७	५७	३३	१३	४६	२६	२	४२
प.	४६	४६	२०	२०	४०	४०	१३	१३
वि.	४०	४०	०	०	०	०	२०	२०

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.
मा.	५	३	६	१	४	२	४	[illegible]
दि.	१७	१५	४	२२	११	१०	२९	२७
घ.	७	३३	४३	४६	५६	२२	३२	५७
प.	४६	२०	२०	४०	४०	१३	१३	४६
वि.	४०	०	०	०	०	२०	२०	४०

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	१	३	१	२	१	३	१	३
दि.	६	२६	३	२३	१४	४	२५	१५
घ.	४०	४०	२०	२०	२६	६	३३	३३
प.	०	०	०	०	४०	४०	२०	२०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	६	१	४	२	५	३	६	३
दि.	४०	२८	२५	१७	१५	७	४	२६
घ.	११	२०	५०	४६	१६	१३	४३	४०
प.	०	०	०	४०	४०	२०	२०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	१	०	१	०	१	१	१
दि.	१६	११	२२	१७	२७	२२	३	२८
घ.	४०	४०	१३	१३	४६	४६	२०	२०
प.	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथाष्टोत्तरी भौममहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.
मा.	०	१	०	१	०	१	०	०
दि.	१५	३	१९	७	२३	११	५१	२९
घ.	४८	३४	४५	३१	४२	२८	११	३७
प.	८	४८	११	११	१३	५३	६	४६
वि.	५३	५३	७	७	२०	२०	४०	४०

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं
मा.	२	१	२	१	२	०	२	१
दि.	१९	११	१९	२०	२८	२५	२	३
घ.	२१	५८	४५	२२	८	११	५७	३४
प.	५८	३१	११	१३	५३	६	४६	४८
वि.	५३	७	७	२०	२०	४०	४०	५३

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	र	सो	मं	बु
मा.	०	१	०	१	०	१	०	१
दि.	२४	१६	२९	२१	१४	७	१९	११
घ	४१	५४	३७	५१	४८	२	४५	५८
प.	२८	४८	४६	६	५३	१३	११	३१
वि	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७	७

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं	बु	श.
मा	२	१	३	०	२	१	२	१
दि.	२९	२६	८	२८	१०	७	१९	१६
घ.	८	१७	३१	०	२२	३१	४५	५४
प.	८	४६	६	५३	१३	५१	११	४८
वि.	५३	४०	४०	२०	२०	७	७	५३

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र	रा	शु.	र	सो.	मं	बु.	श	गु.
मा	१	२	०	१	०	१	०	१
दि.	५	२	१७	१४	२३	२०	२९	२६
घ.	३३	१३	४६	२६	४२	२२	३७	१७
प.	२०	२०	४०	४०	१३	१३	४६	४६
वि.	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०

अथ शुक्रान्तर प्रत्यन्तराणि

ग्र.	शु.	र.	सो	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	३	१	२	१	२	१	३	२
दि.	१८	१	१७	११	२८	२१	८	२
घ.	५३	६	४६	२८	८	५१	३१	१३
प.	२०	४०	४०	५३	५३	६	६	२०
वि.	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	र.	सो.	म.	बु.	श.	गु	रा.	शु
मा.	०	०	०	०	०	०	०	१
दि.	८	११	१	२१	१४	२८	१७	१
घ.	३	३५	१	११	४८	८	४६	६
प.	५०	२०	६	६	३	५३	४०	४०
वि.	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०

अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	सो	मं	बु.	श.	गु.	रा	शु.	गु.
मा	१	०	२	१	२	१	०	०
दि.	२१	२९	२	७	१०	१४	१७	२२
घ.	३३	२७	५७	२	२२	२६	४६	१३
प.	२०	४६	४६	१३	१३	४०	४०	२०
वि.	०	४०	५०	२०	२०	०	०	०

अथाष्टोत्तरी बुधमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र	सो.	म.
मा.	५	२	५	३	६	१	४	२
दि.	१	२९	१९	१७	७	२३	१३	११
घ.	३८	११	५८	२	१८	३१	४७	२१
प	८	५१	३१	१३	५३	६	४६	२८
वि.	५३	७	८	२०	२०	४०	४०	५३

अथ शन्यन्तर प्रत्यन्तराणि

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.
मा.	१	३	२	३	१	२	१	१
दि.	२२	९	२	२०	१	१८	११	२९
घ.	२८	४१	५७	११	२८	४२	५८	११
प.	८	२८	४६	६	५३	१३	३१	५१
वि.	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७	७

अथाष्टोत्तरी बुधमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	गु	रा.	शु	र.	सो.	म	बु.	श.
मा.	६	३	६	१	४	२	५	३
दि.	९	२९	२९	२९	२९	१९	१९	९
घ.	२४	३७	२१	४८	३२	४५	२८	४१
प.	४८	४६	६	५३	१३	११	३१	८
वि.	५३	४०	४०	२०	२०	७	७	५३

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	२	४	१	३	१	३	२	३
दि	१५	१२	७	४	२०	१७	२	२९
घ	३३	१३	४६	२६	२२	२	५७	३७
प	२०	२०	४०	४०	१३	१३	४६	४६
वि	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	शु	र.	सो.	म	बु.	श	गु	रा
मा.	७	२	५	२	६	३	६	४
दि.	२१	६	१५	२८	७	२०	२९	१२
घ.	२३	६	१६	८	१८	११	२१	१३
प.	२०	४०	४३	५३	५३	६	६	२०
वि.	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	र.	सो	मं.	बु.	श.	गु.	रा	शु.
मा.	०	१	०	१	१	१	१	२
दि.	१८	१६	२५	२३	१	२९	७	६
घ.	५३	१३	११	३१	२८	४८	४६	६
प.	२०	२०	६	६	५३	५३	४०	४०
वि.	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०

अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	सो.	मं	बु	श	गु.	रा.	शु.	र.
मा.	३	२	४	२	४	३	५	१
दि.	२८	२	१३	२८	२९	४	१५	१७
घ.	३	५७	४०	४२	३२	२६	१६	१३
प.	२०	४६	४६	१३	१३	४०	४०	२०
वि.	०	४०	४०	२०	२०	०	०	०

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र	मं.	बु.	श	गु.	रा.	शु.	र.	सो.
मा.	१	२	१	२	१	२	०	२
दि	३	११	११	१९	२०	२८	२५	२
घ.	३४	२१	५८	४५	२२	८	११	५७
प.	४८	२८	३१	११	१३	५३	६	६
वि.	५३	५३	७	७	२०	२०	४०	४०

अथाष्टोत्तरी शनिमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	श	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	म.	बु
मा.	१	१	१	२	०	१	०	१
दि.	०	२८	७	४	१८	१६	२४	२२
घ.	५१	३८	२	४८	३१	१७	४१	२८
प.	५१	३१	१३	५३		४६	२८	८
वि.	७		२०	२०	४०	४०	५३	३

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.
मा.	३	२	४	१	२	१	६	१
दि.	२१	१०	३	५	२७	१६	९	२८
घ.	२५	२२	८	११	५७	५४	४१	३८
प.	११	१३	५३	६	४६	४८	२८	३१
वि.	७	२०	२०	४०	४०	५३	५३	०

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	१	२	०	१	०	२	१	२
दि.	१४	१७	२२	२५	२९	२	७	१०
घ.	२६	४६	१३	३३	३७	५७	२	२२
प.	४०	४०	२०	२०	४६	४६	१३	१३
वि	०	०	०	०	४०	४०	२०	२०

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र	शु.	र.	सो.	म.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	०	१	३	१	३	२	४	२
दि.	४	८	७	२१	२०	४	३	१७
घ.	१६	५३	१३	५०	११	४८	८	४६
प.	६	२०	२०	६	६	५३	५३	४०
वि.	४०	०	०	४०	४०	२०	२०	०

अथाऽष्टोत्तरी शनिमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	०	०	१	०	१	०	१
दि.	११	२७	१४	१	१८	५	२२	८
घ.	६	४६	४८	२८	३१	११	१३	५३
प.	४०	४०	५३	५३	६	६	२०	२०
वि.	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०

अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.
मा.	२	१	२	१	२	१	३	०
दि.	९	७	१८	१६	२७	२५	७	२७
घ.	१६	२	४२	१७	५७	३३	१३	४६
प.	४०	५३	१३	४६	४६	४०	२०	४०
वि.	०	२०	२०	४०	४०	०	०	०

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.
मा.	०	१	०	१	०	१	०	१
दि.	१९	१	२४	१६	२९	२१	१४	७
घ.	४५	५८	४१	५४	३७	५१	४८	२
प.	११	३१	२८	४८	४६	६	५३	१३
वि.	७	७	५३	५३	४०	४०	२०	२०

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.
मा.	२	१	३	२	३	१	२	१
दि.	२९	२२	९	२	२२	१	१८	११
घ.	२०	२८	४१	५७	११	२८	४२	५८
प.	५१	८	२	४६	६	५३	१३	३१
वि.	७	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७

अथाष्टोत्तरी गुरुमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	म.	बु	श.
मा.	७	४	७	२	५	२	६	३
दि.	१	१३	२३	६	१७	२९	९	२१
घ.	४१	४२	५८	५१	७	८	२९	२५
प.	५१	१३	५३	६	४६	८	४८	११
वि.	७	२०	२०	४०	४०	५३	५३	७

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	रा	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	२	४	१	३	१	३	२	०
दि.	२४	२७	१२	१५	२६	२९	१०	१३
घ.	२६	४६	१३	३३	१७	३७	२२	४२
प.	४०	४०	२०	२०	४६	४६	१३	१३
वि.	०	०	०	०	४०	४०	२०	२०

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	८	२	६	३	६	४	७	४
दि.	१८	१३	४	८	२९	३	२३	२७
घ.	३६	५३	४३	३१	२१	८	५३	४६
प.	४०	२०	२०	६	६	५३	५८	४०
वि.	०	०	०	४०	४०	२०	२०	०

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	र.	सो.	मं.	बु.	श	गु.	रा.	शु.
मा.	०	१	०	१	१	२	१	२
दि.	२१	२२	२८	२९	५	६	१२	१३
घ.	६	४६	८	४८	११	५१	१३	५३
प.	४०	४०	५३	५३	६	६	२०	२०
वि.	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०

अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	सो.	म.	बु.	श.	गु	रा.	शु.	र.
मा.	४	२	४	२	५	३	६	१
दि.	११	१०	२९	२७	१७	१५	४	२२
घ.	५६	२२	३२	५३	७	३३	४३	४६
प.	४०	१३	१३	४६	४६	२०	२०	४०
वि.	०	२०	२०	०	४०	०	०	०

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.
मा.	१	२	१	२	१	३	०	२
दि.	७	१९	१६	२९	२६	८	२८	१०
घ.	३१	४५	५४	८	१७	३१	८	२२
प	५३	११	४८	८	४६	६	५३	१३
वि.	७	७	५३	५३	४०	४०	२०	२०

अथाष्टोत्तरी गुरुमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.
मा.	५	३	६	३	६	१	४	२
दि.	१९	९	९	२९	२९	२९	२९	१९
घ.	२८	४१	२४	३७	२१	४८	३२	४५
प.	३१	२८	४८	४६	६	५३	१३	११
वि.	७	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.
मा.	१	३	२	४	१	२	१	३
दि.	२८	२१	१०	३	५	२७	१६	९
घ.	३८	२५	२२	८	११	५७	५४	४१
प.	३१	११	१३	५३	६	४६	४८	२८
वि.	७	७	२०	२०	४०	४०	५३	५३

अथाष्टोत्तरी राहुमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	रा.	शु.	र.	सो.	मं	बु.	श	गु.
मा.	१	३	०	२	१	२	१	२
दि.	२३	३	२६	६	५	१५	१४	१४
घ.	२०	२०	४०	४०	३३	३३	२६	२६
प.	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०
वि	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	५	१	३	२	४	२	४	३
दि.	१३	१६	२६	२	१२	१७	२७	३
घ.	२०	४०	४०	१३	१३	४६	४६	२०
प.	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	१	०	१	०	१	०	१
दि.	१३	३	१७	७	२२	१२	२६	१६
घ.	१०	२०	४६	४६	१३	१३	४०	४०
प.	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.
मा.	२	१	३	२	३	२	३	१
दि.	२३	१४	४	२५	१५	६	२६	३
घ.	२२	२६	२६	३३	३३	४०	४०	२०
प.	०	४०	४०	२०	२०	०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.
मा.	०	१	०	१	१	२	०	१
दि.	२३	२०	२९	२६	५	२	५७	१४
घ.	४२	२२	३७	१७	३३	१३	४६	२६
प.	१३	१३	४६	४६	२०	२०	४०	४०
वि.	२०	२०	४०	४०	०	०	०	०

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.
मा.	३	२	३	२	४	१	३	१
दि.	१७	२	२९	१५	१२	७	४	२०
घ.	२	५७	३७	३३	१३	४६	२६	२२
प.	१३	४६	४६	२०	२२	४०	४०	१३
वि.	२०	४०	४०	०	०	०	०	२०

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	श.	गु.	शु.	रा.	बु.	मं.	र.	चं.
मा.	१	२	१	२	०	१	०	२
दि.	७	१०	१४	१७	२२	२५	२९	२
घ.	२	२२	२६	४६	१३	३३	३७	५७
प.	१३	१३	४०	४०	२०	२०	४६	४६
वि.	२०	२०	०	०	०	०	४०	४०

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.
मा.	४	२	४	१	३	१	३	२
दि.	१३	२४	२७	१२	१५	२६	२९	१०
घ.	४२	२६	४६	१३	३३	१७	३७	२२
प.	१३	४०	४०	२०	२०	४६	४६	१३
वि.	२२	०	०	०	०	४०	४०	२०

अथाष्टोत्तरी शुक्रमहादशायामन्तरेषु सर्वेषां प्रत्यन्तराणि

अथ शुक्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	९	२	६	३	७	४	८	५
दि.	१५	२१	२४	१८	२१	१६	१६	१३
घ.	५०	४०	१०	५३	२३	६	३८	२०
प.	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ सूर्यान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	र.	सो.	मं	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	१	१	२	१	२	१	२
दि.	२३	२८	१	६	८	१३	१६	२१
घ.	२०	२०	६	६	५३	५३	४०	४०
प.	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु	रा	शु.	र.
मा.	४	२	५	३	६	३	६	१
दि.	२५	१७	१५	१०	४	२६	२४	२८
घ.	५०	४६	१६	१३	४३	४०	१०	२०
प.	०	४०	४०	२०	२०	०	०	०
वि	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ भौमान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	मं	बु.	श	गु.	रा.	शु.	सू.	सो.
मा.	१	२	१	३	२	३	१	२
दि.	११	२८	२१	८	२	१८	१	१७
घ.	२८	८	५१	३१	१३	५३	६	४६
प.	५३	५३	६	६	२०	२०	४०	४०
वि.	२०	२०	४०	४०	०	०	०	०

अथ बुधान्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.
मा.	६	३	६	४	७	२	५	२
दि	१७	२०	२९	१२	२१	६	१५	२८
घ.	१८	११	२१	१३	२३	६	१६	८
प.	५३	६	६	२०	२०	४०	४०	५३
वि.	२०	४०	४०	०	०	०	०	२०

अथ शन्यन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	श	गु.	रा	शु.	र	सो.	मं.	बु.
मा.	२	४	२	४	१	३	१	३
दि.	४	३	१०	१६	८	७	२१	२०
घ.	४८	८	४६	६	५३	१३	५१	२१
प.	५३	५३	४०	४०	२०	२०	६	६
वि.	२०	२०	०	०	०	०	४०	४०

अथ गुर्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.
मा.	७	४	८	२	६	३	६	४
दि.	२३	२७	१८	१३	४	८	२९	३
घ.	५८	४६	३६	५३	४३	४१	२१	८
प.	५३	४०	४०	२०	२०	६	६	५३
वि.	२०	०	०	०	०	४०	४०	२०

अथ राह्वन्तरे प्रत्यन्तराणि

ग्र.	रा.	शु.	र.	सो.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	३	५	१	३	२	४	२	४
दि.	३	१३	१६	२६	२	१२	१७	२७
घ.	२०	२०	४०	४०	१३	१३	४६	४६
प.	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

सन्ध्यादशा-

परमायुर्द्वादशांशः स्फुटं सन्ध्यादशा मता ।
स्वलग्नगतभस्यादौ ततोऽन्येषु गृहेषु च ॥ १५ ॥

परमायु १२० के द्वादशांश १० वर्ष सन्ध्यादशा का मान होता है। प्रथम सन्ध्यादशा में जन्म लग्न के स्वामी की दशा होती है। उसके बाद क्रम से

द्वितीय भावादिक की होती है। अष्टोत्तरी क्रम में दशावर्ष १२ हैं तथा विंशोत्तरी क्रम में दशावर्ष १० होते हैं ॥ १५ ॥

उदाहरण--जैसे जन्मलग्न कुम्भ है, अतः कुम्भ से आरम्भ कर द्वादश भावों की १०, १० वर्ष दशा होगी ॥ १५ ॥

सन्ध्यावर्षमानम्-

यावद्वर्षाणि चन्द्रस्य दशा विंशोत्तरीमते ।
तावद्वर्षप्रमाणा च सन्ध्या भवति निश्चितम् ॥ १६ ॥

विंशोत्तरी में जितने दशावर्ष चन्द्रमा के होते हैं उतने ही वर्ष एक-एक राशि के सन्ध्यादशा वर्ष होते हैं ॥ १६ ॥

पाचकदशा-

सन्ध्या रसगुणा कार्या चन्द्रवह्नि (३१)हृता फलम् ।
प्रथमे कोष्ठके स्थाप्यमर्द्धमर्द्धं त्रिकोष्ठके ॥ १७ ॥
त्रिभागं वसुकोष्ठेषु लिखेद् विद्वान् प्रयत्नतः ।
एवं द्वादशभावेषु पाचकानि प्रकल्पयेत् ॥ १८ ॥

सन्ध्यादशा वर्षमान (१०) को ६ से गुणा करके ३१ का भाग देकर प्रथम (लग्न राशि) कोष्ठ में रखना, फिर उसका आधा तीन (२, ३, ४) भाव के कोष्ठक में रखे तथा तृतीयांश आगे के ८ कोष्ठ में रखे, इस प्रकार पाचकदशाक्रम समझें ॥ १७-१८ ॥

दृष्टव्य--भाव और भावेश के बलानुसार इस दशा का फल समझना चाहिए।

दशावाहनज्ञानम्-

स्वकीयजन्मनक्षत्राद् गणयेत् पाकभावधि ।
नवभिस्तु हरेद्भागं शेषं तु पाकवाहनः ॥ १९ ॥
गर्दभो घोटको हस्ती महिषो जम्बु-सिंहको ।
काको हंसो मयूरश्च नवैते नरवाहनाः ॥ २० ॥

जिस दशा के वाहन का ज्ञान करना हो, तो जन्मनक्षत्र से—दशा नक्षत्र तक की संख्या को ९ का भाग देकर १ आदि शेष में क्रम से १ गर्दभ, २ घोटक, ३ गज, ४ महिष, ५ जम्बुक, ६ सिंह, ७ काक, ८ हंस और ९ मयूर ये वाहन होते हैं ॥ १९-२० ॥

गर्दभवाहनफलम्–

दशाप्रवेशे यदि गर्दभः स्यादुत्पन्नभोगी जडतासमेतः ।
लज्जाविहीनो धनधान्यहीनः स्यात्मानगो वस्त्रविवर्जितश्च ॥२१॥

दशाप्रवेश में गर्दभ वाहन हो तो, उसमें उपस्थित सुख का भोग होता है–किन्तु बुद्धि, लज्जा, धन, धान्यादि एवं वस्त्रादि की हानि होती है ॥२१॥

घोटकवाहनफलम्–

चपलचञ्चलताबहुभक्षकः प्रकटबुद्धिसघोपचमूपतिः ।
दृढतनुर्बहुकार्यकरः परस्तुरगयोर्यदि वाहनसंस्थितः ॥ २२ ॥

घोटकवाहन हो तो चञ्चलता, क्षुधा की वृद्धि, बुद्धि का विकास, वाद्यादियुक्त सेनापतित्व, शरीर की पुष्टि, बहुत कार्यों का आरम्भ करना आदि फल होता है ॥ २२ ॥

हस्तीवाहनफलम्–

नानाकार्यकृतो हि सौख्य(मूढ) जननो देवाधिपो वाहनः
सन्तप्तो बहुमानता शुभगतिः सेनापतिः शोभनः ।
सर्वः सौख्यकरः सुभूषणधरः स्याच्चचञ्चला दुष्टता
पाकोऽयं यदि वाहनो गजपतेर्नानाकलाकौशलः ॥२३॥

हस्तीवाहन हो तो अनेक कार्य में सफलता, अविवेकी, सन्तप्त, लोक में मान, साधुओं का सङ्ग, सेनापतित्व, कान्ति की वृद्धि, वस्त्र-भूषणादि का लाभ और कुछ चञ्चलता तथा दुष्टता भी होती है ॥ २३ ॥

महिषवाहनफलम्–

महिषयोर्बलबुद्धिविहीनता जयमलं प्रबलाग्निभयातुरम् ।
शकटयोः (कटकयोः) प्रबले बलसंयुतो महिषयोर्यदि
वाहनता भवेत् ॥२४॥

महिषवाहन हो तो बल-बुद्धि की हानि, शत्रु से विजय, अग्निभय से चिन्ता, सेना के द्वारा (अथवा वाहन से) जीवन निर्वाह होता है ॥ २४ ॥

जम्बुकवाहनफलम्–

जम्बुके बहुतरैव चञ्चला व्याधिदुःखपरिपीडिताङ्गना ।
क्लेशता रिपुजनाच्च पीडनं धान्यनाशमतिसंक्षयो भवेत् ॥ २५ ॥

जम्बुकवाहन हो तो अधिक चञ्चलता, रोग, दुःख से स्त्री को पीड़ा, स्वयं भी क्लेशवान्, शत्रु से पीड़ा, धनहानि और बुद्धि का ह्रास होता है ॥ २५ ॥

जम्बुकोत्पन्नभोगी च लाभभक्षस्तथैव हि।
श्वेतान्नं श्वेतवस्त्रं च हानिः स्यात्क्रयविक्रये ॥ २६ ॥

जम्बुकवाहन में उपस्थित विषय का भोग, भोजन लाभ, श्वेत अन्न और श्वेत वस्त्र की प्राप्ति तथा क्रय-विक्रय में हानि होती है ॥ २६ ॥

सिंहवाहनफलम्—

दशाप्रवेशे यदि वाहनश्च सिंहो बलिष्ठो विविधैः प्रकारैः।
उत्पन्नभोगी रिपुनाशकारी स्याद्वाहने केशरिणां विशेषः ॥ २७ ॥

सिंहवाहन हो तो अनेक प्रकार से बल की वृद्धि, उपस्थित सुख का भोग, शत्रु का नाश होता है ॥ २७ ॥

काकवाहनफलम्—

काके वाहनसंस्थिते यदि दशा स्याच्चञ्चलो निर्भयो
त्वक्सारो (वत्सारो) मलिनः कुवेषधरितो नीचैर्जनैः पूजितः।
स्थाने राजभयं तथा रिपुभयं मानाऽपमानं नराद्
दुष्टार्तिः कलहं कुचेष्टितनरः स्त्रीद्वेपकारी भवेत् ॥२८॥

काकवाहन हो तो चञ्चलता, निर्भयता, त्वचा में बल, मलिनता, कुवेष, नीचों से आदर, राजभय, शत्रुभय, लोक में मान और अपमान, दुष्टों से पीड़ा, कुचेष्टा करने वाला और स्त्री से द्वेष करता है ॥ २८ ॥

हंसवाहनफलम्—

जनकलानिधिकेलिसमन्वितो द्विजपतेर्बहुजात्य(त्म)सुखान्वितः।
सदशने च मतिः (मतिनां) प्रबलाय(यि)ता सुगतिता
चतुराननवाहनः ॥२९॥

हंसवाहन हो तो अनेक कलाओं की सिद्धि, क्रीड़ा में रुचि, ब्राह्मणों से आदर सुख, सुभोजन में रुचि, उत्तरोत्तर उन्नति और साधुओं की सङ्गति होती है ॥ २९ ॥

मयूरवाहनफलम्—

मयूरवाहनतो बहुलं सुखं धृतिकलाकुशलो(ऽमल)मखकेलिकृत्।
मधुरवाक्ययुतो मधुरप्रियः सदशने(मे)न नरश्च(स्य)समन्वितः ॥३०॥

मयूरवाहन दशारम्भ से हो तो बहुत सुख, धैर्य, कलाओं की सिद्धि, यज्ञ, क्रीड़ा में रुचि, वचन में मधुरता, मिष्ठान्न में प्रेम और अच्छे लोगों से सौहार्द्र लाभ होता है ॥ ३० ॥

तत्र विंशोत्तरीदशाफलविचारः

सूर्यमहादशाफलम्-

उद्विग्नचित्तपरिखेदितवित्तनाशं क्लेशप्रवासगदपीडमहाभिघातम् ।
संक्षोभितःस्वजनबन्धुवियोगमेति सौरी दशा भवति राजकुलाभिघातः ।१।

सूर्य की महादशा में चित्त में उद्विग्नता, खेद, धननाश, परदेश भ्रमण से रोगी, महाभिघात, क्षोभितचित्त व अपने जनों से वियोग और राजकुल से कष्ट हो ।। १ ।।

सूर्यमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्-

सूर्ये राजकुलाल्लाभः पीडा स्यात्पित्तसम्भवा ।
विपत्तया बान्धवानां व्ययमेव हि सर्वतः ।। २ ।।

रवि की दशा में रवि की अन्तर्दशा हो तो राजा से लाभ, पित्त जनित पीड़ा, बन्धुओं को विपत्ति और हर समय खर्च होता रहता है ।। २ ।।

शत्रुसन्ध्यादिगमनं वित्तलाभं सुखावहम् ।
भवेदन्तर्दशायां हि सूर्यस्यैव यदा शशी ।। ३ ।।

रवि की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो शत्रु से मेल, धन लाभ, सुख की प्राप्ति हो ।। ३ ।।

नृपाल्लाभः सुवर्णानि मणिरत्नप्रवालकम् ।
प्राप्यते यानमानं तु सूर्यस्यान्तर्गते कुजे ।। ४ ।।

रवि की महादशा में मङ्गल की अन्तर्दशा हो तो सुवर्ण-मणि-रत्न- मूंगा-मान की प्राप्ति, सवारी तथा राजा से लाभ होता है ।। ४ ।।

शङ्कामानं व्याधिकोपं वित्तनाशं जनक्षयम् ।
सर्वमत्राऽशुभं विद्यात् सूर्यस्यान्तर्गतस्तमः ।। ५ ।।

रवि की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो तो अनेक तरह की शंका, अपमान, व्याधि, धननाश, जननाश आदि अशुभ हों ।। ५ ।।

गतव्याधिशरीरश्च अलक्ष्म्या त्यज्यते नरः ।
प्राप्नोति धर्मपदवीं भानोरन्तर्गते गुरौ ।। ६ ।।

रवि की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो तो निरोग शरीर, धन-प्राप्ति और धर्म में उच्चस्थान की प्राप्ति हो ।। ६ ।।

राज्यभङ्गः शक्तिहीनः सुहृद्बन्धुविवर्जितः ।
जायते तत्र वैकल्यं सूर्यस्यान्तर्गते शनौ ।। ७ ।।

रवि की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो राज्य भंग, बलक्षय, मित्र एवं बन्धु वियोग और विकलता हो ॥ ७ ॥

क्लेशः कष्टं च दारिद्र्यं पामाविचर्चिकादिभिः ।
शरद्धान्यस्य निक्षिप्तं सूर्यस्यान्तर्गते बुधे ॥ ८ ॥

रवि की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो तो क्लेश, दुःख, दरिद्रता, मकड़ी के कारण उत्पन्न खुजली एवं शारदीय धान्य का नाश हो ॥ ८ ॥

देशत्यागं बन्धुनाशमर्थनाशं कुलक्षयम् ।
केतावन्तर्गते सूर्ये सर्वं चैवाऽशुभं भवेत् ॥ ९ ॥

रवि की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो तो देशत्याग, बन्धु-नाश, अर्थनाश, कुलक्षयादि सब अशुभ होता है ॥ ९ ॥

शिरो रोगः प्रबलेभ्यो ज्वरातीसारशूलयोः ।
शरीरे क्लेशमाप्नोति सूर्यस्यान्तर्गते भृगौ ॥ १० ॥

रवि की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो तो मस्तिष्क रोग, प्रबल से विरोध, ज्वर, अतिसार, शूल, अनेक प्रकार के शरीर में क्लेश होते हैं ॥१०॥

चन्द्रमहादशाफलम्–

सम्यग्विभूतिवरवाहनछत्रयानं
क्षेमप्रतापबलवीर्यसुखानि तस्य ।
मिष्टान्नपान-शयनासन-भोजनानि
चन्द्रो ददाति धनकाञ्चनभूमिलाभम् ॥ ११ ॥

चन्द्रमा की महादशा में ऐश्वर्य, वाहन, छत्र, कल्याण, प्रताप, बलवीर्य, सुख, मिष्टान्न भोजन, धन-सुवर्ण और भूमि का लाभ होता है ॥ ११ ॥

चन्द्रमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्–

चन्द्रान्तः स्त्रीपुत्रलाभं वस्त्राभरणसंयुतम् ।
स्वपक्षगैश्च कल्याणमात्मनिद्रारतिर्भवेत् ॥ १२ ॥

चन्द्रदशा में चन्द्रान्तर्दशा हो तो स्त्री और पुत्र से सुख लाभ, वस्त्र, भूषण, अपने इष्ट-मित्रों से कल्याण और सुखनींद होती है ॥ १२ ॥

अग्निपित्तकृता पीडा वह्निचोरपदच्युतिः ।
भवत्यन्तर्दशायां च चन्द्रे भौमो गतो भवेत् ॥ १३ ॥

चन्द्रदशा में मङ्गल का अन्तर हो तो जठराग्नि और पित्तजन्य पीड़ा, आग तथा चोर से भय एवं अपने पद से च्युति हो ॥ १३ ॥

रिपुरोगाग्निरुद्वेगो बन्धुनाशो धनक्षयः ।
न किञ्चित्सुखमाप्नोति चन्द्रे राहुर्यदाऽनुगः ॥ १४ ॥

चन्द्रमा की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो तो शत्रु, रोग और अग्नि से चित्त में उद्विग्नता, बन्धुओं का नाश एवं धन का क्षय और कुछ भी सुख नहीं हो ॥ १४ ॥

धर्माऽधर्माप्तिसौख्यानि वस्त्रालङ्करणैर्जयः ।
प्राप्नोत्यन्तर्दशायां हि चन्द्रस्यैव गुरुर्यदा ॥ १५ ॥

चन्द्रमा की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो तो धर्माधर्म विचार द्वारा सुख की प्राप्ति, वस्त्र और अलंकार (आभूषण) से जय हो ॥ १५ ॥

बन्धूद्वेगं शोकभयं हानिव्यसनदोषकम् ।
भवन्ति तत्र सन्देहाश्चन्द्रस्यान्तर्गते शनौ ॥ १६ ॥

चन्द्रमा की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो बन्धुओं द्वारा उद्वेग, शोक, भय, हानि, कष्ट एवं सन्देह की वृद्धि होती है ॥ १६ ॥

सर्वत्र लभते लाभं गजाश्वैर्गोधनादिकैः ।
भवत्यन्तर्दशायां हि चन्द्रस्यान्तर्गते बुधे ॥ १७ ॥

चन्द्रमा की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो तो सर्वत्र लाभ, हाथी, घोड़ा, गाय, धन इत्यादि की प्राप्ति हो ॥ १७ ॥

चापल्यं चोद्वेगवृद्धिर्बन्धुहानिर्धनक्षयः ।
जायतेऽन्तर्गते केतौ चन्द्रस्यैव यदाऽनुगः ॥ १८ ॥

चन्द्रमा की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो तो चञ्चलता, उद्वेग वृद्धि, बन्धु हानि तथा धन क्षय हो ॥ १८ ॥

बहुस्त्रीसङ्गमं चाऽथ कन्यकाजन्म एव च ।
मुक्ताहारमणिप्राप्तिश्चन्द्रस्यान्तर्गते सिते ॥ १९ ॥

चन्द्रमा की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो तो बहुत स्त्रियों के साथ संगम, कन्या का जन्म, मुक्ताहार, मणि आदि प्राप्त होते हैं ॥ १९ ॥

जनप्रभावसौख्यं च व्याधिनाशं रिपुक्षयम् ।
ऐश्वर्यं सौख्यमतुलं चन्द्रमर्काऽनुगो यदि ॥ २० ॥

चन्द्रमा की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो तो जनता में प्रभाव, सुख, व्याधिनाश, शत्रुक्षय, ऐश्वर्य और जिसकी तुलना न हो ऐसा सुख मिले ॥२०॥

मङ्गलमहादशाफलम्–

शस्त्राभिघातो नृपतेश्च पीडा चौर्याग्निरोगाश्च धनस्य हानिः ।
कार्याभिघातश्च नरस्य दैन्यं भवेद् दशायां धरणीसुतस्य ॥२१॥

मङ्गल की महादशा में शस्त्र से आघात, राजपीड़ा, चोरी, अग्नि, रोग से डर, धन की हानि, कार्य में असफलता, दरिद्रता हो ॥ २१ ॥

भौममध्ये सर्वेषामन्तरफलम्–

कौज्यां शत्रुविमर्दश्च विग्रहो बन्धुभिः सह ।
रक्तपित्तकृता पीडा परस्त्रीसङ्गमो भवेत् ॥ २२ ॥

मंगल की महादशा में मंगल की अन्तर्दशा हो तो शत्रु से लड़ाई, भाई-बन्धुओं से विरोध, रक्त-पित्त जनित शरीर में पीडा तथा अन्य स्त्री से संगम हो ॥ २२ ॥

शस्त्राग्निचौरशत्रूणामापदां च भयं भवेत् ।
अर्थनाशो रुजापीडा राहौ मङ्गलवर्तिनि ॥ २३ ॥

मंगल की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो तो शस्त्र, अग्नि, चोर, शत्रु तथा विपत्ति से भय, धन नाश और रोग से पीड़ा हो ॥ २३ ॥

पुण्यतीर्थाभिगमनं देवब्राह्मणपूजनम् ।
जीवे कुजान्तरं प्राप्ते नृपात् किञ्चिद्भयं भवेत् ॥ २४ ॥

मंगल की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो तो पुण्यतीर्थ गमन, देव-ब्राह्मण पूजन तथा राजा से भय होता है ॥ २४ ॥

उपर्युपरि जायन्ते दुःखान्यपि सहस्रशः ।
जनक्षयं कुजस्यार्की या प्राप्तोऽन्तर्दशा यदा ॥ २५ ॥

मंगल की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो एक के बाद एक हमेशा दुःख आते ही रहते हैं तथा जन का नाश होता है ॥ २५ ॥

रिपुशस्त्राग्निचौरेभ्यो नाशं प्राप्नोति मानवः ।
महाक्रूरकृता पीडा कुजस्याऽन्तर्गते बुधे ॥ २६ ॥

मंगल की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो तो शत्रु, शस्त्र, अग्नि तथा चौरादि से भय और महादुष्ट मनुष्य से पीड़ा प्राप्त हो ॥ २६ ॥

मेघाशनिभयं घोरं शस्त्राग्नितस्करैस्तथा ।
क्लेशमाप्नोति भौमस्य केतुरन्तर्गतो यदा ॥ २७ ॥

मंगल की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो तो बिजली गिरने से भय, शस्त्र, अग्नि और चोर से क्लेश हो ॥ २७ ॥

शस्त्रकोपभयं व्याधिर्धनक्षयमुपद्रवम् ।
प्रवासगमनानि स्युः कुजस्याऽन्तर्गते सिते ॥ २८ ॥

मंगल की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो तो शस्त्र से भय, व्याधि, धनक्षय, उपद्रव तथा विदेशगमन हो ॥ २८ ॥

प्रचण्डशासनं याति नृपाद्धयजयान्वितम् ।
क्षुधतेऽनर्थयुक्तं च भौमस्यान्तर्गते रवौ ॥ २९ ॥

मंगल की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो तो प्रचण्ड शासन कर्ता, घुड़दौड़ में राजा से घोड़ा जीतने वाला और अनर्थकारी होता है ॥ २९ ॥

नानावित्तसुहृत्सौख्यं युक्तं मुक्तामणिप्रभोः ।
भौमस्यान्तर्दशां प्राप्तश्चन्द्रमाः कुरुते भृशम् ॥ ३० ॥

मंगल की महादशा में चन्द्र की अन्तर्दशा हो तो अनेक प्रकार के धन तथा मित्र एवं राजपक्ष से सुख, मुक्ता, मणि लाभ हो ॥ ३० ॥

राहुमहादशाफलम्-

बुद्ध्या विहीनमतिविभ्रमसर्वशून्यं विश्वं भयातिविषमापदमृत्युतुल्यम् ।
व्याधिर्वियोगधनहानिविषानि चैवं राहोर्दशा सृजति जीवितसंशयं च ॥

राहु की महादशा में बुद्धि से हीन, मतिभ्रम, सर्व शून्यता, अति भय से विषम आपत्ति, मृत्युतुल्य व्याधि, वियोग, धन हानि, विषभय और जीने में सन्देह होता है ॥ ३१ ॥

राहुमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्-

स्वभ्रातृतातमरणं बन्धुनाशात्मकं रुजा ।
अर्थनाशो विदेशस्य गमनं गौरवाल्पता ॥ ३२ ॥

राहु की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो तो भाई, पिता का मरण, बन्धु नाश से रोग तथा धननाश, विदेश गमन और गौरव में ह्रास हो तथा आदर नहीं होता ॥ ३२ ॥

व्याधिदुःखपरित्यक्तो देवब्राह्मणपूजकः ।
भवत्यर्थयुतश्चाऽत्र राहोरन्तर्गते गुरौ ॥ ३३ ॥

राहु की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो तो व्याधि, दुःख से रहित, देव-ब्राह्मण का सेवक और धन से युत होता है ॥ ३३ ॥

रक्तपित्तकृता पीडा कलहः स्वजनैः सह ।
देहभङ्गः कृतत्यागो राहोरन्तर्गते शनौ ॥ ३४ ॥

राहु की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो रक्त-पित्त जनित पीड़ा, अपने जनों से कलह, शरीर में चोट इत्यादि से कोई अंग टूट जाना तथा किया हुआ कार्य त्याग देता है ।। ३४ ।।

सुहृद्बन्धुजनैर्योगं बुद्धिभोगधनागमम् ।
किञ्चित्क्लेशमवाप्नोति स्वर्भान्वन्तर्गते बुधे ।। ३५ ।।

राहु की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो तो मित्र एवं बन्धुओं से सहयोग, बुद्धि, धनागम, भोग तथा कुछ क्लेश होता है ।। ३५ ।।

ज्वराग्निरिपुशस्त्रैश्च मृत्युं प्राप्नोति सर्वदा ।
राहोरन्तर्गते केतौ नास्त्यत्र संशयः क्वचित् ।। ३६ ।।

राहु की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो तो ज्वर, अग्नि, शत्रु अथवा शस्त्र द्वारा मृत्यु होती है, इसमें सन्देह नहीं ।। ३६ ।।

सुहृत्तापः कामिता स्यात् स्त्रीलाभो वित्तसञ्चयः ।
कलहो बान्धवैः सार्द्धं राहोरन्तर्गते सिते ।। ३७ ।।

राहु की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो तो मित्र द्वारा कष्ट, काम की उत्तेजना, स्त्री लाभ, धन संचय, भाई-बन्धुओं से लड़ाई हो ।। ३७ ।।

शस्त्ररोगभयं घोरमर्थनाशं नृपाद्भयम् ।
अग्निचौरभयं चाऽत्र दैत्यस्यान्तर्गते रवौ ।। ३८ ।।

राहु की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो तो शस्त्र तथा रोग से भय, धन नाश, राजा से भय तथा अग्नि एवं चोर से भय होता है ।। ३८ ।।

स्त्रीलाभं कलहं चैव वित्तनाशमनिर्वृतिः ।
बान्धवैः सह संक्लेशो राहोरन्तर्गतः शशी ।। ३९ ।।

राहु की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो स्त्री लाभ, कलह, धन नाश, कष्ट, बन्धुओं के साथ क्लेश होता है ।। ३९ ।।

रिपुशस्त्राग्निचौराणां भयमाप्नोति सर्वदा ।
स्वर्भान्वन्तर्गते भौमे निश्चितं नाऽत्र संशयः ।। ४० ।।

राहु की महादशा में मंगल की अन्तर्दशा हो तो शत्रु, शस्त्र-अग्नि और चोर से हमेशा भय रहता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है ।। ४० ।।

गुरुमहादशाफलम्–

नृपप्रसादं धनधान्यपुत्रकलत्रमित्रादिषु रत्नलाभम् ।
नीरोगतां शत्रुजयं च सौख्यं गुरोर्दशा वाञ्छितमातनोति ।। ४१ ।।

गुरु की महादशा हो तो राजा से धन, धान्य, आदर हो, पुत्र, मित्र और रत्न लाभ, नीरोगता, शत्रु से विजय, सुख तथा मनोरथ (इच्छित वस्तु) प्राप्त होती है ॥ ४१ ॥

गुरोर्मध्ये सर्वेषामन्तरफलम्-

जैव्यन्तरे सुतोत्पत्तिर्धनधर्मार्थगौरवम् ।
हेम्नश्चाऽम्बरलाभश्च वर्णेभ्यो ह्यतिसञ्चयः ॥ ४२ ॥

गुरु की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो तो पुत्र उत्पत्ति, धन, धर्म और गौरव की प्राप्ति एवं सब वर्णों से सुवर्ण, वस्त्र का लाभ हो ॥ ४२ ॥

वेश्या-स्त्री-मद्यपानैश्च भूषितः सुखवर्जितः ।
विलुप्तधर्मवस्त्रोऽसौ सौरिर्गुर्वनुगो यदा ॥ ४३ ॥

गुरु की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो मनुष्य वेश्या-स्त्री और मद्यपान से भूषित, सुखहीन, धर्म तथा वस्त्र से हीन हो जाता है ॥ ४३ ॥

स्वस्थो मित्रयुतो भोगी गुरुदेवाग्निभक्तिकृत् ।
सुकृताचरणे शक्तो जीवस्यान्तर्गते बुधे ॥ ४४ ॥

गुरु की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो तो स्वस्थ, मित्रों से युत, भोगी, गुरु-देव-अग्नि का भक्त, सत्कर्म करने वाला होता है ॥ ४४ ॥

पुत्रबन्धुक्षतो भोगी शुक्तः स्वस्थानवर्जितः ।
परिभ्रमति सर्वत्र केतावन्तर्गते गुरौ ॥ ४५ ॥

गुरु की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो तो पुत्र तथा बन्धुओं से दुःख पाने वाला, भोगी, अपने स्थान से भ्रष्ट, इधर-उधर घूमने वाला होता है ॥ ४५ ॥

कलहं शत्रुवैरं च चित्तमानसनिर्वृतिः ।
स्त्रीभ्यो विघातमाप्नोति जीवस्यान्तर्गते सिते ॥ ४६ ॥

गुरु की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो तो लड़ाई, शत्रु से शत्रुता, धन और मानसिक चिन्ता तथा स्त्रियों से कष्ट प्राप्त होता है ॥ ४६ ॥

रणे जयं च शत्रूणां नृपपूजा च लभ्यते ।
प्रचण्डसाहसाङ्गैश्च जीवस्यान्तर्गते रवौ ॥ ४७ ॥

गुरु की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो शत्रुओं से विजय, सुख, राजा से आदर और साहस की वृद्धि होती है ॥ ४७ ॥

बहुस्त्रीरतिभोगश्च रिपुरोगः विवर्जितः।
नृपतुल्यो भवेन्नित्यं चन्द्रे गुर्वन्तरङ्गते ॥ ४८ ॥

गुरु की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो बहुत स्त्रियों का सुख, रोग और शत्रुओं से रहित, राजा के समान सुख लाभ होता है ॥ ४८ ॥

तीक्ष्णशौर्यं रिपुं जित्वा धनं कीर्तिमवाप्नुयात्।
सुखसौभाग्यमारोग्यं गुरोरन्तर्गते कुजे ॥ ४९ ॥

गुरु की दशा में मङ्गल की अन्तर्दशा हो तो बड़े-बड़े प्रचण्ड शत्रुओं को जीतने में कीर्ति, सुख, आरोग्य, सौभाग्य का लाभ होता है ॥ ४९ ॥

बन्धूद्वेगं रुजञ्चैव कलहं मरणाद्भयम्।
स्वस्थानच्युतिमाप्नोति राह्वन्तर्गते गुरोः ॥ ५० ॥

गुरु की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो तो बन्धुओं से उद्वेग, रोग, कलह, मृत्यु भय और पदच्युति होती है ॥ ५० ॥

शनिमहादशाफलम्-

मिथ्यापवाद-वधबन्ध-निराश्रयं च
मित्रातिवैरधनधान्यकलत्रशोकम्।
आशानिराशकृतनिष्फलसर्वशून्यं
कुर्याच्छनैश्चरदशां सततं नराणाम् ॥ ५१ ॥

शनि की महादशा में मिथ्या अपवाद, वध-बन्धन, आश्रय हानि, मित्रों से भी वैर, धन-धान्य और स्त्री की हानि, इच्छा में असफलता तथा सब कार्य में हानि ही होती है ॥ ५१ ॥

शनिमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्-

शनैश्चराद् देहपीडा पुत्रदारैश्च विग्रहः।
स्त्रीकृते बुद्धिनाशश्च विदेशगमनं भवेत् ॥ ५२ ॥

शनि की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो शरीर में क्लेश, स्त्री, पुत्र से कलह, स्त्री के कारण बुद्धि में चञ्चलता और विदेश भ्रमण होता है ॥ ५२ ॥

सौभाग्यं सौख्यविजयं बोधसंस्थानमानतः।
सुहृद्वित्तप्रदं सौख्यं सौरस्यान्तर्गते बुधे ॥ ५३ ॥

शनि की महादशा में बुध का अन्तर हो तो सौभाग्य, सुख, विजय, ज्ञान का उदय, स्थान और आदर के लाभ से सुख, मित्रों से धन लाभ होता है ॥ ५३ ॥

रक्तपित्तकृता पीडा वित्तचिन्ता न संग्रहः ।
दुःस्वप्नं बन्धनं चैव केतावन्तर्गते शनेः ॥ ५४ ॥

शनि की महादशा में केतु का अन्तर हो तो रक्त-पित्त विकार से पीड़ा, धन की चिन्ता, सञ्चय नहीं हो, दुःस्वप्न दर्शन, बन्धन होता है ॥ ५४ ॥

सुहृद्बन्धुयशोयुक्तं भार्यावित्तजयान्वितम् ।
सुखसौभाग्यवात्सल्यं सौरस्यान्तर्गते सिते ॥ ५५ ॥

शनि की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो मित्र और बन्धु में प्रेम, स्त्री-धन-विजय लाभ, सुख और सौभाग्य, प्रेम की वृद्धि होती है ॥ ५५ ॥

पुत्रदारधनैर्नाशं करोति सभयं महत् ।
सौरस्यान्तर्गते भानौ जीवितस्याऽपि संशयः ॥ ५६ ॥

शनि की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो पुत्र, स्त्री और धन की हानि, भय और जीवन का संशय होता है ॥ ५६ ॥

मरणं स्त्रीवियोगश्च बन्धूद्वेगोऽसुखं भृणु ।
क्रुद्धमारुतजो रोगं चन्द्रे चाऽन्तर्गते शनेः ॥ ५७ ॥

शनि की महादशा में चन्द्र का अन्तर हो तो मृत्यु भय, स्त्री का वियोग, बन्धुओं में उद्वेग, दुःख और प्रबल वायु के प्रकोप से रोग होता है ॥ ५७ ॥

देशभ्रंशं तथा दुःखं कुरुते व्याधिभिर्भयम् ।
अन्तर्दशायां सौरस्य कौज्यां प्राणमहद्भयम् ॥ ५८ ॥

शनि की महादशा में मङ्गल का अन्तर हो तो देशत्याग, दुःख, रोगों से भय तथा प्राण भय तक होता है ॥ ५८ ॥

श्वभ्रवाताङ्गभेदश्च ज्वरातीसारपीडनम् ।
शत्रुभङ्गोऽर्थनाशश्च राहोरन्तर्गते शनौ ॥ ५९ ॥

शनि की महादशा में राहु का अन्तर हो तो श्वेत कुष्ठ, वात-व्याधि से शारीरिक कष्ट, ज्वर-अतीसार से पीड़ा और शत्रु से पराजय, धनहानि आदि फल होते हैं ॥ ५९ ॥

द्विजदेवार्चनं सौख्यं बहुभृत्यगुणैर्युतम् ।
स्थानप्राप्तिं गुरुः कुर्यात्सौरस्यान्तर्गतो भवेत् ॥ ६० ॥

शनि की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो देवता और ब्राह्मणों में भक्ति, अच्छे नौकर आदि से सुख और स्थान का लाभ होता है ॥ ६० ॥

बुधमहादशाफलम्–

दिव्याङ्गनावदनपङ्कजषट्पदस्य लीलाविलासवरभोगसमन्वितस्य।
नानाप्रकारविभवागमकोशवृद्धिः क्षिप्रं पुनर्बुधदशामिमतार्थसिद्धिम् ॥

बुध की महादशा में सुन्दरी स्त्रियों के मुख-कमल का रसपान, उत्तम लीला-विलासादि भोगों से युत, अनेक प्रकार के धनागम से कोश की शीघ्र वृद्धि और मनोरथ सिद्ध हों ॥ ६१ ॥

बुधमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्–

बुद्धिधर्मसमायोगो मित्रबन्धुसमागमः।
प्राप्तिर्ज्ञानस्य विपुला देहपीडा प्रकोपजम् ॥ ६२ ॥

बुध की दशा में बुध का अन्तर हो तो धर्म में वृद्धि, मित्र-बन्धु का समागम, ज्ञान की प्राप्ति और शरीर में पीड़ा की वृद्धि हो ॥ ६२ ॥

दुःखशोकाकुलं नित्यं शरीरं क्लेशसंयुतम्।
भवत्यन्तर्दशायां हि केतुर्यदि बुधस्य च ॥ ६३ ॥

बुध की दशा में केतु का अन्तर हो तो नित्य दुःख और शोक से व्याकुलता, शरीर रोग से युत रहता है ॥ ६३ ॥

गुरुवस्त्राणि लभ्यन्ते धनं धर्मप्रियं तथा।
वस्त्रालङ्करणैर्युक्ते बुधस्यान्तर्गतः सितः ॥ ६४ ॥

बुध की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो बहुमूल्य वस्त्र, धन, धर्म में आस्था और वस्त्र-अलंकार से युत हो ॥ ६४ ॥

स्वर्णादिकं भवेत् प्राप्तं यशः प्राप्नोति सर्वतः।
जायास्त्रीभवोद्वेगो बुधस्यान्तर्गते रवौ ॥ ६५ ॥

बुध की दशा में रवि का अन्तर हो तो सुवर्णादि लाभ, सब तरफ से यश प्राप्ति तथा अपनी ही स्त्री द्वारा उद्वेग हो ॥ ६५ ॥

कुष्ठगण्डविकारैश्च क्षयरोगभगन्दरौ।
गजादिवाहनैर्भीतिबुधस्यान्तर्गतो विधुः ॥ ६६ ॥

बुध में चन्द्र का अन्तर हो तो कुष्ठ-गलगण्ड रोग, क्षय रोग, भगन्दर और हाथी इत्यादि वाहन से गिरने का भय हो ॥ ६६ ॥

शिरोरोगगले रोगैर्नानाक्लेशविमर्दनम्।
चौरभङ्गभयं चाऽथ बुधस्यान्तर्गते कुजे ॥ ६७ ॥

बुध की दशा में मङ्गल का अन्तर हो तो मस्तक और गले में रोग और चोरी का भय हो ॥ ६७ ॥

अकस्माच्छत्रुनिर्घातमकस्मादर्थनाशनम् ।
सम्पर्कादग्निदाहं च राहोरन्तर्गते बुधे ॥ ६८ ॥

बुध की दशा में राहु का अन्तर हो तो अकस्मात् शत्रु से पीड़ा, धन नाश, किसी के सम्पर्क से अग्नि भय हो ॥ ६८ ॥

व्याधिशत्रुभयैर्मुक्तो ब्रह्मिष्ठो नृपवल्लभः ।
पूतात्मा धार्मिकश्चैव बुधस्यान्तर्गते गुरौ ॥ ६९ ॥

बुध की दशा में गुरु का अन्तर हो तो व्याधि और शत्रु के भय से छुटकारा, ब्रह्मिष्ठ, राजप्रिय, पवित्रात्मा और धार्मिक हो ॥ ६९ ॥

धर्मार्थभोगी गम्भीरः क्लीबो मित्रार्थलुब्धकः ।
सर्वकार्येष्वनुत्साहो बुधे सौरो यदाऽनुगः ॥ ७० ॥

बुध की दशा में शनि का अन्तर हो तो धर्म और धन का भोगी, गम्भीर, नपुंसक, मित्र के धन का लोभी और सब कार्य में आलसी होता है ॥ ७० ॥

केतुमहादशाफलम्-

विषादकर्त्री धनधान्यहर्त्री सर्वापदां मूलमनर्थदात्री ।
भयङ्करी रोगविपद्विधात्री केतोर्दशा स्यात् किल जीवहन्त्री ॥७१॥

केतु की महादशा हो तो विषाद, धन-धान्यनाश, सब आपदाओं की जड़ अनर्थ, भय, रोग, विपत्ति और नाश की देने वाली होती है ॥ ७१ ॥

केतुमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्-

केतौ कन्यापुत्रनाशधनरोगाग्निविग्रहाः ।
भयं राजकुलाद् दुष्टस्त्रीभिः सह कलिर्भवेत ॥ ७२ ॥

केतु की दशा में केतु का अन्तर हो तो कन्या, पुत्र, धन का नाश, रोग और अग्नि भय, विरोध, राजकुल से भय और दुष्टा स्त्री से लड़ाई हो ।७२।

केतोरन्तर्गते शुक्रे प्रियया च कलिर्भवेत् ।
अग्निदाहं ज्वरं तीव्रं स्त्रीत्यागं कन्यकाजनिः ॥ ७३ ॥

केतु की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो स्त्री से लड़ाई, अग्निदाह, तीव्र ज्वर, स्त्री त्याग और कन्या सन्तान की उत्पत्ति हो ॥ ७३ ॥

केतोरन्तर्गते सूर्ये राजभङ्गोऽरिविग्रहः ।
अग्निदाहो ज्वरस्तीव्रो विदेशगमनं भवेत् ॥ ७४ ॥

केतु की दशा में रवि का अन्तर हो तो राजभङ्ग, शत्रु से लड़ाई, अग्नि दाह, तीव्र ज्वर तथा विदेश गमन होता है ॥ ७४ ॥

अर्थलाभोऽर्थहानिश्च सुखं दुःखं तथैव च।
स्त्रीलाभो धनहानिश्च केतोरन्तर्गतः शशी ॥ ७५ ॥

केतु की दशा में चन्द्र का अन्तर हो तो कभी धन लाभ और कभी धन हानि, सुख और दुःख (अर्थात् जैसा था वैसा ही रहे), स्त्री लाभ, धनहानि होती है ॥ ७५ ॥

गोत्रजैः सह संवादश्चौराणां च भयं तथा।
शरीरपीडां प्राप्नोति केतोरन्तर्गते कुजे ॥ ७६ ॥

केतु की दशा में मंगल का अन्तर हो तो अपने गोत्र वालों से लड़ाई, चोर से भय और शरीर में दुःख होता है ॥ ७६ ॥

चौरैश्च शत्रुभिर्वापि देहभङ्गः प्रजायते।
दुर्जनैः सह संवादो राहुः केतोर्यदाऽनुगः ॥ ७७ ॥

केतु की दशा में राहु का अन्तर हो तो चोर से या शत्रु से शरीर का कोई अंग टूटे और दुष्टों के साथ लड़ाई हो ॥ ७७ ॥

दुर्जनैः सह संयोगो राजमान्यैः सहाऽथवा।
भूलाभो जन्म पुत्रस्य केतोरन्तर्गते गुरोः ॥ ७८ ॥

केतु की दशा में गुरु का अन्तर हो तो दुर्जन से मित्रता या किसी राजमान्य व्यक्ति से मिलन, पृथ्वी से लाभ और पुत्र का जन्म होता है ॥ ७८ ॥

वातपित्तभवा पीडा स्वजनैः सह विग्रहः।
विदेशगमनं चापि केतोरन्तर्गते शनौ ॥ ७९ ॥

केतु की दशा में शनि का अन्तर हो तो वात-पित्त जनित पीड़ा, अपने आदमियों से लड़ाई और विदेश गमन होता है ॥ ७९ ॥

सुहृद्बन्धुसमायोगो बुद्धिबोधं धनागमम्।
न किञ्चित्क्लेशमाप्नोति केतोरन्तर्गते बुधे ॥ ८० ॥

केतु की महादशा में बुध का अन्तर हो तो मित्र एवं बन्धुओं का मिलन, सद्बुद्धि का उदय, धनागम और निरोग होता है ॥ ८० ॥

शुक्रमहादशाफलम्–

मित्रोपचारमनिशं प्रमदाविलासं
श्वेतातपत्रनृपपूजितदेशलाभम्।
हस्त्यश्वयानपरिपूर्णमनोरथाश्च
शौक्री दशा सृजति निश्चलराज्यलक्ष्मीम् ॥ ८१ ॥

शुक्र की महादशा हो तो मित्र से सुख, स्त्री से विलास, श्वेत छत्र और राज्य, देश की प्राप्ति, हाथी, घोड़ों की सवारी से पूर्ण मनोरथ और स्थिर लक्ष्मी प्राप्त होती है ॥ ८१ ॥

शुक्रमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्-

शौक्रे स्त्रीसङ्गमो लाभो धर्मकामार्थसंयुतः ।
कौशल्यं च महाकीर्तिर्निधिलाभश्च जायते ॥ ८२ ॥

शुक्र की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो स्त्री से संभोग, लाभ, धर्म, काम, अर्थ से युत, कुशलता तथा विस्तृत कीर्ति और धन लाभ हो ॥ ८२ ॥

गण्डोदरक्षयै रोगैर्नृपबन्ध्यादिकैतवैः ।
उपपातो भवेन्नूनं शुक्रस्यान्तर्गते रवौ ॥ ८३ ॥

शुक्र की दशा में रवि का अन्तर हो तो गण्ड रोग, उदर रोग, क्षय-रोग, राजा, बन्ध्या स्त्री और कपटी से उपद्रव होता है ॥ ८३ ॥

नखास्थिजशिरोरोगैः कामलाद्यामयैर्दशाम् ।
शरीरे क्लेशमाप्नोति शुक्रस्यान्तर्गतः शशी ॥ ८४ ॥

शुक्र की दशा में चन्द्र का अन्तर हो तो नख, हड्डी, मस्तिष्क में रोग, कमल रोग, आमाशय रोग से शरीर में क्लेश होता है ॥ ८४ ॥

वातपित्तक्षयो रोगो मदोत्साहो न संशयः ।
भूयः स्याद् भूमिलाभश्च शुक्रस्यान्तर्गते कुजे ॥ ८५ ॥

शुक्र की दशा में मङ्गल का अन्तर हो तो वात, पित्त विकार से क्षय-रोग, मद और उत्साह तथा भूमि लाभ होता है ॥ ८५ ॥

अन्त्यजैः सह संक्लेशो बन्धूद्वेगः सुहृद्वधः ।
अकस्माद्भयमाप्नोति राहोरन्तर्गते सिते ॥ ८६ ॥

शुक्र की दशा में राहु का अन्तर हो तो हीन जातियों द्वारा क्लेश, बन्धु से उद्वेग, मित्रों की हानि और अचानक भय उपस्थित होता है ॥ ८६ ॥

धान्यरत्नसमृद्धिं च भूमिपुत्रसुखावहम् ।
श्रियं प्रभुत्वमाप्नोति जीवः शुक्रदशां गतः ॥ ८७ ॥

शुक्र की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो धन, रत्न आदि की वृद्धि, भूमि लाभ. पुत्र सुख, सम्पत्ति और प्रभुता की वृद्धि होती है ॥ ८७ ॥

वृद्धस्त्रीभिः सह क्रीडा पुत्रनाशो विपत्पदम् ।
शत्रुनाशः सुखप्राप्तिः सौरः शुक्रदशां गतः ॥ ८८ ॥

शुक्र की दशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो वृद्धा स्त्री का संग, पुत्र को क्लेश, विपत्ति तथा शत्रुओं का नाश और सुखकी प्राप्ति होती है ॥ ८८ ॥

धनागमश्च सौख्यं च मनोरथयशः श्रियः ।
नृपवल्लभता शौर्यं शुक्रस्यान्तर्गते बुधे ॥ ८९ ॥

शुक्र की दशा में बुध का अन्तर हो तो धन लाभ, सुख, मनोरथ सिद्धि, यश, सम्पत्ति, राजा से आदर और बल की वृद्धि होती रहती है ॥ ८९ ॥

कलहो बान्धवैः सार्द्धं रिपुनाशोऽरिविग्रहः ।
चलाऽचलं समग्रं च केतावन्तर्गते कवेः ॥ ९० ॥

शुक्र की दशा में केतु का अन्तर हो तो बन्धुओं का कलह, शत्रु का नाश, शत्रुओं से विग्रह तथा धनादि में ह्रास और वृद्धि होती रहती है ॥ ९० ॥

तत्राऽष्टोत्तरी दशाफलविचारः

सूर्यमहादशाफलम्–

रवेर्दशायामतितीक्ष्णभोज्यं प्राप्नोति मानोपचयं महान्तम् ।
धनानि चामीकरसंप्रशान्तं संजायते बन्धुसुखं शुभं च ॥ १ ॥

सूर्य की महादशा में अत्यन्त तीक्ष्ण भोजन, सम्मान एवं बहु प्रकार के धन और बन्धु सुख होता है ॥ १ ॥

सूर्यमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्–

बन्धूनां स्वान्तरे मानो बन्धूनां मरणं भवेत् ।
प्रत्यन्तरे चान्तरादौ सर्वमेव फलं वदेत् ॥ २ ॥

बन्धु के प्रति मान एवं बन्धु का मरण यह फल सूर्य की दशा में सूर्य के अन्तर और प्रत्यन्तर में भी होता है ॥ २ ॥

शत्रुनाशोऽर्थलाभश्च चिन्तानाशः सुखागमः ।
सूर्यस्यान्तर्गते चन्द्रे व्याधिनाशश्च जायते ॥ ३ ॥

रवि में चन्द्र का अन्तर हो तो शत्रु का नाश, धन लाभ, चिन्ता का नाश, व्याधि और सुख का आगमन होता है ॥ ३ ॥

प्रवालमुक्ताहेमादि-धनं प्राप्नोति भूपतेः ।
रवेरन्तर्गते भौमे विभूतिः सुखमद्भुतम् ॥ ४ ॥

रवि की दशा में मङ्गल का अन्तर हो तो राजा से मूँगा, मुक्ता, सुवर्णादि धन मिलता है और ऐश्वर्य सुख होता है ॥ ४ ॥

ग्रहवातव्याधिहानिर्द्रव्यनाशः कुलक्षयः ।
अविश्वासो भवेल्लोके रवेरन्तर्गते बुधे ॥ ५ ॥

रवि की दशा में बुध का अन्तर हो तो ग्रहजनित व्याधि, वात रोग, हानि, द्रव्य नाश, कुल का नाश और लोक में अविश्वास होता है ॥ ५ ॥

महादुःखानि जायन्ते पुत्रमित्रविनाशनम् ।
रवेरन्तर्गते मन्दे शत्रुतश्च भयं भवेत् ॥ ६ ॥

रवि की दशा में शनि का अन्तर हो तो अत्यन्त दुःख, पुत्र तथा मित्र का नाश और शत्रु से भय होता है ॥ ६ ॥

विपद्रोगविनाशश्च लक्ष्मीमेधे सुखानि च ।
रवेरन्तर्गते जीवे शत्रमङ्गलमुत्सवः ॥ ७ ॥

रवि की दशा में गुरु का अन्तर हो तो विपत्ति तथा रोग का नाश, लक्ष्मी, बुद्धि, सुखादि विकाश, शत्रु को अमंगल और अपना उत्सव हो ॥ ७ ॥

शोको भङ्गो महाभीतिर्विपत्तिरशुभं नृणाम् ।
रवेरन्तर्गते राहौ सर्वत्राऽमङ्गलक्रिया ॥ ८ ॥

रवि की दशा में राहु का अन्तर हो तो शोक, स्थान-भ्रष्ट, महा भय, विपत्ति और सब जगह अमङ्गल होता है ॥ ८ ॥

गात्रपीडा भयं त्रासो ज्वरातीसारशूलके ।
द्रव्यादिहानिं प्राप्नोति रवेरन्तर्गते सिते ॥ ९ ॥

रवि की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो शरीर में पीड़ा, भय, ज्वरातिसार, शूल एवं द्रव्यादि की हानि होती है ॥ ९ ॥

चन्द्रमहादशाफलम्-

नित्यं विभूषामणिवस्त्रलाभं मिष्टान्नपानं प्रमदाऽनुरागम् ।
चान्द्रीदशा साधुफलं नराणां ददाति पूजां नृपतेः सदैव ॥ १० ॥

चन्द्र की महादशा में नित्य आभूषण, मणि, वस्त्र लाभ, मिष्टान्नपान, स्त्री से प्रेम, राजा से आदर और बराबर शुभ फल होता है ॥ १० ॥

चन्द्रमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्-

चन्द्रे स्वान्तर्गते सौख्यं सर्वत्र विजयी भवेत् ।
स्वपक्षवैरं कन्यानां जन्म निद्रारतिर्भवेत् ॥ ११ ॥

चन्द्र की दशा में चन्द्र का अन्तर हो तो सुख, सर्वत्र विजय, अपने पक्ष-वालों से वैर, कन्या का जन्म और अधिक नींद वाला होता है ॥ ११ ॥

शस्त्ररोगभयैर्युक्तो वह्नि-चोर-धनक्षयः ।
विधोरन्तर्गते भौमे मनोदुःखं भवेन्नृणाम् ॥ १२ ॥

चन्द्र की दशा में मङ्गल का अन्तर हो तो शस्त्र-रोग से भय, आग और चोर से धन क्षय तथा मानसिक रोग हो ॥ १२ ॥

सर्वत्र लभते लाभं गजाऽश्वैर्गोधनादिकम् ।
जायते कन्यकालाभश्चन्द्रस्यान्तर्गते बुधे ॥ १३ ॥

चन्द्र की दशा में बुध का अन्तर हो तो हरेक जगह से घोड़ा-हाथी, गाय इत्यादि धन का लाभ तथा कन्या सन्तान होती है ॥ १३ ॥

बन्धुवैरं स्थानहानिः शोको वा कलहो विपत् ।
विधोरन्तर्गते मन्दे सन्दिग्धा भवति ध्रुवम् ॥ १४ ॥

चन्द्र की दशा में शनि का अन्तर हो तो बन्धु से शत्रुता, स्थान हानि, शोक व झगड़ा और विपत्ति होती है तथा असमंजस बना रहता है ॥ १४ ॥

धर्मवित्तसुखानि स्युर्वसनाभरणादिकान् ।
विजयो राजसन्मानो विधोरन्तर्गते गुरौ ॥ १५ ॥

चन्द्र की दशा में गुरु का अन्तर हो तो धर्म, धन से सुख, वस्त्र-आभूषण, विजय और राजा से आदर होता है ॥ १५ ॥

बन्धुनाशः स्थानहानिः शत्रोर्बहुभयं तथा ।
न कुत्राऽपि सुखं राहौ विधोरन्तर्गते सति ॥ १६ ॥

चन्द्र की दशा में राहु का अन्तर हो तों बन्धु मरण, स्थान हानि, शत्रु से अत्यन्त डर और कहीं भी सुख नहीं होता है ॥ १६ ॥

कन्याजन्म सुखप्राप्तिः स्त्रीसङ्गो विजयं सुखम् ।
मुक्ताहेममणिप्राप्तिश्चन्द्रस्यान्तर्गते सिते ॥ १७ ॥

चन्द्र की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो कन्या जन्म-जन्य सुख प्राप्ति, स्त्री से संग, विजय सुख और मुक्ता, सुवर्ण तथा मणि मिलते हैं ॥ १७ ॥

भूपाश्रयसुखं राज्यं रिपुरोगक्षयो भवेत् ।
ऐश्वर्यं सौख्यमतुलं चन्द्रस्यान्तर्गते रवौ ॥ १८ ॥

चन्द्र की दशा में रवि का अन्तर हो तो राजाश्रित राज्य सुख, शत्रु

और रोग नाश, ऐश्वर्य और जिसकी तुलना न हो ऐसा सुख प्राप्त कराता है ॥ १८ ॥

मङ्गलमहादशाफलम्–

शस्त्राभिघातवधबन्धनरेन्द्रपीडा-चिन्ताग्रहो विकलरुक्च गृहाश्रमेषु ।
चौराग्निभीतिधननाशयशःप्रणाशं कुर्याद्विघातभयमत्र दशा कुजस्य ॥

मङ्गल की महादशा हो तो शस्त्र से अभिघात, वध, बन्धन, नरेन्द्र से पीड़ा, चिन्ता से विकलता, रोग, घर तथा आश्रम में चोर एवं अग्नि का भय, धन नाश, यशनाश और कार्य नाश कारक होती है ॥ १९ ॥

भौममध्ये सर्वेषामन्तरफलम्–

भौमे शत्रुविमर्दः स्यात्कलहो बन्धुभिर्नृणाम् ।
स्वान्तरे बहुपीडा स्याद् वृद्धस्त्रीगणिकारतिः ॥ २० ॥

मङ्गल की दशा में मंगल का अन्तर हो तो शत्रु से झगड़ा, बन्धुओं से लड़ाई, शरीर में पीड़ा, वृद्धा स्त्री और वेश्या से संगम हो ॥ २० ॥

भूपाऽग्निनृपचौरेभ्यो भयं पीडा-ज्वरादिभिः ।
भूमिजान्तर्गते सौम्ये कलहो दुर्जनादिभिः ॥ २१ ॥

मंगल की दशा में बुध का अन्तर हो तो राजा, अग्नि और चोर से भय, ज्वरादि से पीड़ा तथा दुष्ट आदमियों के साथ झगड़ा होता है ॥ २१ ॥

महादुःखानि जायन्ते जलभीतिमतिर्नृणाम् ।
भौमस्यान्तर्गते मन्दे राजपीडा भयं नृणाम् ॥ २२ ॥

मंगल की दशा में शनि का अन्तर हो तो अत्यन्त दुःख, जल में डूबने का भय और राजा से पीड़ा का भय होता है ॥ २२ ॥

पुण्यतीर्थादिगमनं देवब्राह्मणपूजनम् ।
भौमस्याऽन्तर्गते जीवे लभते वित्तमुत्कटम् ॥ २३ ॥

मंगल की दशा में गुरु का अन्तर हो तो पुण्यतीर्थादि यात्रा, देव-ब्राह्मण का पूजन और उत्कृष्ट धन की प्राप्ति होती है ॥ २३ ॥

शस्त्राग्निनृपचौराणां भीतिमृत्युर्नृपाद्भयम् ।
भौमस्यान्तर्गते राहौ मनोदुःखं प्रवर्तते ॥ २४ ॥

मंगल की दशा में राहु का अन्तर हो तो शस्त्र, अग्नि, राजा और चोर से भय तथा राजदण्ड से भय एवं मानसिक दुःख होते हैं ॥ २४ ॥

शत्रुभीतिर्महाक्लेशो धर्महानिः सुखव्ययः।
भौमस्यान्तर्गते शुक्रे भयं भूपात् स्वबन्धनम् ॥ २५ ॥

मंगल की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो शत्रु से भय, क्लेश, धर्म हानि, सुख हानि, राजदण्ड से जेल जाने का भय होता है ॥ २५ ॥

सम्मतो नृपतेर्भूरिप्रचण्डैः सह सम्मतिः।
मङ्गलान्तर्गते भानौ भवेत्कुस्त्रीसमागमः ॥ २६ ॥

मंगल की दशा में रवि का अन्तर हो तो राज्याश्रित प्रचण्ड व्यक्तियों से विचार-विमर्श और खराब स्त्रियों से समागम होता है ॥ २६ ॥

बहुवित्तं सुहृत्सौख्यं मुक्ताहेममणिश्रियम्।
भौमस्यान्तर्गते चन्द्रे प्राप्नोति परमं पदम् ॥ २७ ॥

मंगल की दशा में चन्द्र का अन्तर हो तो बहुत धन और मित्र से सुख, मुक्ता-सुवर्ण-मणि-लक्ष्मी और उच्चपद मिलता है ॥ २७ ॥

बुधमहादशाफलम्–

प्राप्नोति सौम्यस्य दशाविपाके शुभे शुभानि प्रियमित्रसङ्गम्।
सुवर्णहेमाम्बरपूर्णलाभं विद्यार्थलाभं मनसः प्रमोदम् ॥२८॥

बुध की महादशा हो तो सर्वत्र शुभ-ही-शुभ होता है, प्रियजन तथा मित्रों का समागम, सोना और वस्त्र लाभ, विद्या एवं धन लाभ और मन में आनन्द होता है ॥ २८ ॥

बुधमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्–

स्वदशान्तर्गते सौम्ये बुद्धिवृद्धिः समागमः।
शरीरे युवतेः सौख्यं नानावित्तं सुखं यशः ॥ २९ ॥

बुध की दशा में बुध का अन्तर हो तो बुद्धि का विकास, स्त्रियों से शारीरिक सुख और अनेक प्रकार के धन, सुख और यश की प्राप्ति होती है ॥ २९ ॥

मित्रार्थसाधकः सिद्धो गुणधर्मार्थसाधकः।
सर्वकार्योद्यमी भास्वान् बुधस्यान्तर्गते शनौ ॥ ३० ॥

बुध की दशा में शनि का अन्तर हो तो मित्र के कार्यों का साधक, सिद्धि, गुण-धर्म और अर्थ का साधक, सब कार्य में उद्यमी और तेजस्वी होता है ॥ ३० ॥

रिपुरोगभयैस्त्यक्तो धर्मज्ञो नृपवल्लभः ।
हेमाद्रिजनशोभाढ्यो बुधस्यान्तर्गते गुरौ ॥ ३१ ॥

बुध की दशा में गुरु का अन्तर हो तो शत्रु तथा रोग भय से मुक्ति, धर्मज्ञ, राजा का प्रिय और सुवर्ण इत्यादि से शोभित होता है ॥ ३१ ॥

अकस्माद् बन्धुभेदो वाऽप्यकस्मात् व्रजतो नृपात् ।
भयं बाह्यार्थनाशो वा राहौ सौम्यान्तरे सति ॥ ३२ ॥

बुध की दशा में राहु का अन्तर हो तो अकस्मात् बन्धु तथा राजा से विरोध, बाहरी लोगों (अन्य) से भय और अर्थ नाश होता है ॥ ३२ ॥

सुरुदेवद्विजार्चासु दानधर्मपरो भवेत् ।
वस्त्रालङ्कारस्क्तस्य लाभौ ज्ञस्यान्तरे सिते ॥ ३३ ॥

बुध की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो गुरु-देवता-ब्राह्मणादि पूजा में रुचि, दान और धर्म में मन रखने वाला, वस्त्र-आभूषण मिलता है ॥ ३३ ॥

सुवर्णहयमाणिक्यं विजयं लभते सुखम् ।
राज्यं श्रियं बलं तेजो बुधस्यान्तर्गते रवौ ॥ ३४ ॥

बुध की दशा में रवि का अन्तर हो तो सुवर्ण, घोड़ा, माणिक और विजय लाभ, राज्य, लक्ष्मी, बल और प्रताप बढ़ता है ॥ ३४ ॥

आचारवान् बहुधनो गजाश्वादिसुखास्पदः ।
बुधस्यान्तर्गते चन्द्रे पर्यङ्कच्छत्रसम्पदः ॥ ३५ ॥

बुध की दशा में चन्द्र का अन्तर हो तो आचारवान्, बड़ा धनी, हाथी, घोड़ा, पलंग और छत्र इत्यादि सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥ ३५ ॥

शिरोरुग्गुदजा पीडा वह्निचौरनृपाद्भयम् ।
बुधस्यान्तर्गते भौमे बन्धुपुत्रादिपीडनम् ॥ ३६ ॥

बुध की दशा में मंगल का अन्तर हो तो शिर रोग और गुदा में पीड़ा, आग-चोर और राजा से भय और बन्धु तथा पुत्र को कष्ट होता है ॥ ३६ ॥

शनिमहादशाफलम्-

प्राप्नोति सौरस्य दशाविपाके दुर्गादिसीमागिरिरक्षणञ्च ।
सुधान्यजीर्णाम्बरभूमिलाभं संयुज्यतेऽश्वैर्महिषादिभिश्च ॥३७॥

शनि की महादशा हो तो किला, सीमा और पर्वत की रक्षा करने वाला, सुन्दर धान्य, पुराना वस्त्र, भूमि, घोड़ा, भैंस आदि का लाभ होता है ॥३७॥

शनिमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्-

बन्धुदारसुतार्थानां नाशो वा पीडनं भवेत्।
विदेशगमनं दुःखं सौरे स्वान्तरसंस्थिते ॥ ३८ ॥

शनि की दशा में शनि का अन्तर हो तो बन्धु, स्त्री, पुत्र तथा धन का नाश अथवा बन्धु, स्त्री, पुत्र आदि को कष्ट एवं विदेशगमनादि दुःख हो ॥३८॥

देवद्विजार्चनं सौख्यं धनवृद्धिर्गुणोदयः।
स्थानाप्तिः कामनाप्तिश्च शनेरन्तर्गते गुरौ ॥ ३९ ॥

शनि की दशा में गुरु का अन्तर हो तो देव-ब्राह्मण पूजक, धन वृद्धि, गुण का उदय, स्थान प्राप्ति और कामना (इच्छित वस्तु) प्राप्त होती है ॥ ३९ ॥

वातरोगः कुक्षिपीडा देशान्तरगतिर्भवेत्।
बुधद्वेषः सुखाभावो राहौ शनिदशां गते ॥ ४० ॥

शनि की दशा में राहु का अन्तर हो तो वात रोग, कुक्षि में पीड़ा, देशान्तर गमन, बुद्धिमानों से द्वेष, सुख का अभाव (अर्थात् कष्ट) होता है ॥४०॥

बन्धुमित्रकलत्रार्थ—सुखसम्पत्समागमः ।
सौहार्दं नृपतेर्लक्ष्मीः शनेरन्तर्गते सिते ॥ ४१ ॥

शनि की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो बन्धु, मित्र, स्त्री, धन, सुख और सम्पत्ति का समागम, राजा की प्रीति से लक्ष्मी की प्राप्ति हो ॥ ४१ ॥

दारसुतधनार्थानां भीतिर्जीवितसंशयः।
शनेरन्तर्गते भानौ सर्वत्राऽशुभदर्शनम् ॥ ४२ ॥

शनि की दशा में रवि का अन्तर हो तो स्त्री, पुत्र, धन नाश का भय, जीने में सन्देह और सब जगह अशुभ ही होता है ॥ ४२ ॥

स्त्रीलाभं विजयं सौख्यं महिषीगोधनादिकम्।
लभते कन्यकाजन्म शनेरन्तर्गते विधौ ॥ ४३ ॥

शनि की दशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो स्त्री लाभ, विजय, सुख, भैंस-गौ आदि धन की प्राप्ति और कन्या का जन्म होता है ॥ ४३ ॥

बन्धुस्त्रीसुतनाशो वा विद्युद्घातभवं भयम्।
महाव्याधिररिष्टं वा शनेरन्तरगते कुजे ॥ ४४ ॥

शनि में मङ्गल का अन्तर हो तो बन्धु-स्त्री-पुत्र का नाश, वज्रपात (बिजली गिरने) का भय, महारोग और अरिष्ट का भय होता है ॥ ४४ ॥

सौख्यं सौभाग्यमारोग्यं यशःसन्तोषवृद्धयः ।
सुहृत्स्थानादिलाभः स्याच्छनेरन्तर्गते बुधे ॥ ४५ ॥

शनि की दशा में बुध का अन्तर हो तो सुख, सौभाग्य, आरोग्य, यश और सन्तोष की वृद्धि, मित्रों से लाभ, स्थान की प्राप्ति होती है ॥ ४५ ॥

गुरुमहादशाफलम्-

गुरोर्दशायां लभतेऽतिसौख्यं गुणोदयं बुद्धयवबोधनाग्र्यचम् ।
स्त्रीवित्तलाभं गतिकान्तिभोगान्महात्मचेष्टाफलमुत्तमं च ॥४६॥

गुरु की महादशा हो तो अति सुख, गुण का प्रकाश, बुद्धि का विकास, स्त्री और धन का लाभ, तेजस्वी, किन्तु भोगी, महात्मा और उत्तम फल की प्राप्ति होती है ॥ ४६ ॥

गुरुमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्-

स्वदशान्तर्गते जीवे धर्मार्थहयलब्धयः ।
लाभो हेमस्थावराणां राजपूजा गुणोदयः ॥ ४७ ॥

गुरु की दशा में गुरु का अन्तर हो तो धर्म, अर्थ, घोड़ा का लाभ, सुवर्ण और स्थावर (जैसे वृक्षादि) का लाभ, राजा से पूजा और गुण का प्रकाश होता है ॥ ४७ ॥

अन्त्यजैः सह सम्प्रीतिर्वातपित्तभयावहम् ।
गुरोरन्तर्गते राहौ सर्वकार्यविनाशनम् ॥ ४८ ॥

गुरु की दशा में राहु का अन्तर हो तो चाण्डाल से प्रेम, वात, पित्त से भय और सब कार्य का नाश होता है ॥ ४८ ॥

रिपुभीतिर्वित्तनाशो बन्धनं कलहो गदः ।
स्त्रीवियोगमवाप्नोति जीवस्यान्तर्गते सिते ॥ ४९ ॥

गुरु की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो शत्रु से धन नाश, बन्धन, झगड़ा, रोग और स्त्री से वियोग होता है ॥ ४९ ॥

नृपतुल्यक्रियायुक्तो व्याधिरोगविवर्जितः ।
बहुस्त्रीसुखसन्तोषी गुरोरन्तर्गते रवौ ॥ ५० ॥

गुरु की दशा में रवि का अन्तर हो तो राजा के तुल्य क्रिया वाला, व्याधि और रोग रहित, बहुत स्त्रियों से सुख एवं सन्तोष होता है ॥ ५० ॥

शत्रुहानिः सुखं पुण्यं शरीरे पुष्टिरुत्तमा ।
स्वजनैः सह संत्रासो गुरोरन्तर्गते विधौ ॥ ५१ ॥

गुरु की दशा में चन्द्र का अन्तर हो तो शत्रु की हानि, सुख, पुण्य का उदय, शरीर स्वस्थ और पुष्ट, स्वजनों के साथ निवास हो ॥ ५१ ॥

धनं कीर्तिः शत्रुहानिर्बन्धुकीर्तिः सुखान्वितः ।
निरोगः सुभगः श्रीमान् गुरोरन्तर्गते कुजे ॥ ५२ ॥

गुरु की दशा में मंगल का अन्तर हो तो धन, कीर्ति मिले, शत्रु हानि, सुख से युक्त, नीरोग, कान्तियुक्त, लक्ष्मीवान् होता है ॥ ५२ ॥

समदुःखसुखं श्रीमान् गुरुदेवाग्निपूजकः ।
गुरोरन्तर्गते सौम्ये शत्रुर्मित्रसमो भवेत् ॥ ५३ ॥

गुरु की दशा में बुध का अन्तर हो तो सुख-दुःख बराबर, लक्ष्मीवान्, गुरु-देव और अग्नि का पूजक तथा शत्रु भी मित्र हो जाता है ॥ ५३ ॥

वारस्त्रीसङ्गमं दुःखं कुवृत्तिर्धननाशनम् ।
कामलोभौ नीचसख्यं गुरोरन्तर्गते शनौ ॥ ५४ ॥

गुरु की दशा में शनि का अन्तर हो तो वेश्या से संग, दुःख, खराब आचरण, धर्म का नाश, कामी, लोभी और नीच से प्रीति करने वाला होता है ॥ ५४ ॥

राहुमहादशाफलम्–

धर्मव्ययः कामरतेर्विनाशः स्त्रीपुत्रमित्रादिविदेशयानम् ।
मतिभ्रमः स्यात् कलिकुष्ठरोगभयं भवेद्राहुदशागमे वै ॥ ५५ ॥

राहु की महादशा हो तो धर्महानि, काम और रति सुख का नाश, स्त्री, पुत्र-मित्रादि की विदेश यात्रा, बुद्धिभ्रम, लड़ाई और कुष्ठ रोग का भय होता है ॥ ५५ ॥

राहुमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्–

भयं स्वान्तर्गते राहौ रोगार्त्तः पापपीडितः ।
स्त्रीपुत्रमित्रनाशो वा कलहो वा स्वबन्धुभिः ॥ ५६ ॥

राहु की दशा में राहु का अन्तर हो तो भय, अति पाप द्वारा रोग से पीड़ित, स्त्री-पुत्र और मित्र का नाश तथा बन्धु से लड़ाई हो ॥ ५६ ॥

सौहार्दं विप्रभूपाभ्यां सङ्गः स्त्रीभिर्वित्तसञ्चयः ।
कलहे विजयः ख्यातो राहोरन्तर्गते सिते ॥ ५७ ॥

राहु की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो राजा और ब्राह्मणों से मित्रता, स्त्री से संग, धनसंचय, लड़ाई में विजय होती है ॥ ५७ ॥

रिपुरोगभयं घोरं द्रव्यनाशो महद्भयम् ।
अग्निचौरभयं चैव राहोरन्तर्गते रवौ ॥ ५८ ॥

राहु की दशा में रवि का अन्तर हो तो शत्रु और रोग से विशेष भय, द्रव्य नाश का भय, अग्नि और चोर का भय होता है ॥ ५८ ॥

रिपुर्व्याधिर्महाभीतिर्बन्धुवित्तविनाशनम् ।
कलहो बन्धुविद्वेषो राहोरन्तर्गते विधौ ॥ ५९ ॥

राहु की दशा में चन्द्र का अन्तर हो तो शत्रु एवं रोग से महाभय, बन्धु और धन का नाश, लड़ाई तथा बन्धुओं से द्वेष होता है ॥ ५९ ॥

विषशस्त्राग्निचौरेभ्यो महाभीतिः पुनः पुनः ।
राहोरन्तर्गते भौमे वित्तस्त्रीबन्धुनाशनम् ॥ ६० ॥

राहु की दशा में मङ्गल का अन्तर हो तो बार-बार विष-शस्त्र-अग्नि, चोर से महाभय और धन, स्त्री, बन्धु का नाश होता है ॥ ६० ॥

बन्धुमित्रकलत्रादिवित्तभृत्यसुखान्वितः ।
न कुत्राऽपि भयं तस्य राहोरन्तर्गते बुधे ॥ ६१ ॥

राहु की दशा में बुध का अन्तर हो तो बन्धु-मित्र-स्त्री-धन-सेवक का सुख और भय कहीं भी नहीं होता है ॥ ६१ ॥

वातपित्तभवा रोगाः कलहो बान्धवैः सह ।
देशत्यागो धनभ्रंशो राहोरन्तर्गते शनौ ॥ ६२ ॥

राहु की दशा में शनि का अन्तर हो तो वायु और पित्त विकार के रोग बन्धुओं के साथ झगड़ा, देशत्याग एवं धन का नाश होता है ॥ ६२ ॥

नीरोगैः स्वगणैर्युक्तो देवद्विजरतो भवेत् ।
रहोरन्तर्गते जीवे धर्मतीर्थरतो भवेत् ॥ ६३ ॥

राहु की दशा में गुरु का अन्तर हो तो नीरोगता, अपने भाई-बन्धुओं से युत, देवता और ब्राह्मण में भक्ति करने वाला तथा धर्म एवं तीर्थ में रुचि रखने वाला होता है ॥ ६३ ॥

शुक्रमहादशाफलम्-

शौर्यं गीतिरतिप्रमोदविभवो द्रव्यान्नपानाम्बर-
स्त्रीरत्नं मतिमन्महोधकरणैरर्थाश्च नानाविधाः ।
स्वाध्यायौषधमन्त्रशिल्पकरणैरर्थस्य सिद्धिर्भवेत्
सौख्यं चेक्षुविकारभोजनरुचिः ख्यातिः प्रतापोन्नतिः ॥६४॥

शुक्र की महादशा हो तो बलाधिक्यता, गीत से प्रेम, स्त्रीरत्न द्वारा रतिसुखादि, आमोद-प्रमोद, वेशभूषा, मिष्ठान्न-पान और अनेक राजकीय वैभवों की प्राप्ति एवं विविध प्रकार के अर्थागम, स्वाध्याय, औषध, मन्त्र और कारीगरी द्वारा धन की सिद्धि तथा सुख, मधुर पदार्थ भोजन रुचि, पौरुष द्वारा ख्यति की उन्नति हो ॥ ६४ ॥

शुक्रमध्ये सर्वेषामन्तरफलम्–

लाभः स्वान्तरगे शुक्रे स्त्रीसङ्गो धर्मजं सुखम् ।
अभिलाषार्थयुक्तश्च कीर्तिकौशल्ययुग् भवेत् ॥ ६५ ॥

शुक्र की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो लाभ, स्त्री सङ्ग, धर्म से सुख, मनोवाञ्छित धन की प्राप्ति, कीर्ति और कौशल से युत होता है ॥ ६५ ॥

नेत्रगण्डभवै रोगैः पीड्यते नृपबान्धवैः ।
उत्पातश्च महद्दुःखं शुक्रस्यान्तर्गते रवौ ॥ ६६ ॥

शुक्र की दशा में रवि का अन्तर हो तो नेत्र और गलगण्ड रोग से दुःखी, राजा और बन्धुओं के उपद्रव से अधिक दुःख होता है ॥ ६६ ॥

उद्वेगोऽकुशलं हानिरश्वादीनां धनक्षयः ।
बहुक्लेशमना दुःखं शुक्रस्यान्तर्गते विधौ ॥ ६७ ॥

शुक्र की दशा में चन्द्र का अन्तर हो तो चित्त में उद्विग्नता, अकुशल, घोड़ा आदि पशुओं की हानि, धनक्षय, मन में बहुत क्लेश होता है ॥६७॥

नखोदरशिरोव्याधिः कलहो बन्धुसंक्षयः ।
दौर्बल्यं च शरीरस्य कुजे शुक्रदशां गते ॥ ६८ ॥

शुक्र की दशा में मंगल का अन्तर हो तो नख, उदर और शिर में रोग, लड़ाई, बन्धुनाश, दुर्बलता (शरीर में कमजोरी) हो ॥ ६८ ॥

धनं धान्यं सुखं लाभो मानो धर्मो यशः सुखम् ।
महाजनेन सौहार्दं शुक्रस्यान्तर्गते बुधे ॥ ६९ ॥

शुक्र की दशा में बुध का अन्तर हो तो धन-धान्य से सुख का लाभ, मान, धर्म, यश और सुख तथा बड़े लोगों से मित्रता होती है ॥ ६९ ॥

वृद्धस्त्रीगमनं पीडा पुत्रनाशो विपत्पदम् ।
शत्रुनाशः सुहृत्प्राप्तिः सौरे शुक्रदशां गते ॥ ७० ॥

शुक्र की दशा में शनि का अन्तर हो तो वृद्धा स्त्री से संग, दुःख, पुत्र-नाश, विपत्ति, शत्रुनाश और मित्र प्राप्ति होती है ॥ ७० ॥

धनधान्यसमृद्धिश्च धर्मशीलसुखानि च ।
स्त्रीसुखं कीर्तिमाप्नोति गुरौ शुक्रदशां गते ।। ७१ ।।

शुक्र की दशा में गुरु का अन्तर हो तो धन-धान्य की वृद्धि, धर्मशील, सुख, स्त्री सुख और कीर्ति की प्राप्ति होती है ।। ७१ ।।

विदेशगमनं बन्धुद्वेषः सङ्गमशुद्धयः ।
स्ववंशनाशमाप्नोति राहौ शुक्रदशां गते ।। ७२ ।।

शुक्र की दशा में राहु का अन्तर हो तो विदेशगमन, बन्धु से द्वेष, संगम (किसी नदी के संगम पर) शुद्धि और अपने वंश का विनाश होता है ।। ७२ ।।

ग्रहाणां शुभाऽशुभफलम्–

क्रूरग्रहदशायां च क्रूरस्यान्तर्दशा यदि ।
शत्रुयोगे भवेन्मृत्युर्मित्रयोगे न संशयः ।। १ ।।

क्रूर ग्रह की दशा में क्रूर ग्रह का अन्तर हो और शत्रुग्रह से युत हो तो मृत्यु होती है । अगर मित्रग्रह का योग हो तब तो कोई संशय ही नहीं अर्थात् अवश्य मृत्यु होती है ।। १ ।।

मङ्गलस्य दशायां च शनेरन्तर्दशा यदि ।
म्रियते च चिरञ्जीवी का कथा स्वल्पजीविनः ।। २ ।।

मंगल की दशा में शनि की अन्तर दशा हो तो चिरजीवी भी मर जाता है, तब अल्पायु की कौन कहे ? ।। २ ।।

क्रूरराशिस्थितः पापः षष्ठे वा निधनेऽपि वा ।
सितेन रविणा दृष्टः स्वपाके मृत्युदो ग्रहः ।। ३ ।।

क्रूर राशि के घर में पापग्रह छठे अथवा आठवें घर में हो और शुक्र रवि से देखा जाता हो तो अपनी दशा में मृत्यु देता है ।। ३ ।।

लग्नस्याऽधिपतेः शत्रुर्लग्नेशस्यान्तर्दशां गतः ।
करोत्यकस्मान्मरणं सत्याचार्येण भाषितम् ।। ४ ।।

लग्नेश का शत्रु लग्नेश की अन्तरदशा में हो तो अकस्मात् मृत्यु देता है, ऐसा सत्याचार्य का कहना है ।। ४ ।।

प्रवेशे बलवान् खेटः शुभैर्वा स निरीक्षितः ।
सौम्याधिमित्रवर्गस्थो रिष्टभङ्गो भवेत्तदा ।। ५ ।।

बलवान् ग्रह दशा के प्रवेश समय में शुभग्रह से देखा जाता हो अथवा सौम्यग्रह के और अधिमित्र के वर्ग में हो तो अरिष्टभंग होता है ।। ५ ।।

विंशोत्तरी मतेनोपदशाफलम्—

अथाऽतः सम्प्रवक्ष्यामि ग्रहस्योपदशाफलम्।
सौम्यक्रूरविभिन्नस्य पूर्वाचार्यादिसम्मतम् ॥ १ ॥

अब आगे पूर्वाचार्यों की सम्मति के अनुसार शुभग्रह और क्रूर ग्रह की भिन्न-भिन्न उपदशा का फल कहता हूँ ॥ १ ॥

सूर्योपदशाफलम्—

ज्वरः शिरोऽतिपीडा च कलिरुद्वेगकारकः।
विग्रहश्च विवादश्च सूर्ये स्वोपदशां गते ॥ २ ॥

सूर्य की दशा में सूर्य की उपदशा हो तो ज्वर, मस्तिष्क में पीड़ा, लड़ाई, उद्वेग, विग्रह तथा विवाद होता है ॥ २ ॥

धननाशोदरे रोगं कुर्यात्पामां चतुष्पदात्।
क्षीरं स्नेहं विना भुङ्क्ते चन्द्रस्योपदशां गतः ॥ ३ ॥

सूर्य की दशा में चन्द्र की उपदशा हो तो धननाश, पेट में रोग, खुजली, चौपायों से भय एवं रूखा-सूखा भोजन प्राप्त होता है ॥ ३ ॥

राज्ञो भयं विकारश्चोपद्रवं रिपुविग्रहः।
कुधान्यभोजनं सूर्ये भौमस्योपदशाफलम् ॥ ४ ॥

सूर्य की दशा में मङ्गल की उपदशा हो तो राजा से भय, मन में विकार, उपद्रव, शत्रु से लड़ाई और खराब अन्न खाने को मिलता है ॥ ४ ॥

वातश्लेष्मं शत्रुभयं तीक्ष्णं क्षीरं कुभोजनम्।
राजपीडा धने हानी राहावुपदशां गते ॥ ५ ॥

सूर्य की दशा में राहु की उपदशा हो तो कफ-वायु विकार, शत्रु से भय, तीखे, खराब दूध का भोजन, राजा से पीड़ा और धन हानि होती है ॥ ५ ॥

धनलाभो यशः सौख्यं गृहे पुत्रकलत्रजम्।
मानं भूपगृहे सूर्ये जीवस्योपदशां गते ॥ ६ ॥

सूर्य की दशा में गुरु की उपदशा हो तो धन, यश, सुख लाभ, घर में पुत्र-कलत्र सुख और राजकीय सम्मान प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

हेमाम्बरजयैर्वृद्धिः शत्रुनाशो महत्सुखम्।
मिष्टान्नभोजनं सूर्ये शनेरुपदशा यदि ॥ ७ ॥

सूर्य की दशा में शनि की उपदशा हो तो सुवर्ण, वस्त्र और जय की वृद्धि, शत्रुनाश एवं महान् सुख तथा मिष्टान्न भोजन मिलता है ॥ ७ ॥

नृपपूजा धनं कीर्तिर्विद्याबन्धुसमागमः ।
भोजनं मधुरान्नस्य रवौ ज्ञोपदशां गते ॥ ८ ॥

सूर्य की दशा में बुध की उपदशा हो तो राजकीय सम्मान, धन, कीर्ति, विद्या तथा भाई-बन्धुओं से मिलन और मिष्टान्न भोजन मिलता है ॥ ८ ॥

दैन्यं परान्नभोजी स्याद्राजपीडा महद्भयम् ।
शत्रुद्वेषो भवेत्केतुः सूर्यस्योपदशां गतः ॥ ९ ॥

सूर्य की दशा में केतु की उपदशा हो तो दीनता, परान्न भोजी, राजा से पीड़ा, शत्रु-द्वेष से बहुत भय होता है ॥ ९ ॥

सुखवृद्धिसमानानि धनलाभो महोत्सवः ।
स्त्रीविलासस्तदा सौख्यं रविः शुक्रदशां गतः ॥ १० ॥

सूर्य की दशा में शुक्र की उपदशा हो तो सुख-सम्मान वृद्धि, धन लाभ, उत्सव, स्त्री सुख और सदा सुख होता है ॥ १० ॥

चन्द्रोपदशाफलम्–

धनलाभो महासौख्यं स्त्रीलीलापुत्रसम्पदः ।
वस्त्रान्नपानलाभस्स्वोपदशासु गतः शशी ॥ ११ ॥

चन्द्रमा की दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो धनलाभ, महासुख, स्त्री-संग, विलास, पुत्र सम्पत्ति, वस्त्र, अन्नपानादि का लाभ होता है ॥ ११ ॥

ऋद्धिर्धनागमो वृद्धिर्बन्धुस्वजनसौहृदः ।
रक्तवस्तुकृतो लाभश्चन्द्रस्योपदशां कुजः ॥ १२ ॥

चन्द्रमा की दशा में मङ्गल की उपदशा हो तो धनागम की वृद्धि, अपने जन तथा बन्धुओं से मित्रता की वृद्धि, लाल वस्तु से लाभ होता है ॥ १२ ॥

राजमानो महासौख्यं भूतिकल्याणवर्द्धनम् ।
चन्द्रस्योपदशां प्राप्तो राहुः शत्रुभयावहः ॥ १३ ॥

चन्द्रमा की दशा में राहु की उपदशा हो तो राजा से आदर, महान् सुख, ऐश्वर्य, कल्याण वृद्धि और शत्रु के लिये भयंकर होता है ॥ १३ ॥

धन-धर्मौ महत्तेजो मित्रलाभः सुभोजनम् ।
सौख्यं च वस्त्रलाभश्च चन्द्रस्योपगतो गुरुः ॥ १४ ॥

चन्द्रमा की दशा में गुरु की उपदशा हो तो धन, धर्म, तेजस्विता, मित्र-लाभ, सुन्दर भोजन, सुख और वस्त्रलाभ होता है ॥ १४ ॥

पुत्रबन्धुकृतोद्वेगयुक्तः स्वस्थानवर्जितः ।
चन्द्रस्योपगते सौरे तुषधान्यादिभोजनम् ॥ १५ ॥

चन्द्रमा की दशा में शनि की उपदशा हो तो पुत्र एवं बन्धु द्वारा उद्वेग, अपने स्थान से भ्रष्ट और कुधान्यादि भोजन मिलता है ॥ १५ ॥

शुक्लवस्त्रस्त्रिया लाभो माङ्गल्यं पुत्रसम्पदः ।
हयभूलाभदश्चैव चन्द्रस्योपगतो बुधः ॥ १६ ॥

चन्द्रमा की दशा में बुध की उपदशा हो तो स्त्री, श्वेत वस्त्र लाभ, आनन्द, पुत्र सम्पत्ति, घोड़ा और पृथ्वी का लाभ होता है ॥ १६ ॥

विरोधः सर्वधर्माणां जीवितं बहुसंशयम् ।
सर्पाम्बुविषजा भीतिः शिखि चोपदशां गतः ॥ १७ ॥

चन्द्रमा की दशा में केतु की उपदशा हो तो सब धर्मों से विरोध, जीने में सन्देह, सर्प, जल और बिष से भय होता है ॥ १७ ॥

जलोदरादिरोगैस्तु रिपुचौरैर्धनक्षयः ।
अक्षीरं भोजनं रूक्षमिन्दोरुपगते सिते ॥ १८ ॥

चन्द्रमा की दशा में शुक्र की उपदशा हो तो जलोदरादि रोग, शत्रु और चोर से धनक्षय एवं रूखा-सूखा भोजन मिलता है ॥ १८ ॥

विजयं धनसौख्यं च वस्त्रपानाऽन्नलाभकृत् ।
चन्द्रस्योपदशां भानुः कुरुते नाऽत्र संशयः ॥ १९ ॥

चन्द्रमा की दशा में सूर्य की उपदशा हो तो विजय, धनादि सुख, वस्त्र-अन्नपान का लाभ होता है, इसमें संशय नहीं ॥ १९ ॥

भौमोपदशाफलम्–

पीडा शत्रुनरेन्द्राणां रक्तस्रावो भगन्दरः ।
अकस्माज्जायते भौमोपदशासु स्वयं कुजः ॥ २० ॥

मंगल की दशा में मङ्गल की उपदशा हो तो राजा और शत्रु से पीड़ा, रक्तस्राव और एकाएक भगन्दर होता है ॥ २० ॥

कलहं बन्धनं रोगं राजभङ्गं कुभोजनम् ।
अपमृत्युदशां राहुर्जायते शत्रुपीडितः ॥ २१ ॥

मंगल की दशा में राहु की उपदशा हो तो झगड़ा, बन्धन, रोग, खराब-भोजन और अपमृत्यु होती है ॥ २१ ॥

कुबुद्धिदूषितो रोगी देशे देशे परिभ्रमः ।
भौमस्योपदशां जीवे स्वर्णं भवति मृत्तिका ॥ २२ ॥

मंगल की दशा में गुरु की उपदशा हो तो कुबुद्धि से दूषित चरित्र, रोगी, देश-विदेश में घूमने वाला और सोना छूने से मिट्टी हो जाता है ॥ २२ ॥

रक्तवासो महात्रासो बन्धनं धनपीडनम् ।
कोद्रवं च तिलं भोज्यं भौमस्योपदशां शनिः ॥ २३ ॥

मंगल की दशा में शनि की उपदशा हो तो लाल वस्त्रधारी, अत्यन्त त्रास, बन्धन, धन का दुःख, कोदो और तिल खाने के लिये मिलते हैं ॥२३॥

ज्वरार्तिः सुहृदासीनो विलम्बेन धनक्षयः ।
भौमस्योपदशां सौम्यस्त्वन्नवस्त्रादिनाशनः ॥ २४ ॥

मंगल की दशा में बुध की उपदशा हो तो ज्वर से आर्त, मित्र के यहाँ वास, विलम्ब से धननाश और अन्न-वस्त्र का नाश होता है ॥ २४ ॥

जृम्भणं च शिरःपीडा रोगमृत्यू नृपाद्भयम् ।
तन्द्रालस्यं कुभोज्यं च केतौ भूसुतमध्यगे ॥ २५ ॥

मंगल की दशा में केतु की उपदशा हो तो जँभाई लेना, मस्तक में पीड़ा, रोग, मृत्यु और राजा से भय, तन्द्रा, आलस्य और खराब भोजन प्राप्त होता है ॥ २५ ॥

राजशत्रुभयं त्रासो वम्यतीसारतो भयम् ।
व्रणजीर्णामयाद् दुःखं भौमस्योपदशां सिते ॥ २६ ॥

मंगल की दशा में शुक्र की उपदशा हो तो राजा और शत्रु से भय, त्रास, वमन, अतिसार (पतले दस्त) के भय, घाव और अजीर्ण रोग से दुःख हो ॥ २६ ॥

भूमेश्च मणिलाभं च धनमित्रसुखावहम् ।
तीक्ष्णं वै मधुरं भुङ्क्ते भौमस्योपदशां रवौ ॥ २७ ॥

मंगल की दशा में रवि की उपदशा हो तो भूमि, मणि का लाभ, धन-मित्र से सुख और अत्यन्त मधुर भोजन मिलता है ॥ २७ ॥

मौक्तिकं शुक्लवस्त्रं च लभते च सुखं यशः ।
क्षीरमिष्टान्नभोजी स्यात्कुजस्योपदशां शशी ॥ २८ ॥

मंगल की दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो मुक्ता, श्वेत वस्त्र, सुख और यश का लाभ, दूध एवं मिष्टान्न भोजी होता है ॥ २८ ॥

राहुरुपदशाफलम्–

बन्धव्याधिस्तथा रोगः पीडा भवति दारुणा।
स्थानच्युतिः कुभोज्यं च राहुः स्वोपदशां गतः ॥ २९ ॥

राहु की दशा में राहु की उपदशा हो तो बन्धन, व्याधि, रोग से दारुण पीड़ा, स्थान से भ्रष्ट और खराब भोजन मिलते हैं ॥ २९ ॥

ज्ञानधर्मार्थनाशश्च कलहं व्यसनं भवेत्।
कटुकं मिष्टभोज्यं च राहोरुपदशां गुरुः ॥ ३० ॥

राहु की दशा में गुरु की उपदशा हो तो ज्ञान, धर्म, अर्थ का नाश, झगड़ा, दुःख, कड़वा और मीठा भोजन मिलता है ॥ ३० ॥

लङ्घनं गृहभङ्गश्च हस्तपादाक्षिपीडनम्।
बन्धनं बहुजीवश्च राहोरुपगते शनौ ॥ ३१ ॥

राहु की दशा में शनि की उपदशा हो तो लंघन (उपवास), घर नाश, हाथ-पैर-आँख में पीड़ा, बन्धन और अधिक दिन तक जीता है ॥ ३१ ॥

धनवस्त्रादिहानिश्च पदबुद्ध्योर्विनाशकृत्।
भोजनं फलशाकादि राहोरुपदशां बुधः ॥ ३२ ॥

राहु की दशा में बुध की उपदशा हो तो धन, वस्त्र की हानि, स्थान और बुद्धि भ्रष्टता एवं भोजन में फल, शाकादि मिलते हैं ॥ ३२ ॥

अर्थनाशो विदेशश्च मृत्युचौरनृपाद्भयम्।
राहोरुपदशां केतुर्बन्धनं विग्रहो भवेत् ॥ ३३ ॥

राहु की दशा में केतु की उपदशा हो तो अर्थनाश, विदेश यात्रा, मृत्यु, चोर, राजा का भय, बन्धन और विग्रह हो ॥ ३३ ॥

स्त्रीनाशः कुलनाशश्च योगिनीभूतमातृभिः।
पीडनं च कुभोज्यं स्याद्राहोरुपदशां सितः ॥ ३४ ॥

राहु की दशा में शुक्र की उपदशा हो तो स्त्री नाश, कुलनाश, योगिनी, भूत और मातृका गणों द्वारा पीडा तथा कुभोजन मिलता है ॥ ३४ ॥

सुहृत्पुत्रमहापीडा ज्वररोगोऽन्नहानिकृत्।
राहोरुपदशां सूर्यः कुरुते नाऽत्र संशयः ॥ ३५ ॥

राहु की दशा में सूर्य की उपदशा हो तो मित्र और पुत्र द्वारा पीड़ा, ज्वर रोग हो और अन्न की हानि होती है ॥ ३५ ॥

चित्तभ्रमो मनोभङ्ग उद्वेगोऽथ कलिर्भयम्।
भोज्यं स्नेहं हविष्यान्नं राहोरुपदशां शशी ॥ ३६ ॥

राहु की दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो चित्त भ्रम, मन में उचाट, उद्वेग और झगड़ा का भय, स्नेह पूर्वक भोजन में हविष्यान्न प्राप्त हो ॥३६॥

रोगमृत्यू प्रमादश्च रक्तपित्तभगन्दरौ ।
कुभोजनं मानहानी राहोरुपदशां कुजः ॥ ३७ ॥

राहु की दशा में मङ्गल की उपदशा हो तो रोग, मृत्यु, आलस, रक्त-पित्त जनित पीड़ा, भगन्दर, खराब भोजन और मानहानि हो ॥ ३७ ॥

गुरु-उपदशाफलम्-

यशोदयो महावृद्धिर्धनहेमसमागमः ।
सुखमिष्टान्नभोज्यं च गुरु स्वोपदशां गतः ॥ ३८ ॥

गुरु की दशा में गुरु की उपदशा हो तो यश का उदय, धन-सुवर्ण के समागम से महान् वृद्धि, मिष्टान्न भोजन तथा सुख होता है ॥ ३८ ॥

हय-भूमि-पशुप्राप्तिः सर्वत्र शुभमाप्नुयात् ।
सुभोज्यं बहुधान्यानि जीवस्योपदशां शनिः ॥ ३९ ॥

गुरु की दशा में शनि की उपदशा हो तो घोड़ा, भूमि तथा पशुओं का लाभ, सर्वत्र सुख, सुन्दर भोजन और बहुत धान्य प्राप्त हों ॥ ३९ ॥

विद्यामौक्तिकशस्त्राणां लाभो मित्रसमागमः ।
अशनं स्नेहपक्वादि जीवस्योपदशां बुधः ॥ ४० ॥

गुरु की दशा में बुध की उपदशा हो तो विद्या, मुक्ता, शस्त्र का लाभ और मित्र समागम तथा घृतादि में पके हुए पदार्थों का भोजन मिले ॥४०॥

बन्धूनां तस्करादीनां कलितो मृत्युतो भयम् ।
कुधान्यस्याऽशनं जीवे केतोरुपदशां गते ॥ ४१ ॥

गुरु की दशा में केतु की उपदशा हो तो बन्धु और चोरों से कलह में मरने का भय और खराव भोजन मिले ॥ ४१ ॥

हेमवस्त्रधनप्राप्तिः क्षेमवृद्धिर्विभूषणः ।
भोजनं मधुरं क्षीरं जीवस्योपदशां सितः ॥ ४२ ॥

गुरु की दशा में शुक्र की उपदशा हो तो सुवर्ण, वस्त्र एवं धन की प्राप्ति, कल्याण की वृद्धि, भूषण, दूध और मधुर भोजन प्राप्त हो ॥ ४२ ॥

मातृपितृधनं भुङ्क्ते राज्यपूज्यश्च जायते ।
सर्वत्राऽऽदरसम्प्राप्तिर्जीवस्योपदशां रवौ ॥ ४३ ॥

गुरु की दशा में रवि की उपदशा हो तो माता-पिता के धन का भोगी, राज-पूज्य और सर्वत्र आदर पाता है ॥ ४३ ॥

दधिमधुघृतक्षीरमणिमुक्तासु लाभदा ।
जीवस्योपदशां चन्द्रे कुक्षिपादप्रपीडनम् ॥ ४४ ॥

गुरु की दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो दही, मधु, घृत, दूध, मणि और मुक्ता लाभ, पेट तथा पैर में पीड़ा हो ॥ ४४ ॥

शस्त्रशत्रुकृता पीडा गण्डमन्दाग्न्यजीर्णता ।
कुधान्यभोजनं भौमो जीवस्योपदशां गतः ॥ ४५ ॥

गुरु की दशा में मंगल की उपदशा हो तो शस्त्र और शत्रु से पीड़ा, गलगण्ड, मंदाग्नि, अजीर्ण और खराब अन्न का भोजन प्राप्त हो ॥ ४५ ॥

चाण्डालव्याधिशत्रुभ्यः पीडनं वमनं भयम् ।
कटुक्षारं च सम्भोज्यं जीवस्योपदशां तमः ॥ ४६ ॥

गुरु की दशा में राहु की उपदशा हो तो चाण्डाल, रोग और शत्रु से पीड़ा, वमन का भय, कड़ुआ, नमकीन भोजन प्राप्त होता है ॥ ४६ ॥

शनि-उपदशाफलम्—

जलोकादेहपीडा च विदेशगमनं भवेत् ।
कुधान्यतिलमश्नाति शनिः स्वोपदशां गतः ॥ ४७ ॥

शनि की दशा में शनि की उपदशा हो तो जोंक से शरीर में पीड़ा, विदेश गमन, खराब अन्न और तिल का भोजन मिलता है ॥ ४७ ॥

धनबुद्धि रिपो पीडा अन्नपानादिहानिकृत् ।
स्नेहं रसं विना भुङ्क्ते सौरस्योपदशां बुधः ॥ ४८ ॥

शनि की दशा में बुध की उपदशा हो तो धन, बुद्धि का विकास, शत्रु से पीड़ा, अन्न और पेय पदार्थ की हानि तथा रूखा-सूखा भोजन मिलता है ॥ ४८ ॥

शत्रुचित्तभयं त्रासो दारिद्र्यं च बहुक्षुधा ।
नीचसङ्गः कुभक्षी च सौरस्योपदशां शिखी ॥ ४९ ॥

शनि की दशा में केतु की उपदशा हो तो शत्रु द्वारा चित्त में भय और त्रास, दरिद्रता, बहुत भूख, नीच व्यक्ति से संग और खराब भोजन मिलता है ॥ ४९ ॥

द्यूतवेश्याभवं द्रव्यं महिषीकृष्यलाभदः ।
कन्याजन्म तदा गर्भे सौरस्योपदशां शितः ॥ ५० ॥

शनि की दशा में शुक्र की उपदशा हो तो जुआ और वेश्या से धनागम, भैंस और खेती से लाभ तथा कन्या का जन्म हो ॥ ५० ॥

राजाधिकारस्तेजस्वी व्याधिः पीडा ज्वरो व्यथा ।
कलत्रकलहं चौरं सौरस्योपदशां रविः ॥ ५१ ॥

शनि की दशा में सूर्य की उपदशा हो तो राजा के यहाँ तेजस्वी अधिकारी, ज्वर रोग से व्यथा, स्त्री से झगड़ा और घर में चोरी होती है ॥ ५१॥

प्रमाणबुद्धिप्राधान्यं बहुस्त्रीभोगवान् धनी ।
हविर्मधुपयोभोक्ता सौरस्योपदशां शशी ॥ ५२ ॥

शनि की दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो बुद्धि की प्रधानता, बहुत स्त्रियों के साथ रमण, धनी, हविष्यान्न, मधु और दूध भोजन में प्राप्त हों ॥ ५२ ॥

शस्त्रवह्निरिपोर्भीतिर्वातरक्तरुजा भवेत् ।
भोजनं मधुसर्पिभ्यां सौरस्योपदशा कुजः ॥ ५३ ॥

शनि की दशा में मंगल की उपदशा हो तो शस्त्र, अग्नि और शत्रु से भय, वात और रक्त विकार से रोग, मधु, घृत भोजन मिलता है ॥ ५३ ॥

धनभूमिपशोर्नाशः कटुतीक्ष्णाऽम्लभोजनम् ।
मृत्युर्विदेशयात्रा स्यात् सौरस्योपदशां तमः ॥ ५४ ॥

शनि की दशा में राहु की उपदशा हो तो धन, भूमि और पशुओं का नाश, कड़ुआ, तीक्ष्ण, खट्टा भोजन, विदेश गमन और मृत्यु हो ॥ ५४ ॥

गृहध्वंसो भवेत्स्त्रीभिः क्लेशपीडानिरुद्यमः ।
किञ्चित्सौख्यमवाप्नोति सौरस्योपदशां गुरुः ॥ ५५ ॥

शनि की दशा में गुरु की उपदशा हो तो स्त्री से घर नाश, क्लेश से आलसी किन्तु, अन्त में कुछ सुख मिले ॥ ५५ ॥

बुध-उपदशाफलम्-

विद्याबुद्धिधनप्राप्तिः स्वर्णं रौप्यं च माणिकम् ।
लभते धान्यरत्नानि बुधस्योपदशां स्वयम् ॥ ५६ ॥

बुध की दशा में बुध की उपदशा हो तो विद्या, बुद्धि और धन की प्राप्ति, सुवर्ण, चाँदी, मणि का लाभ और धान्य-रत्नादि मिलते हैं ॥ ५६ ॥

रक्तपित्तकृता पीडा कुक्ष्यातोदरपीडनम् ।
वस्त्रार्थशस्त्रहानिश्च सौम्यस्योपदशां शिखी ॥ ५७ ॥

बुध की दशा में केतु की उपदशा हो तो रक्त-पित्तजन्य पीड़ा, जनता में अयश, उदर रोग, वस्त्र, अर्थ और शस्त्र की हानि होती है ॥ ५७ ॥

सौम्यदिक्षु भवेल्लाभः पदप्राप्तिर्महत्सुखम्।
भुङ्क्ते मिष्टान्नमाहारं सौम्यस्योपदशां सितः ॥ ५८ ॥

बुध की दशा में शुक्र की उपदशा हो तो उत्तर दिशा में लाभ, स्थान-प्राप्ति, महान् सुख और मिष्टान्न भोजन कराता है ॥ ५८ ॥

तेजोहानिः शिरःपीडा चोद्वेगश्चलचित्तकः।
दृष्टिदोषो भवेच्छर्दिः सौम्यस्योपदशां रविः ॥ ५९ ॥

बुध की दशा में सूर्य की उपदशा हो तो तेजहीन, शिर में पीड़ा, चञ्चल चित्त, उद्वेग, वमन और दृष्टि कमजोर हो ॥ ५९ ॥

श्रियो लाभस्तथा कन्यासौम्यार्थं पुत्रपौत्रकः।
मिष्टान्नभोज्यवस्त्राणि बुधस्योपदशां विधुः ॥ ६० ॥

बुध की दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो धन लाभ, कन्या जन्म, धर्म के लिये धन, पुत्र-पौत्र, मिष्टान्न भोजन और वस्त्र की प्राप्ति हो ॥ ६० ॥

आममृत्युश्चाऽतिसारं चौराग्निशस्त्रपीडनम्।
ज्ञानधर्मधनप्राप्तिः सौम्यस्योपदशां कुजः ॥ ६१ ॥

बुध की दशा में मङ्गल की उपदशा हो तो आमवात के अतिसार से मृत्यु, चोर, अग्नि, शस्त्र से पीड़ा, ज्ञान, धन और धर्मकी प्राप्ति हो ॥ ६१ ॥

राजशत्रुभयं त्रासः कलहः स्त्री निरुत्सहा।
स्नेहक्षीरं विना भुङ्क्ते बुधस्योपदशां तमः ॥ ६२ ॥

बुध की दशा में राहु की उपदशा हो तो राजा, शत्रु से भय, त्रास, स्त्री से झगड़ा, साहस रहित अर्थात् (आलसी हो), एवं रूखा-सूखा भोजन प्राप्त होता है ॥ ६२ ॥

प्रधानपुरुषं राज्ये विद्याबुद्धिविवर्द्धनम्।
अन्नपानादिसौख्यं च बुधस्योपदशां गुरुः ॥ ६३ ॥

बुध की दशा में गुरु की उपदशा हो तो राज्य में प्रधान, विद्या-बुद्धि का विकास, भोजन, पानादि का सुख होता है ॥ ६३ ॥

विकलं घातपातानां वातपीडामहद्भयम्।
अन्नपानादिहानिश्च बुधस्योपदशां शनिः ॥ ६४ ॥

बुध की दशा में शनि की उपदशा हो तो चोट और गिरने से विकलता, वायु की पीड़ा से भय, अन्न-पानादि की हानि होती है ॥ ६४ ॥

केतु-उपदशाफलम्—

धननाशोपघातश्च विदेशे दुःखपूरितम् ।
सर्वत्र विकलं विन्द्यात् केतोरुपदशां शिखी ॥ ६५ ॥

केतु की दशा में केतु की उपदशा हो तो धन नाश, आघात, विदेश में दुःखी और सब जगह किसी भी कार्य में सफलता न हो ॥ ६५ ॥

चतुष्पाद्धनहानिः स्यान्नेत्ररोगः शिरोव्यथा ।
श्लेष्मभीरर्थहानिश्च केतोरुपदशां भृगुः ॥ ६६ ॥

केतु की दशा में शुक्र की उपदशा हो तो पशुओं से धन हानि, आँख में रोग, शिर में व्यथा, कफ रोग से व्ययाधिक्यता हो ॥ ६६ ॥

मित्रस्वजनजोद्वेगो ह्यल्पमृत्युः पराजयः ।
भोजनं तक्रहीनश्च केतोरुपदशां रवौ ॥ ६७ ॥

केतु की दशा में सूर्य की उपदशा हो तो मित्र और अपने ही जनों से उद्वेग, अल्प मृत्यु, पराजय और तक्रहीन भोजन मिलता है ॥ ६७ ॥

अन्नपानादिनाशश्च व्याधिस्तस्य च विभ्रमः ।
मिष्टान्नभोजनप्राप्तिः केतोरुपदशां शशी ॥ ६८ ॥

केतु की दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो अन्न-पानादि का नाश, व्याधि, भ्रम (चित्त स्थिर नहीं रहे) और मिष्टान्न भोजन मिलता है ॥६८॥

वह्नेः शत्रो रणे भीतिर्वातकष्टभयं नृपात् ।
कुधान्य-मत्स्य-मांसानि केतोरुपदशां कुजः ॥ ६९ ॥

केतु की दशा में मङ्गल की उपदशा हो तो लड़ाई से, शत्रु और अग्नि से भय, वातजन्य कष्ट, राजा से भय, खराब अन्न एवं मत्स्य-मांस भोजन में मिले ॥ ६९ ॥

शत्रुतो हि भयं स्त्रीणां नीचेभ्योऽधिकपीडनम् ।
बुभुक्षितं पराधीनं केतोरुपदशां तमः ॥ ७० ॥

केतु की दशा में राहु की उपदशा हो तो स्त्रियों को शत्रु से भय, नीच जनों द्वारा पीडाधिक्यता, भूखों मरना एवं परवशता आदि फल होता है ॥ ७० ॥

विवादं धनहानिश्च वस्त्रमन्त्रादिनाशनम् ।
केतोरुपदशां जीवो रूक्षधान्यादिभोजनम् ॥ ७१ ॥

केतु की दशा में गुरु की उपदशा हो तो लोगों से विवाद, धनहानि,

वस्त्र, मन्त्रादि (रहस्यों) का विभेदन और रूखा अन्न भोजन में मिलता है ॥ ७१ ॥

वस्त्रान्नपानहानिश्च सुखमाश्रमपीडनम् ।
गोमहिष्यादिनाशश्च केतोरुपदशां शनिः ॥ ७२ ॥

केतु की दशा में शनि की उपदशा हो तो वस्त्र, अन्न-पानादि की हानि, सुखी, आश्रम में पीड़ा और गाय-भैंस का नाश होता है ॥ ७२ ॥

शत्रुपीडा महोद्वेगो विद्यावन्धुधनक्षयः ।
केतोरुपदशायां हि भवेत् सौम्ये न संशयः ॥ ७३ ॥

केतु की दशा में बुध की उपदशा हो तो शत्रु-पीड़ा, उद्वेग, विद्या, बन्धु और धन का क्षय हो, इसमें सन्देह नहीं है ॥ ७३ ॥

शुक्र-उपदशाफलम्—

माणिक्यसुन्दरीप्राप्तिर्मधुदुग्धाऽऽज्यभोजनम् ।
श्वेतवस्त्रस्य सम्प्राप्तिर्भृगुः स्वोपदशां गतः ॥ ७४ ॥

शुक्र की दशा में शुक्र की उपदशा हो तो मणि, सुन्दरी स्त्री की प्राप्ति, मधु, दूध, घृतादि भोजन और श्वेत वस्त्र की प्राप्ति होती है ॥ ७४ ॥

राजशत्रुज्वरात्पीडा हृदि जङ्घा शिरोव्यथा ।
स्वल्पाशनश्च लाभश्च शुक्रस्योपदशां रविः ॥ ७५ ॥

शुक्र की दशा में सूर्य की उपदशा हो तो राजा, शत्रु और ज्वर से पीड़ा, हृदय, जंघा, शिर में व्यथा एवं स्वल्पाहार और लाभ होता है ॥ ७५ ॥

राज्याधिकप्रदो राज्ये लभते वस्त्र-काञ्चनम् ।
कन्याजन्मफलप्राप्तिः शुक्रस्योपदशां शशी ॥ ७६ ॥

शुक्र की दशा में चन्द्र की उपदशा हो तो राज्य में उपशासक, वस्त्र, सुवर्ण का लाभ और घर में कन्या जन्म हो ॥ ७६ ॥

अलाभं ताडनं क्लेशो रक्तपित्त-प्रपीडनम् ।
अन्नपानादिसौख्यञ्च शुक्रस्योपदशां कुजः ॥ ७७ ॥

शुक्र की दशा में मंगल की उपदशा हो तो हानि, मारपीट, क्लेश, रक्त-पित्त-जन्य पीड़ा और अन्न-पानादि का सुख हो ॥ ७७ ॥

राजशत्रुभवा पीडा स्त्रीशत्रुकलहो भवेत् ।
भोजनं कटुकक्षारं सितस्योपदशां तमः ॥ ७८ ॥

शुक्र की दशा में राहु की उपदशा हो तो राजा और शत्रु से पीड़ा, स्त्री और शत्रु से लड़ाई-झगड़ा तथा भोजनमें कड़ुआ और नमक की विशेषता रहे ।। ७८ ।।

वज्रमुक्तापदप्राप्तिर्धेनुवाजिगजाँल्लभेत् ।
कर्पूरमिष्टमाहारं शुक्रस्योपदशां गुरुः ।। ७९ ।।

शुक्र की दशा में गुरु की उपदशा हो तो हीरा, मणि, मुक्ता और पद की प्राप्ति, गाय, घोड़ा, हाथी का लाभ और भोजन में कपूर से सुवासित मीठे पदार्थ भोजन में प्राप्त हों ।। ७९ ।।

गवोष्ट्रखरलौहादि लभते स्वल्पलाभकृत् ।
भोजने तिलमाषाश्च शुक्रस्योपदशां शनिः ।। ८० ।।

शुक्र की दशा में शनि की उपदशा हो तो गाय, ऊँट, गदहा, लोहा आदि से अल्पलाभ और भोजन में मिश्रित पदार्थ, उड़द एवं तिल मिलते हैं ।। ८० ।।

बुद्धिविज्ञानराज्यश्रीर्निध्यधिकारलाभकृत् ।
भोजनं हवितक्राभ्यां शुक्रस्योपदशां बुधः ।। ८१ ।।

शुक्र की दशा में बुध की उपदशा हो तो बुद्धि, विज्ञान एवं राज्यलक्ष्मी और खजाने का अधिकारी हो और भोजन में दूध-दही बराबर मिलता रहे ।। ८१ ।।

भ्रमणं देशग्रामाणां रोगमृत्युमहद्भयम् ।
लभते द्रव्यधान्यादि शुक्रस्योपदशां शिखी ।। ८२ ।।

शुक्र की दशा में केतु की उपदशा हो तो देश और ग्राम में रोग और मृत्यु से भय, परन्तु द्रव्य और अन्नादि का लाभ होता है ।। ८२ ।।

सन्ध्यादशाफलम्

सूर्यसन्ध्याफलम्-

सन्ध्या दिनेशस्य विपाककाले धनागमं शौर्यनरेन्द्रसौख्यम् ।
धर्मोद्यमं सौख्यमतीव तीक्ष्णं भूषादिसौख्यं विभवादिमानम् ।।१।।

सूर्य की सन्ध्या दशा हो तो धनागम, पराक्रम द्वारा राजा से सुख, धर्म में रुचि, भूषणादि से अत्यन्त सुख और ऐश्वर्य से मान प्राप्त होता है ।। १ ।।

प्रचण्डवित्तं स्वकुलाधिकारं सुवर्णताम्राश्वरथादिकाप्तिः ।
आरोग्यताविद्रुमरत्नलाभं प्राप्नोति कीर्ति रिपुसंक्षयं च ।। २ ।।

धनाधिक्य के कारण अपने कुल में श्रेष्ठ, सोना, ताँवा, घोड़ा, रथादि की प्राप्ति, निरोगिता, मूँगा आदि रत्न लाभ, यश की प्राप्ति और शत्रु का नाश होता है ॥ २ ॥

तुङ्गादिसंस्थः फलमेव सन्ध्या नीचारिसंस्थोऽप्यशुभं फलञ्च ।
तदर्थनाशं पितृबन्धुहानिं हृदक्षिपीडाकरपित्तरोगम् ॥ ३ ॥

उपरोक्त कहे हुए फल यदि सूर्य उच्च का हो तो शुभ होता है और यदि नीच का, शत्रु घर का हो तो धन नाश, पिता और बन्धु की हानि, हृदय, आँख में पित्तजनित रोग से पीड़ा कारक होता है ॥ ३ ॥

चन्द्रसन्ध्याफलम्–

निशाकृतः सन्धिविपाककाले प्राप्नोति वित्तं द्विजमन्त्रिसौख्यम् ।
स्वविक्रमाच्च स्वगुणैः सुवर्णं सुगन्धिद्रव्यादिषु कार्यलाभम् ॥४॥

चन्द्रमा की सन्ध्यादशा हो तो धन की प्राप्ति, ब्राह्मण तथा मन्त्री से सुख, अपने बल और गुणों से सोना तथा सुगन्धित पदार्थों की प्राप्ति एवं कार्य सिद्धि हो ॥ ४ ॥

प्रबोधकल्याणधनात्मजाप्तिरभीष्टसिद्धिर्धनधर्मलाभम् ।
सत्साधुसम्पर्ककथानुरक्तं कुलाधिमुख्यं नृपपूजितं च ॥ ५ ॥

आत्म ज्ञान, कल्याण, धन, पुत्र की प्राप्ति, मनोवांछित की पूर्ति एवं धन-धर्म लाभ, महात्माओं से सत्संग, भगवान् की कथा में अनुराग, कुल में मुख्य और राजा से सम्मानित होता है ॥ ५ ॥

नीचारिसंस्थे कृषकस्वरूपो मित्रारिहर्त्ता दुहितुः प्रसूतिः ।
अर्थक्षयं शोकरुजादिकष्टं क्रोधोद्भवं निद्रवमृत्युकारी ॥ ६ ॥

यदि चन्द्रमा नीच या शत्रु के घर में हो तो कृषक, मित्र के घर का हो तो शत्रुओं का नाशक, कन्या के सन्तान, धनक्षय, शोक और रोग द्वारा दुःख, क्रोध से मृत्युतुल्य कष्ट होता है ॥ ६ ॥

भौमसन्ध्याफलम्–

स्वपाककाले धरणीसुतस्य सन्ध्या समाप्नोति महाप्रतापम् ।
शौर्यं हविस्तस्करपापकर्मा दोर्दण्डतेजा रणसाहसी च ॥ ७ ॥

मङ्गल की सन्ध्या दशा हो तो प्रतापी, पराक्रमी, चोर और पापियों को प्रश्रय देने वाला एवं बाहुबल से सर्वत्र विजयलाभ करने वाला होता है ॥७॥

नृपेश्वरः शस्त्रविषाग्निकर्मनेता तथाऽऽप्नोति कुलस्य धर्मम् ।
कान्तादिकार्ये सतताऽर्थलाभं हेमाङ्गनाताम्रहिरण्यलाभम् ॥८॥

राजराजेश्वर, शस्त्र, विष और अग्नि कर्म का नेता, अपने कुलधर्म के अनुसार चलने वाला, स्त्रियों के कार्य में सदा लाभ, सुवर्ण कान्तिवाली स्त्री और ताम्र, सोना लाभ होता है ॥ ८ ॥

मतिं च दुष्टां स्वजनैर्विरोधं नीचारिसंस्थस्य कुजस्य सन्ध्या ।
स्वमित्रबन्धस्वजनार्थनाशं ददात्यथो शोणितपित्तरोगम् ॥ ९ ॥

नीच या शत्रु राशि गत मङ्गल हो तो उसकी सन्ध्यादशा में दुर्बुद्धि, अपने जन से विरोध, मित्र, बन्धु, स्वजन और धन का नाश तथा रक्त और पित्त विकार से रोग की वृद्धि होती है ॥ ९ ॥

बुधसन्ध्याफलम्-

बुधस्य सन्ध्या विदधाति शश्वद्धनागमं मित्रकलत्रपुत्रैः ।
वणिक्प्रयोगादखिलैश्च कार्यैर्महेन्द्रजालैः कुहकादिभिश्च ॥१०॥

बुध की सन्ध्या दशा में मित्र, स्त्री, पुत्र द्वारा सतत धनागम हो, समस्त व्यापारिक स्रोतों एवं इन्द्रजाल, छल-कपट, सर्कस, नाटकादि मनोरंजनों द्वारा भी धन की प्राप्ति होती है ॥ १० ॥

द्यूतप्रयोगाद् द्विपकर्ममन्त्रैर्दैवज्ञसिद्धान्तरसायनाद्यैः ।
भूहेमलोहैश्च नृपात्मजेभ्यो लाभो धनानां सुखसौख्यवृद्धिः ॥ ११ ॥

जुआ, हस्ती के व्यापार, मन्त्र, सिद्धान्त ज्योतिष द्वारा, रसायनादि से, पृथ्वी, सोना, लोहा, राजा और पुत्र से धनलाभ और सुखवृद्धि हो ॥ ११ ॥

नीचारिसंस्थोऽस्तमितश्च सौम्यस्त्रिधातुपीडां कुरुतेऽर्थनाशम् ।
कलत्रहानिं नृपबन्धनाप्तिं परस्वदुःखं नृपपीडितश्च ॥१२॥

बुध सन्ध्यादशा में नीच, शत्रु गृह का और अस्त का हो तो स्त्री और धातुजन्य पीड़ा, धननाश, स्त्री हानि और राजा से जेल, दूसरे के धन से दुःख एवं राजपीड़ा हो ॥ १२ ॥

गुरुसन्ध्याफलम्-

गुरुः स्वसन्ध्यां लभतेऽतिसौख्यं हेमाम्बरं रत्नगजाऽश्वजातम् ।
धनं लभेत् पुत्रसमुच्चयं च स्वधर्मसिद्धिं द्विजदेवपूजाम् ॥१३॥

गुरु की सन्ध्यादशा में सोना, वस्त्र, हाथी, रत्न, घोड़ों से सुख, पुत्र, धन, अपने धर्म की सिद्धि और देव-ब्राह्मण का पूजक हो ॥ १३ ॥

जनागमं च त्रिदिवेश्वरत्वं वेश्मप्रवेशस्त्वपि चाऽर्थसिद्धिः ।
स्वजातिसन्मानमतिप्रहर्षं भूपालसौख्यं विविधार्थलाभम् ॥१४॥

अनेक जनों का समागम एवं परमैश्वर्य की प्राप्ति, नूतन गृह प्रवेश, अपनी जाति में सम्मान से परमानन्द, राजकीय सुख और अनेक प्रकार के अर्थलाभ हों ॥ १४ ॥

विदेशनिम्ने कृतगोविवर्णैर्गुरुः स्वपाके सुहृदर्थनाशम् ।
भूपालभङ्गं सुतकष्टरोगं करोति पाके बहुदुःखकारी ॥१५॥

गुरु अपने नीच तथा शत्रुगृह या अस्त का हो, तो विदेश में नीच कार्य मिले, मित्र एवं धन का नाश, राजदण्ड, पुत्र कष्ट, रोग और बहुत दुःख-कारी होता है ॥ १५ ॥

शुक्रसन्ध्याफलम्–

दैत्येन्द्रपूज्यस्य करोति सन्ध्या महार्थसम्प्राप्तिमजस्रसौख्यम् ।
नृपेश्वरत्वं स्वकुलाधिकारं प्राप्नोति वित्तं मणिमौक्तिकानि ॥१६॥

शुक्र की सन्ध्यादशा हो तो बहुत अर्थप्राप्ति, निरन्तर सुख, राजत्व, अपने कुल में मुख्यता और मणि-मुक्ता धन मिलता है ॥ १६ ॥

गजाश्वयानाऽऽसनमानहर्षैः प्रख्यातकर्मा क्रयविक्रयाणाम् ।
धनागमं भूकृषिणा महोक्षैः कलत्रवृद्धिं सुखसौख्यजातम् ॥१७॥

हाथी-घोड़ा की सवारी, मान, हर्ष, खरीद और विक्री में प्रधान, खेती और बैल से धनागम, स्त्री की वृद्धि और सुख हो ॥ १७ ॥

शुक्रे गते निम्नगृहेऽरिगेहे योधर्जितो वारबलिप्तिगुप्तिः ।
दुष्टाङ्गनासङ्गमसौख्यहर्त्ता धनक्षयं स्त्रीसुतधर्मनाशम् ॥१८॥

शुक्र अपने नीच और शत्रु तथा अस्त का हो तो वीरों द्वारा विजित प्रदेशस्थजनों को आंशिक कर देय होगा और दुष्ट स्त्रियों के साथ से सुख की हानि करने वाला एवं अपव्यय से धनक्षय, स्त्री, पुत्र, धर्मादि का विनाश करता है ॥ १८ ॥

शनिसन्ध्याफलम्–

यदा तु तीक्ष्णांशुसुतस्य सन्ध्या ददाति लाभं स्वकुलाधिकारम् ।
खरोष्ट्रगोपाक्षिकधान्यवस्त्रकुलित्थमाषादिककोद्रवाप्तिः ॥१९॥

शनि की सन्ध्यादशा हो तो अपने कुल का अधिकार मिलता है, गदहा, ऊँट, गाय, पक्षी, धान्य, वस्त्र, कुलथी, उड़द, कोदों आदि अन्नों की प्राप्ति होती है ॥ १९ ॥

वृन्देश्वरं ग्रामपदाधिपत्यं कुलोन्नतिं हीनजनप्रमाणम् ।
लोहायसीसत्रपुसन्महिष्यैर्धनागमं मर्त्यचतुष्पदेभ्यः ॥ २० ॥

जन-समूह का नेतृत्व, ग्राम का प्रधान, कुलोन्नतिकारक एवं गरीबों का रक्षक होकर लोहा, सीसा, भैंस आदि के व्यापार द्वारा धनागम प्राप्त कराता है ।। २० ।।

नीचारिसंस्थोऽस्तमितोदितस्य सौरस्य पाके कुरुते च कष्टम् ।
सद्बन्धुभार्याधनपुत्रनाशं देहे रुजा तीव्रतरानिलोत्था ।।२१।।

नीच, शत्रुगृह स्थित, अस्तंगत शनि हो तो अपनी सन्ध्यादशा में कष्ट, अच्छे भाई, स्त्री, धन, पुत्रादि का नाश, अति वात रोग से शरीर क्लेशित रहता है ।। २१ ।।

उक्तान्यतो द्वादशभिः प्रकारैर्नैसर्गिकादीनि दशान्तराणि ।
तत्राऽपि सन्ध्याफलपाक उक्तः स चिन्तनीयो सदृशः फलेन ।।२२।।

पूर्वोक्त बारह प्रकार के नैसर्गिक आदि जो दशान्तर कहे हैं, उसमें भी सन्ध्यादशाफल का परिणाम कहा है, उसको उसी तरह कार्य में लाना चाहिये ।। २२ ।।

पाचकदशाफलम्-

रविपाचकदशाफलम्-

राजमानं सुखं चैव सन्मानं शत्रुनाशनम् ।
लभते सौख्यलाभं च रविमध्ये स्वयं रविः ।। १ ।।

रवि में रवि की पाचकदशा हो तो राजा से आदर, सुख, सम्मान, शत्रु का नाश और सुख का लाभ होता है ।। १ ।।

रोगादिनाशं धनधान्यलाभं शत्रुक्षयं प्रीतिसुखोदयं च ।
सूर्यस्य चन्द्रान्तरसन्धिपाके तत्रास्तमात् द्वि-त्रिशुभं करोति ।। २ ।।

रवि में चन्द्रमा की पाचकदशा हो तो रोग नाश, धन-धान्यलाभ, शत्रु क्षय, प्रीति और सुख का उदय एवं अस्त के बाद अर्थात् उच्च का हो तो द्विगुणित-त्रिगुणित शुभफल देता है ।। २ ।।

दिवाकरस्यान्तरगः कुजश्चेल्लाभोऽभयं विक्रमहेमताम्रम् ।
संग्रामधुर्याजयवाहनानि प्रचण्डतां भूपसुखं करोति ।। ३ ।।

रवि में मङ्गल की पाचकदशा हो तो दुर्निवार पराक्रम, सोना, ताँबा लाभ, लड़ाई में जय, वाहन सुख एवं प्रबल राजकीय सौख्य कराता है ।।३।।

देहे च कष्टं ज्वररोगदौस्थ्यं करोति शोकक्षयशत्रुवैरम् ।
अर्थक्षयं रोगरुजा प्रवासं बुधो विपाके दिनसेश्वरस्य ।। ४ ।।

रवि में बुध की पाचकदशा हो तो शरीर में कष्ट, ज्वर और रोग से दुःख, शोक, क्षयरोग, शत्रु से शत्रुता, धनक्षय और प्रवासी होता है ॥ ४ ॥

पापादिरोगव्यसनादिमुक्तिर्धर्मोदयं ज्ञानसुखागमं च ।
सूर्यः सुरेज्यान्तरगो विपाके करोति लक्ष्मी धनवर्धनं च ॥ ५ ॥

रवि में गुरु की पाचकदशा हो तो पापादि रोग से छुटकारा, धर्म उदय, ज्ञान और सुख का आगम एवं श्री तथा धनवृद्धि हो ॥ ५ ॥

दद्रूशिरोगाङ्गलरोगदोषाच्छूलं ज्वरं वा सुहृदः स्वहर्ता ।
शस्त्राद्भयं मृत्युसदृक्षदुःखं रव्यन्तरे दैत्यगुरुः करोति ॥ ६ ॥

रवि में शुक्र की पाचकदशा हो तो शिर में दाद, गले में गण्डमाला रोग, ज्वर, मित्र का धनहरण करने वाला, शस्त्र से भय और मृत्युतुल्य दुःख देता है ॥ ६ ॥

कार्यार्थनाशं क्षितिपालभङ्गं देहे रुजापित्तसमुद्भवं च ।
विद्युद्भयं बुद्धिविनाशदैन्यं सन्ध्या तु सौरेर्दिवसेश्वरस्य ॥ ७ ॥

रवि में शनि की पाचकदशा हो तो कार्य और धन नाश, राज भंग, शरीर में पित्तरोगका उद्भव, बिजली से भय, बुद्धिनाश और दरिद्रता हो ॥७॥

चन्द्रपाचकदशाफलम्—

मणिमुक्ताफलं चैव सौख्यानि विविधानि च ।
वस्त्रभूषादिकप्राप्तिः स्वपाके संस्थितः शशिः ॥ ८ ॥

चन्द्र की पाचकदशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो मणि, मोती, अनेक प्रकार के सुख, वस्त्र और आभूषणों की प्राप्ति होती है ॥ ८ ॥

रक्तवस्तुकृतो लाभो विदेशगमनं भवेत् ।
सुखसन्तानमाप्नोति चन्द्रस्यान्तर्गते कुजे ॥ ९ ॥

चन्द्र की दशा में मङ्गल का अन्तर हो तो लाल वस्तुओं से लाभ, विदेश यात्रा, सुख और सन्तान का लाभ होता है ॥ ९ ॥

दुःखं सुखं समं चैव लाभहानी तथैव च ।
उद्वेगवशगो नित्यं चन्द्रस्यान्तर्गते बुधे ॥ १० ॥

चन्द्र की पाचकदशा में बुध का अन्तर हो तो दुःख, सुख तथा लाभ-हानि समान होती है और मन में उद्वेग बना रहता है ॥ १० ॥

स्वर्णलाभं पुत्रजन्म ह्यानन्दं हर्षसंयुतम् ।
मणिमुक्ताफलं चैव चन्द्रस्यान्तर्गते गुरौ ॥ ११ ॥

चन्द्र की पाचकदशा में गुरु का अन्तर हो तो सुवर्णादि लाभ, पुत्र जन्म से आनन्द और मणि, मोती आदि धन का लाभ होता है ॥ ११ ॥

उत्तमस्त्रीजनैर्योगो दिव्यकन्यासमुद्भवः ।
धर्मयुक्ता धनप्राप्तिश्चन्द्रस्याऽन्तर्गते सिते ॥ १२ ॥

चन्द्र की पाचकदशा में शुक्र का अन्तर हो तो सुन्दरी स्त्रीजनों से सङ्ग, सर्व गुणवती कन्या का जन्म और धर्म मार्ग से धन का लाभ होता है ॥१२॥

वेश्यागमं करोत्येव विवादं स्त्रीसमागमैः ।
अकस्माद्धनलाभश्च चन्द्रमध्ये शनिर्यदा ॥ १३ ॥

चन्द्र की पाचकदशा में शनि का अन्तर हो तो वेश्या का सङ्ग, स्त्रियों से विवाद किन्तु अकस्मात् धन का लाभ भी होता है ॥ १३ ॥

मणिविद्रुमलाभं च सर्वसौख्यसुखागमम् ।
प्रतापं गन्धसंयुक्तं कर्पूरादि शशी रवेः ॥ १४ ॥

चन्द्र पाचकदशा में रवि का अन्तर हो तो मणि, मूँगा एवं सब प्रकार के सुख, कपूर आदि सुगन्धित द्रव्यों का लाभ होता है ॥ १४ ॥

मङ्गलपाचकदशाफलम्-

भौमे शत्रुविमर्दः स्यात् कलहो बन्धुभिर्नृणाम् ।
स्वान्तरे बहुपीडा स्याद् वृद्धस्त्रीगणिकारतिः ॥ १५ ॥

मंगल की पाचकदशा में मंगल का अन्तर हो तो शत्रु की हानि, बन्धुओं से कलह, पीड़ा, वृद्धा स्त्री और वेश्या से सङ्ग होता है ॥ १५ ॥

बलं मानं यशश्चैव धनलाभं सुखागमम् ।
लभते मानवो नित्यं भौममध्ये बुधो यदा ॥ १६ ॥

मंगल की पाचकदशा में बुध का अन्तर हो तो बल, मान, सुयश, धन और सुख का लाभ होता है ॥ १६ ॥

सौभाग्यसौख्यमतुलं नानाशत्रुविमर्दनम् ।
लभते सुतसौभाग्यं भौममध्ये गुरुर्यदा ॥ १७ ॥

मंगल में गुरु का अन्तर हो तो अतिसौभाग्य, सुख का लाभ, सब शत्रुओं का नाश और पुत्रों का भाग्योदय होता है ॥ १७ ॥

स्वदेहपीडां धनमानहानिं महत्प्रतापं सुखवर्जितं च ।
ददाति भौमान्तरगो भृगुश्च धर्मार्थसिद्धिं विजयं तथैव ॥ १८ ॥

मङ्गल में शुक्र का अन्तर हो तो देह में पीड़ा, धन और मान की हानि, सुख रहित प्रतापकी वृद्धि और विजयपूर्वक धर्म कार्य में सिद्धि होती है।१८।

स्वदेहभङ्गं कुरुते शनिः कुजे विपाककाले सुखवर्जितं च ।
धनागमं ह्यर्थनाशनं च सेवा भवेन्नीचजनेषु नित्यम् ॥१९॥

मंगल में शनि का अन्तर हो तो सुख रहित धन का लाभ होगा, किन्तु व्यर्थ धनव्यय और नीचों की सेवा करनी पड़ती है ॥ १९ ॥

सूर्यो रोगविनाशं च श्वेतवस्तुफलप्रदम् ।
सन्मानं चैव भूपालात् सर्वसौख्यं धनागमम् ॥ २० ॥

मंगल में सूर्य का अन्तर हो तो रोग का नाश, सफेद वस्तु से लाभ, राजकीय सम्मान, सुख और धनलाभ होता है ॥ २० ॥

ददाति हेमाम्बरसौख्यलाभं धनं तथा भोगसुखं च सन्ततिम् ।
मित्रागमं मातृपितुश्च भक्तिं ददाति चन्द्रोऽन्तरगः कुजस्य ॥२१॥

मङ्गल में चन्द्र का अन्तर आने पर धन, सुवर्णादिभोग, वस्त्र, सुख, सन्तानोत्पत्ति, मित्र का मिलन और माता-पिता में भक्ति होती है ॥ २१ ॥

बुधपाचकदशाफलम्–

स्वबोधबुद्धिदं चैव शत्रूणां च पराजयः ।
द्रव्यलाभो धनं सौख्यं स्वपाके बुधगे सदा ॥ २२ ॥

बुध की पाचकदशा में बुध का अन्तर हो तो ज्ञानबुद्धि का उदय, शत्रुओं से विजय, धन का लाभ और सुख होता है ॥ २२ ॥

हेमाम्बराणां प्राप्तिः स्याद् विदेशगमनं भवेत् ।
बुधस्यान्तर्गते जीवे धनधान्यसुखं भवेत् ॥ २३ ॥

बुध में गुरु का अन्तर हो तो सुवर्ण-वस्त्र का लाभ, विदेश यात्रा, धन-धान्यादि लाभ से सुख होता है ॥ २३ ॥

बुधमध्ये यदा शुक्रो भवत्येव सुखागमः ।
धनधान्यसमृद्धं स्याद् बहुसौख्यं करोति च ॥ २४ ॥

बुध की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो धन-धान्य की वृद्धि से सदा सुख रहता है ॥ २४ ॥

बुधसन्ध्यान्तराले तु सौरपाको यदा भवेत् ।
तदा राजा भवेन्मान-सुखसन्तानकारकः ॥ २५ ॥

बुध की दशा में शनि की पाचकदशा हो तो राजा से सम्मान सुख एवं सन्तान कारक होता है ॥ २५ ॥

वातपित्तकृता पीडा हानिकारी नृणां भवेत् ।
पाककाले बुधस्याऽपि यदा ह्यन्तर्गतो रविः ॥ २६ ॥

बुध की दशा में रवि का अन्तर हो तो राजसदृश सर्वसम्पन्नजनों को भी वात-पित्त विकार से हानि करने वाली पीड़ा होती है ॥ २६ ॥

देहपीडा हृदुद्वेगः कलहश्च गृहे भवेत् ।
अत्यन्तहानिकारी च बुधमध्ये तु चन्द्रमाः ॥ २७ ॥

बुधकी दशा में चन्द्र का अन्तर हो तो शरीर में पीड़ा, मन में उद्वेग, घर में झगड़ा और अत्यन्त हानि होती है ॥ २७ ॥

अग्निदाहं ज्वरं तीव्रं भवेद्रक्तविकारजम् ।
शत्रुघातरुजं चैव बुधमध्ये कुजे सदा ॥ २८ ॥

बुध में मङ्गल का अन्तर हो तो अग्नि भय, रक्त विकार से तीव्र ज्वर, शत्रुओं के द्वारा आघात और रोग होता है ॥ २८ ॥

गुरुपाचकदशाफलम्-

पापैश्च रोगैश्च भवेद्विमुक्तो धर्मं जयं प्राप्य समस्तकाले ।
जीवः स्वपाके फलमातनोति धनागमं मित्र-कलत्र-पुत्रैः ॥ २९ ॥

गुरु की सन्ध्या दशा में गुरु की ही अन्तर्दशा हो तो असाध्य रोगों से मुक्ति, धर्म और जय की वृद्धि, मित्र-स्त्री-पुत्रादि द्वारा धन का प्रचुर लाभ होता है ॥ २९ ॥

कायार्थनाशं च जनैर्विरोधैर्विशेषमाप्नोति नरोऽतिसौख्यम् ।
शृङ्गारकोशस्थनरैश्च लाभं यदा भवेज्जीवगतो भृगुश्च ॥३०॥

गुरु की दशा में शुक्र का अन्तर हो तो लोगों के विरोध से कार्य की हानि होती है तथापि सुखी रहता है। शृङ्गारी तथा भण्डारी लोगों से लाभ होता है ॥ ३० ॥

शनैश्चरः पाकगतेऽथ जीवे दानं करोत्येव हि सर्वसौख्यम् ।
द्रव्यापहारं व्यसनादियुक्तं ज्वराभिघातं लभते मनुष्यः ॥ ३१ ॥

गुरु की सन्ध्या दशा में शनि का अन्तर हो तो दान करने में रुचि, सुख लाभ, व्यसनों से कभी धन हानि और ज्वर से पीड़ा भी होती है ॥ ३१ ॥

सन्ध्या गुरोः पाकरविः स्वकाले धनागमं मित्रकलत्रकं च ।
चिरं वसेद् देशविदेशकेषु महत्प्रतापं विजयं च सौख्यम् ॥ ३२ ॥

गुरु की सन्ध्या दशा में रवि की पाचकदशा हो तो उस समय धन-लाभ, मित्र और स्त्री आदि से सुख, देश-विदेश की यात्रा, यश वृद्धि और विजय-सुख होता है ॥ ३२ ॥

तीर्थागमे भवेत्सौख्यं पुत्रमित्रसमागमम् ।
धनलाभो भवेच्चैव गुरुपाके शशी यदा ॥ ३३ ॥

गुरु की पाचकदशा में चन्द्र का अन्तर हो तो तीर्थयात्रा लाभ, पुत्र, मित्रों से मिलन और धन के लाभ से सुख की प्राप्ति होती है ॥ ३३ ॥

अग्निचौरभयं नास्ति धनप्राप्तिः पदे पदे ।
राजमानं गृहे सौख्यं जीवमध्ये कुजे सति ॥ ३४ ॥

गुरु की दशा में मङ्गल का अन्तर हो तो अग्नि और चोर का भय नहीं होता, पद-पद में धन लाभ, राजकीय सम्मान सुख एवं घर में सुख होता है ॥ ३४ ॥

जीवान्तरगते सौम्ये पुत्रधान्यं गृहे सुखम् ।
माङ्गल्यं च भवेन्नित्यं वस्त्रप्राप्तिः सुखं भवेत् ॥ ३५ ॥

गुरु की दशा में बुध का अन्तर हो तो पुत्र का सुख, धान्य की वृद्धि, घर में सुख, वस्त्रादि की प्राप्ति और सदा मङ्गल कार्य होते हैं ॥ ३५ ॥

शुक्रपाचकदशाफलम्-

स्वपाककाले भृगुनन्दनोऽपि हेमाम्बरं नित्यसुखं ददाति ।
भूपादिलब्धिं च सुखागमं च धनं लभेत्पुत्रसमन्वितं च ॥३६॥

शुक्र की पाचकदशा में शुक्रका ही अन्तर हो तो सुवर्ण, वस्त्र, आभूषण, धन-पुत्रादि के लाभ से सब प्रकार के सुख होते हैं ॥ ३६ ॥

राज्याभिमानं सुखसम्पदं च परोपकारी व्ययमाप्नुवन्ति ।
शनैश्वरः शुक्रगते समेति माङ्गल्यकार्यं च सुखावहं च ॥३७॥

शुक्र में शनि की पाचकदशा हो तो राज्य से आदर, सुख, सम्पत्ति, परोपकारिता आदि सत्कार्य में खर्च, घर में मङ्गलकार्य और सुख होता है ॥ ३७ ॥

कार्यनाशं गृहे सौख्यं भुञ्जति प्रभवः सदा ।
विपाके शुक्रसूर्ये च मानवो लभते फलम् ॥ ३८ ॥

शुक्र में सूर्य का अन्तर हो तो कार्य में असफलता होने पर भी घर में प्रभाव पूर्वक सुख रहता है ॥ ३८ ॥

ददाति वित्तं बहुसौख्ययुक्तं भूपाम्बरं रत्नसमुच्चयं च ।
सौख्यार्थलाभं स्वगृहे च सौख्यं यदा भवेच्छुक्रगतो हिमांशुः ॥३९॥

शुक्र की दशा में चन्द्र का अन्तर हो तो धन, अलंकरण, वस्त्र, रत्न आदि के लाभ से सुख तथा घर में भी सबको सुख होता है ॥ ३९ ॥

भृगोर्विपाके धरणीसुतोऽपि कार्यार्थलाभं बहुलार्थयुक्तम् ।
महत्प्रतापं सुखसङ्गमं च ददाति प्राप्नोति भयं कुतश्च ॥ ४० ॥

शुक्र में मङ्गल का अन्तर हो तो कार्य में सफलता, अनेक प्राकारिक धन लाभ एवं प्रताप की वृद्धि और सर्वथा सुख होता है, इस दशा में भय किस प्रकार सम्भव है ? अपितु कभी नहीं ॥ ४० ॥

ददाति मौक्तिकं चैव सुखसौभाग्यपुत्रकम् ।
कन्याजन्मगृहे सौख्यं भृगुमध्ये गते बुधे ॥ ४१ ॥

शुक्र में बुध का अन्तर हो तो मोती का लाभ, पुत्र को सुख, सौभाग्य की वृद्धि और कन्या की उत्पत्ति होती है ॥ ४१ ॥

सुखं करोति सौभाग्यं व्यवहारे महत्सुखम् ।
लाभं कार्यस्य सिद्धिः स्याच्छुक्रमध्ये गते गुरौ ॥ ४२ ॥

शुक्र में गुरु का अन्तर हो तो सुख, सौभाग्य, धन लाभ और सब कार्य की सिद्धि होती है ॥ ४२ ॥

शनिपाचकदशाफलम्-

शनेर्विपाके कुरुतेऽभिमानं महत्सुखं लौहगतादिवृद्धिः ।
लाभं प्रतापं च शरीरकष्टं प्राप्ते ददात्येव हि सूर्यपुत्रः ॥ ४३ ॥

शनि दशा में शनि का अन्तर हो तो मान की वृद्धि, सुख, लोहा से धन का लाभ, प्रताप की वृद्धि किन्तु शरीर में कुछ क्लेश होता है ॥ ४३ ॥

धनहानिर्भवेन्नित्यं दुःख-शोकौ भयं तथा ।
विदेशभ्रमणं चैव शनेः पाके गतो रविः ॥ ४४ ॥

शनि में रवि का अन्तर हो तो धन की हानि, दुःख, शोक, भय और विदेश में भ्रमण होता है ॥ ४४ ॥

सुखदं रोगनिर्मुक्तं लाभदं हानिजं तथा ।
करोति शनिपाके च चन्द्रमाः समवस्थितः ॥ ४५ ॥

शनि में चन्द्र का अन्तर हो तो सुख, नैरुज्य एवं धन की लाभ-हानि तुल्य होती रहती है ॥ ४५ ॥

महीसुतेऽन्तरगते कलहं समुपद्रवः।
अग्निदाहं ज्वरं तीव्रं विफलं तु कृतं भवेत् ॥ ४६ ॥

शनि में मङ्गल का अन्तर हो तो कलह, उपद्रव, अग्नि भय, तीव्र ज्वर और कार्य में विफलता होती है ॥ ४६ ॥

सौरान्तरगते सौम्ये राजमानं करोति च।
मध्यसम्पद्युतो गेहः कार्यप्राप्तिः सुवस्त्रदम् ॥ ४७ ॥

शनि में बुध का अन्तर हो तो राजा से आदर, घर में मध्यम प्रकार से सम्पत्ति और सुवस्त्र का लाभ होता है ॥ ४७ ॥

करोति जीवो बहुबुद्धिसौख्यं राज्याभिधं देशपुराधिपत्यम्।
परोपकारं सुखसम्पदश्च करोति सौरे च गुरुः सदैव ॥ ४८ ॥

शनि में गुरु का अन्तर हो तो सुबुद्धि, सुख, राज्यलाभ एवं देश या नगर में आधिपत्य, परोपकारिता और सुख, सम्पत्ति की वृद्धि होती है ॥ ४८ ॥

ददाति वित्तं भृगुनन्दनः सदा सुखार्थविद्याऽऽगमनं भवेत्स्वयम्।
सुनिर्मलं बाहुबलेन संयुतं विदेशमध्ये च नरः सुखं लभेत् ॥४९॥

शनि में शुक्र की पाचक (अन्तर्दशा) हो तो अनायास सुख, विद्या और धनागम एवं अपने भुजबल से विदेश में भी सुख लाभ प्राप्त करता है ॥४९॥

अथ योगिनीदशाविचारः--

नत्वा गणेशं गिरमब्जयोनिं विष्णुं शिवं सूर्यमुखान् ग्रहेन्द्रान्।
वक्ष्ये स्फुटं सूर्यकृताद्यशस्त्राद् दशाक्रमं वा किल योगिनीजम् ॥ १ ॥

गणेश, सरस्वती, ब्रह्मा, विष्णु, महेश और सूर्य आदि नवग्रहों को प्रणाम करके-सूर्य से कथित आद्यशास्त्र द्वारा योगिनीदशा के क्रम और फल को कहता हूँ ॥ १ ॥

पूर्वं जनस्य विधिवत् प्रसवं विचार्य
संवत्सरर्त्वयनमासदिनर्क्षकालैः।
यस्मिन्भवेद् दिवसभे जननं जनस्य
तद्धं पिनाकिनयनैः सहितं विधेयम् ॥ २ ॥

गौरीशमूर्त्या विभजेच्च शेषं यत्सङ्ख्यकं सैव दशा जनस्य।
यया जनः कर्मफलस्य पंक्तिः शुभाऽशुभस्य स्फुटतामुपैति ॥ ३ ॥

दैवज्ञ को चाहिये कि पहले मनुष्य के जन्म के समय को ठीक-ठीक समझे । उस समय के संवत्, ऋतु-अयन, मास, वार, नक्षत्र को भी ठीक-ठीक समझ ले, बाद में जिस नक्षत्र में जन्म हो-अश्विनी से उसकी संख्या में ३ जोड़कर, ८ का भाग देने से १ आदि शेष में मङ्गला आदि योगिनी की दशा समझे, उसी पर से मनुष्य का स्पष्ट शुभाशुभ फल समझ में आता है ॥२-३॥

योगिनीदशानामानि-

मङ्गला (१) पिङ्गला (२) धन्या (३) भ्रामरी (४) भद्रिका (५) तथा ।
उल्का (६) सिद्धा (७) सङ्कटा च (८) ह्येतासां नामवत्फलम् ॥ ४ ॥

१ मङ्गला, २ पिङ्गला, ३ धन्या, ४ भ्रामरी, ५ भद्रिका, ६ उल्का, ७ सिद्धा, ८ संकटा—ये क्रम से योगिनियों के नाम हैं ॥ ४ ॥

योगिनीदशावर्षसंख्या तथा अन्तर्दशासाधनम्-

एकं द्वौ गुण-वेद-बाण-रस-सप्ता-ऽष्टाङ्कसङ्ख्याः क्रमात्
स्वीयस्वीयदशाविपाकसमये ज्ञेयं शुभं वाऽशुभम् ।
षट्त्रिंशैर्विभजेद् दिनीकृतमथैकद्वि--त्रि--वेदेषु षट्
सप्ताष्टघ्नदशा भवेयुरिति ता एवं दशान्तर्दशाः ॥ ५ ॥

इन मंगलादि ८ योगिनियों के क्रम से, १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ ये दशावर्ष मान हैं । एतदनुसार अपनी-अपनी दशा में तत्-तद् योगिनियों के शुभ या अशुभ फल समझना ।

तथा दशामान को दिनात्मक बनाकर पृथक्-पृथक् दशा वर्षसंख्या से गुणा कर गुणनफल में ३६ का भाग देने से लब्धि दिनादि अन्तर्दशा होती है ॥५॥

उदाहरण—जैसे किसी का जन्म मृगशिरा नक्षत्र में है तो अश्विनी से उसकी संख्या ५ में ३ जोड़ने से ८ हुई, इसमें ८ का भाग देने से ० अर्थात् आठ ही बचा, इसलिये मङ्गलादि क्रम से आठवीं संकटा की दशा में जन्म हुआ । इसका भुक्त और भोग्य दशावर्षादि मृगशिरा के भयात्-भभोग द्वारा वर्षमान ८ से विंशोत्तरी दशावत् साधन कर आगे फिर मङ्गलादि की दशा समझनी चाहिये ॥ ५ ॥

दशासाधनप्रकारः-

गतर्क्षनाडी गुणिता दशाऽब्दः सर्वर्क्षनाडीविहृता फलं यत् ।
वर्षादिकं भुक्तफलं ततश्च भोग्यं दशाब्दान्तरितं हि लेख्यम् ॥ ६ ॥

दशा वर्ष को भयात् घटचादि से गुणा कर, भभोग घटचादि का भाग देकर लब्धि भुक्त वर्षादि होती है । उसके दशा वर्षमान में घटाने से शेष दशा के भोग्य वर्षादि समझना ॥ ६ ॥

उदाहरण—मृगशिरा नक्षत्र के भयात् घटी-पट=१४।१० भभोग ६०।२० है तो पलमय भयात् ८५० को दशासंख्या ८ से गुणा करने से ६८०० इसमें भभोग (पलमय) ३६२० का भाग देने से लब्धि वर्षादि भुक्त=१।१०।१६।४७।४४ को दशा वर्ष ८ में घटाने से भोग्य वर्षादि ६।१।१३।१२।१६ भोग्य दशा हुई ॥ ६ ॥

मङ्गलामहादशाफलम्–

सद्धर्मे द्विज-देवगोपुरजनोत्कर्षप्रदात्री नृणाम्
नानाभोगयशोऽर्थसन्नृपवराश्वेभाङ्गजाप्तिस्तदा ।
सन्माङ्गल्यविभूषणाम्बरचयस्त्रीभोगसंदायिनी
ज्ञानानन्दकरी दशा भवति सा ज्ञेया सदा मङ्गला ॥ ७ ॥

मङ्गला की महादशा में धर्म, विप्र, देवता में भक्ति, अनेक प्रकार के भोग, यश, धन, राजा से घोड़ा, हाथी आदि सवारी का लाभ, घर में मंगल कार्य, वस्त्र, आभूषण, स्त्री सुख और ज्ञान की वृद्धि होती है ॥ ७ ॥

पिङ्गलामहादशाफलम्–

स्यात्पुंसां यदि पिङ्गला प्रसवतो हृद्रोगशोकप्रदा
नानारोगकुसङ्गदेहमनसो व्याध्यर्दितार्तिप्रदा ।
तृष्णासृग्ज्वरपित्तशूलमलिनस्त्रीपुत्रभृत्यार्तिदा
मानध्वंसकरी धनव्ययकरी सत्प्रेमहन्त्री खला ॥ ८ ॥

पिंगला की दशा में हृदय रोग, शोक, कुसंगति से शारीरिक और मानसिक व्याधि, तृष्णा, रक्त विकार, ज्वर, पित्त-शूल, कुस्त्री से संग, पुत्र, नौकर आदि की पीड़ा एवं मान-धन और प्रेम का नाश होता है ॥ ८ ॥

धन्यामहादशाफलम्–

धन्या धन्यतमा धनागमसुखव्यापारभोगप्रदा
पुंसां मानविवृद्धिदा रिपुगणप्रध्वंसिनी सौख्यदा ।
विद्या-राजजनप्रबोधसुरत-ज्ञानाङ्कुरान्वर्द्धिनी
सत्तीर्थामरसिद्धसेवनरतिर्लभ्या दशा भाग्यतः ॥ ९ ॥

धन्या की दशा में धन, सुख का लाभ, व्यापार में उन्नति, भोग, सम्मान की वृद्धि, शत्रुओं का नाश, विद्या लाभ, राजकीय समादर, ज्ञानोदय, स्त्री सुख, तीर्थयात्रा, देवताओं में भक्ति आदि अनेक सुख होते हैं। यह दशा भाग्य से ही प्राप्त होती है ॥ ९ ॥

भ्रामरीमहादशाफलम्-

दुर्गाऽरण्य-महीधरोपगहनारामातप-व्याकुला
दूराद् दूरतरं भ्रमन्ति मृगवत्तृष्णाकुलाः सर्वतः ।
भूपालान्वयजा दशामधिगता ये वै नृपा भ्रामरीं
स्वं राज्यं प्रविहाय ते स्फुटतरं क्ष्माधो लुठन्ते मुहुः ॥१०॥

भ्रामरी की दशा में दुर्गमस्थान वन, दुर्गम पहाड़, बाग आदि में आतप (धूप) से व्याकुल होता हुआ दूर-दूर मृग के समान तृष्णाकुल होकर घूमता है। यदि राजवंशीय हो तो वह भी राज्य से बञ्चित होकर देश-विदेश में घूमता हुआ भूशयनादि से कष्ट पाता है ॥ १० ॥

भद्रिकामहादशाफलम्-

सौहार्दं निजवर्गभूसुरसुरेशानां सुहृन्मान्यता
माङ्गल्यं गृहमण्डलेऽखिलसुखव्यापारसक्तं मनः ।
राज्यं चित्रकपोलपालितिलकालिप्ताङ्गनाभिः समं
क्रीडाऽऽमोदभरो दशा भवति चेत्पुंसां हि भद्राऽभिधा ॥११॥

भद्रिका की दशा में अपने परिजन, ब्राह्मण और राजा से मैत्री, मित्रों के द्वारा आदर, घर में मंगल कार्य, सब प्रकार के सुख, व्यवसाय में रुचि, राज्य पद लाभ, अत्यन्त सुन्दरी युवतियों से भोग-विलास आदि सुख होते हैं ॥११॥

उल्कामहादशाफलम्-

उल्का चेद्यदि योगिनी गुरुदशा मानार्थगोवाहन-
व्यापाराम्बरहारिणी नृपजनक्लेशप्रदा नित्यशः ।
भृत्याऽपत्यकलत्रवैरजननी रम्याऽपहन्त्री नृणां
हृन्नेत्रोदरकर्णदन्तपदजो रोगः स्वदेहे भृशम् ॥१२॥

उल्का की महादशा में मान, धन, गौ, वाहन, व्यापार, वस्त्र इन सबों की हानि, राजकीय दण्ड से भय, नौकर, सन्तान, स्त्री आदि से शत्रुता, हृदय, नेत्र, उदर, कान, दाँत और पैर में रोग होता है ॥ १२ ॥

सिद्धामहादशाफलम्-

सिद्धा शिद्धकरी सुभोगजननी मानार्थसंदायिनी
विद्या-राजजनप्रताप-धन-सद्धर्माप्तसज्ज्ञानदा ।
व्यापाराऽम्बर-भूषणादिकसुतोद्वाहादि-माङ्गल्यदा
सत्सङ्गान्नृपदत्तराज्यविभवो लभ्या दशा पुण्यतः ॥१३॥

सिद्धा की महादशा में सब कार्यों में सिद्धि, सौभाग्य, भोग, मान, धनादि की वृद्धि, विद्या, राजा से अधिकार, धन, धर्म लाभ, ज्ञानोदय, व्यापार में रुचि, वस्त्र, आभूषण लाभ, सन्तान के विवाहादि शुभ कार्य, सज्जनों से संगति एवं राजा से ऐश्वर्य का लाभ होता है ॥ १३ ॥

संकटामहादशाफलम्–

राज्यं भ्रंशाग्निदाहो गृह-पुर-नगर-ग्राम-गोष्ठेषु पुंसां
तृष्णा रोगाङ्ग-धातुक्षय-विकृतिरथो पुत्रकान्तावियोगः ।
चेत्स्यान्मोहोऽरिभीतिः कृशतनुलतिका सङ्कटाया निरोधो
नो मृत्युर्जन्मकालाद्यमपि हि विना सङ्कटं योगिनीजम् ॥१४॥

संकटा की दशा में राज्य नाश, गृह, गाँव, नगर, गोष्ठादि में अग्निभय, तृष्णा, रोग, धातु की क्षीणता, पुत्र-स्त्री से वियोग, मोह, शत्रु भय, देह में दुर्बलता होती है। और क्या ? जन्म काल के बाद संकटा की दशा या अन्तरदशा बिना मृत्यु नहीं होती। अर्थात् संकटा की दशा या अन्तरदशा आदि आने पर ही मृत्यु होती है ॥ १४ ॥

संकटाया वैशिष्टचम्–

भ्रामर्यां च तथोल्कायां सङ्कटान्तर्दशा भवेत् ।
तदा तु यमराज्यस्य सदनं प्राप्यते नृभिः ॥ १५ ॥

भ्रामरी या उल्का की दशा में यदि सङ्कटा की अन्तर दशा आती है, तो उस समय में मृत्यु (अष्टविध मृत्यु में से कोई एक) अवश्य होती है या मृत्यु तुल्य कष्ट होता है ॥ १५ ॥

मङ्गलान्तरफलम्–

मित्र-पुत्र-कलत्राङ्ग-व्यापार-सुखदायिनी ।
मङ्गलान्तर्गता जाता मङ्गला मङ्गलप्रदा ॥ १ ॥

मंगला की दशा में मंगला की अन्तर दशा हो तो उस समय में मित्र, पुत्र, स्त्री, स्वशरीर में सब प्रकार के सुख और घर में मङ्गल कार्य होते हैं ॥ १ ॥

कलहः स्वजनैः सार्द्धं मानसोद्वेगमेव हि ।
विविधार्तिप्रदा नित्यं पिङ्गला मङ्गलां गता ॥ २ ॥

मङ्गला में पिङ्गला की अन्तर दशा हो, तो अपने कुटुम्बियों से कलह, मन में उद्वेग और अनेक प्रकार की पीड़ा होती है ॥ २ ॥

गजा-ऽश्व-गो-धनप्राप्तिः सुतमित्रसुखं महत् ।
विलासो विविधः पुंसां धन्या स्यान्मङ्गलां गता ॥ ३ ॥

मङ्गला में धन्या का अन्तर हो तो हाथी, घोड़ा, गौ, धन आदि का लाभ, पुत्र-मित्रादि से सुख, अनेक प्रकार से भोग-विलास होता है ॥ ३ ॥

स्त्रीमित्रकलहो नित्यं प्रवासो धननाशनम् ।
नरेन्द्रैः सह साङ्गत्यं भ्रामरी मङ्गलां गता ॥ ४ ॥

मङ्गला में भ्रामरी का अन्तर हो तो स्त्री-मित्रों से कलह, विदेशवास, धन नाश किन्तु राजा से परिचय होता है ॥ ४ ॥

धनधान्यसुतस्त्रीभिः प्रीतिः स्यात्स्वजनैः सह ।
प्रमोदः सुरभक्तिश्च भद्रा चेन्मङ्गलां गता ॥ ५ ॥

मंगला में भद्रिका का अन्तर हो तो धन-धान्य की वृद्धि, पुत्र-स्त्री से प्रेम, परिजनों से आमोद-प्रमोद और देवताओं में भक्ति होती है ॥ ५ ॥

धनकीर्तिसुतोद्वेगः स्त्री-मित्र-पशुपीडनम् ।
भूपतेर्हानिदा नित्यमुल्का स्यान्मङ्गलां गता ॥ ६ ॥

मङ्गला में उल्का हो तो धन हानि, कीर्ति हानि, पुत्र का उद्वेग, स्त्री, मित्र और पशुओं की पीड़ा और राजा से दण्ड भय होता है ॥ ६ ॥

भवेत्पुत्रधनस्त्रीभिर्विलासो विविधं सुखम् ।
बन्धुमित्रैः समं योगः सिद्धा चेन्मङ्गलां गता ॥ ७ ॥

मङ्गला की दशा में सिद्धा का अन्तर हो तो पुत्र, धन, स्त्री से सुख, अनेक प्रकार के भोग-विलास, बन्धु और मित्रों का समागम होता है ॥ ७ ॥

जलाऽग्निचौरभूपालपीडनं कलिवर्द्धनम् ।
मृत्युतुल्यं तथा कष्टं सङ्कटा मङ्गलां गता ॥ ८ ॥

मङ्गला में सङ्कटा का अन्तर हो तो जल, अग्नि, चोर और राजा से पीड़ा, कलह तथा मृत्यु तुल्य कष्ट होता है ॥ ८ ॥

पिङ्गलान्तरफलम्-

पिङ्गला स्वदशां प्राप्ता रुक्छोकव्यसनार्तिदा ।
मानसोद्वेगसन्तापक्लेशभ्रमणदा मता ॥ ९ ॥

पिङ्गला में पिङ्गला का ही अन्तर हो तो रोग, शोक, व्यसन से पीड़ा, मन में उद्वेग, सन्ताप और क्लेश होता है ॥ ९ ॥

धन्या धान्यार्थदात्री च विलाससुतकामदा।
पिङ्गलान्तर्गतारण्यरमणीसुखदा नृणाम् ॥ १० ॥

पिङ्गला में धन्या हो तो धन, धान्य, पुत्र, भोग, विलास, इष्ट-सिद्धि, उपवन और स्त्री से सुख होता है ॥ १० ॥

देशत्यागी गृहग्राम-पुरलोकधनक्षतिः।
कलहः स्वजनैः सार्द्धं भ्रामरी पिङ्गलां गता ॥ ११ ॥

पिङ्गला में भ्रामरी हो तो विदेशवास, घर, गाँव, नगर और परिजनों से हानि और अपने कुटुम्बियों से कलह होता है ॥ ११ ॥

भद्रा भद्रकरी प्रोक्ता पिङ्गलान्तर्गता यदा।
स्थानान्तरात्पुत्रकीर्तिर्व्यापारे धनलाभदा ॥ १२ ॥

पिंगला में भद्रिका का अन्तर आता है तो सर्वथा कल्याण, स्थानान्तर से पुत्र एवं व्यापार में विशेष लाभ होता है ॥ १२ ॥

उल्कादशा यदा पुंसां पिङ्गलामध्यतो भवेत्।
विग्रहो बन्धुभिः सार्द्धं राजचौरजनार्दनम् ॥ १३ ॥

पिंगला में उल्का आती है तो उस समय बन्धुओं से विग्रह, राजा, चोर और समाज से पीड़ा होती है ॥ १३ ॥

सिद्धिदा मन्त्रयन्त्राणां सिद्धा धान्यधनप्रदा।
पिङ्गलामध्यगा पुंसां कासश्वासप्रमेहदा ॥ १४ ॥

पिंगला में सिद्धा की अन्तर्दशा हो तो मन्त्र, यन्त्रों की सिद्धि, धन-धान्य का लाभ, किन्तु कास, श्वास और प्रमेह का भय होता है ॥ १४ ॥

पिङ्गलान्तर्यदा जाता सङ्कटा धनहानिदा।
दुष्टव्याधिविरोधित्वं शत्रुराजभयं तथा ॥ १५ ॥

पिंगला दशा में सङ्कटा हो तो धन की हानि, दुष्ट रोग का भय एवं राजा और शत्रु का भी भय रहता है ॥ १५ ॥

मङ्गला विविधव्याधिशोकमोहभयार्तिदा।
पिङ्गलान्तर्गता पुंसामायुर्नाशकरी तथा ॥ १६ ॥

पिङ्गला में मंगला हो (अर्थात्-मंगलाकी अन्तर्दशा हो) तो अनेक रोग, शोक, मोह, भय आदि पीड़ा और आयुर्दाय की हानि होती है ॥ १६ ॥

धन्यान्तरफलम्-

धन्या निजदशां प्राप्ता भू-ग्राम-धन-धान्यदा ।
नृपस्वजनपुत्रस्त्रीसुखं स्याद्विविधं नृणाम् ।। १७ ।।

धन्या की दशा में धन्या की अर्न्तदशा हो तो भूमि, गाँव, धन, धान्यादि का लाभ, राजा से धन, पुत्र, स्त्री से अनेक प्रकार के सुख होते हैं ।। १७ ।।

धन्यान्तर्भ्रामरी चेत्स्याद् भ्रमणक्लेशहानिदा ।
अन्यस्थानाश्रयाल्लाभः स्वजनैश्च विरोधिता ।। १८ ।।

धन्या में भ्रामरी का अन्तर हो तो भ्रमण, कष्ट, धनहानि, स्थानान्तर गमन से लाभ और अपने जन से विरोध होता है ।। १८ ।।

भद्रा सौभाग्यजननी गृहमित्रसुखप्रदा ।
धन्यान्तर्नृपमन्त्रीश-वाहनाम्बरभूमिदा ।। १९ ।।

धन्या में भद्रिका आती है तो सौभाग्य, गृह और मित्रों से सुख, धान्य की वृद्धि, राजमन्त्रित्व, राजा से वाहन, वस्त्र और भूमि का लाभ होता है ।। १९ ।।

विविधं कष्टमुत्पातमुल्का धन्यान्तरं गता ।
तत्र हृत्कटिशूलादिपीडनं धननाशनम् ।। २० ।।

धन्या दशा में उल्का का अन्तर हो तो अनेक प्रकार के कष्ट, हृदय, कमर में शूल से पीड़ा और धन हानि होती है ।। २० ।।

सिद्धा धन्यान्तरं याता सुतमित्रोत्सवप्रदा ।
नानाभोगप्रदा नित्यं ज्ञेया सा तु विचक्षणैः ।। २१ ।।

धन्या में सिद्धा का अन्तर हो तो पुत्र सुख, मित्र का आगमन और अनेक प्रकार के भोग-विलास प्राप्त होते हें ।। २१ ।।

धन्यास्पगता यत्र सङ्कटा बन्धनप्रदा ।
नीतिव्यापारभूपाल-मानसोत्साहभङ्गदा ।। २२ ।।

धन्या में सङ्कटा का अन्तर हो तो बन्धन तथा नीति, व्यापार, राजकाज के कार्यों में मन और उत्साह नष्ट हो जाता है ।। २२ ।।

धन्यान्तरगता नित्यं मङ्गला मङ्गलप्रदा ।
धन-धान्य-हिरण्यादि-पुत्रदार-सुखप्रदा ।। २३ ।।

धन्या की दशा में मंगला का अन्तर हो तो उसके घर में सर्वदा मंगल, धन-धान्य, सोना-चाँदी-पुत्र-स्त्री आदि से सुख प्राप्त होता है ।। २३ ।।

पिङ्गला यदि धन्यान्तर्बहुधाहतभूधनः ।
हतोत्साहो नपाद्भीतिः शिरोरुक्शूलसम्भवः ।। २४ ।।

धन्या में पिंगला की अन्तर्दशा हो तो अनेक प्रकार से भूमि, धन का नाश, उत्साह, भंग, राजा से भय, शिर में रोग और शूल होता है ।। २४ ।।

भ्रामर्यन्तरफलम्–

भ्रामरी स्वदशामध्ये भीतिमोहविषार्तिदा ।
स्वस्थाने स्वजने शैले वैरिदुष्टजनार्त्तिदा ।। २५ ।।

भ्रामरी दशा में भ्रामरी का अन्तर हो तो भय, मोह, विष से पीड़ा, अपने स्थान में, अपने परिजनों से, पर्वत पर, शत्रुओं से, दुष्ट जन से और विष से पीड़ा होती है ।। २५ ।।

भद्रा तु भ्रामरीमध्ये विदेशगमनं भवेत् ।
निजमित्रसमायोगो विद्यामानश्च भूपतेः ।। २६ ।।

भ्रामरी में भद्रिका आती है तो विदेश यात्रा, मित्रों का संग, विद्या लाभ, राजा से सन्मान होता है ।। २६ ।।

उल्का तु भ्रामरीमध्ये ज्वरशूलासृगार्त्तिदा ।
धनपुत्रकलत्राङ्गपीडा हानिकरी मता ।। २७ ।।

भ्रामरी में उल्का हो तो ज्वर, शूल, रक्त विकार से पीड़ा, धन-पुत्र-स्त्री को कष्ट और हानि होती है ।। २७ ।।

सिद्धा सिद्धिप्रदा नित्यं भ्रामरीमध्यतो यदा ।
विवेकविद्यानिधिदा भयरोगार्तिनाशिका ।। २८ ।।

भ्रामरी में सिद्धा हो तो सदा कार्य में सिद्धि, विवेक, विद्या और निधि का लाभ, भय और रोग का नाश होता है ।। २८ ।।

सङ्कटा मरणं क्लेशः शोकं मोहं गतं गदः ।
राजचौरजनख्यातिप्रदा भ्रामरिमध्यगा ।। २९ ।।

भ्रामरी में संकटा हो तो मृत्युतुल्य कष्ट, दुःख, मोह, भ्रमण, रोग तथा राज्य की चोरसूची में नाम लिखा जाता है ।। २९ ।।

विलासो विविधं सौख्यं नृपसेवातिपुष्टता ।
भ्रामर्यन्तर्गतां यत्र मङ्गला सा च मङ्गला ।। ३० ।।

भ्रामरी दशा में मंगला की अन्तर्दशा हो तो सदा मंगल, विलास, अनेक प्रकार के सुख, राजा की सेवा से वृद्धि होती है ।। ३० ।।

पिङ्गला भ्रामरीमध्ये गुदाऽङ्घ्रिमुखरोगदा ।
गजाश्वमहिषव्याघ्रव्रणभीतिप्रदा भवेत् ॥ ३१ ॥

भ्रामरी में पिंगला हो तो गुह्येन्द्रिय और मुख-पैर में रोग, हाथी, घोड़ा, महिष, बाघ और व्रण इन सबों का भय बना रहता है ॥ ३१ ॥

भ्रामर्युपगता धन्या धनवाहनभोगदा ।
नृपैः प्रीतिकरी भिल्लैर्वैरहानिकरी मता ॥ ३२ ॥

भ्रामरी में धन्या का अन्तर हो तो धन, वाहन, भोग-विलास की वृद्धि, राजा से प्रेम और भीलों से शत्रुता हानिकारी होती है ॥ ३२ ॥

भद्रिकान्तरफलम्–

भद्रा भद्रां गता यत्र यशोभद्राश्वगोप्रदा ।
व्यसनार्तिहरी पुण्यमार्गबोधकरी मता ॥ ३३ ॥

भद्रिका में भद्रिका का अन्तर हो तो यश, कल्याण, घोड़ा, गौ आदि का लाभ, व्यसन और पीड़ा का नाश और पुण्य पथ का ज्ञान होता है ॥ ३३ ॥

उल्का भद्रान्तरं याता विवादकृतरोगदा ।
स्थानभ्रंशो द्रव्यहानिकारिण्युद्वेगदायिनी ॥ ३४ ॥

भद्रिका में उल्का का अन्तर हो तो लोगों से विवाद, रोग, स्थानभ्रंश, धन हानि और उद्वेग होता है ॥ ३४ ॥

भद्रिकान्तर्गता सिद्धा द्विजदेवार्चने रतिः ।
पुत्र - मित्र - कलत्राङ्गगृहग्राम - जनोत्सवान् ॥ ३५ ॥

भद्रा में सिद्धा का अन्तर आता है तो उस समय में ब्राह्मण और देवता में भक्ति, पुत्र, स्त्री-मित्र, अपने देह-घर-ग्राम आदि में सर्वत्र सुख और उत्सव होता रहता है ॥ ३५ ॥

भद्रादशां समायाता सङ्कटा सङ्कटार्तिदा ।
मोह-शोक-विपद्दात्री भ्रान्तिदेशगमार्त्तिदा ॥ ३६ ॥

भद्रिका में संकटा का अन्तर प्राप्त होता है तो अनेक संकट, पीड़ा, मोह, शोक, विपत्ति, मतिभ्रम और विदेश गमन से पीड़ा होती है ॥ ३६ ॥

सन्मान-धन-भू-कीर्ति-व्यापारे सुतसौख्यदा ।
मङ्गला भद्रिकामध्ये पितृवंशविवृद्धिदा ॥ ३७ ॥

भद्रिका में मंगला हो तो सम्मान, धन, भूमि, यश, व्यापार में लाभ, पुत्रों से सुख और वंशजों की वृद्धि होती है ॥ ३७ ॥

यदा मध्ये तु भद्रायाः पिङ्गला पित्तरोगदा ।
कृषिवाणिज्यभूवृद्धाश्रयतो विविधप्रदा ।। ३८ ।।

भद्रिका में पिंगला हो तो पित्तरोग, कृषि, वाणिज्य, भूमि और वृद्ध-जनों के आश्रय से अनेक वस्तु का लाभ होता है ।। ३८ ।।

पुत्र-स्त्री-मित्र-सुखदा गृहे मङ्गलदायिनी ।
धनधान्यप्रदा धन्या भद्रिकान्तर्गता यदा ।। ३९ ।।

भद्रिका में धन्या का अन्तर हो तो पुत्र, स्त्री और मित्रों से सुख, घर में नित्य मंगल-उत्सव होता रहता है ।। ३९ ।।

रुधिराग्नियमाद्भीतिर्भद्रायां भ्रामरी यदा ।
गृहक्षेत्ररिपुध्वंसो निजबन्धुजनैः सुखम् ।। ४० ।।

भद्रिका में भ्रामरी की अन्तर्दशा हो तो रुधिर विकार, अग्नि और मृत्यु का भय, गृह, खेती तथा शत्रुओं का नाश तथा अपने परिजनों से सुख होता है ।। ४० ।।

उल्कान्तरफलम्–

शत्रुभिः सहसा हानिर्द्रव्यस्य महत व्यथा ।
उल्कामध्ये यदोल्क च राजभ्रंशात्तु भीतिदा ।। ४१ ।।

उल्का में उल्का का अन्तर हो तो अचानक शत्रु के द्वारा धन की हानि, व्यथा एवं राज्यनाश का भी भय रहता है ।। ४१ ।।

सिद्धा तु स्वफलं त्यक्त्वा परस्य फलदायिनी ।
उल्कान्तरं समायाता विदेशगमनप्रदा ।। ४२ ।।

उल्का की दशा में सिद्धा का अन्तर हो तो सिद्धा, अपने शुभ फल को नहीं देकर उल्का के अशुभ फल को ही देती है, तथा विदेश गमन कराती है ।। ४२ ।।

उल्कायां मध्यगा यत्र सङ्कटा मरणप्रदा ।
स्त्री-पुत्र-मित्र-भृत्यादि-जनहानिकुलक्षयः ।। ४३ ।।

उल्का दशा में संकटा का अन्तर आता है तो मृत्यु का भय, स्त्री, पुत्र, मित्र, नौकरादि जनोंकी हानि होती है तथा कुलकी क्षति होती है ।। ४३ ।।

उल्काया मध्यगा यत्र मङ्गला मोहकारिणी ।
धनमित्रविवेकस्त्री-सुखदा मलहारिणी ।। ४४ ।।

उल्का में मंगला का अन्तर आता है तो मोह तथा धन, मित्र, विवेक, स्त्री आदि से सुख तथा पाप और रोग की हानि होती है ।। ४४ ।।

कुष्ठकण्डूशिरोरोगैः पीडितो धरणीतले ।
भ्रमते नाऽत्र सन्देहो यद्युल्कायां तु पिङ्गला ॥ ४५ ॥

उल्का दशा में पिंगला का अन्तर हो तो कोढ़, खुजली और मस्तक रोग से पीड़ा तथा भ्रमण होता है ॥ ४५ ॥

नो लाभो न सुखं किञ्चिद्वातव्याधिकफोदयः ।
धन्योल्कायां समायाता स्त्रीपुत्रस्वजनः कलिः ॥ ४६ ॥

उल्का में धन्या के अन्तर आने से न लाभ होता है, न सुख होता है, कुछ वात और कफ विकार से रोग एवं स्त्री-पुत्रादि अपने जनों से झगड़ा होता है ॥ ४६ ॥

उद्विग्नमानसं मोहो भ्रमः पुंसोऽरिजं भयम् ।
नानाक्लेशसमायोगो भ्रामर्युल्कान्तरं गता ॥ ४७ ॥

उल्का में भ्रामरी का अन्तर रहता है तब मनमें उद्वेग, भ्रम, शत्रु का भय और अनेक क्लेश होते हैं ॥ ४७ ॥

उल्कामध्ये तु सम्प्राप्ता भद्रा भद्रार्थदायिनी ।
भूषणाम्बरहानिः स्यात्कुलमित्रजनात्सुखम् ॥ ४८ ॥

उल्का में भद्रिका का अन्तर हो तो कल्याण और धन का लाभ, भूषण-वस्त्र की हानि और कुल के जन तथा मित्रों से सुख होता है ॥ ४८ ॥

सिद्धान्तर्दशाफलम्–

सिद्धा सिद्धार्थसंदात्री स्वजनैः सह सौख्यदा ।
सिद्धायामथवैश्वर्यं सुतमित्रसुखप्रदा ॥ ४९ ॥

सिद्धा की दशा में सिद्धा की ही अन्तर्दशा हो तो सब कार्य में सिद्धि, स्वजनों से सुख, ऐश्वर्य की वृद्धि एवं पुत्रादिकों से सुख होता है ॥ ४९ ॥

बन्धनं नृपचौरेभ्यो धनहानिर्महद्भयम् ।
देशत्यागो भवेन्नूनं सिद्धायां सङ्कटा यदा ॥ ५० ॥

सिद्धा में संकटा का अन्तर रहता है तो बन्धन, राजा और चोर से धन हानि, महद् भय और देश छोड़ना पड़ता है ॥ ५० ॥

विलासः स्वजनैः सौख्यं धनलब्धिर्नृपाद्भवेत् ।
मङ्गला सिद्धिदा सिद्धा सङ्गता विविधा यदा ॥ ५१ ॥

सिद्धा में मंगला का अन्तर हो तो भोग-विलास, स्वजनों से सुख, राजा से धन लाभ तथा सब कार्यों में सिद्धि होती है ॥ ५१ ॥

सिद्धायां पिङ्गला याति मानं क्रोधोऽग्नितो भयम् ।
वैरोदयो निजैः सार्द्धं परद्रव्याभिधारणम् ॥ ५२ ॥

सिद्धा में पिंगला का अन्तर हो तो अभियान, क्रोध, अग्नि भय, अपने जनों से वैर और परधन का लाभ होता है ॥ ५२ ॥

पुंसां धन्या तु सिद्धायां प्राक्पुण्यनिचयो भवेत् ।
मनःप्रकल्पितं सर्वं सिद्धमायाति सर्वतः ॥ ५३ ॥

सिद्धा में धन्या का अन्तर आता है तो पूर्वपुण्य फल का उदय तथा सब अभिलषितों की सिद्धि होती है ॥ ५३ ॥

भ्रामरी यदि संप्राप्ता सिद्धायां यस्य जन्मनि ।
स्वस्थानाद् व्यसनैस्त्यागान्ननु राजकुलाद्भयम् ॥ ५४ ॥

सिद्धा की दशा में भ्रामरी का अन्तर हो तो अपने स्थान का त्याग, व्यसन और दानशीलता एवं राजा से भय रहता है ॥ ५४ ॥

माङ्गल्यं भोगजननी विद्यासौख्यगुणप्रदा ।
नराणां सिद्धिदा भद्रा सिद्धायामुपजायते ॥ ५५ ॥

सिद्धा में भद्रिका का अन्तर हो तो घर में मंगल, भोग-विलास, विद्या, सुख, धन का लाभ, गुण की वृद्धि और सब कार्य में सिद्धि होती है ॥ ५५ ॥

उल्का सिद्धां समापन्ना धन-धान्यविनाशिनी ।
क्लेश-शोक-व्यसनदा गुदरुङ्मोहकारिणी ॥ ५६ ॥

सिद्धा की दशा में उल्का का अन्तर हो तो धन-धान्य का नाश, कष्ट, शोक, व्यसन, गुह्येन्द्रिय में रोग और मोह होता है ॥ ५६ ॥

सङ्कटान्तरफलम्–

सङ्कटा स्वदशां प्राप्ता करोति मरणं ध्रुवम् ।
राजवंशाच्च हानिश्च देशत्यागो धनक्षयः ॥ ५७ ॥

संकटा की दशा में संकटा का अन्तर हो तो मृत्यु, राजदण्ड, देशत्याग और धन का नाश होता है ॥ ५७ ॥

शिरोरुग्विविधै रोगैर्व्याधिभिर्व्यसनैस्तथा ।
कलत्रं पीड्यते पुंसां मङ्गला सङ्कटां गता ॥ ५८ ॥

संकटा की दशा में मंगला का अन्तर हो तो शिरोरोग तथा अनेक रोग, व्याधि-व्यसनों से स्त्री को पीड़ा होती है ॥ ५८ ॥

अकस्माद्धनहानिः स्यात्पुत्रशोकोऽरिजं भयम् ।
पिङ्गला सङ्कटां याता वियोगः स्वजनैः सह ॥ ५९ ॥

संकटा में पिंगला का अन्तर आने पर अचानक धनहानि, पुत्र-शोक और शत्रु भय एवं अपने सम्बन्धियों से वियोग होता है ॥ ५९ ॥

गुल्मोदरकृता पीडा निजपुत्रसुखं महत् ।
स्वदेशजनताकीर्तिर्धन्या तु सङ्कटां गता ॥ ६० ॥

संकटा में धन्या का अन्तर हो तो गुल्मरोग से उदर में पीड़ा, पुत्रों से सुख, देश और लोक में सुयश होता है ॥ ६० ॥

भ्रामरी सङ्कटामध्ये भ्रमणं पृथिवीतले ।
देश-ग्राम-पुर-द्वार-राजभ्रंशोऽरिजं भयम् ॥ ६१ ॥

संकटा में भ्रामरी का अन्तर हो तो पृथिवी में भ्रमण, देश, ग्राम, नगर द्वार, राज्य आदि से च्युत और शत्रु का भय होता है ॥ ६१ ॥

विद्यालङ्कारवस्त्राणि विविधानि महद्यशः ।
विग्रहोऽन्यजनैः सार्द्धं भद्रा चेत्सङ्कटां गता ॥ ६२ ॥

संकटा में भद्रिका का अन्तर हो तो विद्या, भूषण, वस्त्र, सुयश की वृद्धि और शत्रुओं से विग्रह होता है ॥ ६२ ॥

उल्का ग्रामधनग्राम-हारिणी मृत्युकारिणी ।
सङ्कटान्तर्गताऽजस्रं पशुमात्रकुलार्दिनी ॥ ६३ ॥

संकटा में उल्का का अन्तर हो तो सञ्चित धन का नाश, मृत्यु और पशुओं को पीड़ा होती है ॥ ६३ ॥

उत्साहो विविधः पुंसां निजपुत्रसुखोदयः ।
मनः प्रसन्नतामेति सिद्धा चेत्सङ्कटां गता ॥ ६४ ॥

संकटा की दशा में सिद्धा का अन्तर्दशा हो तो अत्यन्त उत्साह, पुत्रों से सुख और मन में सतत प्रसन्नता रहती है ॥ ६४ ॥

योगिनीभ्यो ग्रहोत्पत्ति-

चन्द्रः सूर्यो वाक्पतिर्भूमिपुत्र-
श्चान्द्रिर्मन्दो भार्गवः सैंहिकेयः ।

एते जाता मङ्गलादेः प्रदिष्टाः
सौम्याः सौम्यानामनिष्टाः खलानाम् ॥ ६५ ॥

चन्द्र, सूर्य, गुरु, मंगल, बुध, शनि, शुक्र और राहु ये ८ ग्रह क्रम से मंगला आदि योगिनी से उत्पन्न हुए हैं। अर्थात् शुभ योगिनी से शुभ ग्रह और पाप योगिनी से पाप ग्रह। एवं ये अपने स्वभावानुसार फलप्रद भी होते हैं ॥ ६५ ॥

ग्रन्थान्तरे—

पिङ्गलातोऽभवत्सूर्यो मङ्गलातो निशाकरः।
भ्रामरीतोऽभवत् क्ष्माजो धन्यातोऽभूद्विधोः सुतः ॥ ६६ ॥
भद्रिकातो गुरुरभूत् सिद्धातः कविसम्भवः।
उल्कातो भानुतनयः सङ्कटातो विधुन्तुदः ॥ ६७ ॥
अस्या एव दशान्ते च केतुरेवंविधः स्मृतः।

पिंगला से सूर्य, मंगला से चन्द्रमा, भ्रामरी से मङ्गल, धन्या से बुध, भद्रा से गुरु, सिद्धा से शुक्र, उल्का से शनि और संकटा से राहु उत्पन्न हुए ॥ ६६-६७ ॥

और संकटा के अन्तिम ४ वर्ष में केतु समझना ॥ १ ॥

बलाधिक्यात्फले तारतम्यता—

यः खेटोऽस्तगृहं तथाऽरिभवनं नीचं प्रयातो यथा
दायेशाद्रिपुगो हि तस्य गदिता सर्वाऽधमा मध्यमा।
यश्चोच्चस्थलमाश्रितः स्वभवने मूलत्रिकोणे खगो
मित्रागारमुपागतो निगदिता तस्याऽखिला सौख्यदा ॥६८॥

जो ग्रह अस्त हों, शत्रु-गृह में हों, नीच में हों उन ग्रहों में पाप ग्रहों की अधम और शुभ ग्रहों की मध्यम दशा होती है। तथा जो अपने उच्च, स्वराशि, स्वमूल-त्रिकोण, अपने मित्र गृह में हों, उन सब ग्रहों की दशा शुभप्रद समझनी चाहिये ॥ ६८ ॥

ग्रन्थकारपरिचयः—

आसीद् गुर्जरमण्डले द्विजवरः शाण्डिल्यगोत्रोद्भवः
श्रीमद्याज्ञिकवंशमण्डनमणिर्ज्योतिर्विदामग्रणीः ।

श्रौतस्मार्तरतो जनार्दन इति ख्यातः स्वकीयैर्गुणै-
स्तत्सूनुर्हरजी दशां स्फुटतरां चक्रे परां योगिनीम् ॥ ६९ ॥

गुर्जर (गुजरात) प्रान्त में शाण्डिल्य-गोत्रोत्पन्न, याज्ञिक वंश में श्रेष्ठ, ज्यौतिषियों में अग्रगण्य, श्रौतस्मार्तकर्मनिष्ठ, अपने गुणों से ख्यात, जनार्दन नामक विप्र हुए । उनके पुत्र "हरजी" ने ग्रहों की स्पष्ट दशा और योगिनी-दशा सहित इस 'मानसागरी' को वनाया ॥ ६९ ॥

इति मानसागरीपद्धतिः समाप्ता ।



परिशिष्टम्

पराशरोक्त द्वादशभावस्थ प्राणपदफलम्—

लग्ने प्राणपदे क्षीणो रोगी भवति मानवः ।
मूकोन्मत्तो जडाङ्गश्च हीनाङ्गो दुःखितः कृशः ॥ १ ॥

प्राणपद जन्म लग्न में हो तो जातक क्षीण (निर्धन), रोगी, गूँगा, उन्मत्त, मूर्ख, अंगहीन, दुःखी और दुबला होता है ॥ १ ॥

बहुधान्यो बहुधनो बहुभृत्यो बहुप्रजः ।
धनस्थाने स्थिते प्राणे सुभगो जायते नरः ॥ २ ॥

द्वितीय भाव में प्राणपद हो तो जातक बहुत धान्य, बहुत धन, नौकर और पुत्र वाला तथा सुन्दर होता है ॥ २ ॥

हिंस्रो गर्वसमायुक्तो निष्ठुरोऽतिमलिम्लुचः ।
तृतीयगे प्राणपदे गुरुभक्तिविवर्जितः ॥ ३ ॥

तृतीय भाव में प्राणपद हो तो गौरवी, निठुर, मलिनहृदय और गुरुजन में अश्रद्धा रखने वाला होता है ॥ ३ ॥

सुखस्थे च सुखी कान्तः सुहृद्-रामासु वल्लभः ।
गुरौ परायणः शीतः प्राणे वै सत्यतत्परः ॥ ४ ॥

चतुर्थ भाव में हो तो सुखी, सुन्दर, मित्र और स्त्री का प्रिय, गुरुजन में भक्ति रखने वाला, मृदु स्वभाव और सत्यवक्ता होता है ॥ ४ ॥

सुखभाक् सुक्रियोपेतस्त्वपचार-दयान्वितः ।
पञ्चमस्थे प्राणपदे सर्वकाम-समन्वितः ॥ ५ ॥

पञ्चम भाव में हो तो सुखभागी, सुकार्य करने वाला, दयालु और सब अभिलाषा को पूरा करने वाला होता है ॥ ५ ॥

बन्धुशत्रुवशस्तीक्ष्णो मन्दाग्निनिदयः खलः ।
षष्ठे प्राणपदे रोगी वित्तितोऽल्पायुरेव च ॥ ६ ॥

षष्ठ भाव में हो तो अपने बन्धु और शत्रु के वश में रहने वाला, मन्दाग्नि से युक्त, निर्दय, दुष्ट और अल्पायु होता है ॥ ६ ॥

ईर्ष्यालुः सततं कामी तीव्ररौद्रवपुर्नरः ।
सप्तमस्थे प्राणपदे दुराराध्यः कुबुद्धिमान् ॥ ७ ॥

सप्तम भाव में हो तो कामी, तीव्रस्वभाव, भयानक रूप, दुःसाध्य तथा कुबुद्धिवाला होता है ॥ ७ ॥

रोगसन्तापिताङ्गश्च प्राणपदेऽष्टमे स्थिते ।
पीडितः पार्थिवैर्दुःखैर्भृत्यबन्धुसुतोद्भवैः ॥ ८ ॥

अष्टम भाव में हो तो रोग और सन्ताप से पीड़ित शरीर, राजा से तथा नौकर, बन्धु और पुत्र के दुःख से पीड़ित होता है ॥ ८ ॥

पुत्रवान् धनसम्पन्नः सुभगः प्रियदर्शनः ।
प्राणे धर्मस्थिते भृत्यः सदाऽदुष्टो विचक्षणः ॥ ९ ॥

प्राणपद नवम भाव में हो तो पुत्र और धन से युक्त, भोगी, सुन्दर, सरल हृदय, नौकरवाला और चतुर होता है ॥ ९ ॥

वीर्यवान् मतिमान् दक्षो नृपकार्येषु कोविदः ।
दशमस्थे प्राणपदे देवार्चन-परायणः ॥ १० ॥

दशम भाव में हो तो बलवान्, बुद्धिमान्, समर्थ, राजकार्य में चतुर और देवता का भक्त होता है ॥ १० ॥

विख्यातो गुणवान् प्राज्ञो भोगी धनसमन्वितः ।
लाभस्थाने स्थिते प्राणे गौराङ्गो मातृवत्सलः ॥ ११ ॥

एकादश भाव में हो तो जातक गुणी, ज्ञानी, भोगी, धनी, गौर वर्ण और माता का भक्त होता है ॥ ११ ॥

क्षुद्रो दुष्टश्च हीनाङ्गो विद्वेषी द्विज-बन्धुषु ।
व्यये प्राणे नेत्ररोगी काणो वा जायते नरः ॥ १२ ॥

द्वादश भाव में प्राणपद हो तो क्षुद्र, दुष्ट, अंगहीन, बन्धुओं का द्वेषी, नेत्र रोगी अथवा एक आँख वाला होता है ॥ १२ ॥

फल कथन में विशेषता-

ग्रहों के फल-बल के अनुसार ही होते हैं। सामान्यरूप से ग्रहों के मुख्य बल ४ होते हैं—१ स्थान बल। २ काल बल। ३ दिग् बल और ४ नैसर्गिक (स्वाभाविक) बल।

इनमें (१) स्थान बल-(प्रथम उच्च बल)—

अपने परमोच्च अंश में पूर्ण बल ६० कला और आगे की राशि में क्रम से ह्रास होकर ७ वें राशि (नीच) में बल शून्य हो जाता है। फिर क्रम से वृद्धि होकर उच्चस्थान में पूर्ण हो जाया करता है एवं मूल, त्रिकोण, स्वगृह, अधिमित्रादि ग्रहों में बल का क्रम से ह्रास होता है। स्पष्ट ज्ञानार्थ चक्र में देखिये।

आचार्य वराहमिहिर ने बृहज्जातक में—चारों बलों को लिखा है, अभ्यास के लिये उनको लिख देते हैं–

स्थानबलम्–

"स्वोच्चसुहृत्स्वत्रिकोणनवांशैः
स्थानबलं स्वगृहोपगतैश्च"

दिग्बलम्–

"दिक्षु बुधाङ्गिरसौ रविभौमौ
सूर्यसुतः सितशीतकरौ च ॥"

अर्थात् ग्रह—अपने उच्च में, मूलत्रिकोण में, अपने गृह में, अधिमित्र के गृह में, मित्र के गृह में, सम के गृह में, शत्रु के गृह में और अधिशत्रुगृह में यथा पूर्णबली होता है। इनमें भी उच्च में पूर्ण बल ६० कला होकर क्रम से ह्रास होता हुआ नीच में बल शून्य हो जाता है।

मूल त्रिकोणादि स्थान में–४५ कला से ह्रास होकर—अधिशत्रु गृह में बल शून्य हो जाता है।

दिग्बल—बुध और गुरु पूर्व (लग्न) में पूर्ण बली, आगे क्रम से ह्रास होकर ७ सप्तम भाव में शून्य बल होकर पुनः—आगे बल की वृद्धि होकर लग्न में पूर्ण बल हो जाता है।

एवं—सूर्य और मंगल दक्षिण (दशम भाव में) पूर्ण बली और चतुर्थ भाव में जाकर निर्बल होते हैं। इसी प्रकार सप्तम से शनि और चतुर्थ से शुक्र और चन्द्र का बल समझना चाहिये।

कालबलम्–

"निशि शशिकुजसौराः सर्वदा ज्ञोऽह्नि चान्ये"

चन्द्र, मङ्गल, शनि ये रात्रि में, रवि, मंगल, गुरु ये दिन में तथा बुध दिन और रात्रि में कालबल से युक्त रहते हैं।

नैसर्गिकबलम्—

"श-कु-बु-गु-शु-च-राद्या-वृद्धितो वीर्यवन्तः"

शनि, कुज, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र, रवि ये क्रम से उत्तरोत्तर बली होते हैं। स्पष्टार्थ नीचे चक्र देखिये।

(१) नैसर्गिकबल चक्र–

उच्चरा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
बल	६०	५०	४०	३०	२०	१०	०	१०	२०	३०	४०	५०

(२) स्वमूल त्रिकोण-गृहादि बल-

मूल त्रिकोण	स्वगृह	अधिमित्रगृह	मित्रगृह	समगृह	शत्रुगृह	अधिशत्रुगृह
२५	३०	२०	१५	१०	५	०

दिशा ज्ञान–जन्माङ्ग में लग्न पूर्व, चतुर्थ उत्तर, सप्तम पश्चिम, १० दशम दक्षिण दिशा मानी जाती है।

(३) इस प्रकार ग्रहों की भावस्थिति से दिग्बल-

बुध. गुरु.	रवि. मंगल	शनि.	चन्द्र. शुक्र.	बल
१ लग्न	१० भाव	७ भाव	४ भाव	६०
१२.२	१,९	८,६	५,३	५०
११,३	१२,८	९,५	६,२	४०
१०,४	१,७	१०,४	७,१	३०
९,५	२,६	११,३	८,१२	२०
८,६	३,५	१२,२	९,११	१०
७	४	५	१०	०

(४) काल बल

बु.	सो. मं. श.	सू. गु. शु.	ग्रह
६०	०	६०	मध्यदिन में
६०	६०	०	मध्यरात्रि में

बुध का सदा कालबल ६० होता है। चं. मं. श. का मध्य दिन में ०, मध्यरात्रि में ६०, उससे आगे-पीछे १, १, घड़ी में २, २ कला बल का ह्रास होता है एवं रवि, गुरु, शुक्र का मध्यदिन में ६०, उसके आगे-पीछे १, १, घड़ी में २, २ कला घटकर मध्यरात्रि में ० शून्य बल हो जाता है।

(५) ग्रहों का नैसर्गिकबल-

सू.	सो.	शु.	गु.	बु.	कुज	श.
६०	५०	४०	३०	२०	१०	०

इस प्रकार--ग्रहों की स्थिति और इष्ट काल को देखकर बल ग्रहण करके तदनुसार फल समझना चाहिये।

काल बलका उदाहरण–

यथा-स्थान बल—चक्र नं० १ के अनुसार सूर्य अपने उच्च (मेष १) से ९ वें स्थान में हैं इसलिए बल २० हुआ।

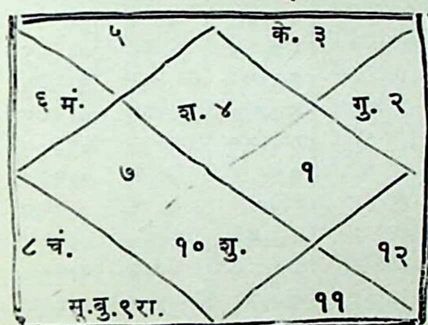
चक्र नं० २ के अनुसार सूर्य सम के गृह में हैं अतः १० बल। दोनों मिलकर स्थानबल=३०।

सूर्य—दक्षिण दिशा दशम भाव से १२ राशि पर है, इसलिये चक्र नं० ३ के अनुसार दिग्बल=५० हुआ।

काल बल—रात्रि में जन्म है, चक्र नं० ४ के अनुसार कालबल=०शून्य हुआ।

नैसर्गिक बल—चक्र नं० ५ के अनुसार नैसर्गिक बल ६० हुआ। अतः चारों बल का योग ३०+५०+०+६०=१४० प्राप्त हुआ। इसी प्रकार सब ग्रहों का बल देखना चाहिये। इसका प्रयोजन यह है कि किसी भाव में पाप और शुभ ग्रह दोनों हों तो जिसका बलयोग अधिक होगा विशेष रूप से उसीका फल समझना चाहिये। नीचे कुण्डली देखिये।

जन्माङ्गचक्रम्



टीकाकार-परिचयः–

मिथिला-देश–मध्यस्थ–चौगमा–ग्राम-वासिना।
पठता ज्यौतिषं शास्त्रं काश्यां निवसता मया॥
तातपादाज्ञया बाल–बोधार्थं राष्ट्रभाषया।
रूपनारायणेनेदं व्याख्याता मानसागरी॥
नभश्चन्द्रनभोनेत्रमिते विक्रमवत्सरे।
ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे पञ्चम्यां पूर्णतामिता॥

इति दरभङ्गामण्डलान्तर्गत-चौगमानिवासि-श्रीरूपनारायणशर्मकृत-
मानसागरीपद्धतिः सोदाहरणतत्त्वार्थबोधिनी-
भाषा-टीकासहिता समाप्ता।

॥ शुभम् ॥

अब हम जन्मपत्र बनाने वालों की सुविधार्थ कतिपय प्रमुख नगरों के अक्षांश, पलभा, मध्यरेखा से देशान्तर, काशी से देशान्तर तथा सम्प्रति रेलवे घड़ी से स्थानीय घड़ी के स्टैण्डर्ड अन्तर लिख देते हैं :—

देशान्तरसारिणी

	अक्षांशाः	पलभाः	मध्यरेखा से देशान्तर	श्रीकाशी से देशान्तर	स्टैण्डर्ड अन्तर
नगरनाम	अंश कला	अं. व्यंगु.	घ. प.	घटी पल	मिनिट
अजमेर	२६।२७	५।५८	०।१४प.	१।२३प.	—३१
अमरावती	२०।५६	४।३५	०।१७पू.	०।५२प.	—१९
अमृतसर	३१।३७	७।२३	०।१२प.	१।२१प.	—३१
अमेठी	२६। ७	५।५३	०।५७प.	०।१२प.	— ४
अयोध्या	२६।४८	६। ४	१। १पू.	०। ८प.	— १
अलवर	२७।३४	६।१६	०। ४पू.	१। ५प.	—२३
अलीगंज, हथुआ	२६।१२	५।५४	१।२३पू.	०।१४प.	+ ६
अलीगढ़	२७।५४	६।२१	०।२०पू.	०।४९प.	—१८
अलमोड़ा	२९।३९	६।४८	०।४०पू.	०।२९प.	—११
अहमदनगर	१९। ६	४। ९	०।१३प.	१।२२प.	—३१
अहमदाबाद	२३। १	५। ६	०।३५प.	१।४४प.	—४०
आगरा	२७।१२	६।१०	०।२०पू.	०।४९प.	—१८
आजमगढ़	२६। ४	५।५२	१।११पू.	०। २पू.	+ १
आबू	२४।३६	५।३०	०।३३प.	१।०२प.	—३९
इन्दौर	२२।४४	५। २	०। ३प.	१।१२प.	—२७
इटावा	२६।५२	६। ५	०।३१पू.	०।३८प.	—१५
उज्जयिनी	२३।१०	५। ८	०। ०	१। ९प.	—२७
उदयपुर	२४।३५	५।२९	०।२४प.	१।३२प.	—३५
ऊटकमण्ड	११।२४	२।२५	०। ६पू.	१। ३प.	—२३
औरंगाबाद	१९।५३	४।२०	०। ७प.	१।१६प.	—२८
कटक	२०।२८	४।२९	१।३८पू.	०।२९पू.	+१३
कपूरथला	३१।२३	७।१९	०। ७प.	१।१६पू.	+२८
कलकत्ता	२२।३२	४।५९	२। २पू.	०।५३पू.	+२३
काकरोली	२५। ०	५।३६	०।२१प.	१।३०प.	—३४
कांची	९।२९	२। ०	०।१७पू.	०।५२प.	—१९
काठमाण्डू-नेपाल	२७।४५	६।१९	१।३१पू.	०।२२पू.	+११
कानपुर	२६।२८	५।५८	०।४२पू.	०।२७पू.	९
काशी	२५।१८	५।४०	१।९ पू.	०। ०	+ २
काश्मीर	३४। ६	८। ७	०।१३प.	१।२२प.	—३१
कुरुक्षेत्र	२९।५५	६।५४	०। ०प.	१। ९प.	—२६

देशान्तरसारिणी

नगरनाम	अक्षांशाः	पलभा	मध्यरेखा से देशान्तर	श्रीकाशी से देशान्तर	स्टैण्डर्ड अन्तर
	अंश कला	अं. व्यंगु	घ. प.	घ. पल	मिनिट
कृष्णगढ़ (राजस्थान)	२६।३३	६। ०	०।११प.	१।२०प.	—३०
कोचिन	९।५८	२। ७	०। २पू.	१। ७प.	—२५
कोटा	२५।१०	५।३८	०। २प.	१।११प.	—२७
कोल्हापुर	१६।४२	३।३६	०।१८प.	१।२७प.	—३३
गया	२४।४९	५।३३	१।२९पू.	०।२०पू.	+१०
गाजीपुर	२५।३५	५।४५	१।१५पू.	०। ६पू.	+ ४
गिद्धौर	२४।५१	५।३३	१।४२पू.	०।३३पू.	+१५
गोरखपुर	२६।४५	६। ३	१।१२पू.	०। ३पू.	+ ३
ग्वालियर	२६।१२	५।५४	०।२१पू.	०।४८प.	—१७
चित्रकूट	२५।१२	५।३९	०।४८पू.	०।२१प.	— ७
चैनपुर	२५। २	५।३६	१।१४पू.	०। ५पू.	+ ४
छपरा	२५।४७	५।४८	१।२६पू.	०।१७पू.	+ ९
जगन्नाथपुरी	१९।१८	४।११	१।३७पू.	०।२८पू.	+१३
जबलपुर	२३।१०	५। ८	४।३९पू.	०।३०प.	—१०
जम्बू	२३।४४	७।४३	०।१२प.	१।२१प.	—३१
जयपुर	२६।५५	६। ६	०। २प.	१।११प.	—२७
जामनगर	२२।२७	४।५७	१। ०प.	२। ९प.	—५०
जींद	२९।१९	६।४४	०। ३पू.	१। ६प.	—२४
जूनागढ़ सोरठ	२१।३१	४।४४	०।५६प.	२। ५प	—४८
जोधपुर	२६।२८	५।५६	०।३०प.	१।३९प.	—३८
जौनपुर	२५।४५	५।४७	१। ६पू.	०। ३प.	— ०
झालरापाटन	२४।३२	५।२९	०। १पू.	१। ८प.	—२६
झाँसी	२५।२७	५।४३	०।२५पू.	०।४४प.	—१६
टेकारी	२४।५८	५।३५	१।२६पू.	०।१७पू.	+ ९
टोंक	२६।११	५।५४	०। ३प.	१।१२प.	—२७
टोंका	१९।४०	४।१७	०। ९प.	१।१८प.	—२५
डुमराँव	२५।३२	५।४४	१।२१पू.	०।१२पू.	+ ७
ढाका	२३।४३	५।१६	२।२३पू.	१।१४पू.	+३२
तंजावर	१०।२८	२।१७	०।३८पू.	०।३१प.	—१४
त्रिविन्द्रम्	८।२९	१।४७	०। ९पू.	१। ०प.	—२२
दरभङ्गा	२६।१०	५।५४	१।३८पू.	०।२९पू.	—१४
देहली	२८।३९	६।३३	०।१२पू.	०।५७प.	—२१
द्वारिका	२२।१४	४।५४	१।११प.	२।२०प.	—५४
धवलपुर	२६।४२	६। २	०।१८पू.	०।५१प.	—१८

देशान्तरसारिणी

	अक्षांशाः	पलभा	मध्यरेखा से देशान्तर	श्री काशी से देशान्तर	स्टैण्डर्ड अन्तर
नगरनाम	अंश कला	अं. व्यंगु.	घ. प.	घटी पल	मिनिट
नागपुर	२१। ९	४।३९	०।३१पू.	०।३८प.	-१३
नाथद्वारा	२४।५२	५।३४	०।२२प.	१।३१प.	—३४
नाभा	३०।२३	७। २	०। १पू.	१। ८प.	--२५
नासिक	२०। ०	४।२२	०।२३प.	१।३२प.	--३५
नीमच	२४।२८	५।२८	०।१२प.	१।२१प.	--३०
नैनीताल	२९।२३	६।४५	०।३५पू.	०।३४प.	—१२
पटना	२५।३७	५।४५	१।३१पू.	०।२२प.	+११
पटियाला	३०।२०	७। १	०। ४पू.	१। ५पू.	—२४
पंढरपुर	१७।४०	३।४९	०। ७प.	१।११प.	--२८
पुर्निया	२५।४६	५।४८	१।५४पू.	०।४५पू.	+२०
पूना	१८।३०	४। १	०।२२प.	१।३१प.	—३४
पेशावर	३४। २	८। ६	०।४५प.	१।५४प.	—४४
पोरबंदर	२१।३८	४।४६	१। ५प.	२।१४प.	—५२
प्रतापगढ़	२४। २	५।२१	०।१३प.	१।२२प.	--३१
प्रयाग	२५।२८	४।४३	०।५७पू.	०।१२प.	-- ३
फरुक्खाबाद	२७।२४	६।१३	०।३५पू.	०।३४पू.	—१२
फरीदकोट	३०।४०	७। ७	०।१३प.	१।२२प.	--३१
बड़ौदा	२२।१८	४।५५	०।२८प.	१।३७प.	—३७
बम्बई	१८।५८	४। ७	०।३२प.	१।४१प.	—३८
बरेली	२८।२२	६।२९	०।३०पू.	०।३५पू.	—१२
बर्दवान	२३।१६	५।१०	१।५८पू.	०।४९प.	+२२
बलरामपुर	२७।२७	६।१४	१। १पू.	०।४८पू.	-- १
बहराइच	२७।३४	६।१६	०।५५पू.	०। ८प.	-- ४
बांदा	२५।२८	५।४३	०।४२पू.	०।१४प.	-- ९
बाँसवाड़ा	२३।३०	५।१३	०।१७प.	०।२७प.	--३२
बीकानेर	२८। १	६।२३	०।२७प.	१।२६प.	--३६
बूंदी	२५।२७	५।४३	०। ४प.	१।३६प.	--२७
बहरामपुर	२१।२१	४।४१	०। २पू.	१।१३प.	—२५
बेतिया	२६।४२	६। २	१।२४पू.	१। ७प.	+ ८
भरतपुर	२७।१३	६।१०	०।१४पू.	०।१५प.	—२०
भागलपुर	२५।१५	५।४०	१।४९पू.	०।५५प.	+१८
भावनगर	२१।४६	४।४७	०।३९प.	०।४०पू.	--४१
भूपाल	२३।१६	५।१०	०।१५पू.	१।४८प.	—२०
मकसूदाबाद	२४।१०	५।२३	२। २पू.	०।५४प.	+२३

देशान्तरसारिणी

नगरनाम	अक्षांशाः	पलभाः	मध्य रेखा से देशान्तर	श्री काशी से देशान्तर	स्टैण्डर्ड अन्तर
	अंश कला	अं. व्यंगु.	घ. प.	घटी पल	मिनिट
मण्डी	३१।४२	७।२५	०। ९पू.	०।५३प.	—२२
मथुरा	२७।३०	६।१५	०।१६पू	०। ०प	—१९
मद्रास	१३। ४	२।४७	०।४१पू	०।२८प.	— ९
माण्डवी (कच्छ)	२२।५०	५। ३	१। ६प.	१।१५प.	—५२
मिरज	१६।५०	३।३८	०।१४प.	१।२३प.	—३१
मिर्जापुर	२५। ९	५।३८	१। ५पू.	०। ४प	— १
मुंगेर	२५।२३	५।४२	१।४४पू.	०।३५पू	+१६
मुलतान	३०।१२	६।५९	०।४३प.	१।५५प.	— ४
मैसूर	१२।१८	२।३७	०। ६पू.	१। ३प.	—२३
रतलाम	२३।२१	५।११	०।१०प.	१।१९प.	—३०
रत्नागिरि	१७। ८	३।४२	०।२८प.	१।३७प	—३७
राजकोट	२२।१९	४।५६	०।५३प.	२। २प.	—४७
रामेश्वर	९।१८	१।५८	०।३२पू.	०।३७प.	—.१३
रायपुर	२१।१५	४।४०	०।५६पू.	०।१३प.	— ३
रावलपिण्डी	३।३७	७।२९	०।३१प.	१।४०प.	—३८
रीवाँ	२४।३१	५।२८	०।५२पू.	०।१७प.	— ५
लखनऊ	२६।५५	६। ६	०।४९पू.	०।२०प.	— ६
लन्दन (विलायत)	५१।६१	१५। ६	१२।४२प.	१३।५१प.	—३३०
लाहौर	३१।३५	७।२३	०।१७प	१।२६प.	—३२
लोहरदग्गा	२ ।२७	५।१२	१।२७पू.	०।१८प.	+ ८
वटेश्वर	२६।१८	६। ४	०। २पू.	९।४६प.	—१३
विजयानगरम्	१८। ७	३।५६	१।१३पू.	०। ४प.	+ ४
शिकारपुर (सिंध)	२७।५७	६।२२	१।१२पू.	२।२४प.	—५६
शिमला	३१। ६	७।१४	०।११प.	०।५८प	——२१
श्रीरंगपट्टन	१२।२६	२।३९	०। ६पू.	१। ३प.	—२३
सतारा	१६।१२	३।५२	०।२१पू	१।३०प.	—३४
सपाटू	३०।५८	७।१२	०। ९प.	१। ०प.	——२२
सागर	२३।५०	५।१८	०।२६पू.	०।४३प.	——१५
सिराज	२४। ६	५।२२	०।१६पू.	०।५३प.	——१९
सिरोह्	२३।१२	५। ९	०।१०प.	०।५९प.	——२२
सूरत	२१।१२	४।३९	०।३२प.	१।४१प.	— ३८

देशान्तरसारिणी

	अक्षांशाः	पलभाः	मध्य रेखा से देशान्तर	श्री काशी से देशान्तर	स्टैण्डर्ड अन्तर
नगरनाम	अंशकला	अं. व्यंगु.	घ. प.	घटी पल	मिनिट
शोलापुर	१७।४०	३। ९	०। २प.	१।११प.	—२६
हरदा	२२।२१	४।५६	०।११पू.	०।५८प.	—२१
हरिद्वार	२९।५८	६।५५	०।२१पू.	०।४८प.	—१७
हैदराबाद (दक्षिण)	१७।२३	३।४५	०।२४पू.	०। ५प.	—१६
हैदराबाद (सिंध)	२५।२५	५।४२	१।१७प.	२।२६प.	—५६

रेलवे घड़ी का समय—काशी से ३ मिनिट देशान्तर पश्चिम और प्रयाग से १ मिनिट पूर्व स्थान की रात्रि से गिना जाता है। ग्रीनविच में जब मध्यरात्रि होती है तब इस स्थान में रेलवे समय ५ बजकर ३० मिनिट मध्य दिन होता है। इसलिए रेलवे समय (घंटा-मिनिट) में २ मिनिट जोड़ने से मध्यरात्रि से काशी का स्टैण्डर्ड (मध्य) समय होता है।

अन्य स्थान का स्टैण्डर्ड समय जानना हो तो इस सारिणी में जो स्टैण्डर्ड समय के अन्तर लिखे हैं, उतने मिनिट स्टैण्डर्ड रेलवे टाइम में जोड़ने या घटाने से अपने यहाँ का स्टैंडर्ड (मध्य समय) होगा। घटाने का चिह्न (—) और जोड़ने का चिह्न (+) समझना चाहिये। काशी से पश्चिम देश में घटाना और पूर्व देश में जोड़ना चाहिये। फिर जिस दिन अपने यहाँ के स्पष्ट सूर्य घड़ी से बनाना हो, उस मास की उस तारीख के पेज नं० (४६३) से संस्कार मिनिट-सेकेण्ड+चिह्नवाले को जोड़ने और-चिह्नवाले को घटाने से स्वस्थान का स्पष्ट सूर्यघड़ी से समय हो जायेगा। उदाहरण-जैसे लखनऊ का ता० १५ जनवरी को रेलवे का स्टैंडर्ड घं० ११ बजे दिन में स्पष्ट सूर्यघड़ी का समय जानना है तो लखनऊ का स्टैंडर्ड अन्तर—६ मिनिट ऋण करने से १० घं ५४ मिनिट हुए, इसमें जनवरी के वेलान्तर संस्कार मिनिट-सेकेण्ड-करने से वहाँ की सूर्य-घड़ी का समय हो जायेगा।

अथ जन्मपत्रप्रबोधः

मङ्गलाचरणम्

सश्रियं शारदां नत्वा दैवज्ञानां मनो मुदे ।
जन्मपत्रप्रबोधोऽयं क्रियते युक्तिसंयुतः ॥

जन्मपत्रप्रयोजनम्—

जनजन्मफलादेशो जन्मपत्रप्रयोजनम् ।
स च लग्नबलाधीनः लग्नं तद् द्विविधं मतम् ॥
दृष्टाऽदृष्टफलार्थं यद् द्वयमार्यैः पृथक् स्मृतम् ।
दुर्दैवाद् भारते वर्षे यवनाधीनतां गते ॥
नष्टे मुनिकृते ग्रन्थे विस्मृतं दैवचिन्तकैः ।
तद् दर्शयामि बालानां बोधार्थं राष्ट्रभाषया ॥

प्राणियों के जीवन भर के शुभाशुभ फल या आदेश करना ही ज्योतिष शास्त्र का मुख्य प्रयोजन है वह आदेश लग्न के बलानुसार किया जाता है। लग्न दो प्रकार के होते हैं—एक दृष्ट फल और दूसरा अदृष्ट फलज्ञान के लिये। मुनियों ने दोनों लग्न पृथक् विधि से साधन किये हैं। दुर्भाग्यवश जब भारत वर्ष यवन शासन के आधीन हो गया और मुनियों द्वारा रचित ग्रन्थ नष्टप्राय हो गये तो उस पवित्र पद्धति को यहाँ के ज्योतिषी लोग भूल गये। जिसको मैं बालकों के बोधार्थ राष्ट्रभाषा हिन्दी में दिखला रहा हूँ।

प्रथम ज्ञातव्य विषय—

आजकल के वैज्ञानिक भी स्वीकार करते हैं कि पृथिवी पर होने वाली समस्त घटनायें आकाशस्थ ग्रहों और नक्षत्रों के समूह (राशियों) के परस्पर किरण संयोग से ही घटती रहती हैं। ग्रह के उदय-अस्त आदि-वश जो फल होते हैं उन सबका कारण लग्न (नक्षत्र-समूह रूपराशि) का उदय ही होता है।

श्री भास्कराचार्य ने कहा है कि—

"ज्योतिश्शास्त्रफलं पुराणगणकैरादेश इत्युच्यते
नूनं लग्नबलाश्रितः पुनरयं तत्स्पष्टखेटाश्रयम्।

ते गोलाश्रयिणोऽन्तरेण गणितं गोलोऽपि न ज्ञायते
तस्माद्यो गणितं न वेत्ति स कथं गोलादिकं ज्ञास्यति ।"

भावार्थ यह है कि, पृथिवी स्थित चराचर प्राणियों पर होने वाली घटना की सूचना को जान करके आदेश (भविष्य शुभ-अशुभ फल की सूचना) करना ही ज्योतिष शास्त्र का प्रयोजन है। वह शुभ या अशुभ फल लग्न के आधार पर ही समझा जाता है। लग्न का ज्ञान काल (जन्म आदि का समय) के ज्ञान से और काल का ज्ञान स्पष्ट सूर्य से होता है। स्पष्ट सूर्य आदि ग्रह विभिन्न गोलों में रहते हैं। अत: ग्रह नक्षत्र के गोल की स्थिति जानने पर ही ग्रहों का ज्ञान होता है। गोल स्थिति का ज्ञान गणित के ज्ञान विना नहीं हो सकता। अत: जिसको अच्छी तरह गणित का ज्ञान नहीं है, तो गोल का ज्ञान नहीं होगा, फिर स्पष्ट ग्रह और लग्न को कैसे समझ सकता है। इसलिये जन्मपत्र बनाने वालों को प्रथम गणित का ज्ञान रखना आवश्यक होता है। अत: जन्मपत्र बनाने वालों को प्रथम गणित क्रिया में पटु होना चाहिये।

फिर जन्मस्थान, जन्म स्थान की पलभा (अक्षांश जो दक्षिणोत्तर देशान्तर नाम से प्रसिद्ध है, उस ज्ञान का) तथा मध्य रेखा से पूर्वापर देशान्तर का ज्ञान होना चाहिये।

पलभा एवं सायन सूर्य द्वारा अपने जन्मस्थानीय दिनमान, सूर्योदय, घण्टा-मिनिट का ज्ञान रखना। पुनः विज्ञ भारतीय या यवनों द्वारा निर्मित प्राचीन पद्धति से अदृष्टफलार्थ लग्नसाधन क्रिया जानकर अदृष्टफलार्थ लग्न और द्वादश भावों का साधन करना चाहिये। क्योंकि विक्रम सम्वत् १५०० के बाद यवन शासन काल में ज्योतिषी लोग गोलानभिज्ञता के कारण महर्षियों के आशय नहीं समझ कर दृष्टफलार्थ ग्रहणादि सिद्धि के लिए भिन्न-भिन्न स्व-स्व-देशीय-राश्युदय द्वारा जो सिद्धान्तग्रन्थ वा करण ग्रन्थों में लग्न बनाने की पद्धति है, उसी से अदृष्ट-फलार्थ भी तनु आदि भावों के साधन करने की परिपाटी बना दी गयी।

इस बात को सप्रमाण सयुक्तिक एवं सोदाहरण "लग्न-विवेक" नामक पुस्तक में दिखाया गया है। यहाँ हमें स्वोदय द्वारा नीलकण्ठ, श्रीपति आदि मुसलमान मतानुयायियों द्वारा साधित लग्न में कितने दोष और अनर्थ होते हैं उनको सोदाहरण दिखलाते हैं।

स्वोदय द्वारा लग्न बनाने वाले सब महानुभाव जानते हैं कि लंकोदय में स्व-स्व स्थानीय चरखण्ड घटाने से स्व-स्वदेशीय राश्युदय होते हैं। चर-

खण्ड, पलभा या अक्षांश द्वारा बनाये जाते हैं। जहाँ रूस, योरप आदि देशों में चरखण्ड लङ्कोदय के तुल्य या अधिक हो जाते हैं वहाँ स्वोदयमान शून्य और ऋण हो जाते हैं, अतः अदृष्ट फलार्थ (जन्मपत्रार्थ) लग्न और भावों की सिद्धि नहीं होती है, न हो सकती है। कोई गोलानभिज्ञ पण्डित जन भी कहते हैं कि जहाँ हिन्दू लोग रहते हैं, वहाँ के लिये जन्मपत्र या विवाहादि में लग्न का प्रयोजन नहीं होता है।

विचार कीजिये, कितना हृदय और बुद्धि का संकोच है? कि यह प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि अनेक भारतीय जन इंग्लैण्ड, रूस आदि देशों में वास करके देव-मन्दिरादि भी बना चुके और अपनी संस्कृति का प्रचार वहाँ कर रहे हैं। पृथिवी पर की बात जाने दीजिये, अब तो विज्ञान के बल से विज्ञजन चन्द्रलोक तक यात्रा कर चुके और वहाँ बसने के यत्न में लगे हैं। तथापि भारतीय कुछ संस्कृत पण्डितमानी कूपमण्डूक बने बैठे-बैठे नाना प्रकार की असंगत बातें बनाकर अबोध जनता को धोखा में डाल रहे हैं।

क्या महर्षियों ने लोकोपकारार्थ शास्त्रों को विशेष कर ज्योतिष को किसी एक देश या एक जाति-विशेष के लिये बनाया है? विज्ञजन स्वयं विचार करें।

"लग्न-विवेक" पुस्तक देखने से स्पष्ट (प्रत्यक्ष) ज्ञात होगा कि-दृष्टफल के लिये या अदृष्टफल के लिये दोनों प्रकार के लग्नज्ञान के लिये अपने-अपने सूर्योदय से इष्टकाल का ज्ञान आवश्यक होता है। जो साधारण ज्योतिषी जन भी नहीं जानते हैं तो फिर आज-कल के जन्मपत्र लिखने वाले कैसे जान सकते हैं? इसलिये हम यहाँ अपने-अपने जन्म स्थान के दिनमान बनाकर स्वस्थानीय सूर्योदय घण्टा-मिनिट जानने का प्रकार सहृदय जनों के उपकारार्थ दिखलाते हैं।

जब आधुनिक घड़ी यन्त्र नहीं था तब विज्ञजन दिन में सूर्य की छाया और रात्रि में अपने खमध्य (याम्योत्तर रेखा) पर तारा को देख कर समय का ज्ञान कर लिया करते थे तथा वे ताराओं को ठीक-ठीक पहचानते थे। जब मेघाच्छन्न होता था तो उक्त रीति से समय का ज्ञान न होने के कारण गाँव-गाँव में जल घटिकायन्त्र द्वारा समय का बोध करते थे। जब से विज्ञ युरोपियों (विदेशियों) द्वारा सुबोधार्थ घड़ीयन्त्र बना लिया गया तब से लोग इसी से कालज्ञान करते हैं। और चाहे जब सूक्ष्म-से-सूक्ष्म काल का ज्ञान हो जाता है।

परञ्च यह यन्त्र किसी स्थान की मध्यरात्रि से चालू किया जाता है जो मध्यम (स्टैण्डर्ड) गति से चलता है। इसमें अपने-अपने यहाँ के देशान्तर (स्टैण्डर्ड अन्तर) संस्कार करने पर अपने-अपने मध्यरात्रि से मध्यम

(स्टैण्डर्ड) घण्टा-मिनिट होते हैं। उसमें अपने-अपने स्थानीय चरपल तथा वेलान्तर संस्कार करने से स्पष्ट समय का बोध होता है। किन्तु बहुत से लोग इस देशान्तर और चरान्तर आदि को नहीं जानते हैं कि यह क्या चीज है। और कैसे जाने जाते हैं, अतः उन लोगों के सुबोधार्थ हम उनका परिचय लिख रहे हैं।

१. गोल परिचय :—आकाशगोलस्थित नक्षत्र और ग्रह तथा वर्ष, मास, तिथि आदि कालमान एवं परिचय 'काल पञ्चाङ्ग विवेक' नामक पुस्तक में देखिये। यहाँ हम मुख्य विषयों का ही परिचय लिखते हैं।

भगोल :—जहाँ नक्षत्र-समूह देखने में आता है, उसका नाम भगोल है। यह पृथ्वी से अनन्त योजन दूरी पर है, भारतीय ज्योतिषियों के (जिन्होंने पृथ्वी को स्थिर माना है। उनके) मत से नक्षत्र के नीचे शनि-गोल या शनि-कक्षा है; उसके नीचे वृहस्पति की कक्षा, उसके नीचे मङ्गल की, मङ्गल के नीचे सूर्य, सूर्य के नीचे शुक्र, उसके नीचे बुध और बुध के नीचे चन्द्रमा की कक्षा है। सब अपनी-अपनी कक्षा में भ्रमण करते हैं। परञ्च पृथ्वी पर रहने वाले हम लोगों की दृष्टि में वे एक गोल के धरातल में ही भ्रमण करते हुए भान होते हैं।

यथा—सूर्य सिद्धान्त—

"अन्तरुन्नतवृक्षाश्च वनप्रान्ते स्थिता इव।
दूरत्वाच्चन्द्रकक्षायां दृश्यन्ते सकला ग्रहाः॥"

भारत में पूर्व के लोग सूर्य को स्थिर और पृथ्वी को चल मानते थे, जो वास्तव स्थिति है। किन्तु उस प्रकार लोगों को प्रतीत नहीं होने के कारण जैसे भासित होते हैं, उसी प्रकार पृथ्वी की गति को सूर्य में आरोपित करके भास्करादि विज्ञजनों ने गणित की पद्धति बनायी।

दोनों प्रकार के गणित से ग्रहों की स्थिति का वास्तविक ज्ञान हो जाता है। उक्त गोल के विषय में महर्षियों का कहना है कि, 'ब्रह्मा ने ग्रह सहित नक्षत्र गोल की रचना करके उसको पश्चिमाभिमुख भ्रमण पथ में नियुक्त कर दिया, जो स्वशक्ति से अनवरत भ्रमण करता हुआ प्रतीत होता है।' किसी ने उसके भ्रमण का कारण एकरूपगति वाला प्रवहनामक वायु बताया है। वह भचक्र एक स्थिर दक्षिणोतर रेखारूप धुरी पर लट्टू की तरह घूमता है तथा धुरी के दक्षिणोत्तर प्रान्त में दो ताराएँ स्थिर रूप रहती हैं, अतः उनका नाम दक्षिणोत्तर ध्रुव कहा जाता है। भचक्र अपनी धुरी पर जितने समय में एक बार स्वाङ्ग भ्रमण करता है, वह एक नक्षत्र (मध्यम) अहोरात्र माना जाता है। इसी के आधार पर आजकल के घटी-

मन्त्र बनाये जाते हैं। जो ठीक भचक्र भ्रमण के साथ ही २४ घंटे में अहोरात्र पूरा करता है। ज्योतिष विज्ञ इसको नाक्षत्र अहोरात्र कहते हैं।

याम्योत्तर रेखा –भूकेन्द्र और ध्रुवतारा में लगी हुई रेखा ध्रुवरेखा कहलाती है। वह जिस-जिस गोल में जहाँ-जहाँ लगी है, वहाँ-वहाँ तत्तत् गोलीय ध्रुव स्थान माना गया है; अतः भूपृष्ठ में जहाँ लगी है वह भूपृष्ठीय ध्रुव स्थान है। वही पृथ्वी का सबसे ऊँचा प्रसिद्ध सुमेरु पर्वत है। भूमि-पिण्ड के गोल होने के कारण वह सुमेरु, भूमण्डलवासियों के उत्तर में पड़ता है। इसलिये वह समस्त भूवासियों का स्थिर उत्तर दिशा और ध्रुव रेखा स्थिर याम्योत्तर रेखा मानी जाती है। अतः ध्रुव स्थान से नवत्त्यंश (गोल को तुल्य दो भाग वनाने वाला) वृत्त समस्त भूवासियों का स्थिर पूर्वापर वृत्त माना जाता है।

स्थिर (सार्वजनिक) याम्योत्तर वृत्त :—

सृष्टि के आरम्भ समय में सूर्यसिद्धान्त के मत से लङ्का के अधोयाम्योत्तर वृत्त (लङ्कामध्यरात्रि-काल) में थे, अतः वह सार्वजनिक याम्योत्तर वृत्त है। बहुत से विज्ञजनों के मत से वहीं से 'अहोरात्र' का प्रवृत्ति होने के कारण वह सार्वजनिक क्षितिज भी है। मध्यरात्रि से ही वे लोग कार्य करते थे, अतः उनको लोग निशाचर, रात्रिचर आदि नाम से कहने लगे।

यद्यपि उस समय निरक्षदेशीय यमकोटि नगर स्थान में सूर्योदय था तथापि वह समस्त निरक्षदेशीय सूर्योदय माना गया, अतः वह लङ्का का भी सूर्योदय समझा गया।

हमारे भारतीय विज्ञजन भी अपने-अपने मध्यरात्रि से अग्रिम मध्यरात्रि (सावन ६० घटी) को ही अद्य (आज) शब्द से प्रयुक्त करते हैं।

मध्यरेखा :—लङ्का के याम्योत्तर वृत्त को सार्वजनिक याम्योत्तर वृत्त होने से पृथ्वी की मध्य रेखा मानी गयी है।

श्री भास्कराचार्य ने भी कहा है—

"यल्लङ्कोज्जयिनीपुरोपरि कुरुक्षेत्रादिदेशान् स्पृशन्।
सूत्रं मेरुगतं बुधैर्निगदिता सा मध्यरेखा भुवः॥

लङ्का के याम्योत्तर वृत्त में ही उज्जयिनी, कुरुक्षेत्र आदि देश हैं। अतः सृष्टयादि से साधित अहर्गण लङ्का के मध्य रात्रि कालिक ही होते हैं।

यथा–

"......लङ्कायामार्धरात्रिकः
सावनो द्युगणः सूर्याद् दिनमासाब्दपास्ततः॥"

अब हम लेख-विस्तर भय से प्रसंगागत अन्य विषयों को छोड़कर प्रकृत विषय लग्न और राशियों के स्वरूप एवं भेदों को दिखलाते हैं। अमरकोष में लिखा है—

"राशीनामुदयो लग्नं ते च मेषवृषादय:"

राशियों (नक्षत्र-समूहों) का पूर्व क्षितिज में उदय होना ही लग्न है। वे राशियाँ क्रम से मेष-वृषादि १२ हैं।

राशि परिचय-

पूर्व कथित नाड़ी वृत्त (सार्वजनिक पूर्वापरवृत्त) स्थित रेवती तारा के अन्त विन्दु से तुल्य १२ विभाग पर १२ ध्रुव प्रोतवृत्त करने से १२ वप्रक्षेत्र बनते हैं। उनमें एक-एक वप्रक्षेत्र में जितने-जितने नक्षत्र-समूह हैं वे क्रम से मेष आदि १२ नाम से प्रसिद्ध हैं। इसलिये कि प्रथम क्षेत्र में कुछ चमकीली ताराओं की स्थिति देखने में मेष (भेड़ा) के समान भासित होती है। इसलिए उसका नाम मेष रखा गया। एवं अन्य विभागों में भी ताराओं की जैसी-जैसी स्थिति देखने में आयी वैसे ही नामकरण किये गये।

ये ही १२ वप्रक्षेत्र स्थित १२ राशियाँ हैं तथा सूर्य स्वगति से भचक्र में भ्रमण करता हुआ जिस मार्ग में दिखाई देता है उसको क्रान्तिवृत्त कहते हैं। वह उपरोक्त राशिचक्रों में रहने के कारण राशिवृत्त, भवृत्त आदि संज्ञाओं से व्यवहृत है। इनके भी १२ विभाग-१२ राशियाँ मानी गयी हैं।

ये राशियाँ क्रान्तिवृत्त के चल होने के कारण चल हैं। इन दोनों प्रकार की राशियों के क्षितिज में लगे हुए प्रदेश को लग्न कहते हैं। जो स्थिर और चर भेद से दो प्रकार के होते हैं। स्थिर राशि वप्रक्षेत्र बिम्बात्मक है, अतः वे सब चर्मचक्षुओं से भी दृश्य होते हैं। किन्तु भवृत्तीय चर राशियाँ रेखा रूप होने के कारण चर्मचक्षुओं से अदृश्य हैं, अतः इनकी स्थिति गणित से ही जानी जाती है। क्रान्तिवृत्तीय लग्न का उपयोग ग्रहण आदि दृष्ट कार्यों में 'वित्रिभि लग्न, मध्य लग्न' आदि के लिये होता है।

"यत्र लग्नमपमण्डलङ्कुजे तद् गृहाद्यमिह लग्नमुच्यते।
प्राचि पश्चिमकुजेस्तलग्नकं मध्यलग्नमिति दक्षिणोत्तरे ॥"

भास्कराचार्य ने कहा है—

ये भवृतीय १२ राशियाँ भूवासी वहुत से जनों के क्षितिज में लगती ही नहीं। जहाँ-कहीं लगती भी हैं वहाँ इनके स्थितिमान तुल्य नहीं होते। अतः इनका उपयोग केवल दृष्ट फल में ही होता है।

किन्तु विम्बात्मक स्थिर राशियाँ वप्रक्षेत्र रूप उत्तर ध्रुव से दक्षिण ध्रुव पर्यन्त फैली हुई हैं। इसलिए भचक्र भ्रमण से भूवासियों के नत्रके

क्षितिज में निश्चित रूप से लगती ही हैं, जिस लिये भचक्र का एक बार स्वाङ्ग भ्रमण होने पर अहोरात्र की पूर्ति होती है, इसलिए सूर्याहोरात्रवृत्ताश्रित नक्षत्रों (समस्त ताराओं) के क्षितिज में उदय हो जाते हैं। इसलिये एक अहोरात्र (६० घड़ी) में बारहों वप्रक्षेत्र रूप राशि के उदय हो जाते हैं, अतः एक राशि का उदयकालमान $\frac{\text{घ० ६०} \times \text{१ राशि}}{\text{१२ रा०}}$ = ५ घटी हुआ।

बारहों वप्रक्षेत्रों के तुल्य होने के कारण प्रत्येक राशि के उदयमान तुल्य ही होते हैं। सूर्योदय समय में सूर्याश्रित राशि ही लग्न होता है। जो जातक का तनुभाव कहा गया है। उसके बाद तीस-तीस अंश के उदय होने पर द्वितीय आदि भाव माने गये हैं।

महर्षि पराशर ने कहा है—

"सूर्योदयात्समारभ्य घटिकानान्तु पञ्चमम्।
प्रयाति जन्मपर्यन्तं भावलग्नं तदुच्यते ॥"

इसीलिये उन्होंने लग्नसाधन प्रकार बताया है, यथा-

"इष्टं घट्यादिकं भक्त्वा पञ्चभिर्भादिकं फलम्।
योज्यमौदयिके भानौ भावलग्नं स्फुटं भवेत् ॥

प्रकारान्तर-

यतः—$\frac{\text{इष्ट घ०}}{\text{५}}$ राश्यादि। इसको अंशात्मक बनाने से

$\frac{\text{इष्ट घ०} \times \text{३०}}{\text{५}}$ = इष्ट × ६ अंशादि,

इसको औदयिक सूर्य में जोड़ने से भावलग्न (तनुभाव) होता है। इसलिए किसी मुनि ने कहा है—

"इष्टं घट्यादिकं षड्घ्नं फलमंशादिकं च तत्।
योज्यमौदयिके भानौ भावलग्नं स्फुटं भवेत् ॥
भावानां परतः पूर्वं तिथ्यंशैस्तत्फलं स्मृतम्।
अतस्तिथ्यंशकैर्युक्तं लग्नं सन्धिः स्मृतो बुधैः ॥
तिथ्यंशयोजनादेवमग्रे भावाः स-सन्धयः।
ज्ञेया द्वादश लग्नाद्याः क्रमात् तनुधनादयः ॥"

अर्थ स्पष्ट है। उदाहरण आगे देखिये।

लग्न बनाने में जन्म स्थानीय दिनमान और सूर्योदय जानना परम-आवश्यक है। इसलिये इसके ज्ञान के लिये उपकरण दिखाते हैं।

पूर्व के लोग तारा देखकर अपने-अपने स्थान का दक्षिणोत्तर और पूर्वापर देशान्तर का ज्ञान कर लेते थे, और सिद्धान्त या करण ग्रन्थों द्वारा कालज्ञान करते थे, आज कल तो इतनी सुविधा हो गयी है कि ग्रीनविच के महावेधालय द्वारा सूक्ष्म-से-सूक्ष्म ग्रहस्थिति का ज्ञान होता है। जिसमें देशान्तर संस्कार द्वारा अपने-अपने स्थानीय ग्रहस्थिति समझ लेते हैं।

एवं पञ्चाङ्गकार लोग भारत के प्रमुख नगरों के अक्षांश, पलभा, पूर्वापर देशान्तर लिख देते हैं। आजकल का घड़ी यन्त्र ग्रीनविच से साढ़े पाँच (५।३०) घण्टे पूर्व प्रयाग और काशी के मध्य स्थान की मध्यरात्रि से चालू किया गया है। जो कि मिर्जापुर की याम्योत्तर रेखा पर पड़ता है। उससे पूर्व या पश्चिम अपने याम्योत्तर रेखा पर्यन्त अर्थात् वहाँ की मध्यरात्रि से अपनी-अपनी मध्यरात्रि पर्यन्त जो समय का अन्तर होता है, उसको लोग स्टैण्डर्ड अन्तर कहते हैं। जो प्रायः बहुत से पञ्चाङ्गकार अपने-अपने पञ्चाङ्ग में दिया करते हैं। जहाँ स्टैण्डर्ड अन्तर पूर्व है उसकी घड़ी के समय में जोड़ देने से वहाँ के स्थानीय समय एवं पश्चिम स्टैण्डर्ड अन्तर समय को घड़ी के समय में घटा देने से स्थानीय स्टैण्डर्ड समय होता है।

दिनमान बनाने का प्रकार-

जन्म स्थानीय पलभा को तीन जगह रख कर प्रथम स्थान में १० से गुणा करने से पलात्मक प्रथम चरखण्ड होता है तथा द्वितीय स्थान को ८ से गुणा करने से द्वितीय चरखण्ड एवं तृतीय स्थानस्थ पलभा को १० से गुणा कर गुणनफल का तृतीयांश तृतीय चरखण्ड होता है।

चरखण्ड का परिचय-

१५ घड़ी से अपना-अपना दिनार्ध जितना अल्प या अधिक हो वह चरखण्ड, चरदल, चरार्ध आदि शब्दों से कहा जाता है। स्थानीय चरखण्ड के द्वारा प्रत्येक दिन का चरपल जाना जाता है।

यथा—चरखण्ड जानने का प्रकार, ग्रहलाघव—

"मेषादिगे सायन-भागसूर्ये,
दिनार्द्धभा या पलभा भवेत्सा।
त्रिष्ठा हताः स्युर्दशभिर्भुजङ्गै-
र्दिग्भिश्चरार्द्धानि गुणोद्धृतान्त्या॥

अर्थ ऊपर लिखा जा चुका है।

चरखण्ड द्वारा चरपल जानने का प्रकार–

"स्यात्सायनोष्णांशुभुजर्क्षसंख्या चरार्द्धयोगो लवभोग्यघातात् ।
खाग्न्याप्तियुक्तस्तु चरं धनर्णं तुलाजषट्के तपनेऽन्यथास्ते ॥"

सायन सूर्य का भुज बनाना, उसमें जितनी राशि संख्या हों आरम्भ से उतने चरखण्ड का योग कर लेना और भुज में जितने अंश हों उनको अग्रिम चरखण्ड से गुणा कर गुणनफल में ३० का भाग देने से पल को उपरोक्त चरखण्ड योग में जोड़ देने से चरपल होता है।

भुज बनाने का प्रकार :–

"त्रिभादल्पो भुजः प्रोक्तः षड्भाच्छोध्यस्त्रिभाधिकः ।
नवाधिकोऽर्कभाच्छोध्यो भवेत् राश्यादिको भुजः ॥"

सायन सूर्य के राश्यादि यदि तीन राशि के भीतर हों तो वही भुज होता है, यदि तीन से अधिक हों तो उसको ६ में, ६ से अधिक हो तो उसी में ६ को, और ९ से अधिक हो तो १२ राशि में घटाने से शेष को भुज समझना।

अयनांश जानने का प्रकार–

सूर्यसिद्धान्त में वार्षिक अयन गति ५४ विकला है, जिसको ग्रहलाघवकार ने स्वल्पान्तर से १ कला मान ली है। सूर्यसिद्धान्त के मत से दैनिक अयनगति ९ प्रतिविकला होती है। परन्तु आजकल सूक्ष्म वेधालय द्वारा वार्षिक अयन गति लगभग ५०½ विकला और दैनिक गति ८½ प्रतिविकला प्रत्यक्ष उपलब्ध होती है। अतः व्यवहार के लिये साप्ताहिक अयन गति एक विकला मानी जाती है। अब हम जन्मपत्र बनाने वालों की सुविधार्थ इष्ट समय में अयनांश जानने का प्रकार लिखते हैं।

यथा :–

शाके १८९१ के प्रारम्भ में २३°।२४।४७ अंशादि है। इसमें ५० या ५१ विकला जोड़ देने से अग्रिम शाकारम्भ कालिक अयनांश हो जायेंगे; इसके द्वारा वर्ष के मध्य में प्रति सप्ताह एक विकला जोड़ कर व्यवहारोपयुक्त अयनांश समझना चाहिये।

दिनार्ध जानने का प्रकार–

"चरघटीसहितारहिताः क्रमात्तिथिमिता घटिकाः खलु गोलयोः ।
भवति तद्द्युदलं निजसावनं खगुणतः पतितं रजनीदलम् ॥"

सायन सूर्य यदि उत्तर गोल में हो तो उपरोक्त विधि से साधित चर घटीपल को १५ घड़ी में जोड़ने से तथा सूर्य यदि दक्षिण गोल में हो तो १५ घड़ी में घटाने से अपना-अपना स्थानीय दिनार्ध होता है।

उसको ३० घटी में घटाने से रात्र्यर्ध होता है, अतः दिनार्ध को दूना करने से दिनमान तथा रात्र्यर्ध को दूना करने से रात्रिमान होता है।

रात्रिमान में ५ का भाग देने से लब्ध सूर्योदय घण्टा-मिनिट होता है। इस प्रकार समस्त भूमण्डल में जहाँ का दिनमानादि जब भी जानना हो, जाना जा सकता है।

विशेषः –मेष से कन्या पर्यन्त उत्तर और तुला से मीन पर्यन्त दक्षिण गोल समझना।

स्पष्ट ज्ञानार्थ उदाहरण

इंगलैण्ड देश लन्दन शहर में सूर्योदय के समय किसी का जन्म हुआ तो उस जातक का जन्मपत्र बनाना है।

सम्वत् २०२६ शाके १८९१ सन् १९६९ अ० आषाढ़ शुक्ल ७ रविवार प्रातः सूर्योदय के समय किसी का जन्म हुआ तो उस जातक का जन्मपत्र बनाना है। लग्नादि भाव साधन करने के लिए वहाँ के अक्षांश ५१।३१ पलभा १५।६ अंगुलादि को वहाँ के दिनमानादि जानने के लिये पृ० ४४८ के अनुसार लाने पर चरखण्ड–

प्रथम चरखण्ड=(१५।६)×१०=१५१

द्वितीय ,,= (१५।६)×८=१२०।४८ स्वल्पान्तर से १२१

तृतीय ,,= $\frac{(१५।६)\times १०}{३}$ =५०।२० स्वल्पान्तर से ५०

दिनमानादि ज्ञानार्थ प्रातः सूर्य राश्यादि २।७।०।०

स्वल्पान्तर से अयनांश २३।

चरपल ज्ञानार्थ राश्यादि सूर्य २।७ में अयनांश २३ जोड़ने से राश्यादि ३।०।०।० यह सायन सूर्य हुआ। यह ३ से अधिक न होने से यही भुज हुआ, इसमें राशि संख्या ३ है इसलिये तीनों चरखण्डों का योग १५१+१२१+ ५०=३२३ चरपल घटचादि बनाने से ५।२२ हुआ, इसको सायन सूर्य के उत्तर गोल में होने के कारण १५ घटी में जोड़ने से दिनार्ध २०।२२ को दूना करने से दिनमान ४०।४४ इसको ६० घटी में घटाने से रात्रिमान १९।१६ एवं इस रात्रिमान में ५ का भाग देने से वहाँ का सूर्योदय (घण्टा-मिनिट पर) होता है। अर्थात् वहाँ ३ बजकर ४२ मिनिट पर सूर्य उदय हुआ।

अब यहाँ आर्ष पद्धति से लग्न बनाना है तो इष्टघटी ०।०

"सूर्योदये हि सर्वत्र रविरेव विलग्नकम्"

सूर्योदय समय में लग्न की परिभाषा से स्पष्ट सूर्य के राश्यादि ही लग्न होता है। और लग्न बनाने की विधि से भी इष्टघटी को ६ से गुणा करने से (०) ही रहा और उसको सूर्य में जोड़ने से सूर्य के तुल्य ही रहा।

अतः प्रथम लग्न २।७।०।० राश्यादि, इसमें १५ अंश जोड़ने से सन्धि, पुनः १५ जोड़ने से द्वितीय भाव हुआ। इस प्रकार द्वादश भाव चक्र में देखिये।

आर्ष पद्धति सिद्ध ससन्धि द्वादश भाव

१ त.	० सं.	२ घ.	० सं.	३ सं	० सं.	४ सु.	० सं.	५ पु.	० सं.	६ रि.	० सं.
२ ७ ० ०	२ २२ ० ०	३ ७ ० ०	३ २२ ० ०	४ ७ ० ०	४ २२ ० ०	५ ७ ० ०	५ २२ ० ०	६ ७ ० ०	६ २२ ० ०	७ ७ ० ०	७ २२ ० ०
७ स्त्री	० सं.	८ मृ.	० सं.	९ धर्म	० सं.	१० क.	० सं.	११ ला.	० सं.	१२ व्य.	० सं.
८ ७ ० ०	८ २२ ७ ०	९ ७ ० ०	९ २२ ० ०	१० ७ ० ०	१० २२ ० ०	११ ७ ० ०	११ २२ ० ०	० ७ ० ०	० २२ ० ०	१ ७ ० ०	१ २२ ० ९

एवं द्वादश भाव, उनकी राशियाँ और स्वामी

भाव	त०	घ०	स०	सुख	पुत्र	रिपु	स्त्री	मृत्यु	धर्म	कर्म	आय	व्यय
राशि	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२
स्वामी	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	गु.	श.	श.	गु.	मं.	शु.

पराशरादि महर्षि एवं वराहमिहिरादि आचार्य तथा समस्त यवनादि आचार्यों द्वारा प्रतिपादित समस्त जातक ग्रन्थों में राश्यादि लग्न में एकादि राशि जोड़ कर द्वादश भाव माने गये हैं। जिसके अनुसार वे ऊपर लिखे गये हैं।

अब उक्त स्थान और उक्त इष्टकाल से (सूर्योदय समय में) ही यवनपद्धति द्वारा स्वोदय से लग्नादि द्वादश भाव दिखलाते हैं।

यवन पद्धति से भी सूर्योदय समय में राश्यादि सूर्य तुल्य ही लग्न होता है। इसलिये प्रथम लग्न २।७।०।० हुआ। अब दशमलग्न साधनार्थ नत घटी बनाने के लिये इष्टकाल ०।० (सूर्योदय समय) दिनार्ध तुल्य घटचादि २०।२२ हुआ। राश्यादि सायन सूर्य ३।०।०

लङ्कोदय चरखण्ड द्वारा लन्दन का स्वोदय

मेष	२७८--	१५१	=१२७	मीन
वृष	२९९--	(१२०।४८)	=१७८।१२	कुम्भ
मिथुन	३२३--	(५०।२०)	=२७२।४०	मकर
कर्क	३२३ +	(५०।२०)	=३७३।२०	धनु
सिंह	२९९ +	(१२०।४८)	=४१९।४८	वृश्चिक
कन्या	२७८+	(१५१।०)	=४२९	तुला

स्वोदय द्वारा लग्नादि भाव साधनविधि—

तत्काले सायनार्कस्य भुक्तयोग्यांशसंगणात् ।
स्वोदयात् खाग्निलब्धं यद्भुक्तं भोग्यं रवेस्त्यजेत् ॥
इष्टनाडीपलेभ्यश्च गतागम्यान्निजोदयान् ।
शेषं खत्र्याहतं भक्तमशुद्धेन लवादिकम् ॥
अशुद्धशुद्धभे हीनं युक् तनुर्व्ययनांशकम् ।
एवं लङ्कोदयैर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात् ॥
पूर्वपश्चान्नतादन्यत् प्राग्वत् तद्दशमं भवेत् ।
सषड्भे लग्नखे जायातुर्यौ लग्नोनतुर्यतः ॥
षष्ठांशयुक् तनुः सन्धिरग्रे षष्ठांशयोजनात् ।
त्रयः ससन्धयो भावाः षष्ठांशे नैक्ययुक्सुखात् ॥
अग्रे त्रयः षडेवन्ते भार्द्धयुक्ताः परेऽपि षट् ।
खेटे भावसमे पूर्णं फलं सन्धिसमे तु खम् ॥

दशमसाधनोपयोगिनतानयनम्—

पूर्वं नतं स्याद् दिनरात्रिखण्डं दिवानिशोरिष्टघटीविहीनम् ।
दिवानिशोरिष्टघटीषु शुद्धं द्युरात्रिखण्डं त्वपरं नतं स्यात् ॥
भुक्तं भोग्यं स्वेष्टकालान्न शुद्धयेत्
त्रिंशन्निघ्नात् स्वोदयाप्तं लवाद्यम् ।

हीनं युक्तं भास्करे तत्तनुः स्यात्
रात्रौ लग्नं भार्द्धयुक्ताद्रवेस्तु ।।

इसका अर्थ और उदाहरण मानसागरी आदि में भी दिये गये हैं वहीं देखिये।

सायन सूर्य के भुक्त मेषादि ३ राशि ० अंश पूर्वनत होने के कारण "एवं लङ्कोदयैर्भुक्तं भाग्यं शोध्यं पलीकृतात्" इस प्रकार से पूर्वनत २०।२२ के पल १२२२ में।

नत पल १२२२ में

मिथुनोदय	= ३२३	उत्क्रम से मिथुन; वृष, मेष
	= ८९९	और मीन के उदयमान
वृषोदय	= २९९	
	= ६००	घट गये, इसलिये मीन
मेषोदय	= २७८	शुद्ध संज्ञक तथा कुम्भ
	३२२	अशुद्ध संज्ञक हुआ।
मीनोदय	= ३–७८	
	शेष ८४	

अब (शेषं खत्र्याहतं भक्तमशुद्धेन लवादिकम्) इस रीति से शेष पल ४४ को ३० से गुणा करने से १३२० इसमें अशुद्ध कुम्भ के लङ्कोदय २९९ का भाग देने से लब्धि अंशादि ४।२४।५३ को अशुद्ध राशि संख्या ११ में घटाने से १०।२५।३५।७ इसमें अयनांश २३ को घटाने से १०।२।३५।७ यह दशम लग्न हुआ। इसमें ६ राशि जोड़ने से चतुर्थ भाव ४।२।३५।७ तथा लग्न में ६ राशि जोड़ने से सप्तम भाव ८।७।०।० अब अन्य भाव साधन करने के लिये "लग्नोनतुर्यतः षष्ठांशयुक्तनुः सन्धि" इत्यादि रीति से लग्न २।७ को ४।२।३५।७ में घटाने से १।२५।३५।७ इसका षष्ठांश ०।९।१५। ५१।१० इसको तनु भाव में जोड़ने से ससन्धि प्रथमादि तृतीय पर्यन्त तीन भाव नीचे देखिये।

राश्यादि प्रथम भाव =	२।७।०।०।०	३।४।४७।३३।३० संधि
	०।९।१५।५१।१०	०।९।१५।५१।१०
	२।१६।१५।५१।१० (प्रथम सं.)	३।१४।३।२४।४० तृ. भा.
	०।९।१५।५१।१०	०।९।१५।५१।१०
	२।२५।३१।४२।२० द्वितीय भाव	३।२३।१९।१५।५० संधि
	०।९।१५।५१।१०	०।९।१५।५१।१०
	३।४।४७।३३।३० संधि	४।२।३५।७।० च. भा.

अब ससन्धि चतुर्थादि (चार, पाँच, छह) भाव साधन के लिए 'षष्ठांशो नैकयुक्सुखात्' इस रीति से षष्ठांश ०।९।१५।५१।१० को १ राशि (३०) अंश में घटाने से ०।२०।४४।८।५० इसको चतुर्थभाव में पुनः-पुनः जोड़ने से ससन्धि तीन भाव नीचे देखिये :—

चतुर्थ भाव राश्यादि
४।२।३५।७।०
०।२०।४४।८।५०

४।२३।१९।१५।५० सन्धि
०।२०।४४। ८।५०

५।१४। ३।२४।४० पञ्चम भाव
०।२०।४४। ८।५०

६। ४।४७।३३।३० सन्धि
०।२०।४४। ८।५०

६।२५।३१।४२।२० षष्ठभाव
०।२०।४४। ८।५२

७।१६।१५।५१।१० सन्धि
०।२०।४४। ८।५०

८। ७। ०। ०। ० सप्तम भाव

इन षष्ठ पर्यन्त ६ भावों में पृथक्-पृथक् ६-६ राशि जोड़ने से क्रम से सप्तमादि द्वादश भाव समझना।

अतः यवन पद्धति द्वारा सिद्ध ससन्धि-द्वादश भाव, उनकी राशियाँ और स्वामी—

संख्या	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
भावाः	तनु	धन	सहज	सुख	सुत	रिपु	स्त्री	मृत्यु	धर्म	कर्म	आय	व्यय
राशि	२	२	३	४	५	६	८	८	९	१०	११	०
अंश	७	२५	१४	२	१४	२५	७	२५	१४	०	१४	२५
कला	०	३१	३५	३५	३	३१	०	३१	३	३५	३	३१
विक.	०	४२	२४	७	२४	४२	०	४२	२४	७	२४	४२
प्र.वि	०	२०	४०	०	४०	२०	०	२०	४०	०	४०	२०
राशि	३	३	४	५	६	७	९	९	१०	११	१	१
स्वामी	बु.	बु.	चं.	बु.	बु.	शु.	गु.	गु.	श.	श.	गु.	मं.

अब यहाँ उपरोक्त स्वोदय सिद्ध भावों को ध्यान पूर्वक देखें कि यहाँ आर्ष और अनार्ष समस्त जातक ग्रन्थों में मिथुन लग्न वाले जातक का धन भावेश चन्द्रमा तथा पञ्चम भावेश शुक्र कहा गया है वहाँ बुध हो गया है

और कर्मभावेश गुरु होना चाहिये वहाँ यवन पद्धति से शनि हो गया है। इत्यादि प्रत्यक्ष असंगतियाँ एवं त्रुटियाँ देखने में आती हैं। इस प्रकार यवनानुयायि पद्धति साधित भावों में अस्त-व्यस्तता देखते हुये भी बहुत से ज्योतिषी लोग नहीं देख रहे हैं। कहा भी है—

प्रत्यक्षविषयश्चापि विचारेण विना नरः।
जानन्नपि न जानाति पश्यन्नपि न पश्यति ॥

इसलिये, ज्योतिष-कमलवन भास्कर भट्टकमलाकर ने ज्योतिषियों को चेतावनी दी है कि—

महर्षिभिः स्वीयकृतौ निरुक्ता
लग्नांशतुल्या रविसंख्यकाः ये।
भावाः समा एव सदा फलार्थं
ग्राह्यास्त एव ग्रहगतिगोलविद्भिः ॥

महर्षियों ने लग्न में एक राशि बढ़ाकर और अंशादिकों से तुल्य जो १२ भाव कहे हैं उन्हीं भावों को ग्रहगतिगोल जानने वाले ज्योतिषी लोग सर्वदा तन्वादि भावों के फल कहने में ग्रहण करें।

कुछ अल्पज्ञों ने अपनी बुद्धि से कुतर्क द्वारा मूर्खों के उदर-भरणार्थ अनार्ष (आर्षपद्धति) विरुद्ध जो १२ भावों का साधन किया है उस विधि को विज्ञजन उपयुक्त न समझें।

यदि किन्हीं संशयालु बन्धुओं के मन में यह तर्क उपस्थित हो कि उपरोक्त भावों की अस्त-व्यस्तता जो दिखलाई गयी है वह देशान्तर की है। भारत में ऐसी नहीं होती होगी तो प्रत्ययार्थ भारत के मध्य सर्वमान्य काशीपुरी में ही एक ही समय के उदाहरण द्वारा भावों को दिखलाते हैं।

स्थान काशी अक्षांश २५।२० पलभा स्वल्पान्तर से ५।४५ चरखण्ड ५७।४६।११ सं० २०।१९ आषाढ़ शु० १० गुरुवार सूर्योदय से इष्ट १ घड़ी। दिनमान ३३।४० पूर्वनत १५।५० प्रातः सूर्य २।२५।३२।४ तात्कालिक सूर्य २।२५।३३।१ इसमें अयनांश २३।१८।५४ जोड़ने से सायन सूर्य ३।१८।५१। ५५ इसके भोग्यपल इष्ट घटी के पल में नहीं घटने के कारण "भुक्तं भोग्यं स्वेष्टकालान्न शुद्धयेत्" की रीति से इष्ट घड़ी पल ६० को ३० से गुणा करके काशी के कर्कोदय मान ३४२ का भाग देकर लब्धि अंशादि ५।१५।४७ को तात्कालिक सूर्य में जोड़ने से ३।०।४८।४८ यह प्रथम लग्न राश्यादि हुआ।

दशमलग्नसाधनोदाहरण—तात्कालिक सूर्य २।२५।३३।१ में अयनांश २३।१८।५४ जोड़ने से ३।१८।५१।५५ पूर्वनत होने के कारण इसके भक्तांश १८।५१।५५ को कर्क राशि (सायनसूर्यस्थ) के लङ्कोदय ३२३ से गुणा करने से ६०।९३।२९।५ इसमें ३० से भाग देने से लब्धि २०।३।६।५८ इसको नत-घटी १५।५० (पल ९५०) में घटाकर शेष ७४६।५३।२ इसमें भुक्त राशि मिथुन और वृष के लङ्कोदयमान को घटाने पर शेष १२४।५३।२ में मेष का मान २७८ नहीं घटता, अतः इसलिए मेष अशुद्ध संज्ञक हुआ।

अब शेष १२४।५३।२ को ३० से गुणा करने से ३७४६।३१ हुआ, इसमें अशुद्ध लङ्कोदय २७८ का भाग देने से अंशादि १३।२८।३६ को अशुद्धराशि संख्या १ में घटाने से राश्यादि ०।१६।३१।२४ इसमें अयनांश घटाने से ११।२३।१२।३० यह दशम लग्न हुआ। इसमें ६ राशि जोड़ने से ५।२३।१२।३० यह चतुर्थ हुआ।

अन्य भाव साधन का उदाहरण—

चतुर्थ लग्न ५।२३।१२।३० में प्रथम लग्न ३।०।४८।४८ को घटाकर शेष २।२२।२३।४२ के षष्ठांश ०।१३।४३।५७ को लग्न में जोड़ने से सन्धि, पुनः षष्ठांश जोड़ने से द्वितीय भाव, पुनः इसी क्रम से षष्ठांश को जोड़ने से ससन्धि तृतीय भाव होता है। तथा षष्ठांश को एक राशि (३० अंश) में घटाकर शेष १६।१६।३ को चतुर्थ भाव में जोड़ने से ससन्धि चतुर्थ, पञ्चम और षष्ठ भाव सिद्ध होते हैं। पुनः इन्हीं प्रथमादि ६ भावों में ६-६ राशि जोड़ने से ससन्धि सप्तमादि द्वादश पर्यन्त भाव सिद्ध होते हैं।

स्पष्ट क्रिया इस प्रकार है-

लग्न	=३।०।४८।४८	च. भा.	=५।२३।१२।३०
षष्ठांश	=०।१३।४३।५७		=०।१६।१६।०३
संलग्न.	=३।१४।२।४५	च. सं.	=६।९।२८।३३
	०।१३।४३।५७		०।१६।१६।०३
द्वि. भा.	=३।२८।१६।४२	पं. भा.	=६।२५।४४।३६
	०।१३।४३।५७		०।१६।१६।०३
द्वि. सं.	=४।१२।० ।३९	पं. सं.	=७।१२। ०।३९
	०।१३।४३।५७		०।१६।१६।०३
तृ. भा.	=४।२५।४४।१६	ष. भा.	=७।२८।१६।४२
	०।१३।४३।५७		०।१६।१६।०३
तृ. सं.	=५। ९।२८।३३	ष. सं.	=८।१४।३३।४५

इस प्रकार काशी में स्वोदय सिद्ध द्वादश भाव

	प्र०	द्वि.	तृ०	च०	पं०	ष०	स०	अ०	न०	द०	ए०	द्वा०
भाव	तनु	धन	भ्राता	सुख	पुत्र	रिपु	स्त्री	आयु	धर्म	कर्म	आय	व्यय
राश्यादि	३	३	४	५	६	७	९	९	१०	११	०	१
	०	२८	२५	२३	२५	२८	०	२८	२५	२३	२५	२८
	४८	१६	४४	१२	४४	१६	४८	१६	४१	१२	४४	१६
	४८	४२	३६	३०	३६	४२	४८	४०	३६	३०	३६	४४
स्वामी	सो.	सो.	सू.	बु.	शु	मं.	श.	श.	श.	गु.	मं.	शु.

विज्ञजन देखें और विचारें कि यवन-पद्धति सिद्ध इन द्वादश भावों में चन्द्र २ भाव का स्वामी, और शनि ३ भाव का स्वामी, बुध केवल १ भाव के स्वामी हुए हैं। एक कर्क लग्न वालों को पञ्चमेश और दशमेश मं० होना चाहिए। वहाँ उस स्थान में क्रम से बु० बृ० हो गये हैं। यह आर्ष और अनार्ष दोनों ही पद्धतियों से प्रत्यक्ष विरुद्ध है। क्योंकि आर्ष या अनार्ष समस्त जातक पद्धतियों में कर्क लग्नवालों के लिए मंगल को पञ्चमेश (त्रिकोण) और दशम (केन्द्र) भावेश होने के कारण राजयोग कारक माना गया है। इस प्रकार इन अनार्ष पद्धति सिद्ध लग्नादि द्वादश भावों के द्वारा किस पद्धति के अनुसार फल कहा जा सकता है। यह विज्ञजन विचार कर इस पद्धति का ही त्याग करें यही उचित है।

यह तो भारत देश के मध्यस्थ उत्तर प्रदेश स्थित काशी की स्थिति है। इससे अधिक-अधिक पलभा वाले स्थान में तो और भी अत्यधिक वैषम्य (फलित ज्योतिष ग्रन्थों के विरुद्ध) भावों की सिद्धि होती है; जो "लग्न-विवेक" नामक ग्रन्थ में स्पष्टरूप से दिखलाया गया है, उसी में देखिये। और पूर्वसाधित आर्ष पद्धति सिद्धलग्नादि भावों को देखें, और विचार करें कि जैसे आर्ष पद्धतियों में और अनार्ष पद्धतियों में भी जिस प्रकार लग्नादि भावों के स्वामी और उनके फल कहे गये हैं, वे सब घटित होते हैं। इसलिये आर्ष पद्धति सिद्ध लग्नादि भावों का ही अदृष्ट फल के लिये ग्रहण करना समुचित है।

इसी काशी स्थान के इष्ट में आर्ष पद्धति का उदाहरण :–

"इष्टं घटयादिकं षडघ्नं" इत्यादि आर्ष वचनानुसार इष्टघटी १ को ६ से गुणा करने पर अंशादि ६।०।० को प्रातःकालिक सूर्य २।२५।३२।४ में

जोड़ने से सन्धि, सन्धि में पुनः १५ अंश जोड़ने से द्वितीय भाव। एवं इसी क्रम से सन्धि सहित द्वादश भाव होते हैं।

देखिये, आर्षपद्धतिसिद्ध द्वादश भाव और उनके स्वामी–

भावाः	प्रथम	द्वि.	तृ०	च०	प०	प०	स०	अ०	न०	द०	ए०	द्वा०
भावाः	तनु	धन	भ्राता	सुख	पुत्र	रिपु	स्त्री	आयु	धर्म	कर्म	आय	व्यय
राश्यादि	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	०	१	२
	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२
	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
स्वामी	सो.	सू.	बु.	शु.	मं.	गु.	श.	श.	गु.	मं.	शु.	बु.

इतिहास में देखने से यह स्पष्ट है कि १५ वीं शताब्दी तक सर्वत्र लोग इष्टफल (ग्रहण चन्द्रशृङ्गोन्नति आदि) ज्ञानार्थ स्वस्वदेशीय राश्युदय द्वारा-भवृत्तीय लग्न का उपयोग करते थे, जो सिद्धान्त ग्रन्थों में प्रतिपादित है तथा जन्म, यात्रा, विवाहादि शुभ कार्यों में अदृष्टफलज्ञानार्थ सार्वजनिक भूकेन्द्रीय तुल्य राश्युदय द्वारा नक्षत्रबिम्बीय राशि लग्न का ही उपयोग करते थे। प्रतीत्यर्थ देखिये, आचार्य वराहमिहिर कृत बृहज्जातक दृष्टजन्माङ्गाध्याय में :–

"एवं कलत्र-सहजात्मज-शत्रुभेभ्यः
प्रष्टुर्वदेदुदयराशिवशेन तेषाम्।"

इस श्लोक की अपनी संस्कृत टीका में भट्टोत्पल ने स्त्री भाव फल विचार के लिये लग्न में ६ राशि और सहोदरों के शुभाशुभ फल के लिये लग्न में २ राशि, पुत्र के शुभाशुभ फल विचार के लिए लग्न में ४ राशि, शत्रुओं के फल विचारार्थ लग्न में ५ राशि जोड़कर भाव का साधन किया है।

१५ वीं विक्रम शताब्दी में भी मुहूर्त्तमार्तण्डकार ने अपने ग्रन्थ में "इष्टं घटचादिकं षड्घ्नं फलमंशादिकं भवेत्" इसी आर्ष विधि से नत घटी द्वारा दशम लग्न का साधन किया है।

देखिये, मुहूर्तमार्तण्ड में, यथा :—

"भागाः स्युर्नतनाडिका रसहतास्तद्धीन–
युक्प्राक्परे भानुः खं सरसं सुखं"

इत्यादि अर्थात् पूर्वनत घड़ी को ६ से गुणा करने से अंश होते हैं, उसको सूर्य में घटाने से तथा पश्चिमनत घड़ी को ६ से गुणा करने से अंशादि होते हैं, उसको सूर्य में जोड़ने से मध्य लग्न होता है। इसमें ६ राशि जोड़ने से चतुर्थ भाव होगा—यहाँ तक तो आर्ष सम्मत ही लिखा किन्तु अन्यभाव साधन में प्रमाद या अज्ञानता वश भावों का साधन अनार्ष मत से ही किया गया।

मध्य प्रदेश में तो पुराने जमाने से ही आर्ष मतानुसार एक दोहा प्रचलित है।

दोहा—"इष्टघटी षडगुन करो, रवि के अंश मिलाय।
तीस भाग दे अंश में, लग्न भाव बन जाय॥"

आज भी इसी के अनुसार वहाँ के बहुत से साधारण जन लग्न बनाते हैं।

अल्पज्ञ मुसलमान शासकों द्वारा अदृष्ट फल में भी स्वोदय से लग्न द्वारा भाव साधन के प्रचार के आरम्भ समय में ही ज्योतिष-तत्त्वज्ञ भट्ट कमलाकर आदि ने विरोध किया, किन्तु शासक के भयवश उनकी बात न सुनी गयी, तथा फलित ज्योतिष का पठन-पाठन बन्द सा हो गया। जब २-४ सौ वर्ष के बाद भारत में अंग्रेजी शासन प्रारम्भ हो गया और परीक्षा में पाराशरी, जैमिनीसूत्र, बृहज्जातक, मुहूर्तमार्तण्ड एवं सिद्धान्ततत्त्वविवेक आदि पाठ्य ग्रन्थ निर्धारित हुए तब से लग्नों के भेद लोगों को खटकने लगे। उस समय में गणित के महापण्डित श्री वापूदेवशास्त्री एवं सुधाकर द्विवेदी ने सिद्धान्त ग्रन्थों में अनेक सुधार किये। बाद में सिद्धान्त और फलित इन दोनों विषयों में समान अधिकार रखने वाले हिन्दू विश्व-विद्यालय के ज्योतिष विभागाध्यक्ष श्री प० रामयत्न ओझा ने इन दोनों के भेद को समझा कि ये दो लग्न दृष्ट और अदृष्ट फल के लिये भिन्न-भिन्न हैं और अपने "फलित-संग्रह" नामक ग्रन्थ में इसकी चर्चा भी कर दी। उसके बाद हमने इस पर पूर्ण अनुसन्धान करके एक "लग्नविवेक" नामक निबन्ध लिखा –

जिसका समर्थन आज कल के ज्यौतिष शास्त्र-तत्त्वज्ञ पं० रामव्यास पाण्डेय ज्यौतिषविभागाध्यक्ष का० हि० विश्वविद्यालय, पं० अवध विहारी त्रिपाठी ज्यौतिषविभागाध्यक्ष वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय, पण्डित लक्ष्मीकान्त झा ज्यौतिषविभागाध्यक्ष राजकीय सं० महाविद्यालय बड़ौदा आदि अनेकों ज्यौतिषविज्ञों ने किया।

आशा है कि, जन्मपत्र एवं पंचाङ्ग निर्माण करने वाले बन्धुगण दृष्ट फल में स्वोदय सिद्ध भवृत्तीयलग्न तथा अदृष्टफल में तुल्योदय भविम्बीय लग्न का उपयोग करके शास्त्रमर्यादा की रक्षा करेंगे।

अब हम जातक फलादेशोपयोगी कुछ आवश्यक विषय लिख देते हैं।

ज्यौतिष ग्रन्थ प्रणेताओं ने तनु आदि भावों के फल ग्रहों के बल के अनुसार ही पूर्ण, मध्य और अल्प समझने का आदेश किया है, अतः हम सहज में समझने योग्य विशेष विषयों सहित बलसारिणी लिख देते हैं।

भावों से विचारणीय विषय-

जातिरायुः सुखं दुःखमङ्गाङ्ककं वर्णविज्ञाननिद्रादिकान्यङ्गतः।
स्वर्णमुक्तादिकानां क्रयो विक्रयः कोशतो भ्रातृतो भ्रातृभृत्यादिकम् ॥

जाति, आयु, सुख, दुःख, शरीर, चिह्न, वर्ण, निद्रा आदि विषय का विचार लग्न से करना चाहिये। सुवर्ण, मोती आदि रत्नों के क्रय-विक्रय धन भाव से, और भाई तथा नौकर आदि का तृतीय भाव से विचार करना चाहिये।

सुहृदः सुखमालये तुरीये निधिसंस्थानकृषिस्वमातृसौख्यम्।
नववाहनवाटिकागमादेर्गृहलाभं च विचिन्तयेत्प्रवासम् ॥

मित्र सुख, निधि, कृषि, मातृ सुख, नवीन वाहन, वाटिका, यात्रा, गृह का लाभ और प्रवास, इनका चतुर्थ भाव से विचार करना चाहिये।

पुत्रमन्त्रवचनप्रवीणता गद्यपद्यमतिवृद्धिमङ्गजात् ।
मातुलादरिचतुष्पदव्रणव्रातभीतिसमरादि चिन्तयेत् ॥

पुत्र, मन्त्र (गुप्त विचार), वचनों की चतुरता, गद्य, पद्य, बुद्धि की वृद्धि ये पञ्चम सुत भाव से विचारना चाहिये। तथा शत्रु, चतुष्पद, व्रण, रोग, भय, युद्ध आदि का विचार षष्ठ भाव से करना चाहिये।

अङ्गनागमवणिक्क्रियाङ्गनाकेलिमन्मथकलाश्च सप्तमात् ।
रोगयुद्धमरणारिवाहिनी निम्नगातरणभीतिरष्टमात् ॥

स्त्री लाभ, यात्रा, वाणिज्य, सुरत-कामकला आदि का विचार सप्तम भाव से करना चाहिये। रोग, युद्ध, मरण, शत्रु की सेना, नदी में तैरने का भय इत्यादि अष्टम भाव से विचारना चाहिये।

देवतालयजलाशयादिकं पुण्यतीर्थगमनप्रमादिकम् ।
मार्गसंगमनभाग्यवर्धनं धर्मकृत्यमपि धर्मतो वदेत् ॥

देवमन्दिर, जलाशय, पुण्यतीर्थ की यात्रा, जलशाला, मार्ग में चलना, भाग्य की वृद्धि और सब धर्म कार्य नवम भाव से देखना चाहिये।

राज्यलाभजनकाम्बुवर्षणक्षोणिपालकुलवित्तवर्द्धनम् ।
मुद्रिकाप्तिरथ सत्पदाप्तयः कार्यसिद्धिरपि कर्मभावतः ।।

राज्यलाभ, पिता, जलवृष्टि, राजकुल से धनलाभ, मुद्रा की प्राप्ति, उच्चपदवी की प्राप्ति और कार्य की सिद्धि ये दशम भाव से देखना चाहिये।

सस्ययानललनानवाम्बरज्ञानवाहनसुखानि लाभतः ।
सद्व्ययादिकमभीष्टचिन्तनं वैरिरोधनरयानमन्तिमात् ।।

धान्य, सवारी, स्त्री, नववस्त्र, ज्ञान, वाहनसुख आदि का लाभ एकादश भाव से देखना चाहिये। सत्कार्यादि में व्यय, अभीष्ट वस्तु की चिन्ता, शत्रुओं का विरोध, पालकी सवारी आदि की चिन्ता द्वादश भाव से करना चाहिये।

अतीतमन्तिमादेश्यं वित्तभात् प्रविलोकयेत् ।
राहोरतीतं रवितो भावि साम्प्रतमिन्दुतः ।।

भूत विषय का द्वादश भाव से और भविष्य विषय का द्वितीय भाव से विचार करना चाहिये। तथा भूत विषय राहु से; भविष्य विषय सूर्य से और वर्तमान विषय चन्द्रमा से देखना चाहिए।

द्वादशभावकारकग्रह–

तरणिरमरमन्त्री मङ्गलश्चन्द्रसौम्यौ
गुरुरथ शनिभौमौ शुक्र आर्किः क्रमेण ।
अमरगुरुदिनेशौ मन्दभानुज्ञजीवाः
सुरगुरुरपि मन्दः कारकाः स्युर्विलग्नात् ।।

सूर्य १, गुरु २, मङ्गल ३, चन्द्र, बुध ४, गुरु ५, शनि, मङ्गल ६, शुक्र ७, शनि ८, गुरु, सूर्य ९, शनि, सूर्य, बुध, गुरु १०, गुरु ११, शनि १२ ये क्रम से लग्नादि १२ भावों के कारक हैं।

भाव	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
कारक	र.	गु.	मं.	चं. बु.	गु.	श. मं.	शु.	श.	गु. र.	श. बु.	र. सू. गु. बु.	गु.	श.

ग्रहों के विचारणीय विषय–

पितृप्रतापारोग्याणां मनःशुद्धेर्दिवाकराद् ।
बलाभिमानयोर्बुद्धेः कार्या वर्षैर्दिवाकरात् ॥

पिता के प्रताप, आरोग्य, मनःशुद्धि, बल, अभिमान और बुद्धि का विचार सूर्य से करना चाहिए ।

धवलचामरकीर्तिदयामनःसुखकलाजननीमनसामपि ।
विधुबलाबलयोगविमर्शतः कृतिकलानिपुणः सुखमादिशेत् ॥

निर्मल कीर्ति, दया, मानस सुख, माता, हृदय, कृति, कला और सुख ये चन्द्रमा के बलबल से कहना चाहिये ।

परापवादाहवसाहसानि सेनाधिपत्यं प्रभुता महत्त्वम् ।
पराक्रमित्वं परवालकुन्तप्रहारविख्यातिमथो महीजात् ॥

परापवाद, संग्राम में साहस, सेनापतित्व, प्रभुता, महत्त्व, पराक्रमित्व, तलवार, भाला आदि चलाने की ख्याति मङ्गल से कहना चाहिये ।

विनयबान्धवमातुलसन्ततिप्रवरकाव्यपटुत्वमल बुधात् ।
गणितवेदविनोदकलादिकं प्रवरबोधमनःशुचिमादिशेत् ॥

विनय (नम्रता), बन्धु, मामा, सन्तति, काव्यपटुता, गणित, वेद, कला आदि की पारङ्गतता, मनःशुद्धि इत्यादि बुध से देखना चाहिये ।

वचनपटुत्वतुरङ्गमसौख्यं तन्त्रविचारनृपालविनोदम् ।
सन्ततिसौख्यमलं निगमार्थज्ञानमुताङ्गबलं गुरुतश्च ॥

वाक्पटुता, अश्वसुख, वाहनसुख, तन्त्रविचार, राजानुग्रह, सन्तानसुख, वेदार्थ ज्ञान और शरीर बल ये गुरु से देखना चाहिये ।

सङ्गीत-साहित्यकलाकलापप्रह्लाद-कान्तारति-नृत्य-वाद्यम् ।
कलत्रसौन्दर्यविनोदविद्याबलानि चिन्त्यानि कवेः सकाशात् ॥

संगीत, साहित्य से आनन्द, स्त्रियों में प्रेम, नृत्य, वाद्य, स्त्री सुन्दरता, विनोद, विद्या और बल ये शुक्र से देखना चाहिये ।

लोभमोहविषयानिलपीडा-दुर्मतित्व-परवञ्चनशक्तिः ।
मन्दतो निधनयोगविचारो जीवनं च खलु जीवनवृत्तिः ॥

लोभ, मोह, विषयवासना, वातपीड़ा, दुर्बुद्धिता, परवञ्चनता, मरणयोग, जीवन और जीवन वृत्ति शनैश्चर से देखना चाहिये ।

यद्भावकारकस्तुङ्गे स्वभे मित्रालये भवेत् ।
तत्कारपदार्थानां दैवज्ञो लाभमादिशेत् ॥

जिस भाव का कारक ग्रह उच्च, अपनी राशि वा मित्र राशि में हो उस भावोक्त पदार्थ का लाभ समझना—अर्थात् नीच, शत्रु राशि में हो तो हानि होती है ।

एवं रव्यादिखेटानां पदार्थपरिचिन्तनम् ।
बलाबलविवेकेन कुर्यादार्योत्तमः सदा ॥

सूर्य आदि ग्रहों के बल अनुसार ही इन पदार्थों का विचार विज्ञ ज्योतिषियों को करना चाहिये ।

भवन्ति भावभावेशकारका बलसंयुताः ।
तदा पूर्णं दलं द्वाभ्यामेकेनाल्पं फलं वदेत् ॥

भाव, भावेश और कारक ये तीनों बलयुक्त हों तो पूर्ण फल, इनमें दोनों बली हों तो आधा फल, १ बली हो तो अल्प फल, अर्थात् तीनों निर्बल हों तो फल का अभाव समझना चाहिये । बलसारिणी देखिये ।

ग्रहदोषशान्त्यर्थं दान वस्तु—

सूर्य—गोधूमान्नं गुडं ताम्रं काञ्चनं रक्तचन्दनम् ।
माणिक्यं रक्तवस्त्रं च गामर्काय निवेदयेत् ॥

गेहूँ, गुड़, ताम्र, सुवर्ण, रक्तचन्दन, माणिक्य, रक्तवस्त्र और सवत्सा गौ रवि के लिये दान करना चाहिये ।

चन्द्र—तण्डुलं वंशपात्रस्थं मुक्ता रौप्यं सितांशुकम् ।
घृतपात्रं सकर्पूरं वृषं चन्द्राय चार्पयेत् ॥

सितांशुक–उज्ज्वल वस्त्र, और अर्थ स्पष्ट है ।

भौम—गोधूम-गुणताम्राणि प्रवालं काञ्चनं वृषम् ।
रक्तं मसूरं वस्त्रं च चन्दनं कुजहेतवे ॥

अर्थ स्पष्ट है ।

बुध—नीलांशुकं सर्वपुष्पं गजदन्तश्च काञ्चनम् ।
बुधाय दासीं मुद्गाज्ये कांस्यं दद्यात् प्रयत्नतः ॥

अर्थ स्पष्ट है ।

गुरु—हरिद्रां, शर्करां पीतं धान्यं काञ्चनमम्बरम् ।
लवणं पुष्परागं च तुरगं प्रीतये गुरोः ॥

हलदी, चीनी, पीला धान्य, सुवर्ण, पीला वस्त्र, लवण, पोखराज और घोड़ा गुरु के लिये दान करना ।

शुक्र के लिए—स्वर्णं चित्राम्बरं रौप्यं धेनुं श्वेततुरङ्गकम् ।
वज्रमाज्यं तण्डुलांश्च कर्पूरं प्रीतये भृगोः ।।

चित्र वस्त्र, चाँदी, गौ, श्वेत घोड़ा, हीरा, घृत, तण्डुल, कर्पूर ये शुक्र के लिये दान करे।

शनि के लिए—नीलरत्नं तिलाः नीलाः कुलित्था महिषी शनेः ।
तिलतैलं कृष्णवस्त्रं लौहं दद्याच्च प्रीतये ।।

राहु के लिए—गोमेदमश्वं तैलं च तिलानपि च कम्बलम् ।
नीलवस्त्रं सलोहं च दद्याद्राहोः प्रतुष्टये ।।

केतु के लिए—वैडूर्यरत्नं तैलञ्च तिलान् कम्बलमर्पयेत् ।
शस्त्रं मृगमृदं नीलपुष्पं केतुप्रतुष्टये ।।

शस्त्र (तलवार आदि), मृगमद (कस्तूरी), और अर्थ स्पष्ट है ।

ग्रहों की मन्त्र जप संख्या—

रवौ सप्तसहस्राणि चन्द्रे चैकादशैव तु ।
भौमे दश सहस्राणि सहस्रनवकं बुधे ।।
एकोनविंशतिर्जीवे भार्गवे विंशतिः शनौ ।
त्रयस्त्रिंशत् धृती राहौ केतौ सप्त मनोमितिः ।।

रवि की १७०००, चन्द्र की ११०००, मंगल की १००००, बुध की ९०००, गुरु की १९०००, शुक्र की २००००, शनि की ३३०००, राहु की १८००० और केतु की ७००० मन्त्र जप संख्या कही गयी है।

ग्रहों के दान के बाद दक्षिणा—

धेनुः शंखो वृषो रक्तः स्वर्णं, पीताम्बरं क्रमात् ।
शुभ्रस्तुरङ्गो गौः कृष्णा खड्गोऽजो दक्षिणा रवेः ।।

गौ, शंख, लाल वृष, सुवर्ण, पीले वस्त्र, श्वेत घोड़ा, कृष्णा गौ, तलवार और बकरा ये क्रम से रवि आदि केतु पर्यन्त ग्रहों की दक्षिणा है।

ग्रहों के प्रीत्यर्थ नवरत्न धारण—

वज्रं शुक्रेऽब्जे सुमुक्ता, प्रवालं भौमेऽगो गोमेदमार्के सुनीलम् ।
केतौ वैडूर्यं गुरौ पुष्पकं ज्ञे पाचिः प्राङ्माणिक्यमर्के तु मध्ये ।।

अँगूठी में रत्न धारण करने की विधि यह है कि—अँगूठी के पीठ पर गोल या चौकोर भाग बनाकर अंगुली के अग्र की ओर पूर्व दिशा मानकर क्रम से शुक्र के लिये पूर्व में हीरा, चन्द्रमा के लिये अग्निकोण में मोती, मङ्गल के लिये दक्षिण भाग में मूंगा, राहु के लिये नैऋत्य में गोमेद, शनि के लिए पश्चिम में नीलम, केतु के लिये वायुकोण में वैडूर्य (लहसुनियाँ), गुरु के लिये उत्तर में पोखराज, बुध के लिये ईशान में पन्ना और सूर्य के प्रीत्यर्थ मध्यभाग में माणिक्य जड़ा करके अपने-अपने मन्त्रों से अभिमन्त्रित करके धारण करना चाहिये।

ग्रहदोषशान्त्यर्थं स्नान, स्नानार्थ औषधि–

लाजावती-कुष्ठ-बला-प्रियङ्गु-धनेश-सिद्धार्थनिशाह्वयेन ।
युक्तेन तोयेन च पुंखया सत् स्नानं हि लोध्रेण खगादितानाम् ।।

सूर्य के दोष शान्त्यर्थं लाजावती, चन्द्र के कूट, मंगल के बरियार, बुध के कंगुनी, गुरु के मोथा, शुक्र के सरसों, शनि के देवदारु, राहु के सरफोंका और केतु के दोष शान्त्यर्थ लोधिया जल में देकर उस जल से स्नान करना चाहिये ।

फल कथन में विशेषता–

सर्वप्रथम विचारणीय–

"यो भावः स्वामिसौम्याभ्यां युक्तो दृष्टोऽयमेधते ।
पापैर्दृष्टो युतो वा यस्तस्य हानिः प्रजायते ।।

जिस भावपर अपने स्वामी या शुभ ग्रह की दृष्टि या योग हो उस भाव की पुष्टि और जिस भावपर पापग्रहों की दृष्टि या योग हो उस भाव की हानि होती है ।

दृष्टि विचार–

ग्रह अपने आश्रित स्थान से–३, १० स्थान को १ चरण से, ५, ९ को २ चरण से, ४, ८ को ३ चरणों से देखता है ।

विशेषता यह है कि, शनि ३, १० को चारों चरणों से, गुरु ५, ९ को चारों चरणों से और मंगल ४, ८ को चारों चरणों से देखता है । तथा सब ग्रह सप्तम स्थान को चारों चरणों से देखते हैं ।

दृष्टि देखने का प्रयोजन यह है कि ग्रह-बल के अनुसार फल देता है । यदि किसी भाव पर शुभ और पाप ग्रह दोनों हों तो जिसका बल अधिक रहता है उसी का फल होता है । यदि दोनों के बल तुल्य हों तो जिसकी दृष्टि अधिक हो उसका फल समझना । कदाचित् दृष्टि में भी तुल्यता हो जाय तो जिसका नैसर्गिकबल अधिक हो उसका फल समझना चाहिए ।

फल कथन में कुछ अनुभूत योग–

१—जिसके जन्माङ्ग में लग्न से ३, ६, ९, १२ भावों में से किसी में ग्रह नहीं हो तो वह जातक प्रतापी पुरुष होता है ।

२—जिसके जन्माङ्ग चक्र में ६, ८, १२ ये तीन स्थान ग्रह रहित हो वह निश्चित रूप से सब प्रकार के सांसारिक सुखों का भोक्ता होता है ।

३—जिसके केन्द्र में शुभ ग्रह हो या ३, ६, ११ में पाप ग्रह हो वह भी यशस्वी और सुखी होता है ।

इसके विपरीत में विपरीत फल समझना चाहिए ।

फल कथन में उपयोगी विषय

ग्रहों के गृह-उच्चादि स्थास—

ग्रह	सू.	सो.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
गृह	सि.	क.	मे. वृ.	मि.क.	ध.मी	२।७	म.कुं.
उच्च	मे.	वृ.	मकर	क.	क	मी.	तु.
नीच	तु.	वृश्चि.	क.	मी.	म.	क.	मे.
मू.त्रि.	सिं.	वृष.	मे.	क.	ध.	तु.	कुं.

ग्रहों के स्वाभाविक मित्र, सम, शत्रु—

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
मित्र	चं.मं.गु.	सू.बु.	सू.चं.वृ.	सू. शु.	सू.चं.मं	बु.श.	बु. शु.
सम	बु.	मंवृ.शु.श.	शु. श.	श.मं.वृ.	श.	म.वृ.	वृ.
शत्रु	शु.श.	०	बु.	चं	बु.शु.	सू. सो.	सू.सो.मं.

प्रयोजन—जो ग्रह अपने गृह, उच्च, मूलत्रिकोण और मित्र गृह में रहता है वह बली समझा जाता है।

जो अपने नीच या शत्रु के घर में रहता है वह निर्बल समझा जाता है।

शुभ ग्रह का बली होना और पाप ग्रह का निर्बल होना श्रेष्ठ माना जाता है।

फलादेश में कुछ अनुभूत योग–

शारीरिक विचार–

१ - जन्माङ्ग चक्र में प्रथम लग्न स्थान को देखना चाहिये, लग्न में यदि अपने स्वामी, शुभग्रह या लग्नेश के मित्र का योग या दृष्टि हो तो जातक को शारीरिक सुख यथायोग्य उत्तम कहना चाहिये।

लग्नेश यदि केन्द्र या त्रिकोण में हो तो उत्तम फल समझना चाहिये। यदि लग्नेश ६, ८, १२ वें भाव में हो तो शरीर सुख में बाधा कहना।

२–सूर्य–आत्मग्रह है। उससे आगे-पीछे या दोनों स्थान में ग्रह हो तो वह जातक आत्मबली होता है, अपने बाहुबल से पैतृक सम्पत्ति को बढ़ाता है या स्वभुजोपार्जित धन से अपने और परिवार का पालनकर्ता होता है।

यदि सूर्य से आगे-पीछे (२, १२ वें भाव) ग्रह वर्जित हों तो आत्मबल से हीन तथा परभाग्योपजीवी होता है।

३—चन्द्रमा—मनोग्रह है। उससे आगे-पीछे या दोनों भाव में ग्रह हो तो जातक मनस्वी (मनोबली) होता है एवं उसका विचार सदा स्थिर और शुद्ध रहता है। वह जिस कार्य को विचार करके करता है, उसमें अवश्य सफलता मिलती है।

यदि चन्द्रमा के आगे-पीछे कोई ग्रह नहीं हो, तो जातक का मन चञ्चल होता है, जिससे उसका विचार सदा बदलता रहता है, सदा सन्देह में पड़ा रहता है। अतः किसी भी कार्य में पूर्ण सफलता नहीं मिलती है।

यदि ऐसी स्थिति में चन्द्रमा केन्द्र में हो या चन्द्रमा के साथ कोई ग्रह हो तो मन में कुछ स्थिरता होती है और उसके वहुत से विचार ठीक भी होते हैं, जिससे वह सुखी रहता है।

४—भाग्य—नवम भाव प्राणियों का धर्म और भाग्य भाव है। उसमें अपने स्वामी या स्वामी के मित्र या किसी शुभग्रह का योग या दृष्टि हो तो जातक धर्म बुद्धि और भाग्यवान् होता है।

यदि भाग्यभाव में पापग्रह या अपने स्वामी के शत्रु का योग या दृष्टि हो तो जातक का भाग्य और धर्म प्रेम अल्प समझना। अन्यथा मध्यम भाग्य समझना चाहिये।

५—सर्व सुख योग–

जिसके जन्माङ्ग चक्र में ६, ८, १२ वें भाव (तीनों) ग्रह वर्जित हों वह जातक—सांसारिक सब सुखों को भोगने वाला होता है।

यदि उक्त तीनों स्थानों में कोई ग्रह अपने उच्च या स्वगृह का हो तो वह जातक मध्यम मान से सब सुखों को भोगने वाला होता है।

यदि उक्त तीनों स्थानों में अपने गृह और उच्च से भिन्न राशि के हों तो वह जातक सदा दुःखी और चिन्तित चित्त वाला होता है।

६—प्रताप योग–

जिसके जन्माङ्ग चक्र में लग्न से ३, ६, ९, १२ ये चारों भाव ग्रह-रहित हों तो वह दरिद्र कुल में जन्म लेकर भी महाप्रतापी पुरुष होता है। उसके आदेश को बहुत लोग विना विचारे मानते हैं तथा सभी कार्यों में उसे सफलता मिलती है और वह सदा सुखी रहता है।

७—कुछ राज योग–

जिसके जन्माङ्ग चक्र में ३ से अधिक ग्रह स्व-उच्चराशि के होते हैं, वह दरिद्र कुल में भी जन्म लेकर राजा या राजा के समान सुखी होता है। ५ या ६ ग्रह उच्च के हों तो वह निश्चित रूप से राजा या राजा से भी बढ़कर देशोपकारक होता है।

जिसके जन्माङ्ग में ३ या ४ ग्रह स्वगृह के हों तो वह भी राजा के समान होता है।

संक्षेप में शुभ और अशुभ दशाफल

कोई भी स्वाभाविक शुभ या पापग्रह लग्न से १,५,९ में किसी एक भाव का स्वामी हो तो उसकी दशा और अन्तर दशा शुभप्रद होती है। यदि कोई

कोई भी स्वाभाविक शुभ ग्रह (चन्द्र, बुध, बृहस्पति, शुक्र) केन्द्र (लग्न से ४, ७, १० इनमें किसी एक भाव) का स्वामी हो तो वह अपनी दशा में अपना शुभ फल नहीं देता है, अर्थात् शुभ फल देने में उदासीन रहता है।

एवं कोई भी स्वाभाविक पाप ग्रह (रवि, मङ्गल, शनि) उक्त केन्द्र का स्वामी हो तो वह अपनी दशा में अपना पाप फल नहीं देता है। अर्थात् फल देने में उदासीन रहता है।

तथा कोई भी ग्रह लग्न से १, २, ६, ८ इनमें से किसी भाव का स्वामी हो तो वह साहचर्य से (ऊपर प्रदर्शित) जिस प्रकार के शुभ या पाप फल-प्रद ग्रह के साथ रहता है उसी के फल को देता है।

यदि वह ग्रह किसी ग्रह के साथ न हो तो अपने स्थानान्तर (द्वितीय ग्रह) के अनुसार शुभ या अशुभ फल को देता है।

कोई भी ग्रह अपनी दशा और अपनी अन्तर्दशा में बलानुसार फल नहीं देकर अपने सम्बन्धियों या धार्मिकी दशा में विशेष फल देता है।

सम्बन्ध चार प्रकार के हैं—

चार या अधिक ग्रह स्वगृह और मित्र के घर में हों तो भी राजा के समान होता है।

१—पस्पर राशि स्थिति (परस्पर दोनों-दोनों के घर में)।

२—एकतरराशि सम्वन्ध (दो में से कोई एक दूसरे के घर में)।

३—सहवास सम्वन्ध (दोनों के किसी एक राशि में साथ रहना)।

४—परस्पर दृष्टि सम्वन्ध।

इन सम्वन्धों में यथाक्रम पूर्व-पूर्व बली समझना चाहिये।

उपसंहार

'मिथिला-देश-मध्यस्थ-'चौगमा' यस्य जन्मभूः।
जननी जानकी देवी पिता बछरनाभिधः॥
'सीतारामाभिधः' सोऽहं काश्यां छात्रान् प्रपाठयन्।
त्रिस्कन्धं ज्यौतिषं शास्त्रं दृष्ट्वा तत्र प्रदूषिताम्॥
भ्रान्तैरार्यविरुद्धां च भावसाधनपद्धतिम्।
ताञ्च युक्तिप्रमाणाभ्यां निराकृत्य यथामतिः॥
पुनर्दर्शितवानार्षभावानां साधनक्रियाम्।
"जन्मपत्रप्रबोधाख्ये" ग्रन्थेऽस्मिन् दैवविन्मुदे॥
सोऽयं रसाक्षि-पूर्णाक्षितुल्ये विक्रमवत्सरे।
नभोऽसिते गुरोर्वारे दशम्यां पूर्णतां गतः॥

इति सोदाहरणजन्मपत्रप्रबोधः।

—:०:—

मानसागरीस्थ-श्लोकानामनुक्रमणी

परिशिष्टस्थ-श्लोकानामनुक्रमणी

□



